हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला--६५

प्रकाश और वर्ण

(का स्वरूप, खुली हवा में)

लेखक

प्रोफेसर एम. मिनैर्ट

अनुवादक

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव

एम. एस-सी.

हिन्दी समिति

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण
१९६२

[Translated into Hindi from "The nature of *Light and Colour* in the open air" Dover Publications, as revised and corrected by the author himself (1962)]

मूल्य
११.५० रुपये

मुद्रक
श्री नरेन्द्र भार्गव,
भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकीय

आकाश से गिरनेवाली बर्फ कभी-कभी काले रंग की क्यों दिखाई देती है? सूर्य की किरणें एकाध बार हरे रंग की क्यों प्रतीत होती हैं, उगते हुए तथा डूबते हुए सूर्य का बिम्ब सामान्य से अधिक बड़ा क्यों दृष्टिगोचर होता है, वर्षा की बूंदों पर पड़नेवाले प्रकाश की माया से किस तरह इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, 'फाता मोर्गाना' मरीचिका किस तरह उत्पन्न होती है जिससे ऐसा जान पड़ता है मानो कोई जादू की नगरी अधर में लटक रही हो?

असाधारण प्रकाशकीय घटनाओं का अवलोकन करने पर इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न आपके मन में उठ सकते हैं। यूट्रेख्ट विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मिनेर्ट ने इस पुस्तक में ऐसे ही सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर दिये हैं। प्रश्नों का समाधान सरल तथा सुबोध शैली में प्रस्तुत किया गया है जिसे कोई भी प्रबुद्ध पाठक आसानी से समझ सकता है। प्रकृति में हम नित्य ही ऐसी चीजें देखते रहते हैं जो ऐन्द्रजालिक के चमत्कार की तरह अत्यन्त मनोरंजक प्रतीत होती हैं। प्रयोगशाला में बैठे रहने से इनका आनन्द नहीं उठाया जा सकता वरन् घरों के बाहर खुले आकाश में सूक्ष्म निरीक्षण-मनन से ही इनका रहस्य समझा जा सकता है।

यह रोचक ग्रन्थ न केवल भौतिकीज्ञों, ज्योतिर्विदों, भूगोल-शास्त्रियों तथा कला-पारखियों के काम का है बल्कि प्रत्येक विचारशील पाठक के लिए भी इसमें यथेष्ट रुचिकर सामग्री समाविष्ट है। प्रकाश और वर्ण के प्रतिदिन के पर्यवेक्षण का समाधान तो इसमें आपको मिलेगा ही, साथ ही इस क्षेत्र में यह पुस्तक आपको नवीन अनुभवों का भी दिग्दर्शन करायेगी जो अन्यथा आपकी नजरों की पकड़ में शायद ही कभी आ पाते। इसमें वे संशोधन तथा परिवर्धन भी समाविष्ट हैं जो अंग्रेजी के आगामी संस्करण में आनेवाले हैं और जिन्हें लेखक ने स्वयं हमारे पास पहले से भेज दिया था।

ठाकुरप्रसाद सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

खुली सड़क का गीत

पैदल और हलके हृदय से मैं खुली सड़क को पकड़ता हूँ ,
स्वस्थ हूँ, स्वच्छन्द हूँ, संसार है मेरे सामने ,
है मेरे सामने लम्बी गैरिकवर्णी राह, ले जाती हुई मुझे, जहाँ भी मैं चाहूँ ।

अब और मैं प्रचुर वैभव नही मांगता, मैं स्वयं ही हूँ प्रचुर वैभव ,
अब और मैं ठुनकता रोता नहीं, न और बिलमाता ही हूँ, न और कुछ चाहता ही हूँ,
हो गयी बस अब घर-भीतर की शिकायतें, ग्रंथालय, कलहमयी आलोचनाएँ,
दृढ़ और निश्चिन्त, मैं खुली सड़क की यात्रा करता हूँ ।

सोचता हूँ सभी वीर कर्मों का चिन्तन हुआ था मुक्त पवन में ,
और सभी स्वच्छन्द कविताएँ भी ,
सोचता हूँ मैं स्वयं ही यहाँ एक जाता और अद्भुत कर्म करता ,
सोचता हूँ, जो कुछ भी सड़क पर मिलेगा, उसे मैं चाहूँगा ,
और जो भी मुझे देखेगा, मुझे चाहेगा ,
सोचता हूँ जो कोई भी मुझे दिखाई देता है, अवश्य ही सुखी होगा ।

मैं अनन्त व्योम के महान् झकोरों को साँस में भरता हूँ ,
पूरब और पश्चिम हैं मेरे, उत्तर और दक्षिण हैं मेरे ।

जितना मैंने सोचा था उससे अधिक हूँ मैं विराट्, अधिक हूँ मैं श्रेष्ठ ,
मुझे ज्ञात नही था कि इतना शिवत्व था मेरे भीतर ।

तो आओ ! तुम जो भी हो, मेरे साथ यात्रा करो !
मेरे साथ यात्रा करते समय तुम कभी थकन नहीं जानोगी ।

धरती कभी नही थकती ,
धरती है उजड्ड, शान्त, पहले पहल अबोध्य, प्रकृति है उजड्ड ,
और पहले पहल अबोध्य ,

मत हो निराश, बस चलती चलो, वहाँ है दिव्य पदार्थ भलीभांति प्रच्छन्न ,
तुम्हारी शपथ, वहाँ है दिव्य पदार्थ, शब्द जितना वर्णन कर सकते ,
उससे भी कहीं अधिक सुन्दर ,

साथी ! तुम्हारी ओर हाथ बढ़ाता हूँ !
तुम्हे अपना प्यार देता हूँ जो वैभव से अधिक मूल्यवान् है ,
तुम्हें मैं अपने आपको ही देता हूँ उपदेश या कानून के सामने ;
क्या तुम मुझे अपने आप को दोगी ? क्या तुम मेरे साथ यात्रा करोगी ?
क्या हम, जब तक जियेंगे, परस्पर इस संकल्प पर दृढ़ रहेंगे ?

—वाल्ट ह्विटमन—(लीव्ज आव ग्रास)
(चुने हुए अंश)

प्लेट १—ब्रोकेन की प्रेत-छाया

भूमिका

प्रकृति का प्रेमी एक आन्तरिक प्रेरणा से उत्प्रेरित होकर प्राकृतिक घटनाओं से उतने ही सहज भाव से प्रभावित होता है जितने सहज तरीके से उसका श्वास लेना या जीवन की अन्य क्रियाएँ चलती हैं। धूप और वर्षा, गर्मी और सर्दी, प्रेक्षण के लिए उसे समान रूप से ग्राह्य होती हैं; नगर में, वन में, रेतीले प्रदेश में और समुद्र पर; सर्वत्र उसे नयी चीजें मिलती हैं जिनमें वह दिलचस्पी लेता है। प्रति क्षण नवीन तथा रोचक घटनाओं से उसका ध्यान आकृष्ट होता रहता है। देहाती क्षेत्रों में उत्फुल्ल कदमों से वह घूमता फिरता है, उसकी आँखें तथा उसके कान सतर्क रहते हैं; आसपास के सूक्ष्म प्रभावों के प्रति वह संवेदनशील रहता है, सुवासित वायु में वह भरपूर साँस लेता है, तापक्रम के सूक्ष्म अन्तर की भी अनुभूति करने की वह सामर्थ्य रखता है, यदा-कदा एकाध झाड़ी को वह छू लेता है ताकि धरती की चीजों से वह घनिष्ठतर सम्पर्क स्थापित कर सके—वह एक ऐसा व्यक्ति है जो जीवन की सम्पन्नता के प्रति अत्यधिक मात्रा में अभिज्ञ है।

वस्तुतः यह सोचना गलत है कि वैज्ञानिक रीति से प्रेक्षण करनेवाला व्यक्ति प्रकृति के भाव-प्रदर्शन की अपरिमित विविधता के काव्य-सौन्दर्य की अनुभूति नहीं कर पाता है, क्योंकि प्रेक्षण के अभ्यास से सौन्दर्य की हमारी परख और भी पैनी हो जाती है, अतः हर एक पृथक्-पृथक् तथ्य जिस विविध वर्णविभूषित पृष्ठभूमि पर चित्राङ्कित होता है उसकी आभा में वृद्धि हो जाती है। घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध, भू-दृश्य के विभिन्न अवयवों में कार्य-कारण के तारतम्य, उन दृश्यों को सामञ्जस्य के सूत्र मे परस्पर पिरो देते हैं जो अन्यथा एक दूसरे से अलग-अलग घटनाओं के क्रममात्र बने रह जाते।

इस पुस्तक में वर्णित घटनाएँ, अंशतः हमारे दैनिक जीवन की चीजें हैं जिनका वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करना रोचक होता है; तथा अंशतः ऐसी चीजें हैं जो अभी तक हमारे लिए अपरिचित रही हैं, यद्यपि उन्हें किसी भी क्षण देखा जा सकता है, शर्त केवल यह है कि हम नेत्रों पर इस जादू की छड़ी को घुमा दें कि 'देखना क्या है इसे हम पहले से जान लें।' और अन्त में प्रकृति के कुछ विलक्षण और दुर्लभ ऐसे 'करिश्मे'

हैं जो जिन्दगी में बस एकाध बार ही घटते हैं, अतः अत्यन्त निपुण प्रक्षक को भी उनका अवलोकन करने के लिए बरसों तक प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है। और जब उनका प्रेक्षण वह कर पाता है तो वह उनकी अभूतपूर्वता की अनुभूति तथा एक अवर्णनीय आह्लाद की भावना से ओतप्रोत हो जाता है—यह अनुभूति उसके अन्तरंग में पैठ जाती है।

चाहे कितना ही असाधारण यह क्यों न प्रतीत होता हो, किन्तु तथ्य यही है कि उन्हीं चीजों पर हमारा ध्यान जाता है जिनसे हम परिचित रहते हैं; नयी चीजों को देख पाना अत्यन्त कठिन होता है, भले ही वे एकदम हमारी आँखों के सामने ही मौजूद क्यों न हों। प्राचीन काल में तथा मध्य युग में सूर्य के अनगिनत ग्रहणों का अवलोकन किया गया था, फिर भी १८४२ के पूर्व मुश्किल से ही सूर्य के कांतिचक्र (कोरोना) पर किसी का ध्यान जा सका था, यद्यपि आजकल सूर्य-ग्रहण की यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण घटना समझी जाती है और नंगी आँखों से भी हर कोई इसे देख सकता है।

इन घटनाओं के प्रति आपका ध्यान आकृष्ट करने के निमित्त मैंने इस पुस्तक में उन चीजों का संकलन करने का प्रयत्न किया है जो प्रकृति के योग्य अध्येताओं के प्रयत्न-स्वरूप कालान्तर में हमारे लिए सुपरिचित हो गयी हैं। इसमें सन्देह नहीं कि प्रकृति में इनसे भी कहीं अधिक संख्या में अनेक तथ्य भरे पड़े हैं जिनका प्रेक्षण अभी तक नहीं किया जा सका है; प्रति वर्ष नवीन घटनाओं के सम्बन्ध में अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं; इस बात पर विचार करना कुछ अजीब-सा लगता है कि अनेक ऐसी घटनाओं के प्रति हम कितने अन्धे तथा बहरे हैं, जिनका भविष्य की पीढ़ियाँ अवश्य अन्वेषण कर लेंगी।

प्रकृति के प्रेक्षण से अभिप्राय सामान्यतः वनस्पतियों तथा जीवों का अध्ययन समझा जाता है; मानो वायु, ऋतुओं तथा बादलों के मनोरम प्रदर्शन, सहस्रों किस्म की ध्वनियाँ जो हमें अपने इर्द-गिर्द मिलती हैं, लहरें, सूर्य की किरणें तथा पृथ्वी की थरथराहट आदि प्रकृति के अवयव नहीं हैं! निर्जीव पदार्थ-जगत् के क्षेत्र में भौतिक विज्ञान के अध्येता के लिए ऐसी पाठ्यपुस्तक, जिसमें उन सभी बातों का उल्लेख किया गया है जो उसके लिए विशेष रूप से प्रेक्षणीय हैं, उतनी ही आवश्यक है जितनी जीव-वैज्ञानिक के लिए वनस्पति तथा प्राणि-जगत् पर लिखी गयी पाठ्यपुस्तक। अनिवार्यतः हमें ऋतुविज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान, भूगोल तथा जीवविज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करना होगा, फिर भी मुझे आशा है कि इस अध्ययन के फलस्वरूप इन विभिन्न क्षेत्रों के बीच ऐक्य का सूत्र ढूँढ पा सकेंगे।

चूंकि प्रकृति के सरल तथा प्रत्यक्ष प्रेक्षण पर ही हम विचार करेंगे, अत निश्चित रूप मे हमे निम्नलिखित का परिहार करना पड़ेगा—(१) ऐसी चीजें जो केवल यत्रों द्वारा ही देखी जा सकती हैं (यत्रों के बजाय हमें इन्द्रियज्ञान पर ही विशेष रूप से आश्रित होना पड़ेगा और इसके लिए अपनी ज्ञानेन्द्रियों की विशिष्टताओ की पूर्ण जानकारी हमे होनी चाहिए; (२) ऐसे तथ्य जो केवल लम्बे काल तक के अगणित प्रेक्षणों के फलस्वरूप प्राप्त किये जा सकते हैं; (३) ऐसे सैद्धान्तिक तथ्य जिनका हमारी दृष्टि-अनुभूति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही है।

हम देखेंगे कि इतने पर भी प्रेक्षण की प्रचुर मात्रा की सम्भावना शेष रह जाती है; दरअसल भौतिकी की एक भी प्रशाखा ऐसी नही है जो बाह्य क्षेत्र मे लागू न हो सके, और अक्सर तो बाह्य क्षेत्र में यह विज्ञानशालाओ के किसी भी प्रयोग से अधिक व्यापक पैमाने पर प्रदर्शित होती है। अतः यह बात ध्यान में रखिए कि इस पुस्तक में वर्णित प्रत्येक तथ्य स्वयं आप की समझ और प्रेक्षण की सीमा के भीतर आता है। इसकी प्रत्येक बात आप के अवलोकन के लिए है, आपके द्वारा किये जाने वाले प्रयोग के लिए भी !

जहाँ कही हमारी व्याख्या कदाचित् अत्यधिक सक्षिप्त जान पड़ती हो, उस स्थल के लिए पाठक को हम सुझाव देंगे कि वह किसी प्रारम्भिक पाठयपुस्तक की सहायता से भौतिकी के आधारभूत सिद्धान्तो का पुनः अनुशीलन कर लें।

भौतिकी के शिक्षण के लिए बाह्य क्षेत्रों के प्रेक्षण के महत्त्व को अभी तक पर्याप्त रूप से आँका नही जा सका है। ये प्रेक्षण हमारी शिक्षा को दैनिक जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप समानुयोजित करने के प्रयत्न में उत्तरोत्तर अधिक योग देते हैं, सहस्रों प्रश्न पूछने के लिए ये हमें स्वाभाविक तरीके पर प्रेरित करते हैं और उनकी बदौलत बाद मे हम जान पाते हैं कि स्कूल में जो कुछ हमने सीखा है वह स्कूल की दीवारों के बाहर हमें बारम्बार देखने-सुनने को मिलता है। और इस प्रकार प्रकृति के नियमों का सार्वभौम अस्तित्व हमें एक सतत, आश्चर्यजनक तथा प्रभावशाली वास्तविकता के रूप मे प्राप्त होता है।

फिर यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए लिखी गयी है जो प्रकृति के पुजारी हैं, उन किशोरो के लिए जो विस्तृत जगत् के प्राङ्गण मे जाकर कैंपफायर के गिर्द इकट्ठे होते है, उस चित्रकार के लिए जो भू-दृश्य के आलोक और वर्णविन्यास की प्रशंसा तो करता है, किन्तु उसे समझ नहीं पाता है; उनके लिए जो देहाती क्षेत्रों मे रहते है, उन सब लोगो के लिए जो यात्रा के शौकीन है; तथा शहर में रहनेवालों के लिए भी जिनके

लिए अँधेरी गलियों के कोलाहल में भी प्रकृति के सौन्दर्य का प्रदर्शन लभ्य हो सकता है। प्रदक्ष भौतिकीज्ञ के लिए भी, हम आशा करते हैं कि इस पुस्तक में कुछ नवीन तथ्य अवश्य मिलेंगे, क्योंकि इसमें वर्णित क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा अक्सर विज्ञान के सामान्य पाठ्यक्रम के दायरे के यह बाहर पड़ता है। अतः अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यों अत्यन्त जटिल प्रेक्षण का तथा साथ-साथ अत्यन्त सरल किस्म के प्रेक्षणों का भी समावेश इस पुस्तक में किया गया है जिनका वर्गीकरण उनके पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर किया गया है। सम्भवतः यह ग्रन्थ अपने ढंग का एक मात्र प्रयत्न है, अतः यह पूर्णतया दोषमुक्त भी नहीं है। विषयवस्तु के सौन्दर्य तथा उसकी व्यापकता की गुरुता से मैं अत्यधिक अभिभूत हूँ, तथा इसकी समुचित व्याख्या के निमित्त अपनी असमर्थता के प्रति भी अनभिज्ञ नहीं हूँ। पिछले २० वर्षों से मैं व्यवस्थित ढग से इस सम्बन्ध में प्रयोग करता आ रहा हूँ तथा इस पुस्तक में मैंने हर प्राप्त पत्रिका के हजारों लेखों का सार भी प्रस्तुत किया है, यद्यपि इसके लिए केवल उन्हीं लेखों को मैंने चुना है जो या तो व्यापक सर्वेक्षण पर आधारित है, या किन्हीं अत्यन्त विशिष्ट तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं। किन्तु इस बात से मैं भली-भांति अवगत हूँ कि यह सकलन कितना अपूर्ण है। अनेक बातें जिनकी खोज की जा चुकी है, अभी तक मेरी जानकारी में नहीं आ सकी है और अनेक बातें विशेषज्ञों के लिए भी अभी समस्याएँ ही बनी हुई हैं। अतः मैं उन व्यक्तियों के प्रति कृतज्ञ हूँगा जो स्वयं अपने प्रेक्षण द्वारा या प्रकाशित सामग्री के आधार पर मेरी त्रुटियों के सुधारने में या उन तथ्यों की पूर्ति में जो छूट गयी है, मेरी सहायता करेंगे।

—एम. एम.

विषय-सूची

प्लेट-सूची

चित्र-सूची

अध्याय १

धूप और छाया

१. सूर्य्य के प्रतिविम्ब

वृक्षों के झुण्ड की छाया मे भूमि पर प्रकाश के छोटे वडे अनेक "धब्बे" या खण्ड हम देखते हैं जो इधर-उधर बेतरतीब बिखरे रहते हैं, किन्तु सभी की शक्ल समान रूप से दीर्घ वृत्ताकार होती हैं। इनमे से किसी एक के सामने पेनिल सीधी रखिए; पेन्सिल और साये के हाशिये को मिलानेवाली रेखा वह दिशा बतलाती है जिधर से प्रकाश की किरणे आकर भूमि पर नन्हा धव्वा बनाती हैं। अवश्य ये सूर्य्य की किरणे है जो वृक्ष की चोटी के सूराख को भेद कर आ रही है; हमारी आँखों को पत्तियों के बीच यत्र-तत्र चकाचौंध उत्पन्न करनेवाली चमक दीख पड़ती हैं।

आश्चर्य की बात यह है कि ये सभी धब्बे एक ही शक्ल के हैं, यद्यपि इस बात की सम्भावना कम ही है कि ऊपर के सभी सूराख और झरोखे इतने बढिया तौर पर एकदम एक ही सरीखे और गोल या मण्डलाकार हो ! इनमें से किसी एक प्रतिविम्ब के सामने कागज का टुकड़ा इस तरह रखिए कि किरणे कागज की सतह को लम्बवत् काटें। आप देखेंगे कि अब यह धव्वा दीर्घवृत्त की शक्ल का नही बल्कि वृत्ताकार है। कागज को और ऊपर उठाइए, धव्वा छोटा ही होता जायगा। अतः हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि किरणो की शलाकाएँ शकु की शक्ल की है और ये धव्वे दीर्घवृत्त की शक्ल के केवल इसलिए हैं कि भूमि की सतह इन्हें तिरछे काटती है।

इस घटना की उत्पत्ति का कारण यह है कि सूर्य्य एक बिन्दु मात्र नही है। कोई भी एक अत्यन्त सूक्ष्म छिद्र P (चित्र १) सूर्य्य का पूर्णतया स्पष्ट प्रतिविम्ब A B बनाता है और अन्य सूक्ष्म छिद्र P′ कुछ थोड़ा हटा हुआ प्रतिविम्ब A′ B′ (बिन्दुओं से प्रदर्शित) बनाता है; कुछ और बड़ा छिद्र जिसमे P और P′ दोनों ही हों, सूर्य्य का थोड़ा अस्पष्ट किन्तु अधिक चटकीला प्रतिविम्ब A′ B बनायेगा।

वास्तव में हम कम-वेश हर तरह के चटकीलेपन वाले धब्बे देख सकते हैं, अधिक चटकीला धब्बा साथ ही साथ कम स्पष्ट भी होगा।
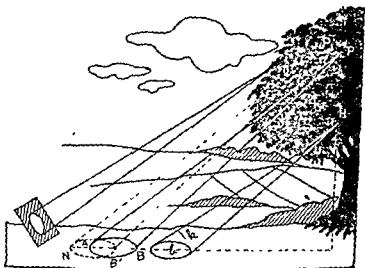
चित्र १—वृक्ष के घने झुरमुट में प्रवेश करती हुई सूर्य-रश्मियां।

इसकी सम्पुष्टि में इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब सूर्य्य के सामने से बादल गुजरते हैं तो हर धब्बे के ऊपर से उनकी छाया को आप गुजरते हुए देख सकते हैं किन्तु ये उल्टी दिशा में चलती हैं; सूर्य्य के आंशिक ग्रहण के समय सूर्य्य के ये सभी प्रतिविम्ब अर्द्ध चन्द्राकार, हँसिया की शक्ल के बनते हैं। जब कभी सूर्य्य-पृष्ठ पर कोई बड़ा धब्बा प्रगट होता है तो यह नीचे बननेवाले स्पष्टतम सूर्य्य-प्रतिविम्ब पर भी दृष्टिगोचर होता है। आप सूर्य्य का अत्यन्त स्पष्ट प्रतिविम्ब इस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं—दफ्ती के टुकड़े पर सुई से एक छोटा पूर्णतया वृत्ताकार सूराख बनाइए और इसे धूप में इस तरह पकड़िए कि सूराख में से गुजरनेवाली किरणें नीचे छाया की आड़ में जमीन पर गिरें।

इस ढंग से विभिन्न दूरी पर बननेवाले सूर्य्य-प्रतिविम्बों को वर्गाकार खानेवाले कागज पर नापिए।

अतः सूर्य्य-मंडलक द्वारा धरती के किसी विन्दु पर जो कोण बनता है वह सूर्य्य-प्रतिविम्ब बनानेवाले शंकु के शीर्षकोण A P B के बराबर होगा। इस तरह के छोटे कोण हम प्रायः 'रेडियन' में नापते हैं। हम जब कहते हैं कि यह कोण $\frac{1}{108}$ रेडियन

का है तो इसका अभिप्राय है कि 108 सें० मी० की दूरी पर सूर्य 1 से० मीटर व्यास का प्रतीत होता है या 1080 सेंटीमीटर की दूरी पर यह 10 सेंटीमीटर व्यास का प्रतीत होता है (चित्र २)। अतः प्रगट है कि स्पष्ट बननेवाले सूर्य्य-प्रतिविम्ब का
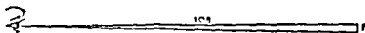
चित्र २—सूर्य का मण्डलक हमें $\frac{1}{108}$ रेडियन के कोण पर दिखलाई देता है।

व्यास उनसे नापी गयी सूराख की दूरी का 108 वाँ भाग अवश्य होना चाहिए और धुंधले, अस्पष्ट प्रतिविम्ब के व्यास के लिए इस मान में पत्तियों के बीच के सूराख का व्यास भी और जोड़ा जाना चाहिए। वृक्ष के नीचे बननेवाले कम चटकीले किन्तु स्पष्ट प्रतिविम्ब को कागज पर इस तरह प्राप्त करिए कि किरणें कागज पर लम्बवत् गिरें। रोशनी के धब्बे का व्यास k नापिए तथा एक डोरी से कागज और पत्तियों के झुरमुट के सूराख के बीच की दूरी भी नापिए। क्या k वास्तव में $L \times \frac{1}{108}$ के बराबर है ?

सपाट सतह पर सूर्य्य के प्रतिविम्ब जब दीर्घवृत्त की शकल के बनते हैं तब हम दीर्घवृत्त का लघु अक्ष k और दीर्घ अक्ष b नापते हैं। इन दोनों का अनुपात बराबर होगा वृक्ष की लम्ब ऊँचाई H और दूरी L के पारस्परिक अनुपात के। इसका अर्थ है कि ऊँचाई $H = \frac{k}{b} \times L = 108\frac{kk}{b}$। इस ढंग से 'बीच' वृक्ष की पत्तियों के झुरमुट के नीचे बनने वाले एक विशेष बड़े आकार के सूर्य्य-प्रतिविम्ब के अक्ष २१ इंच और १३ इंच नापे गये, अतः ऊपर के सूराख की, धरती से नापी गयी ऊँचाई ८७० इंच या ७२ फुट ६ इंच हुई।

ध्यान दीजिए कि प्रातः और सन्ध्या को सूर्य्य के प्रतिविम्ब अधिक दीर्घ वृत्ताकार बनते हैं जब कि दोपहर के निकट ये अधिक गोल होते हैं। सूर्य्य के बढ़िया प्रतिविम्ब प्रायः 'बीच', 'लाइम' तथा 'स्काइमोर' वृक्षों के साये में बनते हैं किन्तु पोप्लार, एल्म या मैदानी पेड़ों के नीचे बहुत कम।

छिछले पानी के किनारे खड़े वृक्षों से बननेवाले सूर्य्य-प्रतिविम्ब को देखिए, ये पानी में नीचे पेंदे पर विचित्र शक्लों में बने हुए दिखलाई देते हैं।

२. छाया

धरती पर बननेवाली स्वयं अपनी छाया को देखिए, आपके पैरों की छाया स्पष्ट होती है किन्तु सिर की नहीं। किसी वृक्ष के तने या खम्भे के निचले भाग की छाया स्पष्ट उभरती है जब कि ऊपरी भाग की छाया ऊँचाई बढ़ने के साथ ही अधिक स्पष्ट और धुंधली होती जाती है।

कागज के तख्ते के सामने अपना हाथ फैलाकर रखिए, छाया स्पष्ट होगी। हाथ को और अधिक दूर रखिए तो प्रत्येक उँगली की प्रच्छाया सँकरी हो जाती है जब कि उपच्छाया चौड़ी और बड़ी होती जाती है, यहाँ तक कि दूरी बढ़ने पर ये एक दूसरे से मिल जाती हैं।

इन विशिष्टताओं का भी कारण यही है कि सूर्य एक बिन्दु मात्र नहीं है, इसी के अनुरूप सूर्य-प्रतिबिम्ब में भी हमने यही देखा। उड़ती हुई तितली या चिड़िया की छाया देखिए (हम इन चीजों पर विरले ही ध्यान देते हैं), और आप पायेंगे कि यह छाया एक गोल धब्बे सरीखी दीखती है—यह एक "सूर्य-छाया-चित्र" है।

बाड़े को घेरने के काम में आनेवाली तार की जाली की (जिसमें आयताकार खाने बने थे) छाया एक बार मुझे बहुत ही अजीब-सी लगी क्योंकि उसमें तो केवल खड़े तारों की छाया दीख रही थी, आड़े तारों की नहीं। सूराख-कटे हुए कागज को धूप में रखें तो कागज का प्रत्येक सूराख जमीन पर दीर्घवृत की शकल का रोशनी का धब्बा बनाता है। इसी प्रकार तार की छाया को भी हम मान सकते हैं कि यह नन्हें-नन्हें समान आकृति के दीर्घवृत्तों से बनी है जो अवश्य इस बार काले दीखते हैं और एक दूसरे के निकट लगे हुए होते हैं। जब ये तार के दीर्घ अक्ष की दिशा में पड़ते हैं तो छाया विशेष स्पष्ट उभरती है और लघु अक्ष की दिशा में छाया अस्पष्ट रहती है। (चित्र ३)
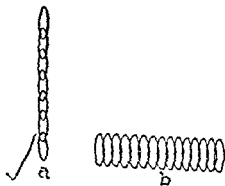
चित्र ३—सूर्य की तिरछी किरणों द्वारा लोहे के तार की छाया (a) स्पष्ट छाया, (b) अस्पष्ट छाया।

तार की जाली के पीछे एकदम निकट कागज रखिए और फिर इसे उत्तरोत्तर

दूर हटाते जाइए ताकि कागज पर क्रमशः प्रगट होनेवाली विलक्षण छाया का अवलोकन किया जा सके। इसी प्रकार निरीक्षण उन दशाओं मे करिए जब सूर्य की किरणें धरती के साथ विभिन्न मान के कोण बनाती है, फिर जाली को तिरछी रखकर भी छाया की जाँच करिए।

लोक-कथाओं मे छाया को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसे भयानक शाप समझा जाता था कि किसी व्यक्ति की छाया विलुप्त हो जाय। ख्याल किया जाता था कि यदि किसी व्यक्ति की छाया सिर-विहीन है तो एक वर्ष के अन्दर ही उसकी मृत्यु हो जायगी। इस तरह की किवदन्तियाँ, जो हर देश और काल में प्रचलित हैं, निःसन्देह हमारे लिए भी बड़ी दिलचस्प है, क्योकि इससे सिद्ध होता है कि नौसिखुए प्रेक्षको के निष्कर्ष पर विश्वास करने मे हमे विशेष रूप से सतर्कता बरतनी चाहिए, चाहे इन प्रेक्षकों की संख्या कितनी ही अधिक क्यो न हो और वे कितने ही एकमत क्यों न हों।

३- सूर्यग्रहण और सूर्यास्त के समय सूर्य-प्रतिबिम्ब और छाया

सूर्य-ग्रहण के दौरान मे अधकार मे पड़ा चन्द्रमा सूर्य-मण्डलक के सामने सरकता हुआ-सा दिखलाई पड़ता है, अतः थोड़ी ही देर बाद सूर्य के गोले का बस एक हँसिया सा आकार दृष्टिगोचर होता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस क्षण वृक्षों के झुरमुट के नीचे सूर्य के प्रतिबिम्ब चाहे छोटे हों या बड़े हों अथवा अधिक या कम चटकीले, सभी नन्हें अर्द्ध चन्द्राकार हँसिये की शक्ल-जैसे बनते हैं, और इन सबके रुख एक ही ओर होते हैं।

ऐसे वक्त पर छाया की शक्ल भी इसी भाँति प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए हमारी उँगलियों की छाया अजीब किस्म की बनती है मानो सिरो पर पजो के नाखून टेढे बने हों। प्रत्येक नन्ही दीप्तिहीन वस्तु ऐसे समय अर्द्ध चन्द्राकार हँसियों की शक्ल बनायेगी, जैसे एक छोटे डण्डे की छाया एक ही किस्म के नन्हे-नन्हे हँसिया आकार की बहुत सी छाया के जुड़ने से बनती है; जिसमे हाशिये का मोड़ केवल सिरे पर प्रगट होता है।

इस तरह की दीप्तिहीन अलग-अलग पड़ी छोटी वस्तु का उपयुक्त उदाहरण गुब्बारा है। वास्तव में सूर्यग्रहण के वक्त देखा गया है कि गुब्बारा तथा उससे लटकनेवाली टोकरी दोनों की छाया हँसिये की शक्ल की मुड़ी हुई बनती है। वायुयान भी यदि यह काफी ऊँचाई पर हो, ऐसे समय हँसिये के आकार की छाया डालता है।

सूर्यग्रहण चाहे वे आंशिक ही क्यों न हों, प्रायः कम ही लगते है। किन्तु खुले क्षितिज के पार जिस समय समुद्र में सूर्य अस्त हो रहा हो, उस समय यदि खिड़की

के काँच पर छोटे बड़े आकार के सिक्के चिपका दें या उन्हें पतले तार से सीधे लटका दें तो उनकी छाया भी उसी प्रकार की हँसिये के आकार की टेढ़ी बनती हुई देखी जा सकती है। सिक्कों के छोटे बड़े आकार के अनुसार छाया की शक्ल तथा प्रकाश-वितरण में तबदीली होती है और जैसे-जैसे सूर्य क्षितिज के नीचे डूबता जाता है वैसे वैसे भी छाया की शक्ल तथा उसकी प्रदीप्ति बदलती है।

४. दुहरी छाया

वृक्षों की पत्तियाँ जब झड़ चुकी होती हैं तो प्रायः हम दो समानान्तर टहनियों की छाया को एक दूसरे के ऊपर पड़ती हुई देखते हैं। जो टहनी हमारे निकट होती है उसकी छाया स्पष्ट और गाढ़ी होती है, और जो टहनी अधिक दूरी पर होती है उसकी छाया अधिक चौड़ी और भूरी दीखती है। अब आश्चर्यजनक बात यह है कि जब संयोग से दोनों में से एक छाया दूसरी के ऊपर पड़ती है, तब हम अधिक स्पष्ट दीखनेवाली छाया के बीचोबीच एक चमकीली रेखा देखते हैं अतः यह छाया दुहरी प्रतीत होती है (चित्र ४)। इसका कारण क्या हो सकता है?

चित्र ४—दुहरी छाया कैसे बनती है।
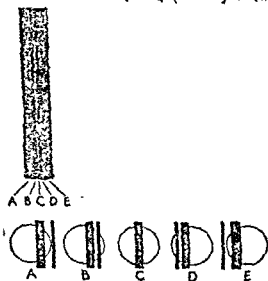
मान लीजिए कि दूरवाली टहनी अधिक मोटी है और निकट की पतली। छाया के विभिन्न भागों में, तथा निकट की भूमि पर प्रदीप्ति कितनी है यह मालूम करने के लिए कल्पना करिए कि हम उन विभिन्न भागों से सूर्य की ओर बारी-बारी से देख रहे हैं। मान लीजिए, पहले हम अपनी आँख को छाया के हाशिये से कुछ इंच बाहर की ओर रखकर सूर्य की ओर देख रहे हैं। हम देखेंगे कि सूर्य का समूचा मण्डलक हमारी ओर रोशनी फेंक रहा है। अब माना कि आँख को हमने इस तरह हटाया कि आँख दूरवाली टहनी की उपच्छाया में बिन्दु A पर स्थित है (चित्र ४)। अब यह टहनी हमें सूर्य-मण्डलक के सामने दीखेगी और चूँकि यह सूर्य के एक हिस्से को अपनी आड़

में रोक रही है अतः इस भाग में, जहाँ हमारी आँख स्थित है, प्रकाश की प्रदीप्ति कम हो जायगी। आँख और अधिक हटाएँ ताकि यह बिन्दु B पर स्थित हो, तब द्वितीय टहनी भी सूर्य के सामने आ जाती है और दोनों टहनियाँ एक साथ सूर्य के प्रकाश के अधिकांश को अपनी आड में रोकती है। किन्तु यदि आँख को हटा कर बिन्दु C पर लायें तो वहाँ से दोनों टहनियाँ एक दूसरे की सीध में दीखेंगी और उस दशा में सूर्य-मण्डलक का वह भाग जो टहनियों की आड में पड़ता है, पुन कम हो जायगा और इस कारण भूमि के इस भाग पर रोशनी फिर बढ़ जाती है। यदि यह बात हम ध्यान में रखें कि जब हम भूमि पर छाया को देखते हैं तो हम एक साथ ही उन सभी दशाओं का अवलोकन करते हैं जिन पर अलग-अलग ऊपर विचार किया गया है, तब आसानी से हम समझ सकते हैं कि क्यों समूची छाया का मध्य भाग बगल के दाहिने या बायें भाग की तुलना मे अधिक प्रकाशवान् होता है।

चित्र ४ मे मैंने मोटे तौर पर यह दिखलाया है कि बारी-बारी से बिन्दु A, B, C, D, E पर आँख रखने पर सूर्य-मण्डलक कैसा दिखलाई देगा; अवश्य ऊपर की भाँति यहाँ मान लिया गया है कि दूरवाली टहनी निकट की टहनी की अपेक्षा मोटी दीखती है। प्रकट रूप से यह घटना उस दशा मे दीखेगी जब दोनों ही टहनियाँ भूमि पर सूर्य-मण्डलक (बिम्ब) की अपेक्षा छोटा कोण बनाती है।

'कुछ समय हुए मैं समुद्रतट पर टहल रहा था . . . . मार्च की सन्ध्या का समय था। पश्चिम में समुद्र के पीछे सूर्य अस्त हो रहा था, और चन्द्रमा पूर्व मे चटकीली रोशनी से प्रकाशित था। काफ़ी लम्बे अरसे तक धरती पर डूबते हुए सूर्य के कारण मेरी छाया बनती रही जो पूर्व की ओर पड रही थी, किन्तु बाद में कुछ बहुत थोड़े समय के लिए मेरी छाया एकदम विलुप्त हो गयी और तब चन्द्रमा की रोशनी अस्त होनेवाले सूर्य की रोशनी से अधिक तेज प्रतीत हुई और मेरी छाया पश्चिम की ओर पड़ने लगी।''

क्या यह प्रेक्षण सही था ?

[पानी की सतह पर पड़नेवाली छाया के लिए देखिए § २१६, २१७ और धुध पर पड़नेवाली छाया के लिए १८३, छाया के हाशिये पर प्रकाश और छाया की स्पष्टता के लिए देखिए प्रकरण ९२]

1. From the Icelandic of S. Nordal : Hcl (1917)

अध्याय २

प्रकाश का परावर्त्तन

५ परावर्त्तन का नियम

ऐसी जगह ढूंढ़िए जहां अत्यन्त शान्त, स्थिर पानी की सतह से चन्द्रमा प्रतिबिम्बित हो रहा हो। क्षितिज के ऊपर चन्द्रमा द्वारा बननेवाले कोण और क्षितिज के नीचे उसके प्रतिबिम्ब से बननेवाले कोण की परस्पर तुलना करिए—दोनों ही, प्रेक्षण की त्रुटि-सीमा के अन्दर-अन्दर, परस्पर बराबर होंगे।

चन्द्रमा यदि आकाश में बहुत ऊँचाई पर स्थित न हो, तो आप अपनी छड़ी को फैलायी हुई भुजा के छोर पर इस तरह सीधी खड़ी कर सकते हैं कि छड़ी का ऊपरी सिरा चन्द्रमा की सीध में दीखे तथा हाथ का अँगूठा क्षितिज की सीध में। अपनी भुजा को इसी स्थिति में रखकर हाथ को भुजा के गिर्द इस तरह घुमाइए कि छड़ी का सिरा नीचे की ओर हो जाय, अब देखिए कि यह सिरा चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को छूता है या नहीं।

दूरबीन द्वारा नक्षत्रों के प्रतिबिम्ब को इसी ढंग से नाप करके परावर्तन के नियम की अत्यन्त सही जाँच की गयी है।

दीवार में भीतर की ओर स्थित खिड़की में सूर्य की किरणें उस वक्त प्रवेश करती हैं जब कि सूर्य आकाश में अधिक ऊँचाई पर नहीं होता (चित्र ५)। छाया अब आपाती किरणों की दिशा बतलाती है; परावर्तित प्रकाश अधिक चटकीली रोशनी के धब्बे के रूप में B C की दिशा में गिरता है। यह देखा जा सकता है कि अभिलम्ब[1] BN के लिहाज से ये दोनों दिशाएँ समित[2] हैं और इसलिये $\angle ABN = \angle CBN$। यह गुण परावर्त्तन का नियम नहीं है, बल्कि उससे प्राप्त एक परिणाम है; इसे सिद्ध करिए।

1. Normal   2. Symmetrical

दूर स्थित घरों की खिड़कियाँ केवल उगते हुए या अस्त होने वाले सूर्य को ही क्यों प्रतिबिम्बित करती हैं ?
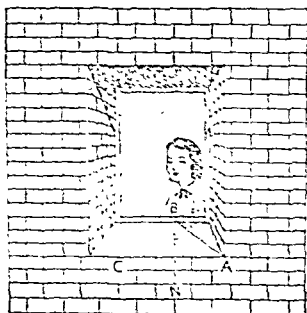
चित्र ५—भीतर धसी हुई खिड़की से सूर्य की रोशनी का परावर्तन।

६. तार से परावर्तन

टेलीफोन के तार धूप में चमकते रहते हैं। यदि आप तार के समानान्तर चलें, तो चमक की रोशनी का धब्बा भी आपके साथ-साथ उसी रफ्तार से सरकता हुआ दीख पड़ता है। इसी प्रकार हम देख सकते हैं कि किस प्रकार रात को, सड़क के खम्भे का लैम्प ऊपर लगे ट्रामगाड़ी के तार पर प्रकाश की रेखा बनाता है। इन प्रतिबिम्बों की सही स्थिति किस बात से निर्धारित होती है? अपने मस्तिष्क में तार को स्पर्श करते हुए एक ऐसे दीर्घ वृत्तजीय[1] ठोस की कल्पना करिए जिसके एक फोकस पर आपकी आँख स्थित हो और दूसरे फोकस पर प्रकाश-स्रोत (चित्र ६)। प्रतिबिम्बित प्रकाश के धब्बे की स्थिति उस स्पर्शबिन्दु[2] पर होगी जहाँ तार दीर्घ-वृत्तजीय ठोस को स्पर्श करता है, क्योंकि दीर्घ वृत्तजीय ठोस का एक सुप्रसिद्ध गुण

1. Ellipsoid 2. Tangent point

यह है कि इसकी सतह के किसी विन्दु को दोनों फोकस विन्दुओं से मिलाने वाली रेखाएँ उस विन्दु के स्पर्शी धरातल के साथ बराबर मान के कोण बनाती हैं।

चित्र ६—टेलीग्राफ के तारों से सड़क के लैंप का प्रतिबिम्बन।

७. वस्तु और उसके प्रतिविम्ब में अन्तर

बहुत-से लोगों का ख्याल है कि शान्त, स्थिर पानी में किसी दृश्य का प्रतिबिम्ब ठीक उस दृश्य के मानिन्द दीखता है, केवल यह ऊपर से नीचे को उलट जाता है। यह धारणा नितान्त भ्रमपूर्ण है। ध्यान दीजिए, रात्रि में सड़क पर लगे लैंप किस प्रकार प्रतिबिम्बित होते हैं! (चित्र ७क) किसी टीले को देखिए जिसका ढाल
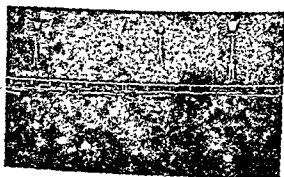
चित्र ७ क—वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।

पानी तक पहुँचता हो, तो पानी में इसका प्रतिविम्ब छोटा ही दीखता है और यदि पानी की सतह से हम काफ़ी अधिक ऊँचाई पर हों तो प्रतिविम्ब एकदम विलुप्त भी हो जाता है (चित्र ७ख)। पानी में खड़ी पत्थर की चट्टान के सिरे का प्रतिविम्ब आप कभी भी नहीं देख सकते।

ये सभी प्रभाव स्वाभाविक प्रतीत होते हैं बशर्ते आप यह बात ध्यान में रखें कि परावर्तित प्रतिविम्ब वास्तव में दृश्य के ही तद्रूप होता है, केवल उसे देखने का पहलू बदल जाता है क्योंकि प्रतिविम्ब मुख्य वस्तु की स्थिति से हटा हुआ होता है। प्रतिविम्ब में हमें वस्तु इस प्रकार दिखलाई देती है मानो हम उसे पानी के नीचे के एक ऐसे बिन्दु से देख रहे हैं जो पानी की सतह से उतना ही नीचे है, जितनी हमारी आँख सतह से ऊपर है। वस्तु की दूरी ज्यों-ज्यों बढ़ती है त्यों-त्यों यह अन्तर भी कम होता जाता है (देखिए §§ ५, १३०)।

चित्र ७ ख—वस्तु अपने प्रतिविम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।

फिर एक और बात पर भी गौर करना होगा। छोटे तालाबों और सड़क के किनारे के गड्ढों के पानी में दीखनेवाली झाड़ियों और वृक्षों के प्रतिविम्ब में स्पष्टता और रंगों तथा शेड के सौष्ठव की मात्रा स्वयं वस्तु के मुकाबले में कहीं अधिक जान पड़ती है। दर्पण के प्रतिविम्ब में बादल जितने सुन्दर दीखते हैं उतने वे स्वयं कभी नहीं दीखते। दूकान की खिड़की के काँच से जिसके पीछे पृष्ठभूमि के लिए गहरे रंग का पर्दा लगा हो, सड़क का प्रतिविम्ब आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दीखता है। ये अन्तर भौतिक की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक कारणों से अधिक उत्पन्न होते हैं। कुछ लोग इसका कारण यह बतलाते हैं कि प्रतिविम्बित दृश्य ऐसी भावना उत्पन्न करते हैं मानों हम एक सपाट सतह में पड़ी तसवीर देख रहे हैं (असलियत यह है कि ठीक वस्तु की तरह ही प्रतिविम्ब के विभिन्न भाग भी विभिन्न धरातलों में स्थित होते हैं)। अन्य लोगों का कहना है कि दर्पण के फ्रेम के भीतर प्रतिविम्ब के बनने के कारण अन्तराल में दृश्य स्थिति अनिश्चित जान पड़ती है, अतः उसका उभार विशेष स्पष्ट महसूस होता है[1]। लेकिन मुझे तो इसका एक अधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह जान पड़ता है कि प्रतिविम्ब में दीखने वाला दृश्य अपने इर्दगिर्द के आकाश की तेज रोशनी की चकाचौंध से आँख

1. J, O, S, A, 10, 141, 1925

को प्रभावित नही करता अर्थात् दृश्य बहुत कुछ वैसा ही दीखता है जैसा किसी नली में से देखने पर (§ ७१)। फिर प्रतिबिम्बित होने पर प्रकाश की दीप्ति भी कम हो जाती है, अतः इस दशा में आकाश और बादलों का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते हैं जो अन्यथा हमारी आँखों के लिए अत्यधिक चमक पैदा करते हैं।

७ क. गड्ढों और नहरों से प्रतिबिम्बित प्रकाश-किरण-पुंज

धूपवाले दिन पानी की प्रत्येक स्थिर सतह सूर्य की किरणों का परावर्त्तन करती है और ये सभी किरण-रेखाएँ भूमि-प्रदेश पर ऊपर की ओर सर्चलाइट की भाँति आती हुई प्रतीत होती हैं। फिर भी इसे हम बहुत कम अवसरों पर ही देख पाते हैं; प्रकाश्यतः इसके लिए अनुकूल परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। इसके लिए सर्वोत्तम अवसर प्रात. या सन्ध्या को मिल सकता है जब कि सूर्य आकाश में नीचे ही
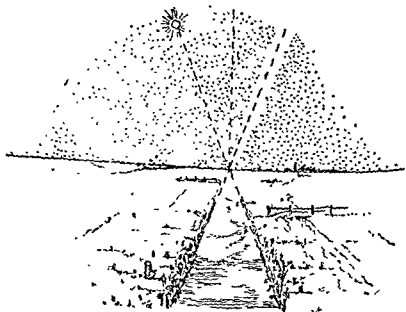
चित्र ७ ग—नहर के पानी से सूर्य-रश्मियों का परावर्तन।

रहता है और इस कारण परावर्त्तन अधिक प्रबल हो पाता है (देखिए § ५२)। प्रत्यक्ष है कि हवा में धुन्ध मौजूद होनी चाहिए ताकि किरणरेखा का मार्ग दृष्टिगोचर हो सके, किन्तु कुहरे की उपस्थिति इस घटना को दूषित कर देगी। पानी के गड्ढे या नहर की दिशा सूर्य की ओर होनी चाहिए ताकि किरणें आसानी से पानी तक

पहुँच सकें। हमे सूर्य की दिशा में देखना चाहिए, उलटी दिशा में नहीं; क्योंकि पहली दशा मे धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण अधिक प्रबल होता है (§ १८३)। पानी की सतह समतल, चिकनी होनी चाहिए; ऐसा उस दिन ही हो सकता है जब हवाएँ न चल रही हो; और गड्ढा लम्बा और सीधा होना चाहिए। निचले भूमि-खण्डो मे अक्सर अनेक समानान्तर खाइयाँ मिलती है, और यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हुई तो रेलगाडी पर इन्हें आडी दिशा में पार करते समय हर खाई पर आपको प्रकाश-ज्योति ऊपर की ओर लपकती हुई दीखेगी।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि नहर के बायें किनारे पर यदि आप खडे है तो आपको बायीं ओर की किरण-शलाका दाहिनी ओर की किरण-शलाका की अपेक्षा अधिक तीक्ष्ण दीख पडेगी; और यदि आप दाहिने किनारे पर खड़े हैं तो दाहिनी ओर की किरण-शलाका अधिक तीक्ष्ण दीखेगी (चित्र ७ग)।

८. कपट परावर्तन

मकानों की पंक्ति गली में काली छाया की पट्टी-सी बनाती है, किन्तु बीच-बीच में रोशनी के अप्रत्याशित धब्बे भी दीखते हैं (चित्र ८)। रोशनी यहाँ कैसे पहुँच पाती है? धब्बे के सामने हाथ रखिए, और उसकी साया की स्थिति देखकर मालूम करिए कि किस दिशा से वहाँ प्रकाश आ रहा है। आप देखेंगे कि गली की दूसरी ओर के मकान की खिड़की से परावर्तित होकर यह रोशनी आ रही है।

चित्र ८—सँकरी अँधेरी गली में धूप के धब्बे।

इसी प्रकार पानी की नहर की सतह पर रोशनी के धब्बे देखे जा सकते हैं यद्यपि नहर स्वयं साये में स्थित होती है। दूसरी ओर स्थित मकानों मे परावर्तित होकर ही प्रकाश इन धब्बों तक पहुँचता है।

पानी के किनारे खड़े मकानो की कतार पूर्णतया साये में होती है, तब भी उन पर रोशनी के धब्बे हिलते-डोलते रहते है जो एक नियमित शक्ल मे बहुत कुछ
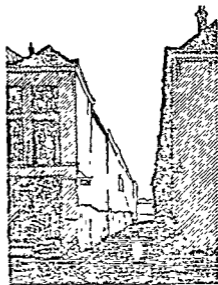
समानान्तर लकीरों के रूप में आगे की ओर चलते जान पड़ते हैं। ये पानी की लहरों से परावर्तित होनेवाले प्रकाश के धब्बे हैं (चित्र९)। लहर का भाग AB एक अवतल दर्पण सरीखा काम करता है और फोकस बिन्दु L पर यह प्रकाशकिरण की एक चमकीली रेखा बनाता है। लहर के भाग BC की वक्रता कम है, अतः इससे परावर्तित होने वाली किरणें बहुत अधिक फासले पर मिलती हैं। इस प्रकार दीवार की हर दूरी के लिए लहर के कुछ भाग ऐसे मिलते हैं जो वहाँ प्रकाश की तीक्ष्ण रेखा बनाते हैं, जब कि अन्य भागों से वहाँ के लिए बस सामान्य रूप से रोशनी पैदा करने-वाला प्रकाश पहुँचता है। इसी प्रकार के प्रभाव बन्दरगाह के घाट तथा पुल के मेह-राव की भीतरी सतहों पर भी देखे जा सकते हैं (प्लेट IV a)। दरअसल यह उदाहरण टिमटिमाते हुए सितारे का नमूना (देखिए §४०) उपस्थित करता है।
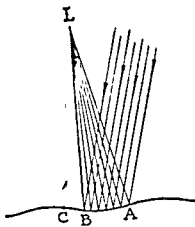
चित्र ९—किंचित् तरंगित पानी द्वारा परावर्तन से प्रकाश-रेखाओं का निर्माण।

९. प्रतिबिम्ब पर लक्ष्य वेधना

साल्जबर्ग के निकट 'कोनिग्सी' नाम की एक झील है जो चारों ओर से ऊँचे पहाड़ों से घिरी होने के कारण अत्यन्त शान्त रहती है। यहाँ गोली दागने की प्रति-योगिता का आयोजन किया जाता है। इस प्रतियोगिता में प्रतियोगी लक्ष्य के प्रतिबिम्ब पर निशाना साध कर पानी पर गोली दागता है और तब गोली पानी की सतह से टकरा कर उछलती है और लक्ष्य को बेधती है। इस प्रतियोगिता में भी लक्ष्य भेदने की सम्भावना कम से कम उतनी ही प्रबल अवश्य होती है जितनी उस दशा में जब कि सीधे लक्ष्य पर ही निशाना साधा जाय।

इस सम्बन्ध में विचित्र बात यह है कि गोली पानी की सतह से वापस नहीं उछलती बल्कि उसके अन्दर प्रवेश करके कुछ दूर तक भीतर वह चली जाती है। द्रव-गतिकीय सिद्धान्त से हम जानते हैं कि गोली के गिर्द के द्रव की हरकत का प्रभाव यह होता है कि गोली को वह सतह की ओर फेंके। फलस्वरूप, अन्त में सतह से बाहर

दूसरी ओर गोली उसी कोण पर बाहर निकलती है जिस कोण पर पानी की सतह मे वह घुसी थी। पानी के अन्दर पर्दे लटका कर गोली की मार्ग-दिशा का अनुगमन सम्भव हो सका है[1]।

१०. गॉस का हीलियोट्रोप

दर्पण को ऐसी स्थिति मे रखिए कि यह सूर्य की रोशनी को परावर्तित कर सके। दर्पण के निकट परावर्तित प्रकाश के धब्बे की शक्ल दर्पण की तरह ही होती है, कुछ दूर आगे जाने पर धब्बे की आकृति कुछ अस्पष्ट हो जाती है; और भी अधिक दूरी पर यह वृत्ताकार हो जाता है तथा बहुत दूर जाने पर यह सूर्य के सही प्रतिबिम्ब की शक्ल अख्तियार कर लेता है। अब दर्पण के एक हिस्से को ढँक दीजिए तो परावर्तित धब्बा अब भी वृत्ताकार बना रहता है, किन्तु इसकी प्रदीप्ति कम हो जाती है। ५० गज से अधिक दूरी पर रोशनी के धब्बे को देख सकना सम्भव न होगा, किन्तु इस फासले पर स्थित प्रेक्षक अब भी धूप मे दर्पण को तेज प्रकाश से चमकता हुआ देख सकेगा।

दर्पण को शिकजे मे लगाकर, या दो ईंटो के सहारे, खुली जगह में इस तरह रखिए कि सूर्य की किरणे परावर्तित होने पर पूर्णतया क्षैतिज तल मे पड़ें। अब दर्पण की ओर मुँह करके पीछे की ओर उतनी दूर तक हटिए जितनी दूर तक परावर्तित रोशनी आपको दीखती रहे। अवश्य परावर्तित किरण-पथ की सीध में अपने को रखना कठिन होगा, किन्तु सौभाग्यवश इस किरणरेखा का व्यास, ज्यों-ज्यों पीछे हटे, त्यों-त्यो बढ़ता जाता है। इस बात की जाँच करने के लिए आप किरणरेखा के पथ मे दाहने-बाये हटकर देख सकते हैं कि किरणरेखा का दायरा कितना बड़ा है; १०० गज की दूरी पर यह दायरा १ गज चौड़ा मिलेगा। फिर आपको यह ध्यान मे रखना होगा कि इस बीच सूर्य आकाश मे सरक रहा है; इस कारण इस प्रयोग के लिए दोपहर का समय चुनना चाहिए क्योंकि तब परावर्तित किरणे, बिना किसी विशेष समायोजन के, क्षैतिज बनी रहती है।

आश्चर्य की बात है कि रोशनी का नन्हा-सा यह धब्बा कितनी दूर तक दिखलाई देता रहता है! त्रिकोण सर्वेक्षण मे गॉस ने इस तरीके से सुस्पष्ट प्रकाश-स्रोत हासिल किये थे जो नापनेवाले यत्रों की दूरबीन द्वारा ६० मील के फासले से भी देखे जा सकते थे। इस प्रकार बनायें गये हीलियोट्रोप मे विशेष यंत्र सस्थान लगे होते है ताकि

1. Ramsauer Ann. d. Phys. 84, 730, 1927

प्रकाश-रश्मियों को इच्छानुसार किसी भी दिशा में फेंक सकें। प्रकाश को ढककर या उसे फिर खोल कर मोर्स संकेत (Morse Signats) दूर तक भेज सकते हैं।

११. वाटिका-ग्लोब में प्रतिबिम्ब

उत्तल दर्पण, जिनके बारे में हम स्कूल में पढ़ते रहते हैं, छोटे आकार के होते हैं तथा इनकी वक्रता भी कम ही होती है। ये दर्पण वाटिका-ग्लोब के उस छोटे-से भाग A B के अनुरूप होते हैं जो हमारे ठीक सामने पड़ता है और जिसमें स्वयं अपना प्रतिबिम्ब हम देख सकते हैं (चित्र १०)।

चित्र १०—एक छोटे वाटिका-ग्लोब में विश्व का प्रतिबिम्बन किस प्रकार होता है।
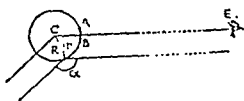
किन्तु समूचा वाटिका-ग्लोब तो अपेक्षाकृत बहुत अधिक दिलचस्प है। सबसे अधिक विलक्षण बात यह है कि इसके अन्दर समूचे गगनमण्डल (अधिक यथार्थ यह है कि आकाश और पृथ्वी) की सतह एक वृत्त के अन्दर हम देख सकते हैं। वाटिका-ग्लोब एक ऐसे प्रकाश-यंत्र सरीखा काम करता है जिसका द्वारक आदर्श रूप से विशद रूप से चौड़े मुंह का हो। अवश्य ऐसा इसलिए सम्भव हो सका है कि इसके अन्दर बनने वाले प्रतिबिम्ब विकृत होते हैं। ये बिम्ब त्रिज्या की दिशा में संकुचित हो जाते हैं; वस्तु, ग्लोब की सतह के जितने निकट होगी उतना ही अधिक विकृत उसका बिम्ब बनेगा (चित्र १०)। सहूलियत के लिए मान लीजिए कि वस्तु और निरीक्षक दोनों ही ग्लोब से काफ़ी अधिक फासले पर हैं (ग्लोब की त्रिज्या R की तुलना में)। अब वस्तु यदि ऐसी दिशा में है कि यह रेखा C E के साथ कोण α बनाती है तो वह वस्तु ग्लोब के केन्द्र C से दूरी $r=R \sin \frac{1}{2} \alpha$ पर प्रतिबिम्बित होगी। सहज ही देखा जा सकता है कि कोण α जैसे-जैसे $180°$ तक बढ़ता जाता है वैसे-वैसे r भी बढ़कर मान R के बराबर हो जाता है, अतः समूचा आकाश और पृथ्वी ग्लोब पर प्रतिबिम्बित होता है। केवल वह नन्हा-सा भाग जो ग्लोब के ठीक पीछे पड़ता है, इस प्रतिबिम्ब में मौजूद न होगा; अवश्य ग्लोब से जितनी अधिक दूरी पर हम खड़े होंगे, अनुपात से, ग्लोब की आड़ में पड़नेवाला भाग भी छोटा होता जायगा।

हेल्महोल्ट्ज ने एक बार कहा था कि ग्लोब में विकृत दीखनेवाला भूमि-दृश्य पूर्णतया सामान्य प्रतीत होगा बशर्ते दूरी नापने का हमारा मानदण्ड भी उसी नियम

के अनुसार लम्बाई में घटा लिया जाय। यह कथन आपेक्षिकता-सिद्धान्त से निकट सम्बन्ध रखता है।

ऋतु प्रकाश-विज्ञान के क्षेत्र मे वाटिका-ग्लोब का उपयोग अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण के लिए किया जा सकता है क्योंकि आकाश के एक वृहत् क्षेत्र का अत्युत्तम सर्वेक्षण इससे प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप ग्लोब से चन्द गजो की दूरी पर खडे हो ताकि सूर्य आपके सिर की आड़ मे छिप जाय तो आप असाधारण स्पष्टता के साथ निम्नलिखित को देख सकेंगे (आगे देखिये)—(क) छल्ले, प्रकाश मण्डल (हैलो), रंग-बिरगे बादल, विशप का छल्ला, उषा के शेड; तथा (ख) हेडिंजर का ब्रुश और आकाश से प्राप्त प्रकाश का ध्रुवण। प्रतिबिम्ब के छोटे बनने के कारण शेड का हलका चढ़ाव-उतार गहरी प्रवणता मे तबदील हो जाता है अतः प्रकाश की द्युति तथा रग के अन्तर आँखों को अधिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं। वाटिका-ग्लोब मे देखने पर धुन्धवाले दिन आकाश नितान्त भिन्न दीखता है बनिस्बत उस दिन के जब वायु स्वच्छ तथा ध्रुवीय होती है। सायकिल के हेन्डल पर लगे उत्तल दर्पण की चमकीली सतह में प्रायः आकाश के नन्हें-नन्हे हलके किस्म के बादल दिखलाई पडते हैं जो सीधे ही देखने पर दृष्टि की पकड़ में नही आते।

११ क. साबुन की झाग और बबूले में परावर्तन

ब्वायज, जिसने साबुन की झाग की झिल्लियो से अनेक रोचक प्रयोग किये थे, परामर्श देता है कि किसी शान्त दिन, इमारतो या वृक्षों के दर्मियान एक सुरक्षित कक्ष मे बैठकर खुली हवा में साबुन के बबूले फूंकने चाहिए। तब आप उसकी कोमल सतह में आश्चर्यजनक प्रतिबिम्बन देखेंगे। हमारे रुख की सतह एक उत्तल दर्पण जैसा काम करती है, और वाटिका-ग्लोव की भाँति ही सीधे प्रतिबिम्ब प्रदर्शित करती है, और इस सतह के जितने निकट हम आते हैं उतने अधिक विकृत और सकुचित ये प्रतिबिम्ब होते जाते हैं। किन्तु साथ ही साथ इस ओर की सतह के पार पीछे की सतह भी हम देखते हैं जो एक अवतल दर्पण-जैसा काम करती है और प्रतिबिम्ब को उलट देती है। सीधे प्रतिबिम्ब तथा उलटे प्रतिबिम्ब दोनों एक-से ही आकार के होते हैं; एक दूसरे पर पड़ने के कारण ये अस्पष्ट हो सकते हैं, किन्तु बचत इस बात से हो जाती है कि पहली सतह दूसरी सतह की तुलना मे हमारी आँख के अधिक निकट होती है।

विशेषतया इन पर ध्यान दीजिए—आकाश का दुहरा प्रतिबिम्ब, स्वयं आपके

सिर की छाया-आकृति जो चमकीली पृष्ठभूमि के सन्मुख काले रंग में उभरती है, छतों की छाया-आकृतियाँ जो विचित्र रूप से विकृत होती हैं, आपके हाथ का (जिसमें आप नली पकड़े हैं जिसके सिरे पर साबुन का बबूला लटक रहा है) प्रबल रूप से आवर्द्धित प्रतिबिम्ब (जो अवतल सतह में सर्वोत्तम दीखता है); उस स्थल का प्रतिबिम्ब जहाँ से बबूला लटकता है (अवश्य केवल अवतल सतह में ही), तथा बादलों के सुस्पष्ट प्रतिबिम्ब जो आकाश में इतने अस्पष्ट और धुन्ध लिये हुए दीखते थे।

किन्तु सर्वोपरि, आश्चर्यमय उद्दीप्त बादलों के प्रतिबिम्ब को देखने में आपको आनन्द आयेगा जिनके रंग अधिक परिपूर्ण तथा संपृक्त होते हैं .... जब तक कि बबूला फूट न जाय। ये हैं न्यूटन के सुविख्यात व्यतिकरण के रंग (§ १५५)।

इन बबूलों के तथा प्रतिबिम्बों के फोटोग्राफ लीजिए !

१२. पानी की सतह का अनियमित उभार

टीलों की आड़ में पड़े गड्ढे की कल्पना कीजिए जिसके पानी की सतह को हिलाने-डुलाने के लिए हवा वहाँ न पहुँच पाती हो। घास के इक्के-दुक्के डंठल या नरकुल की नली पानी से बाहर निकली दिखलाई पड़ती है। यह दिलचस्पी की बात है कि प्रत्येक डंठल ठीक जहाँ वह पानी से बाहर निकलता है वहीं रोशनी के धब्बे से वह घिरा होता है। डंठल एक केशनलिका सरीखा काम करता है, अतः पानी के पृष्ठ-तनाव के कारण डंठल के गिर्द पानी कुछ ऊपर चढ़ जाता है। पानी का यह उभरा हुआ भाग सूर्य की रोशनी परावर्तित करता है, अतः दूर तक यह दिखलाई देता है। यदि गड्ढे के पानी का एक भाग टीले के सामनेवाले ढाल को प्रतिबिम्बित करता है और दूसरा भाग चमकीले आकाश को, तब हम देख सकते हैं कि किस प्रकार टीले की छाया के हाशिये पर पड़नेवाले जल के उठे हुए भाग प्रकाश और अन्धकार का विपर्यास प्रदर्शित करते हैं जो इस बात पर निर्भर होगा कि किस दिशा से हम देख रहे हैं।

इसी प्रकार किसी नदी में जहाँ थोड़ा भी बहाव मौजूद हो, छोटे-छोटे भँवर हम देख सकते हैं। प्रत्येक भँवर में भीतर की ओर दाब कुछ कम होता है, अतः केन्द्र की ओर पानी की सतह नीचे दब जाती है। अनुमानतः बीच के गड्ढे का व्यास २ इंच होता है और इसकी गहराई करीब $\frac{1}{25}$ इंच। किनारे की छाया के हाशिये पर जहाँ प्रतिबिम्ब से अन्धकार और प्रकाश की सीमा पड़ती है, पानी के हल्के आन्दोलन

भी स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। प्राय: इस स्थान पर नन्हीं-नन्हीं चकरियों की कतार-सी दीखती है।

वर्षा हो चुकी है। ट्राम की पटरी में लगा हुआ पानी फैला है। और इस दशा में क्षैतिज तल में यानी पटरी की आड़ी स्थिति में, एक प्रतिबिम्ब-रेखा दीख पड़ती है—यह ऊपर के केबुल को सँभालनेवाले तार का प्रतिबिम्ब है। यदि हम पटरी के सीधे खड़े हाशिये की ओर देखें तो इस प्रतिबिम्ब की शकल समान रूप से दोनों ओर मुड़ी हुई दीखती है (चित्र ११, a), जिससे यह साफ़ प्रगट होता है कि पानी की सतह पृष्ठ-तनाव के कारण वक्र हो जाती है। यदि पटरी के बायें हम खड़े हों तब प्रतिबिम्ब की बनावट चित्र ११, b की भाँति होगी और यदि पटरी के दाहिने खड़े हों तब प्रतिबिम्ब चित्र ११, c की भाँति होगा। इस बात पर गौर करिए कि क्यों प्रतिबिम्ब ऐसी ही शकल अख्तियार करते हैं।

स्टीमर पर सवार होकर द्रव की वक्र सतह में बननेवाले प्रतिबिम्ब का अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि इस दशा में बराबर एक ही स्थिति से और एक ही दिशा से आप लहरों को देखते हैं जो साथ-साथ चल रही हैं। विशेषतया इस बात पर गौर करिए कि जब स्टीमर के अग्र भाग के प्रथम धक्के से पानी की सतह में उभार आता है तो प्रतिबिम्ब की शकल किस प्रकार बदलती है। प्रतिबिम्बों में प्रबल सकुचन पैदा होता है तथा वे सीधी अथवा उलटी बनती हैं जो इस बात पर निर्भर करता है कि आप सतह के उत्तल भाग को, या अवतल भाग को देख रहे हैं।

चित्र ११, a b c—ट्राम की पटरीपर वर्षा द्वारा वक्र दर्पण का निर्माण।

१२. खिड़की का साधारण काँच, तथा प्लेट-काँच

सड़क के मकानों की खिड़कियों के शीशे में बननेवाले प्रतिबिम्बों को देखकर आप तुरन्त जान सकते हैं कि वे प्लेट काँच के बने हैं या कि खिड़कीवाले काँच के। प्रथम दशा में परावर्त्तन के प्रतिबिम्बों की आकृति बिगड़ती नहीं है, किन्तु द्वितीय दशा में परावर्त्तन इतना अनियमित होता है कि काँच की सतह के उभार आदि साफ़ दीख जाते हैं। इस प्रकार आप अपने नगर के समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले तथा मध्यवर्गीय लोगों के मुहल्ले में अन्तर पायेंगे। समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले में प्लेट

काँचवाले मकानों की क़तार में आप फौरन इक्के-दुक्के अपवाद स्वरूप मकान को पहचान जाते हैं कि इसकी साथ-साथ बनी खिड़कियों के काँच एक ही धरातल में नहीं हैं क्योंकि उनमें छत के प्रतिबिम्ब एक दूसरे के लिहाज़ से कुछ हटे हुए दीखते हैं, तथा उसके प्लेट-काँच के हाशिये कुछ विकृत हैं।

१४. पानी की हलकी तरंगोंवाली सतह पर अनियमित परावर्तन[1]

लैम्पों के प्रतिबिम्बित प्रकाश की लकीरें मुझे अनिवार्यतः सन्ध्या के शान्त वातावरण की याद दिलाती हैं। समुद्र में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब देखता हूँ तो वह रोशनी की एक चौडी पट्टी-सी फेंकता हुआ प्रतीत होता है। या फिर मुझे प्राचीन नगर ब्रुगेज के मकानों और बुर्जियों की याद आती है—शान्त नहर के पानी में इनके प्रतिबिम्ब में रोशनी का प्रत्येक धब्बा, प्रत्येक रंग, एक खड़ी लकीर की शक्ल में खिंच जाता था तथा ये सभी लकीरें, चाहे छोटी या लम्बी, तरह-तरह की रोशनी और मायावी चमक के साथ कँपती और थिरकती रहतीं।

चाँद या लैम्प जब निकट के पानी की ऐसी सतह से प्रतिबिम्बित होता है जिसमें हलकी हिलोरें उठ रही हों तो हम देखते हैं कि वास्तव में प्रत्येक नन्हीं तरंग एक पृथक् प्रतिबिम्ब का निर्माण करती है। रोशनी में पड़नेवाली ये सभी तरगें मिलकर मोटे तौर पर एक आयताकार पट्टी की शक्ल का प्रतिबिम्ब बनाती हैं जिसका दीर्घ अक्ष उस ऊर्ध्व तल में पड़ता है जो आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरती है। यद्यपि लहरों का बनना पूर्णतया अनियमित रहता है तथा वे समान रूप से हर किसी दिशा में बनती हैं, फिर भी इन लहरों द्वारा अकेले एक प्रकाश-स्रोत से प्रतिबिम्ब के रूप में रोशनी का एक लम्बा फ़ीता-सा प्राप्त होता है जो हमारी आँख की सीध में पड़ता है—इस मौलिक घटना का हमें समाधान ढूँढ़ना है। पट्टी के उस छोर पर जो हमारी ओर पड़ता है, हम स्पष्ट देख सकते हैं कि पानी में लहरों के बनने के अनुसार किस तरह रोशनी की पट्टी कभी लम्बी हो जाती है, कभी छोटी; जब कि दूसरे छोर पर जो हमसे दूर पड़ता है, रोशनी के धब्बे एक दूसरे के निकट खिंचकर एक मध्यमान रूप धारण कर लेते हैं।

1. See in particular : J Picard, Arch, Sc. Phys. Nat. 21, 481, 1881; also G. Galle, Ann. d. Phys., 49,255, 1840; A Wigand and E. Everling, Phys, Zs., 14, 1156, 1913; E. O. Hulburt, J. O. S. A. 24,35, 1934; W.Shoulejkin, Nat., 114, 498, 1924; K Stuchtey, Ann. d. Phys, 59, 33, 1919.

'अतः सही निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए इस प्रकार की पट्टी मे प्रकाश-दीप्ति के औसत वितरण पर विचार करना होगा और उसके लिए सभाविता के सिद्धान्त पर गणना करनी होगी। ठीक तौर पर इस तरह की गणना पहले कभी नही की गयी है। अतः हम अपने लिए, समस्या को सरल बनाने के निमित्त, मान लेगे कि लहरो की सतह का झुकाव एक निश्चित कोण α से अधिक नही है, और तब इस दशा में उनसे परावर्तित होकर बननेवाले रोशनी के धब्बे की स्थिति सीमाएँ ज्ञात करेगे। या दूसरे शब्दों मे, प्रश्न यह है कि यदि प्रत्येक स्थान पर हर दिशा मे कोण α पर झुकी हुई लहरे मौजूद हों तो हमे मालूम करना है कि प्रकाश से आलोकित होनेवाली इन तमाम लहरों की सतहों का बिन्दु क्या होगा ? इस रूप में लेने पर भी प्रश्न काफी जटिल बना रह जाता है—

सबसे सरल दृष्टान्त ले कि निरीक्षक तथा प्रकाश-स्रोत दोनो पानी की सतह से समान ऊँचाई पर स्थित है, अर्थात् $h=h'$ (चित्र १२)।
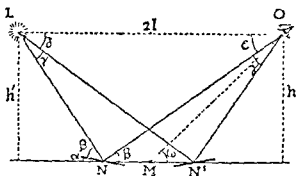
चित्र १२—परावर्तित प्रकाशपथ के दीर्घ अक्ष की गणना।

ठीक बीच के बिन्दु M पर एक छोटा दर्पण क्षैतिज तल में रखे तो यह प्रकाश सूत्र की रोशनी प्रेक्षक O की आँख मे फेकेगा—इस स्थिति पर ही नियमित परावर्तन होता है। दर्पण यदि कोण α पर झुका हो तो इसे मध्य बिन्दु M से कुछ फासले पर रखना होगा ताकि यह प्रेक्षक तक रोशनी फेक सके। प्रश्न यह है कि यह दूरी कितनी होनी चाहिए।

प्रकाश-स्रोत और आँख से गुजरनेवाले ऊर्ध्व तल में दर्पण कोणीय झुकाव के लिए इस प्रश्न का उत्तर सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। मान लीजिए दर्पण एक ओर झुकता है तो उसकी स्थिति N है और दूसरी ओर झुकता है तो स्थिति N' है, तब

संमिति के कारण MN=MN' होगा। अब निम्नलिखित कोणों पर ध्यान दीजिए—

$$\beta+\alpha=\gamma+\delta$$
$$\beta-\alpha=\epsilon=\delta$$

अतः, $\gamma=\alpha+\beta-(\beta-\alpha)=2\alpha$

यह एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष है। प्रतिबिम्ब की रोशनी के स्तम्भ के सबसे अधिक लम्बे अक्ष द्वारा आँख पर बननेवाला कोण लहरों के दो महत्तम झुकावों के दर्मियान बननेवाले कोण के बराबर है (चित्र १३)।

अब आँख और प्रकाश स्रोत को मिलानेवाली रेखा के समकोण तल में M पर रखे दर्पण को घुमाइए और मान लीजिए दर्पण के लिए दो स्थितियाँ P तथा P' मिलती हैं जहाँ से अनुकूल परावर्तन होता है (चित्र १४)।
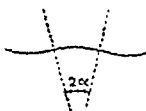
चित्र १३
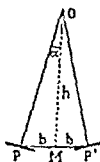
चित्र १४—परावर्तित प्रकाशस्तम्भ के लघु अक्ष की गणना।

स्पष्ट है कि $MP=MP'=h \tan\alpha$ अतः रोशनी के स्तम्भ की चौड़ाई $2h\tan\alpha$ होगी और स्तम्भ का लघु अक्ष आँख पर कोण $\frac{PP'}{OM}=\frac{2h\tan\alpha}{\sqrt{b^2+h^2}}$ बनायेगा। (tangent-[illegible])

अब रोशनी के स्तम्भ के दोनों आमापी अक्षों का अनुपात, यदि रोशनी का स्तम्भ बहुत बड़ा न हो, $\frac{h\tan\alpha}{\alpha\sqrt{b^2+h^2}}$ या सन्निकटतः $\frac{h}{\sqrt{h^2+b^2}}=\sin\omega$ होगा। [illegible] यदि पानी की ओर देख रहे हों तो अब रोशनी का स्तम्भ [illegible] [illegible] कोण ω का मान अधिक होने से [illegible] के बराबर होगा। [illegible]

अधिक तिरछी दिशा में देखेंगे उतना ही अधिक लम्बा यह स्तम्भ दीखेगा। यदि हमारी निगाह पानी के तल को करीब-करीब छूती हुई हो, तब यह स्तम्भ बेहद सँकरा दीखेगा।

हमें प्रमुख दायरा[1] तथा गौण दायरे के दर्मियान का अन्तर सदैव ध्यान में रखना चाहिए। प्रमुख दायरा वह वक्र आकृति है जो लहरवाले पानी के धरातल पर इस तरह खींची हुई मानी गयी है कि वह प्रकाशस्तम्भ की सीमा-रेखाएँ प्रगट कर सके, जब कि गौण दायरा दृष्टिरेखा के समकोण धरातल पर प्रमुख दायरे के प्रक्षेपण से प्राप्त होता है। प्रमुख दायरे के अक्षों की गणना आसानी से की जा सकती है, यद्यपि यह एक छ. घात की वक्र आकृति है जो विन्दु M के गिर्द समित होगी। अवश्य गौण दायरा थोड़ा असमित हो जाता है, अधिकतम चौड़ा भाग विन्दु M की अपेक्षा हमारे निकट अधिक पडता है जब कि विन्दु M पर ही हमने आड़े अक्ष की लम्बाई ज्ञात की थी। यह असमिति उस वक्त विशेष रूप से प्रदर्शित होती है जब सतह के साथ दृष्टि-रेखा छोटे मान का कोण बनाती है।

२. सामान्य दशा, जब $h \neq h'$ (चित्र १५) पहले की तरह ही हम इन दोनों निष्कर्षों को सिद्ध कर सकते हैं कि—
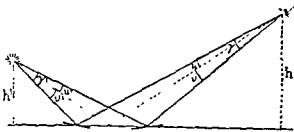
चित्र १५—प्रकाश के धब्बे का प्रेक्षण, प्रकाश-स्रोत की स्थिति से भिन्न ऊँचाई के तल से।

$$u+v'=2\alpha$$
$$u'+v=2\alpha$$
$$\therefore\ u+v+u'+v'=\gamma+\gamma'=4\alpha$$

और आगे गणना करने पर सिद्ध होता है कि रोशनी के धब्बे की सीमारेखा बहुत कुछ दीर्घ वृत्ताकार रहती है, किन्तु निष्कर्ष जटिल ही प्राप्त होते हैं। व्यवहार में

1 Primary oval

h और h' का अन्तर प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई-चौड़ाई के मान को ही प्रभावित करता है, इनकी निष्पत्ति से नहीं।

अवश्य सन्निकटतः

$$\frac{\gamma}{\gamma'}=\frac{h'}{h}$$

अतः
$$\gamma=4\alpha\frac{h'}{h+h'}$$

३. विशेष दशा, जब $h=\infty$। यह दशा सूर्य, चन्द्रमा या अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित लैम्प के लिए लागू होती है।

अब सूत्र के रूप इस प्रकार होंगे—

$\gamma=4\alpha$ तथा $PP'=2h\ \tan\ 2\alpha$ (जैसा कि सिद्ध कर सकते हैं)। दायरे के अक्ष आँख पर लगभग 4α तथा $4\alpha\ \sin\omega$ के कोण बनाते हैं। प्रकाश-स्तम्भ की आभासी लम्बाई और चौड़ाई की निष्पत्ति $\sin\omega$ है जो ठीक उतनी ही है जितनी दशा १ में, केवल इस बार सभी आयाम पहले की अपेक्षा दो गुने हैं।
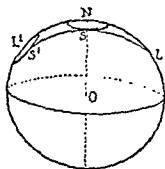
चित्र १६—गोले की सहायता से यह दिखलाना कि स्तम्भ को शकल का प्रकाशपथ कैसे बनता है।

इन परावर्त्तनों में प्रकाश-वितरण का एक सामान्य अन्दाज़ गणना के बिना ही, निम्नलिखित वितर्क से प्राप्त कर सकते हैं (चित्र १६):—

कल्पना कीजिए कि अत्यन्त छोटे पैमाने पर निरूपित परावर्तन के तल एक बड़े गोले के केन्द्र के निकट स्थित हैं; पानी की स्थिर सतह पर खींचा गया अभिलम्ब, बिन्दु N तक पहुँचता है, अतः नन्हीं लहरों की झुकी हुई सतहों के अभिलम्ब एक दायरे के अन्दर होंगे जिसकी बिन्दु N से कोणीय दूरी α होगी। अनन्त दूरी का प्रकाश-स्रोत गोले के बिन्दु L द्वारा प्रदर्शित है।

अब यह ज्ञात करने के लिए कि अभिलम्ब OS वाली सतह किरणों को किस प्रकार परावर्तित करेगी, यह पर्याप्त होगा कि बृहत् वृत्त का चाप LS को खींचकर उसे बिन्दु S' तक बढ़ा लें, ताकि $SS'=SL$। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि तमाम छोटी लहरों से परावर्तित होनेवाली किरणें एक शंकु बनाती हैं जिसका आधार अत्यन्त दीर्घ वृत्ताकार

है तथा यह दीर्घ वृत्त और भी अधिक चिपटा हो जाता है यदि पानी की सतह को हम और तिरछी दिशा से देखें। यह समझना आसान भी है कि क्यों प्रेक्षक की दृष्टि-रेखाएँ भी वैसी ही शक्ल अख्तियार करती हैं अर्थात् आँख से पानी पर पड़नेवाले रोशनी के धब्बे के सीमा-बिन्दुओं तक खींची जानेवाली रेखाएँ भी शंकु बनाती हैं।

व्यावहारिक रूप से प्रेक्षक को क्या दिखलाई पड़ेगा—इस दृष्टि से आइए अपनी गणना के निष्कर्षों का सारांश प्राप्त करें—प्रथम, यदि हम मानें कि पानी की सतह से हम उतनी ही ऊँचाई पर हैं जितनी ऊँचाई पर प्रकाश-स्रोत, तब प्रकाश-स्तम्भ के दीर्घ अक्ष से आँख पर बननेवाला कोण 2α के बराबर होगा जो लहरों के महत्तम झुकावोंवाले दो तल के दर्मियान बनता है (चित्र १३)। इसी अनुपात मे, पानी की सतह पर जितनी अधिक तिरछी दिशा से हम देखते हैं, प्रकाशस्तम्भ का आड़ी दिशा का अक्ष उतना ही अधिक छोटा होगा।

द्वितीय, यदि पानी की सतह से प्रकाश-स्रोत की ऊँचाई हमारी आँख की अपेक्षा अधिक है तो प्रकाशस्तम्भ के सभी विस्तार अधिक लम्बे (कोणीय नाप में) हो जाते हैं; और यदि प्रकाशस्रोत की ऊँचाई अनन्त के सन्निकट पहुँचे. तो ये विस्तार भी पहले की अपेक्षा दो गुने मान के करीब पहुँचते हैं। किन्तु इस दशा मे भी दीर्घ अक्ष और लघु अक्ष के दर्मियान की निष्पत्ति करीब-करीब पहले-जैसी ही बनी रहती है।

चन्द्रमा से बननेवाले प्रकाश-स्तम्भ की तुलना ऐसे लैम्प के प्रकाश-स्तम्भ से करिए जिसका प्रतिबिम्ब लगभग उसी दिशा मे पड़ रहा हो। सामान्य तौर से प्रकाश के धब्बे प्रकाश-स्रोत से जितनी दूर होंगे, वे उतने ही बड़े होते हैं। वस्तुएँ, यदि पानी की सतह के अत्यन्त निकट हैं तो इनके प्रतिबिम्ब स्तम्भ सरीखे खिचे हुए, लम्बे नही, बल्कि करीब करीब एक बिन्दु-जैसे बनेगे। पानी की सतह के साथ विभिन्न मान के कोणवाली दिशाओं से देखकर इन धब्बों की तुलना करिए।

विभिन्न वेग की हवाओं के वक्त दिखलाई देनेवाले प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई द्वारा बननेवाले कोण 2α को भी नापिए।

ध्यान दीजिए कि वर्षा के समय प्रकाशस्तम्भ कितने बढ़िया तौर पर नियमित, लम्बे और सीधे खड़े से बनते हैं क्योंकि लहरें यद्यपि छोटी होती हैं, किन्तु उनका झुकाव तीव्र होता है।

अलग-अलग प्रत्येक तरग पर बननेवाले प्रतिबिम्बो की शक्लो का निरीक्षण भी महत्व रखता है। प्रत्येक तरंग रोशनी का एक धब्बा बनाती है जो क्षैतिज दिशा में फैला होता है। सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती जाती है उतना ही यह धब्बा

भी पतला होता जाता है और करीब-करीब एक पतली लकीर-सा बन जाता है। ये सभी छोटी लकीरें साथ मिलकर ऊर्ध्व स्तम्भ का निर्माण करती हैं। (चित्र १७, बायां)।
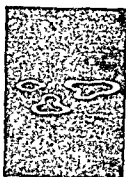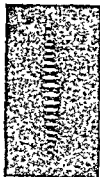
चित्र १७—किंचित् तरंगित होते हुए पानी पर प्रकाश स्तम्भ।

ऊँचे प्रकाश-स्रोत से आने वाले प्रकाश का प्रतिबिम्बन।

ये प्रतिबिम्ब चारों ओर से घिरे छल्ले की विलक्षण आकृति उस वक्त धारण करते हैं जब प्रकाशस्रोत ऊँचाई पर होता है तथा इसका विस्तार-क्षेत्र बड़ा होता है (जैसे निअन गैस नली के विज्ञापनवाले प्रकाश-स्रोत)। (चित्र १७ दाहिना)।

मान लीजिए, पानी की सतह जब झुक रही हो तो हम नीचे की ओर पानी की ऐसी सतह पर देख रहे हैं जो इतनी ढालुवाँ है कि प्रत्येक प्रकाश-स्रोत L को लहर के दो पृथक् बिन्दुओं पर प्रतिबिम्बित होते देख सकते हैं। उदाहरण के लिए लहर के सिरे के बिन्दु S_1 से और गर्त्त के बिन्दु S_2 से प्रतिबिम्बित हम देखते हैं जब कि दोनों बिन्दुओं पर स्थित स्पर्शी रेखाओ का झुकाव लगभग समान है। उन दोनो के दर्मियान मान लीजिए बिन्दु S' के निकट ढाल अधिक तेज है, तो यहाँ से हम नीचे के बिन्दु L' का प्रतिबिम्ब देखते हैं जो प्रकाश उत्पन्न नहीं कर रहा है।

अवश्य दोनों बिन्दु S_1 तथा S_2 लहर के एक ही पार्श्व पर हैं। यदि हम अपनी आँख बगल की ओर हटाते है तो हम दोनों प्रतिबिम्बों के एक दूसरे के निकट आते देखते हैं जो अन्त में एक दूसरे मे आत्मसात् हो जाते है, अतः एक वृत्त या कुंडल-सा बन जाता है। (चित्र १७ क)

रोशनी के इन धब्बों के दृश्य स्वरूप की एक और भी विशिष्टता है—प्रत्येक धब्बा सदैव हमारी आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल में ही पडता है (अपवाद के लिए देखिए § १५)। चित्रांकन के समय या रंगीन चित्र बनाते समय सभी चीजों का प्रेक्षपण मैं अपने सामने के ऊर्ध्व धरातल पर प्राप्त करता हूँ; इस कारण प्रकाश का प्रत्येक धब्बा अनिवार्य रूप से ऊर्ध्व दिशा में खिंच उठता है, चाहे यह धब्बा

दृश्य के केन्द्र-विन्दु से इधर-उधर हटा ही क्यों न हो। क्लादे द्वारा निर्मित उफिजी के एक चित्र में सूर्य चित्र-पटल के हाशिये के निकट दिखलाया गया है, फिर भी चित्रकार
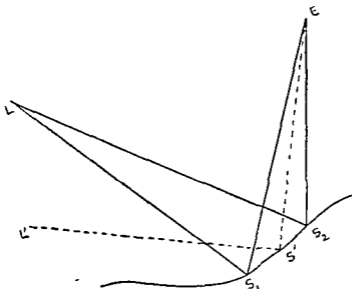
चित्र १७ क—लहरों से बननेवाले प्रतिबिम्ब में छल्ले का निर्माण।

ने इसमें एक प्रकाशस्तम्भ दिखलाया है जो सूर्य से चित्र के आमुख के मध्य विन्दु तक तिरछी दिशा में आता है—यह गलत चित्रण है।[1]

अपना कैमरा समुद्र पर फोकस करिए जिस पर सूर्य चमक रहा हो और कैमरे के पर्दे पर देखिए कि लहरों से परावर्तित होनेवाला प्रकाश किस प्रकार वितरित हो रहा है। इससे आप पता लगा सकते हैं कि लहरों का ढाल कैसा है और उनकी प्रमुख दिशा क्या है; तथा एक नजर मे पानी की सतह का समष्टि रूप से अनुदर्शन प्राप्त किया जा सकता है तथा फोटो की प्लेट पर इसे अङ्कित किया जा सकता है।[2]

१५. नन्हीं तरंगों से आलोड़ित पानी की सँकरी सतह से परावर्तन

इस दशा में प्रकाश के धब्बे प्रायः स्पष्ट तौर से असंमिति का प्रदर्शन करते हैं। मिसाल के लिए नहर के पार दाहिनी ओर के लैम्प को देखें तो अब ये धब्बे आँख और

1. Ruskin, Modern Painters I & II
2. W· Shoulejkin, Loc. cit.

प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल में नहीं पड़ते बल्कि नहर की ओर, अर्थात् दाहिने झुके प्रतीत होते हैं (चित्र १८)।
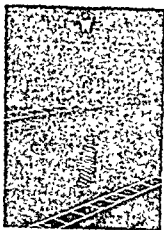
चित्र १८—एक अद्भुत दृश्य; प्रतिबिम्ब, आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्वतल में नहीं पड़ता।

यदि तिर्यक् दृष्टि से बायीं ओर के लैम्प को देखें तो ये धब्बे फिर नहर की ओर अर्थात् बायें झुके दीखते हैं।

फिर भी हमारा सिद्धान्त गलत नहीं है; क्योंकि यदि वर्षा हो रही हो और हवा न चल रही हो तब चाहे किसी दिशा से देखें, ये धब्बे पूर्णतः ऊर्ध्व धरातल में स्थित होते हैं। इनके तिरछे दीखने का कारण हवा का वेग है जो प्राय. लहरों को नहर की दिशा में बहाने की चेष्टा करती है, अत. इस दशा में आदर्श रूप से अनियमित तरंग रूप को लेकर गणना का आरम्भ हम नहीं कर सकते।

निम्नलिखित प्रेक्षण इस बात को सिद्ध कर सकते हैं—

(क) चौडे पाट की नदी में प्रकाशस्तम्भ के झुकाव की दिशा बहुत कम व्यवस्थित रहती है। इस दशा में नदी के किनारे के समकोण लहरों की दिशा को कोई प्रमुखता नहीं प्राप्त होती।

(ख) पानी पर बर्फ की हलकी तह यदि जमी हो तब ऐसा प्रतीत होता है मानो बर्फ पर जगह-जगह नन्ही ढेरियाँ उठी हैं, और प्रकाशस्तम्भ स्पष्ट दिखलाई पड़ता है, किन्तु यह ऊर्ध्व दिशा में ही स्थित होता है।

(ग) पानी की बौछार से भीगी ऐसफाल्ट की सड़क पर सड़क के लैम्प या मोटरकार या साइकिल के हेडलैम्प के प्रतिबिम्ब में झुकाव उसी प्रकार के देखने को मिलते हैं जिस प्रकार के तेज हवा में नहर के पानी पर। वास्तव में सड़क पर गुजरने वाली सवारियों के कारण ये अनियमितताएँ प्रगट होती हैं। (किस प्रकार ये उत्पन्न होती हैं, यह भी एक दिलचस्प विषय है)। यदि सड़क के धरातल की हम जाँच करें तो हम देखते हैं कि इस पर वास्तव में लहरें मौजूद हैं जिनकी शीर्षरेखाएँ सड़क की आड़ी दिशा में पड़ती हैं।

इस घटना का निर्माण करने के लिए, काँच का कोई टुकड़ा लीजिए, और चिकनाई लगी उँगली से इस पर समानान्तर दिशाओं में रगड़ की लकीरें डाल दीजिए। सामने मेज पर काँच को क्षैतिज रख दीजिए और उसमें किसी दूरस्थ लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए जो मेज की सतह से बहुत ऊँचा न हो। काँच को पहले इस प्रकार अवस्थापित करिए कि रगड़ की लकीरें परावर्तन-धरातल के समकोण पड़ें। प्रकाश का विस्तार इसी धरातल में होगा और इसका प्रक्षेपण ऊर्ध्व तल में पड़ेगा। अब यदि काँच को उसी के धरातल में कोण p के बराबर घुमाएँ तो प्रकाश का विस्तार g कोण घूम जायगा। यह दिखलाया जा सकता है कि $\tan g = \tan p \times \sin \omega$ जिसमें ω पुनः दृष्टिकोण तथा क्षैतिज तल के दर्मियान का कोण है। उदाहरण के लिए यदि काँच को $p=45^\circ$ के कोण पर घुमाया जाय, तो प्रकाश का विस्तार उसी दिशा में अपेक्षाकृत बहुत धीरे कोण पर घूमेगा। किन्तु काँच को घुमाना जारी रखें तो प्रकाश का विस्तार उत्तरोत्तर अधिक तेजी से घूमेगा और अन्त में यह रगड़ की लकीरों की दिशा में आ जायगा जबकि $p=g=90^\circ$ होता है। (चित्र १८ क, ख)
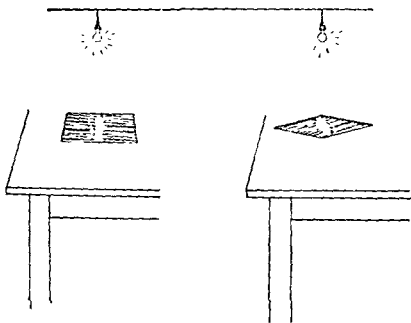
चित्र १८ क, ख—तरंगित धरातल द्वारा बननेवाले प्रतिबिम्ब असंमित कब होते हैं।

इस विषय की विस्तृत व्याख्या अभी तक की नहीं गयी है, किन्तु इसकी प्रमुख

विशेषताओं का कुछ अनुमान हम, कम से कम, अनन्त पर स्थित प्रकाशस्रोत के लिए, गोले पर उसका प्रक्षेप प्राप्त करके लगा सकते हैं (चित्र १९)। यदि परावर्त्तन धरातल के अभिलम्ब, विन्दु N के गिर्द दिखायी गयी वक्र रेखा पर वितरित हों तो परावर्तित किरणें विन्दु L′ के गिर्द दिखायी गयी वक्ररेखा के विभिन्न बिन्दुओं तक पहुँचेंगी; परावर्तित प्रकाश-स्तम्भ का अक्ष अब LNL′ से गुजरने वाले धरातल में नहीं पड़ेगा बल्कि यह बगल को हटा हुआ होगा।
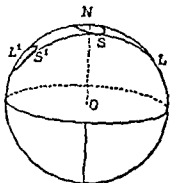
चित्र १९—तरंगें जब निश्चित दिशा में अवस्थित होती हैं तो प्रकाश के तिरछे धब्बे किस प्रकार बनते हैं।

लहरदार सतह से होनेवाले परावर्त्तन का एक विशेष दृष्टान्त रात को उस समय देखा जा सकता है जबकि बड़ी दूकानों की खिड़कियों के सामने लगे झिरीदार पर्दे से सड़क का लैम्प प्रतिबिम्बित होता है। झिरियों पर प्रकाश का एक दायरा देखते हैं जो होता तो परिवलय की शक्ल का है, किन्तु हमारी आँख को वह एक वृत्त का भाग दीखता है। इसकी ज्यामिति समीक्षा अत्यन्त सरल है; बेलनाकार लहरदार सतह से परावर्तित होने वाली तमाम किरणें एक शंकु बनाती हैं जिसका अक्ष लहर के शीर्ष के समानान्तर होता है।
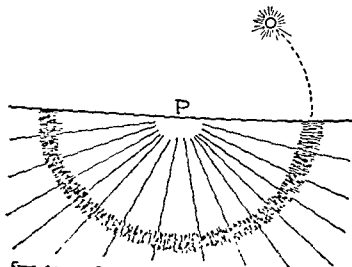
चित्र १९ क—खिड़की की लहरदार झिरीवाले आवरण पर प्रतिबिम्ब परवलय शक्ल का क्यों दीखता है।

तदनुसार आंख, जो समानान्तर लहरों वाली ऐसी समूची सतह का सर्वेक्षण करती है जिस पर दूरस्थ प्रकाश-स्रोत की रोशनी पड़ रही है, प्रकाश को सभी दिशाओं से आता हुआ देखेंगी। यह रोशनी परस्पर मिलकर एक शकु की सतह बनाती है; इसका अक्ष हमारी आँख से गुजरने वाली वह रेखा होती है जो तरग-शीर्षो के समानान्तर पड़ती है। इस प्रदीप्त वृत्तचाप को बढ़ाये तो यह एक वृत्त बनायेगा जिसपर प्रकाशस्रोत L स्वयं स्थित होगा (चित्र १९क)। प्रत्येक विन्दु पर हम प्रकाश का धब्बा देखते हैं जो लहर के समकोण दिशा मे अवस्थित होता है (यदि दोनो ही प्रेक्षण दिशा के समकोण प्रक्षेपित किये जायें)। इस व्याख्या से लहरदार झिरी के पर्दो तथा विशेष रूप से अनुस्थापित पानी की लहरो, दोनो से होनेवाले प्रकाश-परावर्त्तन का एक ही साथ समाधान हो जाता है।

१६. तरंगों से आलोड़ित पानी के विस्तृत धरातल से परावर्तन[1]

हलकी हिलोरों वाली समुद्रसतह से होने वाले परावर्त्तन मे एक विशेषता पायी जाती है जिसे हम परावर्त्तित प्रतिविम्बों का क्षितिज के निकट सरक आना कह सकते
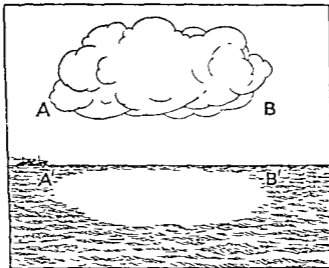
चित्र २०—समुद्र में प्रतिविम्बन-बादल का प्रतिविम्ब क्षितिज की ओर हट जाता है।

1. E. O. Hulburt, J. O. S. A., 24, 35, 1934

है।' (चित्र २०) बादल और नीले आकाश के दर्मियान की सीमारेखा A B का प्रतिबिम्ब A' B' क्षितिज के अधिक निकट है जबकि स्वयं रेखा A B और क्षितिज के बीच की दूरी ज्यादा है। वास्तव में क्षितिज के ऊपर की प्रथम 25° या 35° कोणीय ऊँचाई तक स्थित आकाश का प्रतिबिम्ब मुश्किल से ही दीखता है। इस दशा में सभी प्रतिबिम्ब अनियमित परावर्त्तन द्वारा बनते हैं, फिर भी यह घटना अत्यन्त स्पष्ट दीखती है और इतनी प्रभावोत्पादक होती है कि समुद्र पर समस्त प्रकाश के वितरण में उसका स्थान विशेष रूप से प्रमुख होता है। यही कारण है कि समुद्रतट के वृक्ष टीले आदि के प्रतिबिम्ब समुद्र के पानी मे कभी नहीं दिखलाई देते; उनकी ऊँचाई अपर्याप्त होती है। ऐसी परिस्थितियों में जहाज के प्रतिबिम्ब भी नही ही दिखलाई पड़ते क्योंकि उपर्युक्त प्रभाव के कारण प्रतिबिम्ब में जहाज के कारण बननेवाला काला धब्बा पिचक कर जहाज के पेंदे से ही लग जाता है।

लहरों मे सूर्य का प्रतिबिम्ब चकाचौंध उत्पन्न करने वाले प्रकाश का अकेला एक ही धब्बा होता है। सूर्यास्त के समय यह प्रतिबिम्ब थोड़ी बहुत तिकोनी शक्ल का हो जाता है, जिससे यह प्रदर्शित होता है कि प्रतिबिम्ब क्षितिज के निकट सरक आता है (चित्र २१)।
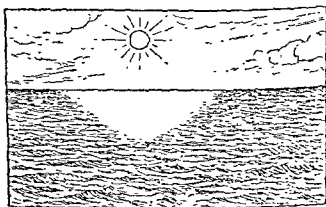
चित्र २१—समुद्र पर सूर्य का प्रकाश।

इन घटनाओं की आसानी से व्याख्या की जा सकती है; लम्बे फासले से लहरों का केवल वह पार्श्व हमें दीखता जिसका रुख हमारी ओर हो। इस कारण ऐसा प्रतीत

होता है मानो हम आकाश की चीजो का प्रतिविम्ब तिरछे रखे दर्पण में देख रहे हों (चित्र २२)।

चित्र २२—प्रतिबिम्ब का स्थानान्तर। आपतन कोण की अपेक्षा परावर्तन कोण अधिक चिपटा है।

इससे इस बात का भी समाधान हो जाता है कि प्रतिविम्ब क्षितिज की ओर हटा हुआ क्यों बनता है। प्रतिविम्ब में आकाश के निचले 30° कोण के भाग के विलुप्त होने का अर्थ है कि लहरो का दोनों पार्श्व का औसत ढाल 15° है; (यदि समुद्र न तो बहुत शान्त है और न बहुत अधिक उद्वेलित।)।

इस घटना का उल्लेख § १४ मे दिये गये सैद्धान्तिक विवेचन मे क्यो नही किया गया? इसलिए कि हम उस दशा का विचार नही कर रहे थे जबकि $\omega < 2\alpha$, अर्थात् जब पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा से देखा जाता है। यह दशा, जिसके लिए उक्त गणना के फल लागू नही होते हैं, उस वक्त प्राप्त होती है जबकि पानी का धरातल बहुत अधिक फैला हो; और समुद्र के लिए तो यह शक्ति विशेष रूप से आवश्यक है। सतह जितनी अधिक शान्त होगी उतनी ही अधिक तिरछी दिशा में हमें देखना पडेगा।

चित्र २३—ω और △ के प्रेक्षित मान के प्रत्येक जोड़े के लिए एक बिन्दु मिलता है। इस बिन्दु की स्थिति प्रत्येक वक्र के लिहाज से आँकिए प्रत्येक वक्र α के एक निश्चित मान के लिए खींचा गया है। (ई० ओ० हलबर्ट, जर्नल आफ दी अप्टिकल सोसाइटी आफ अमेरिका पर आधारित)
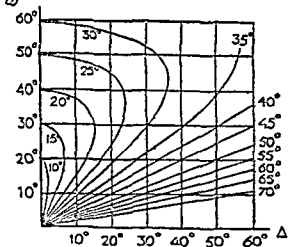
सूर्यकिरणों से प्रकाशित समुद्र-जल की सतह की ओर देखने पर सहज ही हम मालूम कर सकते हैं कि उपर्युक्त शर्त पूरी हो रही है या नही। शर्त्त पूरी होने की दशा में प्रकाश-स्तम्भ क्षितिज को छू लेगा। अब इस दशा में प्रकाशस्तम्भ की

३

लम्बाई नाप कर लहर के झुकाव का मान नहीं प्राप्त किया जा सकता। इसके लिए हमें दूसरा तरीका अपनाना पड़ेगा; लहरों की ढाल का कोण यदि बढ़ जाता है तो उसी हिसाब से क्षितिज का और अधिक चौड़ा भाग जगमगाहट की रोशनी से भर जाता है।

इस कोण Δ को नापिए जो क्षितिज पर स्थित धब्बे की चौड़ाई बतलाता है; और सूर्य की कोणीय ऊँचाई ω भी नापिए। और इनके मान से, चित्र २३ के ग्राफ पर लहरों की ढाल का कोण α मालूम करिए, अथवा स्पूनर के सूत्र की सहायता से जो सूर्य की $15°$ से कम की कोणीय ऊँचाई के लिए इस प्रकार सरल रूप में व्यक्त किया गया है —

लहर की ढाल का कोण $\alpha = \frac{\Delta}{2\omega}$ रेडियन; (1 रेडियन$=57°$) (देखिए प्लेट II)

अत्यन्त शान्त समुद्र पर सूर्योदय या सूर्यास्त के समय के सूर्य का प्रतिबिम्ब एक पतली रेखा सा बनता है जो करीब करीब सूर्य के आग्नेय गोले से मिल जाता है और इस प्रकार Ω जैसी आकृति बन जाती है (चित्र २४)।

चित्र २४—पूर्णतया शान्त समुद्र पर उगते हुए सूर्य के प्रतिबिम्ब को देखकर क्या आप को पृथ्वी की वक्रता का पता लग पाता है।

कभी-कभी जब समुद्र अत्यधिक शान्त होता है तो चिपटे दीर्घवृत्त की शक्ल का प्रतिबिम्ब उस वक्त तक भी देखा जा सकता है जबकि क्षितिज से सूर्य की ऊचाई बस $1°$ रहती है; किन्तु प्रायः तुरन्त बाद में ही इस प्रतिबिम्ब का उपर्युक्त त्रिभुजाकार शक्ल के प्रकाश के धब्बे में परिणत होना दृष्टिगोचर होता है। ऐसी दशाओं में पृथ्वी के धरातल की वक्रता का भी प्रभाव क्रियाशील होता है। यदि लहरें कतई मौजूद न हों तो हम कह सकते हैं कि पृथ्वी का गोलापन प्रत्यक्षतः प्रेक्षणीय है। अब तक की अध्ययन की गयी अनुकूलतम दशा में नापा गया क्षितिज की ओर प्रतिबिम्ब का हटाव पृथ्वीतल की वक्रता के हिसाब से प्राप्त किये गये मान का दो गुना ठहरता है।

१७. अत्यन्त हलके उद्वेलन की दृष्टि-गोचरता

पानी के अत्यन्त हलके उद्वेलन का अवलोकन तरंग-शीर्ष की समानान्तर दिशा में देखने के बजाय उस वक्त अधिक अच्छी तरह किया जा सकता है जब शीर्षरेखा की

समकोण दिशा में उन्हें देखते हैं। अतः यह देखने के लिए कि नहर पर हवा के कारण लहरें किस प्रकार बनती हैं, हमें नहर की समानान्तर दिशा में देखना चाहिए। इससे यह बात भी समझ में आती है कि क्यों जहाज के पीछे उठनेवाली शानदार तरंगे पुल पर से स्पष्ट देखी जा सकती हैं जबकि किनारे पर से करीब करीब वे बिल्कुल ही दृष्टि-गोचर नहीं हो पाती हैं। इस घटना का समाधान उसी प्रकार करते हैं जिस प्रकार लैम्प के प्रतिबिम्ब में प्रकाश धब्बे का स्तम्भ के रूप मे खिंच जाने का। लहरों को समकोण दिशा से देखने पर एक तरह से हम प्रकाशस्तम्भ के दीर्घ अक्ष की दिशा मे अवलोकन करते है, और यदि लहरों की समानान्तर दिशा मे देखे तो हम प्रकाशस्तम्भ के लघु अक्ष की दिशा में अवलोकन करते होते हैं। इसका अर्थ यह है कि लहर अपनी समकोण दिशा में अपनी समानान्तर दिशा की अपेक्षा अधिक विचलन उत्पन्न करती है।

१८. गँदले पानी पर प्रकाश के धब्बे

यद्यपि पानी की सतह दर्पण की तरह चिकनी सपाट होती है, फिर भी रात को प्रायः सड़क के लैम्प के प्रतिबिम्ब के गिर्द प्रकाश के स्तम्भ दिखलाई पडते हैं। लहरो पर बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की भांति इनमें जगमगाहट मौजूद नही होती, बल्कि ये पूर्णतया शान्त और स्थिर होते हैं। सर्वत्र जहाँ कही सतह पूर्णतया स्वच्छ नहीं होती, ऐसे प्रतिबिम्ब बनते हैं; प्रगट है कि पानी की सतह पर मौजूद धूल के नन्हे-नन्हे जर्रे सतह पर अनेक अनियमित उभार बनाते हैं जो प्रकाश किरणों के लिए नन्ही तरगों का काम करते हैं। फलस्वरूप अधिक तिरछी दिशा से देखने पर ये प्रकाश-स्तम्भ पतले दीखने चाहिए, और वस्तुतः होता भी ऐसा ही है।

लगभग सीधी ऊर्ध्व दिशा से जब किरणे गिरती हैं तो प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से ही दिखलाई पड़ते हैं, किन्तु तिरछी किरणो के लिए वे बहुत ही स्पष्ट रूप से दृष्टि-गोचर होते हैं और इस प्रकार सतहपर धूलिकणों की मौजूदगी का ये स्पष्ट आभास देते हैं। इन दोनो दशाओं के परावर्त्तन मे प्रदीप्ति-अन्तर इतना अधिक है कि यह मानना पड़ता है कि इसका कोई विशेष कारण अवश्य होगा। धूल के ये जर्रे इतने छोटे होते हैं कि यह माना जा सकता है कि प्रकाश का परिक्षेपण करने मे ये समर्थ हैं। आगे हम देखेंगे कि ऐसे जर्रों द्वारा किरणो की आपतन दिशा के आसपास परिक्षेपण प्रबलतम होता है (§ १७७)। अवश्य इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि क्यों, ज्यों-ज्यो अधिक तिरछी दिशा से देखते हैं त्यों परिक्षेपण और प्रकाश का समूचा धब्बा अधिक प्रकाशमान होते जाते है।

१९. तुषार पर प्रकाश के धब्बे

कभी-कभी तुषार की सतह नन्हीं-नन्ही चिपटी चकरियों और सितारे की शक्ल के जर्रों की तह से ढकी होती है—ये चकरियां तथा सितारे करीब-करीब क्षैतिज तल में ही होते हैं। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य का प्रतिबिम्ब यदि इस तुषार की सतह में देखें तो एक खूबसूरत प्रकाश-स्तम्भ दिखलाई पड़ेगा जिसकी उत्पत्ति का कारण यह है कि तुषार की नन्हीं चकरियां क्षैतिजतल से अनियमित रूप से इधर-उधर झुकी होती हैं। इस अवसर पर सूर्य को क्षितिज के निकट ही होना चाहिए, क्योंकि तब प्रकाश-स्तम्भ चौडाई में सिकुड़ जाता है, अतः और अधिक स्पष्ट दीखने लगता है।

रात के समय जब सड़क के लैम्पों में रोशनी होती रहती है, तब प्रकाश के धब्बे और भी अधिक चित्ताकर्षक दीखते है—प्रत्येक लैम्प ताजे तुषार में प्रतिबिम्बित होता है।

२०. सड़क पर प्रकाश के धब्बे

सड़क पर भी उसी किस्म के प्रकाश के स्तम्भ-सरीखे धब्बे बनते हैं जिस तरह हिलोर वाले पानी पर। ये धब्बे सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखते हैं जब कि पानी बरस चुका हो और सारी सड़क गीली हो जाने पर चमक रही हो। आधुनिक ऐसफाल्ट की सड़क पर ये धब्बे अत्यन्त दीप्तिमान दीखते हैं, किन्तु ये पत्थर की रोड़ियों वाली सड़क या पुरानी चाल की कंकड़ वाली सड़कों पर भी दिखाई देते हैं। वर्षा के बिना भी, सड़क से प्रकाश का परावर्त्तन इतनी अच्छी तरह होता है कि करीब-करीब हमेशा ही प्रतिबिम्ब में प्रकाश के स्तम्भ प्रगट होते है बशर्ते पर्याप्त तिरछी दिशा से हम देखें (देखिए § १५)।

२१. वर्षा के समय परावर्तन

पानी बरसते समय रात को पानी के नाले में सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए। लैम्प के प्रतिबिम्ब के चारों ओर जहाँ जहाँ बूंदें गिरती हैं, वहां ही प्रकाश की ढेर-सी चिनगारियां-सी उत्पन्न होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब से किरण-रेखाएं चारों ओर विकीर्ण हो रही है (चित्र २५)। फोरेल ने इसी तरह की घटना उस वक्त देखी थी जब उसने गहरे रंग के कांच में से शान्त पानी में सूर्य के प्रतिबिम्ब का अवलोकन किया था जिसके गिर्द पानी में यत्र-तत्र बबूले उठ रहे थे।

इस घटना का समझना आसान है। प्रत्येक बूंद से समकेन्द्रीय तरंगों का समूह बनता है। और इनके पार्श्व से बनने वाले प्रतिबिम्ब सदैव ही तरंग-समूह के केन्द्र और

प्रकाश-स्रोत के प्रतिबिम्ब को मिलाने वाली रेखा पर पड़ते हैं (चित्र २६)। चित्र से यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि पानी की सतह से जब लैम्प L तथा आँख E दोनों समान ऊँचाई पर स्थित होते हैं और बूंद दोनों से समान दूरी के बिन्दु D पर गिरती है, तब बिन्दु D_1 तथा D_2 दोनों ही रेखा M D पर पड़ते हैं; लैम्प का प्रतिबिम्ब M पर दीखता है। यदि तरंग का प्रसार बिन्दु D के गिर्द वृत्त की शक्ल में होता है तो परावर्तित
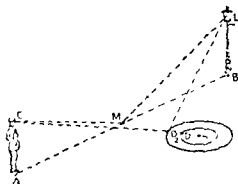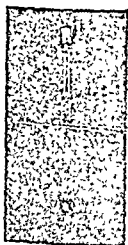
चित्र २५—वर्षा-जल से खिले सड़क लैंप के प्रतिबिम्ब के गिर्द चमकती हुई चिनगारियाँ विकीर्ण करते हैं।

चित्र २६—प्रतिबिम्ब के गिर्द चिनगारियाँ किस प्रकार बिखरती हैं।

प्रकाश रेखा D M पर कुछ दूर तक चलता है और इसकी रफ्तार इतनी तेज होती है कि जान पड़ता है कि प्रकाश की एक रेखा वहाँ बन रही है। चाहे बूंद ऊर्ध्व तल E M L में बिन्दु M के सामने गिरती हो या उसके पीछे; दोनों दशाओं में यह सिद्धान्त समान रूप से लागू होता है।

इस घटना का पुनरुत्पादन काँच की एक ऐसी प्लेट पर किया जा सकता है जिसमें लैम्प प्रतिबिम्बित हो रहा हो। इसके लिए एक शीशे के जार के ढक्कन को या पीतल की चकरी को जो खराद पर चढ़ायी गयी रही हो, प्लेट की सतह पर खिसकाना होगा—अभिप्राय यह है कि वस्तु की सतह पर वृत्ताकार उभरी हुई धारियाँ मौजूद होनी चाहिए।

इसके लिए सामान्य उपपत्ति हासिल करने का प्रयत्न कीजिए।

२२. वृक्षों की चोटी पर प्रकाश के वृत्त

रात के समय जब वृक्ष के ठीक पीछे सड़क का लैम्प जल रहा हो, तो यत्र-तत्र टहनियों से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश देखा जा सकता है। प्रकाश के ये धब्बे वस्तुतः रोशनी की छोटी-बड़ी लकीरों-जैसे दीखते हैं जो प्रकाशसूत्र के गिर्द समकेन्द्रीय दायरों में पड़ते हैं (प्लेट III)।

इस घटना के अवलोकन के लिए सबसे बढ़िया तरीका यह है कि यदि लैम्प वृक्ष के बिलकुल निकट जल रहा हो तो उसके तने की छाया में खड़े हो जायँ। किन्तु धूप में भी ये वृत्त देखे जा सकते हैं, मिसाल के लिए वर्षा के बाद जबकि शाखाएँ भीग गयी हों, तो धूप के चमकने वाली टहनियाँ मटमैली पृष्ठभूमि पर थिरकती हुई आलोक-रेखाओं का सुन्दर-सा नमूना बनाती हैं। अवश्य आँख को चकाचौंध से बचाने के लिए सूरज को छत या दीवार की आड़ में पड़ना चाहिए। चमकते हुए तुषारकण भी अत्यन्त सुन्दर प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

इस घटना का समाधान इस प्रकार करते हैं (चित्र २७)—
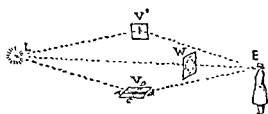
चित्र २७—वृक्ष की चोटियों में प्रकाशवृत्त किस प्रकार बनते हैं।

एक छोटी सतह V पर ध्यान दीजिए जो लैम्प की रोशनी को हमारी आँख की दिशा में परावर्त्तित करती है। इस धरातल में पड़ने वाली सभी टहनियों को हम प्रकाश से चमकती हुई देखेंगे, किन्तु अनुदर्शन के कारण A B की भाँति अवस्थित टहनियाँ बहुत ही छोटी दीखेंगी जबकि CD दिशा की टहनियों की पूरी लम्बाई दिखलाई देगी। चूँकि दोनों ही दिशा में टहनियों की संख्या लगभग एक-सी होती है अतः परावर्त्तित प्रकाश में मुख्यतः धरातल E L V की समकोण दिशा में ही स्थित रोशनी की लकीरें हमें दीखेंगी। अन्य छोटी सतहों के लिए भी जैसे V' आदि जो ऊपर या हमारे बायें या दाहिने स्थित होंगी, यही दशा लागू होगी है, फलस्वरूप ऐसा प्रतीत होता है कि हम समकेन्द्रीय वृत्त की प्रकाश-रेखाएँ देख रहे हैं। हमारी दृष्टिरेखा और E L रेखा के दर्मियान का कोण जितना छोटा बनता है, दिशानुकूलन पर यह प्रभाव उतना ही अधिक बढ़ जाता है। फिर लैम्प की तरह

प्रकाश-स्रोत के निकट होने की अपेक्षा सूर्य की तरह प्रकाश-स्रोत जब अनन्त दूरी पर स्थित होता है तो इस दशा में यह प्रभाव थोड़ा और बढ़ जाता है।

इस दशा की तुलना लहरों से उद्वेलित पानी की सतह पर दीखने वाले प्रकाश के धब्बों से कीजिए (चित्र २८)। एक तरह से हमें इस दशा में कल्पना करना होगा कि टहनियाँ सर्वत्र चारों ओर स्थित न होकर केवल एक ही धरातल (पानी की सतह) में स्थित हैं। इस सतह में पड़नेवाली केवल वे ही नन्ही लकीरें EL के गिर्द के समकेन्द्रीय वृत्तों के भाग बना पायेंगी जो सबकी सब धरातल ESL के समकोण स्थित होंगी। ये प्रकाश-रेखाएँ मिलकर समष्टि रूप से ESL धरातल में प्रकाश-स्तम्भ का निर्माण करती हैं। यह क्रिया ठीक पानी की लहरों पर बनने वाले प्रतिबिम्बि की क्रिया के मानिन्द है।
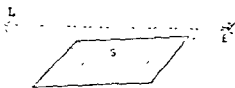
चित्र २८—वृक्ष की चोटी पर बने प्रकाश वृत्त और तरंगित पानी पर बने प्रकाश स्तम्भों की तुलना कीजिए।

इसी प्रकार की घटना उस वक्त भी देखने को मिल सकती है जब डूबता हुआ सूर्य खड़ी फस्ल की बालों पर चमकता है या जब धुन्ध के मौसम में सड़क के लैम्प को मकड़ी के ऐसे जाले में से देखते हैं जो ओस की नन्ही बूंदों के कारण चमक रहा हो। रेलगाड़ी की खिड़की के काँच पर पड़ी खरोंच रेखाएँ भी इसी तरह के प्रभाव उत्पन्न करती है। (§१५९)। इन सभी दशाओं में मुख्यत. प्रकाश के आपतन धरातल[1] की समकोण दिशाओं में पड़ने वाली नन्हीं रेखाएँ ही चमकती है अतः ये प्रकाश-स्रोत के गिर्द सम-केन्द्रीय वृत्तों का आभास कराती हैं।

1. Plane of incidence

अध्याय ३

प्रकाश का वर्त्तन

२३. हवा से पानी में जाने वाले प्रकाश का वर्तन[1]

मल्लाह का बाँस, जिससे वह अपनी नाव को ठेलकर आगे वढ़ाता है, ठीक उस ठौर से टूटकर मुड़ा हुआ जान पड़ता है जहाँ से वह पानी में डूबा रहता है। ऐसा प्रतीत होने का कारण यह है कि जब किरणें हवा से पानी में प्रवेश करती हैं या पानी से हवा में, तो उनकी दिशा मुड़ जाती है। किन्तु यह ध्यान देने योग्य बात है कि डण्डे का यह मुड़ा हुआ भाग टूटी हुई किरण के प्रतिविम्ब की स्थिति नही बतलाता क्योंकि डण्डे का प्रतिविम्ब, किरण की ठीक उलटी दिशा में मुड़ता है। इन दोनों का परस्पर का सम्बन्ध चित्र २९ मे दिखाया गया है।
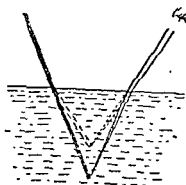
चित्र २९—प्रकाश-किरणों के वर्तन के कारण बाँस मुड़ा हुआ दीखता है।

पानी में पड़ी किसी वस्तु की गहराई का अन्दाज अपनी आँख से लगाकर उसे शीघ्रता से पकड़ने की कोशिश करिए। साधारणतः इस कोशिश में आप सफल न होंगे क्योंकि वर्त्तन के कारण पानी के अन्दर की वस्तु अपनी स्थिति से ऊपर उठी हुई जान पड़ती है (चित्र २९)। आपने जो गहराई आँकी थी वस्तु उससे नीचे होगी। किन्तु यह घटना इतनी सरल नही है कि केवल इतना कहने से इसका सही-सही समाधान हो जाय कि वर्त्तन वस्तु के बजाय उसका प्रतिविम्ब एक ऊँचे उठे हुए धरातल पर उपस्थित करता है। उदाहरण के लिए जब स्वच्छ जल के नाले के किनारे आप

1. Refraction

मार्बल पर या पैदल जा रहे हों तो पानी के अन्दर के पौधों की स्थितियाँ अजीब तरह से बदलती हैं, उनके टूटे हुए प्रतिबिम्ब मानो सरकते रहते हैं; जितनी ही अधिक तिरछी दिशा में आप देखें, प्रतिबिम्ब उतना ही अधिक ऊपर को उठा हुआ जान पड़ता है। (प्लेट VII देखिए)।

स्वच्छ पानी के तालाब में सतह पर उतराते हुए कमल के पत्तों की छाया तालाब के पेंदे में विचित्र रूप से हाशिये पर फटी-फटी-सी दीखती है—मानो नारियल के पत्ते की छाया हो। इसका कारण यह है कि पत्ता हाशियों पर ऊपर की ओर कुछ मुड़ा होता है, अतः पृष्ठतनाव की वजह से हाशिये से लगा हुआ पानी सतह से कुछ ऊपर उठ जाता है। इस प्रकार बने हुए नन्हें प्रिज़्मों में से होकर सूरज की किरणें जब गुजरती है तो वे छाया वाले भाग में अनियमित प्रकाश-रेखाओं के रूप में बिखर जाती हैं।

स्वच्छ पानी के छिछले नाले में, या नदी में किनारे के निकट, पेंदे पर सूरज रोशनी की चमकीली लकीरें बनाता है। लहरों के शीर्ष लेन्स सरीखा काम करते हैं और ये किरणों को फोकस-रेखा पर समेट देते हैं—लहरों की हरकत के साथ-साथ यह रेखा भी धीरे-धीरे हिलती डुलती है (चित्र ३०[1] तथा प्लेट IVb)। इसी प्रकार की घटना परावर्तित प्रकाश में हम देख चुके हैं (§८) और अब उसी के समकक्ष यह घटना हम वर्तन में भी पाते हैं। किरणें जब तिरछे गिरती हैं तब इन प्रकाश-रेखाओं के हाशिये रंगीन बनते हैं; सूरज की ओर का हाशिया नील रंग का होता है और दूर का लालछौंवे रंग का, क्योंकि नील रंग की किरण लाल रंग की किरणों की अपेक्षा अधिक प्रबलता से वर्तित होती हैं। यह प्रकाश के विश्लेषण या रंग के विस्तरण की घटना है।
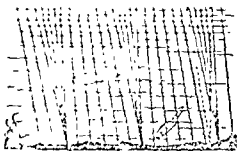
चित्र ३०—प्रकाश की किरणें पानी में प्रविष्ट होती हैं और तरंगों द्वारा वर्तित हो कर प्रकाश-रेखाओं पर केन्द्रित हो जाती हैं। नीली किरणें (बिन्दु रेखाएँ) अधिक प्रबल वर्तन प्राप्त करती है।

[1] ये घटनाएँ और भी अच्छी तरह देखी जा सकती हैं, यदि जल दूरबीन का उपयोग करें (§२९०)।

पारदर्शी गहरे जल में सफेद पत्थर का टुकड़ा फेंक दीजिए और कुछ फ़ासले से इसे देखिए; यह ऊपर कुछ नीला और नीचे लाल रंग का दीखेगा। यह घटना भी रंगों के विस्तरण के कारण है।

२४. असमतल काँच की पट्टिका में से वर्तन

पुरानी चाल की रेलगाड़ी की खिड़की में से देखने पर आप पायेंगे कि खिड़की के शीशे के कुछ भागों में से बाहर की वस्तुएँ पूर्णतया विकृत रूप में दिखलाई पड़ती हैं। ऐसे शीशे म से होकर आने वाली सूर्य की किरणें यदि कागज पर गिरें तो इन भागों द्वारा कागज पर चमकीले प्रकाश की तथा गहरी छाया की धारियाँ बनती हैं। कागज को और दूर हटा कर रखिए तो ये धारियाँ काफ़ी स्पष्ट प्रकाश-रेखाओं का रूप धारण कर लेती हैं।

प्रगट है कि काँच के धरातल परस्पर समानान्तर नहीं हैं, बल्कि इसके कुछ भाग मोटे हैं और कुछ पतले; ये ही अनियमित लेन्स सरीखा काम करके किरणों को कहीं बिखरा देते हैं तो कहीं समेट देते हैं और इस प्रकार फोकस रेखाओं का मायावी नमूना बन जाता है (देखिए § २३)।

२५. प्लेट काँच से परावर्तित दुहरे प्रतिबिम्ब

सड़क के किनारे पर स्थित खिड़की में दूर के लैम्प या चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को देखिए। दो प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ेंगे, इनमें से एक प्रतिबिम्ब दूसरे के मुकाबले में अनियमित तरीके पर इधर उधर हटा हुआ दीखेगा जो इस बात पर निर्भर करता है कि खिड़की के शीशे के किस भाग से परावर्त्तन हो रहा है। बहुत दिन नहीं हुए जब एक दार्शनिक ने कहा था कि इस घटना को 'कारण के बिना प्रभाव उत्पन्न होना' कह सकते हैं।[1] किन्तु भौतिकीज्ञ को तो इसके लिए कारण ढूंढ़ना ही होगा।

हम देखते हैं कि कुछ दुकानों और आफिसों में सजावट के लिए लगे बढ़िया पालिश वाले काले रंग के काँच की प्लेट के परावर्त्तन में दुहरे प्रतिबिम्ब नहीं दीखते। अतः यह स्पष्ट है कि एक प्रतिबिम्ब प्लेट की सामने वाली सतह से परावर्त्तन द्वारा बनता है और दूसरा प्रतिबिम्ब उन किरणों द्वारा बनता है जो काँच के भीतर प्रवेश करके पीछे वाली सतह से परावर्तित होती हैं और काँच में से होकर हमारी आँख तक पहुँचती हैं। किन्तु काले रंग की प्लेट में द्वितीय प्रतिबिम्ब बनाने वाली किरणें जज्ब हो जाती हैं।

1. E Barthel, Arch-for system. philos 19, 355, 1913

वर्तन के कारण एक किरण अपनी दिशा से थोड़ी विचलित हो जाती है। (चित्र ३१)। क्या दुहरे प्रतिबिम्ब इसी कारण बनते हैं? नहीं, क्योंकि यदि ऐसा होता तो (क) वे प्लेट के कुछ भागों पर अन्य भागों की अपेक्षा ज्यादातर इतने निकट नहीं होंगे, (ख) उनके बीच की दूरी प्लेट की मोटाई से अधिक न होगी और तब इन्हें पृथक् देखना कठिन हो जाता, (ग) किरण के आपतन कोण के बहुत बड़े और बहुत छोटे मान के लिए प्रतिबिम्बों के बीच का हटाव शून्य हो जाना चाहिए (गणना से आप भी देख सकते हैं कि अधिकतम हटाव करीब 50° के आपतन कोण पर प्राप्त होगा), जबकि वास्तविकता यह है कि लम्ब दिशा से दर्शन में भी दुहरे प्रतिबिम्ब दिखलाई देते हैं, (घ) अनन्त दूरी के प्रकाश-स्रोत के लिए, जैसे चन्द्रमा, दुहरे प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी सदैव ही शून्य होनी चाहिए।
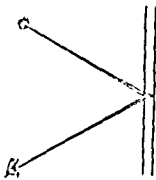
चित्र ३१—पूर्णतया समानान्तर तल के प्लेट काँच का बना खिड़की का काँच दुहरे प्रतिबिम्ब का निर्माण करता है, किन्तु ये एक दूसरे के अत्यन्त निकट स्थित होते हैं।

निष्कर्ष यह प्राप्त हुआ कि समानान्तर समतल सतह वाली काँच की प्लेट से इस तरह के दुहरे प्रतिबिम्ब नहीं प्राप्त हो सकते। अवश्य प्लेट यदि वेज (टंक) की शक्ल की हुई तो सतह के तनिक लहरदार होने के कारण दुहरे प्रतिबिम्ब इस पर बन सकते हैं। किन्तु इस व्याख्या के पूर्णतया स्वीकार करने के पहले हमें इसका हिसाब लगाना चाहिए कि सामने और पीछे की सतहों के बीच कितना बड़ा कोण बनना चाहिए ताकि दुहरे प्रतिबिम्बों के बीच उतनी ही दूरी मौजूद हो जितनी वास्तव में पायी गयी है; क्योंकि ऐसी सम्भावना कम ही होती है कि अच्छे किस्म के प्लेटकाँच की दोनों सतहें समानान्तर स्थिति से अधिक हटी हुई हों।

पहले मान लीजिए कि सतहें समानान्तर हैं और तब एक किरण पर ध्यान दीजिए—प्रथम सतह पर विभाजित होने के बाद भी दोनों किरणें परस्पर समानान्तर ही रहती हैं, परावर्तन के बाद वे एक दूसरे से केवल थोड़ी दूर हट जाती हैं। अब मानिए कि सतह AB समानान्तर स्थिति से छोटे कोण γ पर झुकी है (चित्र ३२)। इस दशा में परावर्तित किरण I अपनी पूर्व स्थिति से कोण 2γ पर झुक जायगी। किरण II की मार्गदिशा प्राप्त करने के लिए हम कल्पना करते हैं कि CD एक दर्पण है जो सतह
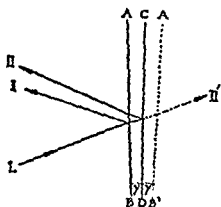
चित्र ३२—दुहरे प्रतिबिम्ब ऐसे कांच में किस प्रकार बनते हैं, जिसकी मोटाई सर्वत्र एक-सी नहीं होती।

AB का परावर्तित प्रतिबिम्ब A′B′ पर बनाता है और किरण II का प्रतिबिम्ब II′ दिशा में बनाता है। अब हम देखते हैं कि किरण L II′ छोटे प्रिज्म ABB′A′ से गुजरा है जिसके वर्तन कोर के अल्प कोण का मान 2γ है। ज्यामिति प्रकाश-विज्ञान से हम जानते हैं कि इस तरह का प्रिज्म किरण पथ में $(n-1)\ 2\gamma$ का कोणीय विचलन पैदा करता है बशर्ते आपतन कोण का मान अधिक न हो। अतः किरण I और II के बीच का कुल कोण $2\gamma+(n-1)\ 2\gamma=2n\gamma$ होगा। कांच का वर्तनाङ्क $n=1{\cdot}52$ है अतः विचाराधीन कोण का मान करीब 3γ होगा।
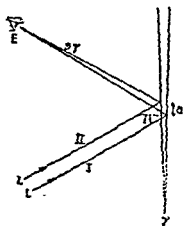
चित्र ३३—दोनों परावर्तन प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी y की सहायता से खिड़की के कांच के आमने-सामने की सतहों का झुकाव किस प्रकार ज्ञात करते हैं।

इस निष्कर्ष के अनुसार चित्र ३३ में दिखलाया गया है कि बहुत दूर के प्रकाशसूत्र L से आनेवाली करीब-करीब समानान्तर किरणें I और II परावर्तन के उपरान्त E पर स्थित प्रेक्षक की आँख मे परस्पर कोण 3γ के झुकाव पर प्रवेश करती हैं।[1]

अतः हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि यदि दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी का मान हम ज्ञात कर लें तो कांच की दोनों सतहों के दर्मियान का कोण इसका तृतीयांश होगा।

उदाहरण के लिए इस कोण का मान इस प्रकार हासिल कर सकते हैं; कांच पर दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की दूरी a मालूम करके

१. उपपत्ति की एक अन्य विधि के लिए देखिए §२६।

इसमें आँख और प्लेट के बीच की दूरी R से भाग दीजिए और फिर इसे Cos i से गुणा कर दीजिए।

साधारण प्लेट-काँच के लिए इस तरह से हासिल किये गये कोण के मान एक रेडियन[1] के कुछ सहस्रांश या चाप के कुछ मिनट ही प्राप्त होते हैं। अर्थात् प्लेट पर करीब 5 इंच आगे बढ़ने पर मोटाई में केवल $\frac{1}{100}$ इंच का अन्तर आता है। यह अन्तर इतना कम है कि अत्यन्त सावधानी से नापे बिना इसका पता भी नहीं चल सकता। वास्तव में जब इस तरह की नाप की गयी तो उपर्युक्त गणना सही पायी गयी।

क्या यह विलक्षण बात नहीं है कि बिना किसी अन्य साधन के, केवल चलते चलते काँच के सूक्ष्म दोष की नाप-जोख हम कर सकते हैं? और फिर अब हमने यह भी देख लिया कि दुहरे प्रतिबिम्ब की उत्पत्ति की हमारी व्याख्या वास्तव में सही है। जब कभी किसी प्राकृतिक घटना का कारण मालूम करने में हम असमर्थ रहते हैं तो इसके लिए हमें अपने अज्ञान को ही दोष देना चाहिए।

एक और अधिक व्यापक और अधिक सही सूत्र—दोनों प्रतिबिम्बों के बीच कोणीय दूरी $=2m\gamma\frac{R'}{R+R'}$, जब कि आँख और काँच के बीच की दूरी R है तथा प्रकाश-सूत्र से काँच तक दूरी R′ है। और 2m के मान निम्नलिखित हैं—

आपतन कोण	i=0°	20°	40°	60°	80°	90°
	2m=3·0	3·1	3·6	5·0	13 3	∞

यह प्रतिबिम्बों के अध्ययन के लिए खिड़की में लगने वाले साधारण काँच का उपयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि असमतल सतह के कारण यह प्रतिबिम्बों को अत्यन्त बुरी तरह विकृत कर देता है। जाँच की यह विधि इतनी सूक्ष्म है कि ऐसे काँच पर ये प्रयोग नहीं किये जा सकते।

२६. वर्तित प्रकाश द्वारा प्लेट काँच में बनने वाले बहु प्रतिबिम्ब[2]

किसी भी सन्ध्या को ट्रामगाड़ी, रेलगाड़ी या मोटर बस की खिडकी के उत्तम श्रेणी के काँच में से दूर के लैम्प या चन्द्रमा को तिरछी दिशा से देखिए। आप कई प्रतिबिम्ब देखेंगे जो एक दूसरे से करीब-करीब बराबर दूरी पर होंगे। इनमें से पहला प्रतिबिम्ब बिलकुल स्पष्ट दीखेगा और बाद वाले प्रतिबिम्ब क्रमशः अस्पष्ट होते जायँगे। खिड़की

1. For radian see §१ 2- H.M. Reese J.O.S.A, 21, 282, 1931

से जितनी अधिक तिरछी दिशा से आप देखेंगे उतना ही अधिक फासला उनके दर्मियान दीखेगा तथा उनकी प्रकाश-दीप्ति का अन्तर भी उतना ही कम होता जायगा।

स्पष्ट है कि इस किस्म की घटना काँच के सामने की और पीछे वाली सतहों से बार-बार होनेवाले परावर्तन के कारण उत्पन्न होती है। वास्तव में यह घटना परावर्तन वाले दुहरे प्रतिबिम्बों की उत्पत्ति से बहुत अधिक मिलती जुलती है, और उन्हीं कारणों से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि ऐसी प्लेट की आमने सामने की सतहें समानान्तर नहीं हैं। लेकिन इसके लिए एक और कारण भी है; काँच की समानान्तर प्लेट में सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब अनिवार्य रूप से हमेशा उस सिरे पर पड़ता है जो निरीक्षक के निकटतम है—इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हम काँच में से E दिशा की ओर से देख रहे हैं या E′ दिशा से। किन्तु प्रयोग से पता चलता है कि **सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब निश्चित रूप से हमेशा एक ही ओर पड़ता है** (हमेशा या तो दाहिनी तरफ या हमेशा बायीं तरफ़), बशर्ते उस काँच की प्लेट के किसी एक ही निश्चित बिन्दु पर हम देखें (चित्र ३४)। लेकिन एक ही प्लेट में कुछ भाग ऐसे मिलते हैं जिनमें सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब दाहिनी ओर पड़ता है तो अन्य भागों में उसकी स्थिति बायें होती है; पहली दशा में प्लेट के उस भाग की शक्ल एक वेज (स्फान) जैसी होती है जिसकी अधिकतम मोटाई हमारी आँख की ओर पड़ती है और दूसरी दशा में वेज की अधिकतम मोटाई आँख की विपरीत ओर पड़ती है।

चित्र ३४—बहु प्रतिबिम्बों का सबसे अधिक दीप्तिमान् प्रतिबिम्ब सदैव उस ओर पड़ता है, जिधर प्रेक्षक स्थित होता है।

आइए § २५ में बतायी गयी विधि से कुछ थोड़े भिन्न तरीके से कोणीय दूरी की गणना करें। चित्र ३५ में हम देखते हैं कि किरणें $L_1, L_2, L_3 \ldots$ पीछे की सतह पर क्रमशः कोण $r+\gamma, r+3\gamma, r+5\gamma \ldots$ पर गिरती हैं। अतः इनके निर्गमन के कोण यदि क्रमशः $\alpha_1, \alpha_2, \alpha_3 \ldots$ हों, तब

$$\sin \alpha_1 = n \sin (r+\gamma)$$

या चूँकि कोण γ छोटा ही है

चित्र ३५—पर्तित प्रकाश में बहु प्रतिबिम्ब।

$\therefore \quad \sin\alpha_1 = n \sin r + \gamma n \cos r$

इसी प्रकार $\quad \sin\alpha_2 = n \sin r + 3\gamma n \cos r$

घटाने पर $\quad \sin\alpha_2 - \sin\alpha_1 = 2\gamma n \cos r$

इन किरणों के लिए α का मान थोड़ा-थोड़ा करके ही बढ़ता है अतः $\sin\alpha_2 - \sin\alpha_1$ को हम $\sin\alpha$ के अवकल (डिफ़रेन्शियल) के बराबर मान सकते हैं, अर्थात्

$$\sin\alpha_2 - \sin\alpha_1 = \delta(\sin\alpha)$$
$$= \cos\alpha,\ \delta\alpha$$
$$= \cos\alpha\,(\alpha_2 - \alpha_1)$$
$$\therefore\ \alpha_2 - \alpha_1 = \frac{2n\cos r}{\cos\alpha}\ \gamma$$

चित्र ३२ का उपयोग करने पर बार-बार के परावर्तनों से बनने वाले प्रतिबिम्बों के लिए भी इसी प्रकार की उपपत्ति लागू की जा सकती हैं। क्रमशः बनने वाले प्रतिबिम्बों के बीच की दूरी बिलकुल वही रहती है, चाहे वे परावर्तित प्रकाश में देखे जा रहे हैं या वर्तित प्रकाश में; ऊपर के सूत्र मे γ के गुणक के मान वास्तव मे वे ही हैं जो § २५ में 2m के लिए दिये गये हैं।

२६ a. मोटरकार के वायु अवरोधक काँच (विन्डस्क्रीन) में परावर्तन तथा वर्तन

वायु-अवरोधक काँच को पोछने वाला ब्रुश सामने के कांच पर समकेन्द्रीय वृत्तों का निर्माण करता है और आप देखते हैं कि अस्त होते हुए सूर्य या सडक के लैम्प की रोशनी किस प्रकार पानी की पतली परत की दायरेनुमा लहरदार सतह में वर्तित होती है। प्रकाश का एक सुन्दर धब्बा सूर्य की दिशा मे खिंचा हुआ दिखाई देता है; यह वास्तव मे एक वक्र रेखा का भाग होता है, किन्तु उस थोड़ी-सी दूरी तक जिसका हम सर्वेक्षण करते रहते हैं, यह लगभग सीधा ही दीखता है (चित्र ३५क)। सिद्धान्त व्यवहारतः वही है जो हमने खिड़की के झिरीदार परदे या वृत्ताकार तरङ्गिकाओं के लिए अभी दिया है; महत्त्व इस बात का नही है कि किरणों का विचलन परावर्तन द्वारा होता है या वर्तन द्वारा, बल्कि सारभूत बात यह है कि ये किरणें आपतन तल में ही रहती है।

फिर भी यहाँ हम एक अत्यन्त विशिष्ट और रोचक ब्योरा दे रहे हैं। यदि आप बारी-बारी से अपनी दाहिनी और बायी आँखें बन्द करें तो आप देखेंगे कि रोशनी का

फैला हुआ धब्बा एक आँख के लिए दूसरी की अपेक्षा थोड़ा भिन्न होता है—अवश्य ही यह इस कारण होता है कि ये प्रतिविम्वन सदैव ही धारियों के केन्द्र से सूर्य की
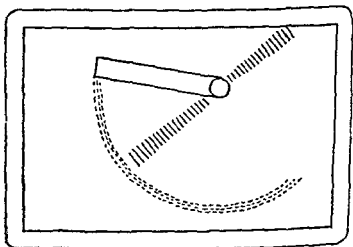
चित्र ३५ क—मोटरकार के विण्डस्क्रीन द्वारा वर्तित प्रतिबिम्ब।

ओर जाते है और आप की बायी आँख सूर्य को दाहिनी आँख की अपेक्षा खिड़की के काँच के एक भिन्न विन्दु पर देखती है। अब यदि आप दोनों आँखो से देखें तो ये दोनों प्रतिविम्ब परस्पर मिलकर एक त्रि-विमितीय प्रतिविम्ब वनाते हैं; आप रोशनी के धब्बे को केन्द्र से बहुत दूर पीछे स्थित सूर्य की ओर फैला हुआ देखते हैं, और केन्द्र की दूसरी ओर भी इसे आप देखते हैं जो काँच से आप की ओर आता हुआ जान पड़ता है। यह एक अद्भुत उदाहरण है जिसे 'पिण्डदर्शन' का नाम दिया गया है, इसकी चर्चा हम फिर करेंगे।

२७. पानी की बूँदें लेन्स के रूप में

रेलगाड़ी की खिड़की पर पड़ी वर्षा की बूंदें ठीक एक शक्तिशाली लेन्स की भाँति अत्यन्त नन्हे प्रतिविम्ब वनाती हैं; इतना अवश्य है कि ये प्रतिविम्ब विकृत ही बनते हैं क्योंकि वर्षा की बूंद की आकृति एक आदर्श लेन्स की शक्ल से जरा भी नही मिलती है। ये प्रतिविम्ब ऊपर से नीचे उलटे बनते हैं, और यद्यपि बाहर के दृश्य रेलगाड़ी की विपरीत दिशा में गति करते जान पड़ते हैं, किन्तु उनके प्रतिविम्ब उसी दिशा में चलते दिखाई देते हैं जिस दिशा में रेलगाड़ी जा रही है।

खम्भे का प्रतिविम्ब ऊपरी सिरे पर पेंदे की अपेक्षा अधिक मोटा होता है। इसका कारण यह है कि लेन्स की फोकस लम्बाई जितनी छोटी होती है, अर्थात् लेन्स

के पार्श्व की वक्रता जितनी अधिक होती है, उतना ही छोटा प्रतिबिम्ब बनता है; अब खिड़की की बूंद का ऊपरी भाग निचले भाग की अपेक्षा अधिक चिपटा होता है, अतः उससे बनने वाला बिम्ब भी बड़े आकार का होता है (चित्र ३५ ख)।
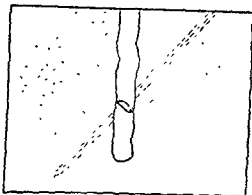
कांच की खिड़कियों पर बूंदे इकट्ठी होती हैं तो कुछ बड़ी बूंदे नन्ही धार की रूप में नीचे लटक जाती हैं; इन बेलनाकार लेन्सों मे आप वर्त्तन का अध्ययन बखूबी कर सकते हैं। उनमे दीखने वाले प्रतिबिम्बों में दाहना बायां उलट जाता है, ब्योरे की सभी चीजें उलटी दिशा में हरकत करती नजर आती हैं और इसी प्रकार बाहर के दृश्य मे भी उत्क्रमण हो जाता है।

चित्र ३५ ख—खिड़की के कांच पर से ढुलकनेवाली पानी की बूँद द्वारा वर्तन से बिम्ब का निर्माण।

२८. ओस की बूंदों और तुषार के क्रिस्टल कणों में प्रकाश की रंगबिरंगी जगमगाहट

प्रातः की ओस में रंगबिरंगे रत्नों का प्रकाश भला किसने नहीं देखा होगा? ध्यान दीजिए कि लॉन की छोटी घास पर ओस की बूंदे कितनी तेज जगमगाहट के साथ अनवरत रूप से चमकती हैं और हिलती हुई घास की लम्बी पत्तियों पर सितारो की भाँति किस प्रकार वे प्रकाश में लुपझुप झिलमिलाती रहती हैं।

आइए, घास की पत्ती पर पड़ी ओस का और अधिक ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे। बूंद को उठाइए नहीं, छूइए भी नही! नन्ही गोल बूंदे पत्ती को भिगाती नहीं है; बूंदें पत्ती के बिलकुल निकट अवश्य है, किन्तु अधिकांश जगहों पर बूंद और पत्ती के दर्मियान अभी भी हवा की परत मौजूद है। ओसवाली पत्ती का भूरा स्वरूप ओस की सभी नन्ही बूंदो के भीतर और बाहर से परावर्तित होने वाले प्रकाश के कारण है; बहुत-सी किरणे तो घास की पत्ती को स्पर्श भी नहीं कर पाती हैं (देखिए §१६८)। बड़े आकार की चिपटी बूंदों को यदि अधिक तिरछी दिशा से देखे तो वे चाँदी की सतह की तरह चमकती हुई दिखलाई देती हैं क्योंकि इस दशा मे पीछे वाली सतह से किरणो का पूर्ण परावर्त्तन होता है। किसी एक बड़े आकार की बूंद को चुन लीजिए और एक आँख से इसे देखिए। ज्यों ही आपतित किरणों के साथ काफ़ी बड़े मान के कोण बनाने वाली

दिशा से देखते हैं, त्योंही रंग प्रगट होते हैं। पहले नीला रंग दीखता है, फिर हरा और तब विशेष रूप से स्पष्ट दीखते हैं पीले, नारंगी, और लाल रंग। अवश्य यह उसी प्रकार की घटना है जैसी एक बड़े पैमाने पर किसी भी इन्द्रधनुष में हम देखते हैं (§११९)।

इसी प्रकार के जगमगाते रंग पाले के क्रिस्टल कणों में और ताजा गिरे हुए तुषार में दिखलाई पड़ते हैं।

§१२९ और §१५४ की तुलना करिए।

'प्रोफेसर क्लिफटन से आप निवेदन करिए कि वे आपको समझाएँ कि क्यों पानी की बूंद यद्यपि हरी पत्ती के [illegible]
करती है और इस कारण [illegible]
है, फिर भी यह रंगों में [illegible]
कार्नेशन या जंगली गुलाब के वास्तविक रंग का पता आपको उस वक्त तक नहीं लग पाता है जबतक कि उस पर ओस की बूंदे न पड़ी हों।'

रस्किन : 'दी आर्ट एण्ड प्लेजर्स आव इंग्लैण्ड'

देवदार के वन में अभी हाल में एक विशिष्ट सुन्दर घटना का अवलोकन किया गया। प्रेक्षक सूर्य की ओर चल रहा था जो क्षितिज से लगभग १५° की ऊँचाई पर था। उसने धरती को नन्हें परिपूर्ण क्रिस्टलों से ढका पाया और उनमें से प्रत्येक एक तारा की तरह जगमगा रहा था। इनमें से एक भी श्वेत रंग का नहीं था! इनमें वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) के सभी रंग मौजूद थे। पंजों के बल खड़े होने पर रंगों के शेड नीले की ओर खिसक जाते हैं और जरा झुकने पर लाल वर्ण की ओर। इन सुन्दर रंगों का समाधान किया जा सकता है क्योंकि ये क्रिस्टल सूर्य के समूचे मंडलक द्वारा प्रकाशित नहीं होते हैं बल्कि वृक्ष की टहनियों के बीच के नन्हे सूराखों के रास्ते ही इन पर प्रकाश गिरता है। सामान्य परिस्थितियों में सूर्य मंडलक के एक भाग से (क्रिस्टल में से होते हुए) हमारी आँख में लाल रंग का प्रकाश पहुँचता है और अन्य भाग से हरा या नीला प्रकाश; और ये रंग एक दूसरे के साथ मिलकर श्वेत रंग से मिलता जुलता प्रकाश उपस्थित करते हैं। किन्तु इस दशा में आपतित किरण शलाका अत्यन्त पतली थी और प्रत्येक क्रिस्टल केवल एक ही रंग वर्तित कर सका। रंगों के विस्थापन की बात भी समझ में आती है क्योंकि आँख को ऊपर उठाने पर हम उन किरणों को ग्रहण करते हैं जिनका वर्त्तन अधिक प्रबल हुआ है।

अध्याय ४

वायु-मण्डल में प्रकाश-किरणों की वक्रता

२९. धरती के निकट किरणों की वक्रता

आकाशीय पिण्ड अपनी वास्तविक ऊँचाई के मुकाबले मे क्षितिज से थोड़ी अधिक ऊँचाई पर स्थित मालूम पड़ते हैं; और ज्यों-ज्यों वे क्षितिज के निकट आते हैं त्यों-त्यों उनका यह स्थानान्तर बढ़ता जाता है। यही कारण है कि क्षितिज पर सूर्य तथा चन्द्रमा चिपटी शक्ल के दीखते हैं। सूर्यान्ति के समय सूर्य के गोले का निचला सिरा औसत रूप से अपनी वास्तविक स्थिति मे ३५ मिनट के कोण पर ऊपर उठा हुआ प्रतीत होता है किन्तु ऊपरी सिरा जो क्षितिज से अधिक ऊँचाई पर है, केवल २९ मिनट ऊपर उठता है। अतः गोले में ६ डिग्री के कोण का चिपटापन उत्पन्न होता है जो सूर्य के व्यास का $\frac{1}{5}$ भाग है।

यह घटना जिसमें सीधे ही प्रेक्षण से पता चलता है कि किस प्रकार क्षितिज की ओर आने पर आभासी स्थानान्तर बढता है, केवल वायुमण्डल के निचले स्तरो की हवा के घनत्व में वृद्धि होने का परिणाम है। घनत्व के बढन के साथ ही हवा का वर्तनाङ्क भी बढ़ता है अतः प्रकाश का वेग घटता है। फलस्वरूप किसी नक्षत्र (सितारा) से उत्सर्जित होनेवाली प्रकाश-तरङ्गे जब हमारे वायुमण्डल मे प्रवेश करती है तो पृथ्वी-तल के निकट की ओर के भाग अपेक्षाकृत कम वेग से चलते हैं अत. वे धरती की ओर क्रमशः झुकती जाती हैं। इस कारण तरङ्गाग्र की गमनदिशा प्रगट करने वाली किरणें भी झुक जाती हैं। और दूरस्थ वस्तुएँ उठी हुई प्रतीत होती हैं (चित्र ३६)।

धरती के निकट की किरणों का झुकाव, वायुमण्डल में ताप (टेम्परेचर) के वितरण क्रम के बदलते रहने के कारण दिन प्रतिदिन घटता बढ़ता रहता है। अत्यन्त दिलचस्प बात होगी यदि कई दिनों तक सूर्य के उदय और अस्त होने का समय हम अङ्कित कर लें और फिर उसकी हम पञ्चाग और सारणी में दिये गये समय से तुलना करे। समय की नाप में कम से कम एक सेकण्ड तक शुद्धता अवश्य प्राप्त करनी चाहिए, और रेडियो सकेत की सहायता से ऐसा कर सकना सम्भव भी है। इस तरह की तुलना में

एक या दो मिनट के अन्तर के मिलने की आशा की जा सकती है। समुद्र तट पर रहने वाला कोई भी व्यक्ति बहुत अच्छी तरह यह प्रयोग कर सकता है क्योंकि वहाँ सूर्यास्त
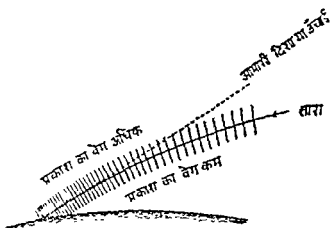
चित्र ३६—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण की वक्रता के कारण आकाशीय पिण्ड वास्तव से अधिक ऊँचाई पर स्थित जान पड़ते हैं।

का प्रेक्षण साफ़ और खुले क्षितिज के ऊपर किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रयोग के साथ क्षितिज की ऊँचाई, सूर्य-मंडलक की आकृति तथा हरी किरणो के निरीक्षण का भी समावेश किया जा सकता है, देखिए § ३०, ३५, ३६।

३०· परावर्त्तन के विना ही किरणों की असामान्य वक्रता

इस बात पर ध्यान दीजिए कि समुद्रतट से देखने पर दूर की लहरें क्षितिज के सामने उभरी हुई जान पड़ती हैं जबकि उसी तरह की निकट की लहरें क्षितिज-रेखा को छू नही पाती हैं; यद्यपि समान ऊँचाई के शीर्षो को मिलाने वाली रेखा समतल होनी चाहिए और इसीलिए इसे भी क्षितिज से मिल जाना चाहिए। इस घटना का अध्ययन तूफान के वक्त समुद्र-यात्रा में भी कर सकते हैं—बशर्त्ते प्रेक्षण निचले डेक से करें। तो आप पायेंगे कि निकट की लहरें क्षितिज तक पहुँच नही पा रही हैं, और फिर इनकी तुलना दूर वाली लहरो से भी करिए। स्पष्ट है इस प्रेक्षण का समाधान केवल पृथ्वी की वक्रता द्वारा ही किया जा सकता है; यहाँ पृथ्वी की वक्रता एक वास्तविक तथ्य के रूप में ठीक आँखो के सामने देखी जा सकती है (चित्र ३७)। किन्तु पृथ्वी के निकट किरणों में उत्पन्न होनेवाली वक्रता के कारण ऊपर वर्णन की गयी घटना में अन्तर

आ जाता है। किसी-किसी दिन तो यह प्रभाव बहुत ही अधिक स्पष्ट होता है—लगता है कि क्षितिज बिलकुल निकट आ गया है और किश्तियाँ सामान्य दिनों की अपेक्षा अधिक दूरी पर दीखती है तथा वे बड़ी भी प्रतीत होती हैं, मानो धरती की वक्रता बढ़ गयी हो। अन्य दिनों, शान्त समुद्र एक बडी अवतल तश्तरी के मानिन्द प्रतीत
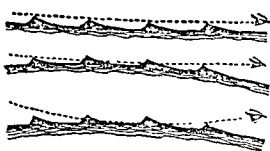
चित्र ३७—क्षितिज रेखा के समक्ष लहरों का प्रेक्षण।

होता है। अनेक वस्तुएँ जो सामान्यत. दृष्टिक्षेत्र से बाहर पड़ती है, अब दृष्टि-गोचर हो जाती हैं, और वे निकट भी जान पड़ती है तथा जितनी बड़ी उन्हे दीखना चाहिए उससे छोटी ही वे दीखती हैं। दूर के जहाज जो प्रेक्षक की आँख के लिए क्षितिज पर या उससे परे होने चाहिए थे, अभी भी पानी के गड्ढे मे उतराते हुए से दीखते रहते है। वे ऐसे दीखते हैं मानों ऊर्ध्व दिशा में वे थोड़ा बहुत पिचक गये हों—हमारी आँख की स्थिति वास्तव में जहाज के पेटे के ऊपरी हाशिये से नीचे रहती है, तब भी क्षितिज-रेखा पेटे के ऊपर से गुजरती हुई जान पड़ती है। क्षितिज असामान्यतः दूर हटा दीखता है।

इन दोनों लाक्षणिक दशाओं को हम क्रमशः पानी की 'उत्तल सतह' तथा 'अवतल सतह' कह सकते है (चित्र ३८)। पहली दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब वायुमण्डल में नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्यत धीरे-धीरे घटता है या उस वक्त भी जब कि पेंदे के वायुस्तरों मे ऊपर की ओर घनत्व बढ़ता है और द्वितीय दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्य तेजी के साथ घटता है। इस तरह की असगतियाँ ताप के असाधारण वितरण-क्रम के परिणाम हैं। यदि हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म है तो नीचे के वायुस्तर ऊपर के स्तरो के मुकाबले में अधिक गर्म हो जाते हैं। अत· प्रकाश के लिए ये अधिक विरल हो जाते हैं और इसलिए इनका वर्त्तनाङ्क घट जाता है; फलस्वरूप प्रकाशकिरणें धरती से दूर की दिशा में मुड़ जाती हैं। यदि हवा के मुकाबले समुद्र अधिक ठण्डा

हो, तो किरणें उलटी दिशा में मुड़ती हैं। ऐसे दिनों वाञ्छनीय होगा कि विभिन्न ऊँचाइयों पर हवा का ताप यह देखने के लिए नापा जाय कि उससे इस प्रेक्षण का समाधान होता है या नहीं।
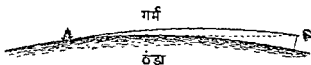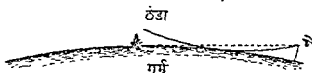
चित्र ३८—दूरस्थ वस्तुओं का विलुप्त होना; पानी की सतह उत्तल प्रतीत होती है (दोनों ही चित्रों में किरण की वक्रता अत्यधिक दिखलायी गयी है।) (नीचे) दूरस्थ वस्तुएँ, जो सामान्यतः अदृश्य रहती हैं, अब दीख जाती हैं; पानी की सतह अवतल जान पड़ती है।

प्रकाश की इन दोनों दशाओं की पहचान का एक और लक्षण है—यह है क्षितिज की आभासी ऊँचाई। बिना किसी यंत्र की सहायता के, इस ऊँचाई को नापने के लिए समुद्र के ठीक किनारे निर्देशन का एक स्थिर-बिन्दु A निश्चित करिए और फिर किसी लट्ठे या पेड़ के तने पर चलायमान निर्देशन बिन्दु *B* लीजिए जो तट से एकाध सौ गज की दूरी पर भूमि की ओर हो (चित्र ३९)। बिन्दु *B* हमारा प्रेक्षणस्थल है, यहीं पर आँख इतनी ऊँचाई पर रखते हैं कि क्षितिज को जानेवाली रेखा ठीक बिन्दु *A* से
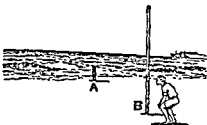
चित्र ३९—पृथ्वी के निकट किरण की वक्रता को लम्बोली नापना।

गुजरे। यदि समुद्र का पानी हवा से अधिक ठण्डा हुआ तो क्षितिज इस रेखा से ऊपर उठा हुआ प्रतीत होगा और B की स्थिति नीची हो जायगी, और यदि पानी हवा की अपेक्षा अधिक गर्म है तो क्षितिज नीचा दीखेगा, और B की स्थिति ऊँची चली जाती है। कभी-कभी यह अन्तर ६ मिनट या ९ मिनट तक भी ऊपर या नीचे की दिशा में प्राप्त होता है, विशेषतया उस वक्त जब कि हवा न चल रही हो। यदि दूरी AB=१०० गज हो तो ये अन्तर क्रमशः ७ और ११ इंच की ऊँचाई प्रगट करेंगे। दूरबीन का उपयोग करने पर प्रेक्षण की इस विधि में और अधिक सूक्ष्मता लायी जा सकती है।

कुछ बहुत ही विलक्षण दशाओं में किरणों की वक्रता असामान्यरूप से प्रबल होती है और तब प्रकाश सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण घटना प्राप्त होती है। किसी-किसी दिन सभी चीजें असाधारण रूप से साफ और स्पष्ट नजर आती हैं और ऐसे ही दिन कोई दूरस्थ कस्बा, या समुद्र का प्रकाशस्तम्भ, अचानक ही दीखने लग जाता है जब कि साधारण परिस्थितियों में उसे देख सकना असम्भव ही रहता है, क्योंकि वह क्षितिज के नीचे स्थित होता है। अक्सर तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वह आश्चर्य-जनक रूप से हमारे निकट आ गया हो। दो बार इसी तरह की घटना ब्रिटिश चैनेल पर देखी गयी थी। एक बार ब्रिटिश तट के नगर हेस्टिंग्स से नंगी आँखों द्वारा ही सामने का सारा फ्रेंच समुद्रतट देखा जा सका था जब कि साधारण परिस्थितियों में बढ़िया से बढ़िया दूरबीन की सहायता से भी उसे नहीं देखा जा सकता। एक अन्य अवसर पर रैम्सगेट से देखने पर डोवर का समूचा किला उस पहाड़ी के पीछे से दिखलाई पड़ा जो आमतौर पर किले के अधिकांश को अपनी आड़ में छिपाये रखती है।

फिर इसके प्रतिकूल ऐसे भी दृष्टान्त हैं जब कि दूर की चीजें जो आम तौर पर क्षितिज से ऊपर निकली रहती हैं, गायब हो जाती हैं, मानों वे क्षितिज से नीचे डूब गयी हों। ये दशाएँ भी निकटता का विशेष आभास देती हैं।

इस तरह के प्रेक्षण के साथ-साथ समुद्र की सतह और हवा के ताप को भी सदैव नापना चाहिए।

३१. छोटे पैमाने पर मरीचिका (प्लेट V)

मरुभूमि की सुविख्यात मरीचिका एक छोटे पैमाने पर आसानी से देखी जा सकती है। एक लम्बी सपाट दीवार या पत्थर का वारजा चुनिए जो दक्षिण रुख हो और सूर्य की रोशनी उस पर पड़ रही हो--इसकी लम्बाई कम से कम १० गज होनी चाहिए। दीवार से सिर टिकाकर तिरछी दिशा में उसे देखिए और किसी व्यक्ति

को, जहाँ तक हो सके अपने से दूर उस दीवार के निकट खड़ा करिए जो हाथ में कोई चमकदार चीज़, जैसे धूप में चमकती हुई साधारण चाभी, लिये हो। चाभी को वह धीरे-धीरे दीवार के निकट ले आता है; ज्योंही चाभी दीवार के निकट, चन्द इंचों की दूरी पर आती है, त्योंही उसका प्रतिबिम्ब विशेष रूप से विकृत हो जाता है और दीवार से परावर्तित प्रतिबिम्ब चाभी की ओर खिसकता हुआ जान पड़ता है। अक्सर चाभी पकड़े हुए पूरा हाथ भी प्रतिबिम्बित होता हुआ देखा जा सकता है। एक बार जब सही तरीकेपर इस घटना का प्रेक्षण कर लिया गया हो तब दूर की प्रत्येक ऐसी वस्तु के लिए भी प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है जो दीवार के सहारे तिरछी दिशा मे दृष्टि डालने पर दिखाई देती हो। दीवार की लम्बाई के कम होने पर भी इस प्रतिबिम्ब को देख सकते हैं बशर्ते आँख को दीवार के एकदम निकट रखें—ऐसा करने के लिए दीवार के गोशे में इतनी जगह होनी चाहिए कि प्रेक्षक भीतर खड़ा हो सके।

यदि एक बहुत ही लम्बी दीवार खूब गर्म हो जाय तो कभी-कभी प्रथम प्रतिबिम्ब के साथ-साथ द्वितीय प्रतिबिम्ब भी दिखलाई पड़ता है जो उलटा नहीं, बल्कि वस्तु के लिहाज से सीधा ही बनता है। यह उस सामान्य नियम के अनुकूल ही है जो यह बतलाता है कि मरीचिका के बननेवाले बहुप्रतिबिम्ब क्रमवत् एक के बाद दूसरे सीधे और उलटे अवश्य होते हैं (प्लेट Vb)।

परावर्त्तन इसलिए होता है कि गर्म हुई सतह के निकट ही हवा अधिक गर्म होकर अधिक विरल हो जाती है, अतः इसका वर्त्तनाङ्क घट जाता है। इस कारण प्रकाश की किरणें मुड़ती जाती हैं यहाँ तक कि वे सतह के समानान्तर हो जाती हैं, तदुपरान्त वे सतह से बाहर की ओर फैल जाती हैं (चित्र ४०)।

चित्र ४०—धूप से प्रकाशित दीवार पर मरीचिका (ऊर्ध्व दिशा की दूरियाँ चित्र की स्पष्टता के लिए अत्यधिक बढ़ाकर दिखायी गयी हैं।)

कभी-कभी इसे 'पूर्ण परावर्त्तन' भी कहते हैं; किन्तु यह नाम गलत है, क्योंकि स्तरों के बीच किरणों का झुकाव सर्वत्र आहिस्ते-आहिस्ते होता है। बल्कि यह स्मरण रखना चाहिए कि किरणों का मुड़ना करीब-करीब पूरे का पूरा गर्म हुई वस्तु के एकदम निकट घटित होता है। सम्भवतः दीवार के सहारे उसके अत्यन्त निकट ही वायु का एक स्तर इंच के कुछ हिस्से भर मोटा मौजूद

होता है जिसका ताप लगभग दीवार के ताप के बराबर ही है; इसके आगे ताप पहले तो तेजी से गिरता है, फिर अधिक शनैः-शनैः।

यह उचित होगा कि दीवार और उसके निकट के वायुस्तरो का ताप नाप कर यह दिखाएँ कि किरणों की प्रेक्षित वक्रता की परिमाणतः व्याख्या नापे गये ताप के आधार पर किस प्रकार कर सकते हैं।

छोटे पैमाने की इसी तरह की मरीचिका कुछ अवसरों पर स्टीमर की गर्म चिमनी के सहारे देखी गयी थी। चन्द्रमा, वृहस्पति तथा उगते हुए सूर्य इस प्रकार प्रतिविम्बित होते थे मानो चाँदी की कलईवाले दर्पण मे वे देखे जा रहे हों; इसके प्रतिकूल जहाज के मस्तूल पर यह प्रभाव प्रगट नहीं होता। किन्तु मेरे विचार में आधुनिक जहाजों की चिमनियाँ इतनी गर्म नही हो पाती हैं कि वे इस घटना को उपस्थित कर सके।

धूप मे कुछ देर तक खड़ी रहनेवाली मोटरकार की छत पर देखने से दूर की वस्तुओं के प्रतिविम्ब स्पष्ट रूप से विकृत दिखलाई पड़ते हैं बशर्त्ते उस गर्म छत की सतह के सहारे बिलकुल निकट से देखे।

यदि धूप मे पडी ऐसी तख्ती को देखे जो २० इच से ज्यादा लम्बी न हो तो दूर की प्रत्येक वस्तु को आप इस रूप मे देख सकेंगे मानो वह तख्ती द्वारा आकृष्ट होकर लम्बाई की दिशा मे खिंच उठी हो।

३२. गर्म सतहों पर बड़े पैमाने की मरीचिकाएँ (गौण प्रतिविम्व) (प्लेट Va)[1]

मरीचिका की उत्पत्ति के लिए एक चिपटी सतह, तथा लम्बे फासले से प्रेक्षण का किया जाना कम से कम उतने ही आवश्यक है जितना भूमि का अत्यधिक गर्म होना। इसी लिए हालैण्ड सरीखा सपाट भूमि का देश इस प्रकार की घटना के प्रेक्षण के लिए विशेष रूप से उपयुक्त ठहरता है; वहाँ वायु मे बननेवाले प्रतिविम्व अक्सर उतने ही स्पष्ट होते हैं जितने सहारा के तप्त रेगिस्तान में। अक्सर ये मरीचिकाएँ झुकने पर ही देखी जा सकती हैं; द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग करने पर और क्षितिज पर बार-बार इधर-उधर निहारने पर, यह अचरज की बात है कि ये मरीचिकाएँ बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं और ये बार-बार दीखती हैं।

1. See Pernter-Exner, loc. cit. R. Meyer, Met. Zs, 52, 405, 1935; W. E. Schiele, Veroff-Geophysik. Inst. Leipzig, 7, 101, 1935.

अब हम ऐसी तीन परिस्थितियों का वर्णन करेंगे जब कि यह घटना असाधारण स्पष्टता तथा बहुलता के साथ उत्पन्न होती है।

सर्वप्रथम, यह घटना ऐसफाल्ट की सपाट सड़क के ऊपर किसी भी धूपवाले दिन देखी जा सकती है। सतह के ऊपर प्रथम आधे इंच में थर्मामीटर के ताप में २०° से लेकर ३०° तक की गिरावट होती है, इसके आगे प्रति इंच के लिए ताप का ह्रास एकाध डिग्री ही रह जाता है।[1] मेरा निज का अनुभव यह है कि आधुनिक कंक्रीट की सीधी सडकों के ऊपर बननेवाली मरीचिका और भी स्पष्ट निखरती है। यह सच है कि कंक्रीट की सड़क सूर्य की विकिरण-ऊष्मा का उतना शोषण नहीं करती जितना ऐसफाल्ट की सड़क; किन्तु इस दशा में कंक्रीट-सड़क की सतह से ऊष्मा का पुनरुत्सर्जन भी तो कम ही होता है। धूपवाले दिन इस किस्म की सड़क पर पानी फैला हुआ जान पड़ता है और यदि झुककर देखें तो यह और भी स्पष्ट तथा अधिक दूर तक फैला हुआ दीखता है, और दूर की चमकीली तथा रंगीन वस्तुएँ उसमें प्रतिबिम्बित होती हुई जान पडती हैं। जिसे हम पानी समझते हैं वह फासले पर प्रतिबिम्बित होनेवाले स्वच्छ आकाश के सिवाय और कुछ नहीं है। यह महत्त्व की बात है कि व्यस्त यातायात के बावजूद भी, जब कि उसकी वजह से कागज, पत्तियाँ और धूल आदि ऊपर को फिकती रहती हैं, इस प्रतिबिम्बन में किसी तरह का व्याघात नहीं होने पाता। ठीक-ठीक प्रेक्षण कीजिए कि किस कोण पर मरीचिका दृष्टिगोचर होती है और पृष्ठ ६० पर समझाये गये सूत्र की सहायता से भूमि का स्पर्श करनेवाली वायु के ताप की गणना कीजिए।

द्वितीयत. सपाट प्रदेशों के घास के चौड़े मैदानों में मरीचिका का उत्पन्न होना एक सामान्य घटना है और कम से कम वसन्त और ग्रीष्म ऋतु में जब कि मौसम साफ रहता है और अधिक हवाएँ भी नहीं चलती, मरीचिका इन मैदानों का एक विशेष लाक्षणिक गुण माना जा सकता है। क्षितिज के सहारे एक धवल रंग की पट्टी-सी दीखती है जिसके ऊपर दूर की मीनारें और पेड़ की चोटियाँ उतराती हुई जान पड़ती हैं मानों बिना किसी आधार के वे टिकी हों। झुकने पर आपको निकट की भूमि के दृश्य विकृत रूप में दिखलाई देते हैं जिसमें पानी के बड़े-बड़े पल्वलों में मकान और स्वच्छ आकाश पृष्ठभूमि में प्रतिबिम्बित होते रहते हैं। सूर्य की दिशा में यह प्रभाव विशेष रूप से स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

1. H. Futi, Geophys. mag. 4, 387, 1931. L. A. Ramdas. & S. L. Malurkar, Nat. 129, 6, 1932.

दोपहर के करीब, किरणों का झुकाव अक्सर इतना अधिक होता है कि यदि आप खड़े भी रहें तो ऐसा प्रतीत होता है मानों हर तरफ पानी के पल्वल मौजूद हैं। और कुछ थोड़ा झुकने पर आप देखेंगे कि पानी के ये पल्वल किस तरह सिकुड़ जाते हैं या फिर दो-चार गज ऊँचे चढ़ने पर ये किस तरह और भी फैल जाते हैं। ध्यान दीजिए कि प्रतिविम्ब की दिशा से आँख को तनिक ऊपर ले जाने पर ये ऊर्ध्व दिशा में किस तरह खिंच उठते तथा विकृत हो जाते हैं; यदि आँख को बहुत नीची स्थिति में रखें तो दूर की वस्तुओं के पेंदे अब दृष्टि से ओझल हो जाते हैं और ये वस्तुएँ हवा में लटकी हुई प्रतीत होती हैं। सूर्य से हटी हुई दिशा में ये जलाशय कम चमकदार प्रतीत होते हैं, और इसलिए आसानी से उन पर ध्यान नहीं जाता, किन्तु दूर की वस्तुओं के प्रतिबिम्ब और उनकी विकृति अब और भी अच्छी तरह देखी जा सकती है।

यह दिलचस्प बात होगी कि निचले वायु-स्तरों में कुछ के ताप अंकित किये जायँ जैसे ४०, २०, १०, ४ और ० इंच की ऊँचाइयों पर। सुबह को, यदि धूप निकली हो, तो सबसे ऊँचा ताप धरती के बिलकुल निकट पाया जायगा; यदि ४० इंच और ० इंच पर नापे गये ताप का अन्तर ३° हो तो इसका अर्थ है कि परावर्त्तन नगण्य है। यदि यह अन्तर बढ़कर ५° हो जाता है तो परावर्त्तन औसत दर्जे का है और अन्तर ८° हो तो परावर्त्तन की घटना विशेष प्रबल दिखाई देगी। अधिकतम अन्तर वसन्त ऋतु में ठण्डी रातों के बाद के धूपवाले दिन में मिलता है।

बुश ने जिसने इस घटना का सबसे पहले विस्तृत और वैज्ञानिक अध्ययन किया था, ब्रेमेन नगर के निकट घास के एक बड़े मैदान में (सन् १७७९में) दूर के शहर की मरीचिका का स्पष्ट प्रेक्षण किया था। सर्वाधिक सुन्दर और सर्वाङ्गपूर्ण मरीचिका तो समुद्रतट पर, बालुकामय, कड़ी और समतल भूमि के पार दिखलाई पड़ती है, विशेषतया जब मौसम गर्म हो और हवा न बहती हो।[1] जमीन पर यदि हम लेट जायँ ताकि यथासम्भव आँख रेत की सतह के निकट हो तो हमें परावर्त्तित प्रतिविम्ब स्पष्ट नहीं दीखेगा। किन्तु अगर हम अपना सिर थोड़ा ऊपर उठाएँ तो अचानक ही ऐसा प्रतीत होता है मानो हम चारों ओर से किसी झील द्वारा घिर गये हैं और ३० से ३५ गज के फासले की चीजें भी जो केवल ५ से लेकर, १० इंच तक ऊँची हों, उसमें प्रतिबिम्बित

१. डच उत्तरी सागर द्वीप के समुद्रतट ५ मील लम्बे मैदान में अलौकिक सौन्दर्य की मरीचिकाएँ बनती हैं।

L. G., Vedy Met. Mag., 63, 249, 1928.

होती देखी जा सकती हैं। हम किसी स्पष्ट और चमकीली वस्तु H को चुन लेते हैं और अपनी आँख किसी निश्चित विन्दु W पर रखते हैं जो धरती से उतनी ही ऊँचाई पर हो जितनी सामने की वस्तु। वस्तु के लिए कोई टहनी या लकड़ी का डण्डा चुन सकते हैं।

अब हम प्रयोग द्वारा उस प्रकाश-किरण का पथ ज्ञात करते हैं जिसके द्वारा मरीचिका-प्रतिविम्व हमें दिखलाई देता है। किसी ज्ञात दूरी के विन्दु C पर एक आदमी ऊँचाई नापने का डण्डा सीधा खड़ा करता है और एक छोटे-से हत्थे को नीचे से ऊपर खिसकाकर उसे डण्डे के विन्दु B पर रखता है ताकि विचाराधीन प्रतिविम्ब उसकी आड़ में ओझल हो जाय; फिर हत्थे को खिसका कर वह उसे ऐसी स्थिति में रखता है कि स्वयं वस्तु का शीर्ष उसके पीछे छिप जाय। वस्तु के शीर्ष *H* से आँख तक सीधे आनेवाली प्रकाश-किरण HW को हम सीधी रेखा मान सकते हैं, अतः मुड़ कर आनेवाली किरण HAW के प्रत्येक विन्दु की ऊँचाई हम ज्ञात कर सकते हैं; फलस्वरूप विन्दु-विन्दु निर्धारित करके स्वयं इस किरण-पथ को भी हम निश्चित कर सकते हैं। इस प्रकार पता चलता है कि रेत की सतह के निकट किरण का लगभग अकस्मात् परावर्त्तन हो जाता है। यदि यह ठीक है तब हम आशा कर सकते हैं कि निष्पत्ति $\frac{h}{AW} = \frac{h'}{BW}$ का मान स्थिर होगा और यह रेत की सतह तथा अधिक लम्बे पथवाली किरण के बीच बननेवाले कोण के बराबर होगा। यथार्थ मे होता भी ऐसा ही है। इस प्रकार बननेवाले कोण के मान १° तक प्राप्त होते हैं। इस कोण के मान से और विभिन्न ताप पर हवा के वर्त्तनाङ्क से (जो हमें ज्ञात हैं), सूत्र द्वारा हम भूमि के एकदम निकट की हवा के ताप और आँख की ऊँचाई पर की हवा के ताप का अन्तर डिग्री सेण्टीग्रेड मे मालूम कर लेते हैं; सूत्र इस प्रकार है, ताप अन्तर Δ t (सेण्टीग्रेड में) $= \frac{273}{29.10^{-5}} \cdot \frac{1}{2} \left(\frac{h}{AW}\right)^2$ व्यवहार मे यह अन्तर 10° से लेकर 65°F तक मिल सकता है।

उपर्युक्त उदाहरण में मरीचिका की उत्पत्ति-क्रिया अत्यन्त सरल है। ज्यों हीं मैं भूमि पर एक खास सीमा से आगे किसी विन्दु पर अपनी दृष्टि डालता हूँ, तो दृष्टि रेखा की किरण गर्म स्तरों पर पर्याप्त झुके हुए कोण पर आपतित होती है, अतः इसका अकस्मात् विचलन हो जाता है। प्रभाव बहुत कुछ ऐसा ही होता है मानो उस विन्दु की भूमि पर कोई दर्पण रखा हो। इस प्रकार दूर की वस्तुएँ दो टुकड़े में विभाजित

हो जाती हैं—ऊपर का भाग तो अकेला ही दीखता है, किन्तु पेंदेवाले भाग के साथ उसका उलटा प्रतिविम्ब भी दिखलाई पड़ता है (चित्र ४२ क)।

चित्र ४१—मरीचिका उत्पन्न करनेवाली किरण के पथ को कैसे मालूम करते हैं। (सभी क्षैतिज दूरियाँ अत्यधिक छोटी करके दिखायी गयी हैं।)

लम्बे फासले पर बननेवाली मरीचिका पर पृथ्वी की वक्रता तथा किरणों की सामान्य वक्रता का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। दूरस्थ चीजों के पैर पृथ्वी की वक्रता के कारण, एक खास ओझल रेखा के नीचे अदृश्य रहते हैं। इस ओझल रेखा और इससे कुछ ऊपर स्थित सीमा-रेखा के दर्मियान वस्तु का वह भाग मिलता है जो प्रतिबिम्बित होते हुए दीखता है और इसका प्रतिबिम्ब प्रायः ऊर्ध्व दिशा में संकुचित हुआ रहता है। अन्त में, सीमा-रेखा से ऊपर वे वस्तुएँ दिखलाई पड़ती हैं जो प्रतिबिम्बित नहीं हो पाती हैं (चित्र ४२ ख)।
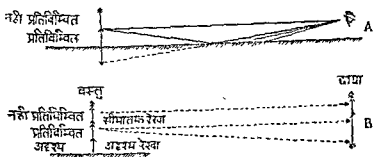
चित्र ४२—मरीचिका वस्तु के केवल एक भाग को ही प्रदर्शित करती है। A. थोड़ी दूर पर। B. लंबी दूर पर।

पृथ्वी की सतह के निकट, ताप की तीव्र वृद्धि के बजाय हम ताप के वितरण की अनेक अपेक्षाकृत अधिक पेचीदा स्थितियों की कल्पना कर सकते हैं जिनमें प्रत्येक के लिए प्रकाश-सम्बन्धी अपने परिणाम अलग-अलग किस्म के होंगे। समुद्रतट के ऊपर बननेवाली अत्यन्त स्पष्ट मरीचिका के लिए उपर्युक्त विधि से प्रायोगिक जाँच करके

ओझल रेखा तथा सीमारेखा की स्थितियाँ ज्ञात कर सकते हैं और फिर उनसे ताप-वितरण क्रम भी मालूम कर सकते हैं। इस निष्कर्ष के साथ स्तरों के सीधे नापे गये ताप की तुलना की जा सकती है। किन्तु समुद्रतट के बिलकुल सपाट न होने की संभावना के कारण इस तरह की जाँच का कार्य अत्यन्त कठिन हो जाता है।

प्रत्येक समुद्र-यात्रा में बहुत-सी मरीचिकाएँ दिखलाई पड़ती हैं; जिनका समाधान पूर्ववर्णित व्याख्या के अनुसार किया जा सकता है (चित्र ४३, ४४)। यदि घटना

चित्र ४३—विभिन्न दूरियों से ऐसे द्वीप का अवलोकन किया जा रहा है जहाँ मरीचिका मौजूद है।

का विकास अपूर्ण रहा, जैसा कि प्रायः होता है, तो (उलटा) प्रतिबिम्ब इतना पिचक जाता है कि यह बस एक छोटी-सी आड़ी रेखा की शक्ल का दीखता है और स्वयं वस्तु के पेंदे के साथ यह मिल-सा जाता है। और अब केवल प्रतिबिम्बित आकाश की रोशनी की चमकती हुई झिरी पर ही ध्यान आकृष्ट होता है—यह भी पिचकी होती है किन्तु स्वभावतः इस बात को हम भाँप नहीं पाते। इसलिये बहुत दूर की वस्तुएँ क्षितिज से कुछ ऊपर मानो उतराती हुई सी प्रतीत होती हैं।

प्रकाश की यह घटना, जो आंशिक विकास पायी हुई मरीचिका के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, लगभग प्रतिदिन ही समुद्र पर दिखलाई देती है, विशेषतया उस दशा में जब कि हम दूरबीन का उपयोग करते हैं। यदि द्वीप के विभिन्न भाग हमसे विभिन्न दूरियों पर हों तो अधिकतम दूरीवाले भाग ओझल रेखा और सीमारेखा को अपेक्षाकृत अधिक ऊँचाइयों पर स्पर्श करते हैं और चित्र ४४ D में दिखलायी गयी दशा प्राप्त होती है।

ओझल रेखा और आभासी क्षितिज के दर्मियान की ऊँचाई नाप कर मरीचिका की 'तीव्रता' को अङ्कों में सरलता से प्रगट कर सकते हैं। नाप की क्रिया परिशिष्ट §२३५ में दी गयी किसी एक विधि से पूरी की जा सकती है। इस के लिए चाप के कुछेक मिनट के कोणों को नाप करनी होती है।

एक और घटना मिलती है जो इस तरह का प्रभाव उत्पन्न करती है कि कभी-कभी धोखे से इसे ही उपर्युक्त घटना समझा जा सकता है—यह है लहरों के फेन से पानी

की नन्ही-नन्ही बूंदों की तह का निर्माण। ये बूंदे समुद्र की हवा मे उतराती रहती है और दूर की चीजों के निचले भागों को धुन्ध के हलके स्तर से ढँक लेती हैं।
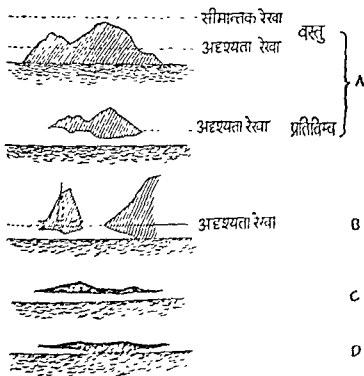
चित्र ४८—समुद्री यात्रा के दौरान में मरीचिका का प्रेक्षण।

मरीचिकाएँ, विकृत रूप में और [illegible] प्रतिबिम्ब के साथ निम्नलिखित परिस्थितियों में भी देखी गयी हैं—नदी, तालाब में जहाँ समय जब कि हवा के मुकाबले पानी अधिक गर्म हो; बड़ी झीलों पर, वायुमण्डल की अनुकूल परिस्थितियों में; रेलवे स्टेशन पर जब कि सड़कें पर दूर का [illegible] विकृत सतह सा दीखता है; समतल [illegible] पर या समतल ढकी हुई भूमि पर; दीवारों के बगल पर बशर्ते इस तरह के [illegible] हों; और सड़क की पत्थर जड़ी हुई सड़क पर, विशेषतया उस समय [illegible] जहाज के सहारे निकट से कोई देख रहा हो।

३३. [illegible] मरीचिका (विशिष्ट मरीचिका या आभासी दर्शन)

अधिक ठण्डा रहता है जिससे निम्नतम वायुस्तरों का ताप, समुद्र के ऊपर ऊँचाई के साथ बहुत तेजी से बढ़ता है; ताप के इस ढग के वितरण को ऋतु-वैज्ञानिक 'ताप के उत्क्रमण' (इनवर्शन ऑफ टेम्परेचर) के नाम से पुकारते हैं (देखिए चित्र ४५)।
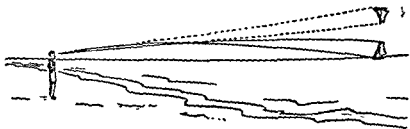
चित्र ४५—उच्चतर श्रेणी की मरीचिका, एक असाधारण घटना।

कतिपय शानदार 'विशिष्ट' मरीचिकाओं के उत्तम श्रेणी के प्रेक्षण इङ्गलैण्ड के दक्षिणी समुद्रतट से ब्रिटिश चैनेल के पार दूरबीन द्वारा प्राप्त किये गये थे—ये प्रेक्षण कभी तो अत्यन्त गर्म दिन के बाद की सन्ध्या को लिये गये और कभी उस वक्त जब कि कुहरा बस हट ही रहा था। 'विशिष्ट' या उच्चतर श्रेणी की मरीचिकाएँ एकदम भिन्न परिस्थितियों में भी दिखाई देती हैं जैसे वसन्त ऋतु में बाल्टिक सागर पर बर्फ के गलने के तुरन्त बाद।

इस प्रकार की मरीचिकाएँ बर्फ जमी हुई सतह पर देखी जा सकती हैं जब कि अचानक बर्फ गलना शुरू करती है और इस कारण बर्फ के निकट की हवा ऊपर की हवा के मुकाबले में अधिक ठण्डी हो जाती है। किन्तु इसे देख सकने के लिए प्रेक्षक को झुकना पड़ेगा और उसे बर्फ जमी हुई सतह के सहारे उसके निकट से देखना होगा।

कभी-कभी किरणों के ऊपर की ओर मुड़ने से बहु प्रतिबिम्ब बनते हैं क्योंकि इस दशा में उनके विकास में किसी तरह की बाधा नहीं पड़ती (जैसा कि किरणों के नीचे झुकने पर पृथ्वी की वक्रता के कारण बाधा पड़ती है)। और ये अद्भुत प्रतिबिम्ब उलटे भी बनते हैं तथा सीधे भी, क्षण-क्षण पर इनका स्वरूप बदलता रहता है तथा वस्तु की दूरी या वायुमण्डल के तापवितरण के अनुसार ही ये परिवर्तन घटित होते हैं।

३४. हवाई किले

कुछ अत्यन्त ही विशिष्ट दशाओं में पूर्णतया विश्वसनीय प्रेक्षकों द्वारा विचित्र मरीचिकाएँ देखी गयी हैं। इनका कहना है कि इन मरीचिकाओं में भूमि के दृश्य-

अवस्था (a) और (b) के ऊपरी क्षितिज तथा (d) के निचले क्षितिज की सीमाओं के अन्दर धारीदार क्षेत्र का निर्माण होता है (चित्र ४७)। अवस्था (a) का वर्तन (रीफ्रेक्शन) जब धीरे-धीरे अवस्था (d) में परिवर्तित होता है तो फल-स्वरूप हवाई किले का प्रतिविम्ब हवा में ऊपर उठ जाता है। यह सिद्धान्त कि इस तरह के संक्रमण क्षेत्र में औसत ऊँचाई के वायु-स्तर में ही हवा का घनत्व सबसे अधिक होता है, सही जान पड़ता है। इस दशा के लिए किरणों का मार्ग चित्र ४७ में दिखलाया गया है, और जैसा कि इस चित्र से प्रगट होता है, प्रकाश सूत्र L का हरएक विन्दु ऊर्ध्व दिशा में रेखा AB की सीध में खिंच उठता है।
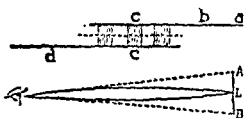
चित्र ४७—फाता मोर्गाना किस प्रकार उत्पन्न होता है।

सम्भवतः हम जानना चाहेंगे कि क्या स्वयं हमारे देश (हालैण्ड) में भी लाक्षणिक 'फाता मोर्गाना' की घटना देख सकने की सम्भावना हो सकती है। हालैण्ड के उत्तरी समुद्रतट पर इस तरह की कम से कम एक शानदार घटना के देखे जाने का पता है। इस अद्वितीय अवसर पर फोरेल द्वारा वर्णित करीब-करीब सभी लाक्षणिक विशिष्टताएँ प्रेक्षक द्वारा देखी जा सकी थी। प्रेक्षक लिखता है 'गर्मी के मौसम की सन्ध्या के चार वजकर वीस मिनट पर जब जान्दवूर्ट के समुद्रतट पर मैं पहुँचा तो क्षितिज की असमानता ने तुरन्त ही मेरा ध्यान आकृष्ट कर लिया। उत्तर-पश्चिम तथा पश्चिम में, दक्षिण-पश्चिम की अपेक्षा क्षितिज काफ़ी ऊँचा था; कुछ जगहों पर दो क्षितिज दृष्टिगोचर हो रहे थे, एक के ऊपर दूसरा; दोनों ही एक ओर, पश्चिम और उत्तर के ऊँचे सिरे पर मिले हुए थे, और दूसरी ओर, दक्षिण-पश्चिम के निचले सिरे पर वे मिले हुए थे। उनके बीच का अन्तर करीब-करीब सर्वत्र एक-सा था, लगभग ७ मिनट का कोणीय अन्तर (आँख से भुजा की लम्बाई के फासले पर करीब .०८ इंच)। इन दोनों तलों के दरमियान की वस्तुएँ विचित्र तरह से विकृत हो गयी थीं, अत. तरह-तरह के मायावी शक्ल के प्रतिविम्ब बन गये थे। (देखिए चित्र ४८)।
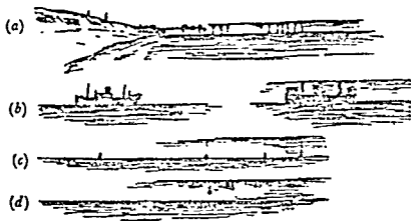
चित्र ४८—हवाई किले (जान्डवूर्त, नेदरलैंड में प्रेक्षित)

(a) नूर्डविज्क, काटविज्क, शेवेविजेन नगर, धारीदार क्षेत्र में वस खजूर-वृक्षों के वन-सरीखे दीखते है !

(b) बन्दरगाह से बाहर जानेवाला स्टीमर, कोई प्रतिबिम्ब नहीं (बायें); फाता मोर्गाना के क्षेत्र में (दाहिने)।

(c) छोटी समुद्री किश्तियाँ।

(d) स्टीमर क्षितिज के पीछे स्वयं अदृश्य; केवल फाता मोर्गाना में दृष्टिगोचर उलटा प्रतिबिम्ब ऊपरी क्षितिज से लटका हुआ है।

(From J. Pinkhof, Hemel en Dampkring, 31, 252, 1939. Block lent by the Royal Nether-lands Meteorological Institute.)

३५ उदय और अस्त होते समय सूर्य और चन्द्रमा का विरूपण[1] (प्लेट VI)

जब सूर्य आकाश में कम ऊँचाई पर होता है तो प्रायः अत्यधिक विचित्र विरूपण देखने को मिलते हैं। दृष्टिगोचर होनेवाले वृत्तखण्ड के कोने घिस गये से जान पड़ते हैं या ऐसा प्रतीत होता है मानो चकरी दो भागो मे काटकर जोड़ दी गयी है, या फिर सूर्य की चकरी के नीचे प्रकाश की पट्टी-सी दीखती है जो सूर्य के डूबने के साथ और ऊपर की ओर चढती है। अन्य दशाओ में सूर्य ठीक क्षितिज के नीचे अस्त न होकर उससे कुछ मिनटों की कोणीय ऊँचाई पर ही ओझल हो जाता है। आकृति के ये

1. A L Cotton, Contrib Lick Obs. 1, 1895, P A. S. P., 45, 270, 1933 etc.

विरूपण प्रातः की अपेक्षा सन्ध्या को अधिक परिवर्तनशील होते जान पड़ते हैं और ऐसा ऋतुसम्बन्धी कारणों की वजह से होता है (देखिए § १९३)।

खुले आकाशवाले दिन जब हवा न चलती हो, इन प्रतिबिम्बों के बनने के दौरान में भिन्न घनत्ववाले वायुस्तरों में फेर-बदल कम होता है, अतः सूर्य के हाशिये के विरूपण वायुमण्डल की स्थिर दशा बतलाते हैं और ये अच्छे मौसम के चिह्न समझे जा सकते हैं। यदि सूर्य की चमक बहुत अधिक हो तो अच्छा होगा कि चाँदी की कलईवाला कागज या फिर साधारण कागज जिसमें नन्हा-सा एक सूराख बना हो, आँख के सामने रख लें या फिर गहरे रंग का काँच आँख के सामने रखें। द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग आवश्यक नहीं है, यद्यपि इसके उपयोग से प्रेक्षण की सुविधा जरूर हो जाती है। इस दशा में कालिख लगा हुआ काँच या सुई के बराबर छिद्रवाला पर्दा ठीक आँख के सामने रखा जा सकता है (दूरबीन के बाहरी लेन्स के सामने नहीं)।

इन घटनाओं की सबसे अधिक दिलचस्प अवस्थाएँ प्रायः सूर्यास्त के १० मिनट पहले आरम्भ होती हैं (या सूर्योदय के १० मिनट बाद तक बनी रहती हैं)। साथ ही सूर्य की चकरी के रंगों के विभिन्न क्षेत्र पर भी ध्यान दीजिए, क्षितिज के सबसे निकट वाले हाशिये का रंग गहरा लाल होता है जो ऊपर की ओर क्रमशः नारङ्गी और पीले रंग में बदल जाता है। यह भी देखिए कि चकरी पर कभी-कभी दृष्टिगोचर होनेवाले सूर्य के बड़े आकार के धब्बे नन्हीं लकीरों की शक्ल में खिच उठते हैं।[1]

इनका फोटो लेना दिलचस्प होगा, यद्यपि यह थोड़ा कठिन काम है। साधारण कैमरे से उतारा गया सूर्य का फोटो अत्यन्त छोटा ही आता है। केवल ऐसी दूरबीन से, जिसकी फोकस लम्बाई कम से कम ३० इंच हो और जिसका मुँह १ से ४ इंच तक चौड़ा हो, सन्तोषप्रद फोटो लिया जा सकता है—इस दशा में एक सेकण्ड से कम ही समय तक प्रकाशदर्शन[2] देना आवश्यक होता है, और इतने कम समय के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि दूरबीन को सूर्य की प्रत्यक्ष गति के अनुसार घुमाने का समायोजन करें। इसके लिए पैन्क्रोमेटिक फोटो प्लेट काम में लाइए और इसके सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी भी प्लेट-सम्बन्धी साहित्य पढ़कर हासिल कर लीजिए।

प्रकाश के ये विरूपण अन्य किसी कारण से नहीं, बल्कि साधारण मरीचिका की वजह से उत्पन्न होते हैं; यहाँ हमें पुनः ऊपर की ओर बननेवाली मरीचिका और

1. Havings, Hemel en Dampkring 19,161, 1922
2. Exposure.

नीचे की ओर की मरीचिका के बीच के अन्तर पर गौर करना होगा। इस सम्बन्ध मे हम वास्तविक तथ्य के निकट पहुँच जाते है यदि हम यह मान ले कि सूर्य ने आने वाली किरण जब ऐसे वायुस्तर पर पडती है जहाँ घनत्व बदलता है तो इसकी दिशा अचानक मुड जाती है (वेगेनर के मतानुसार)।

दशा क (चित्र ४९)-जैसा चित्र ४९ मे दिखलाया गया है, वायु का एक पतला स्तर PR भूमि के स्पर्श मे स्थित है। अतः हमे सूर्य तो दिशा OS की सीध मे दीखता है और साथ ही साथ उसका परावर्तित प्रतिबिम्ब भी उसके नीचे OP दिशा मे दिखलाई देता है और क्षितिज OR इन दोनो के दर्मियान स्थित होता है। सूर्यास्त
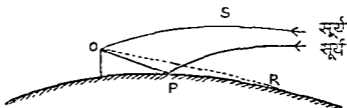
चित्र ४९--दशा A के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति सूर्यास्त के समय।

के समय सूर्य का एक चिपटा प्रतिरूप आभासी क्षितिज OP से ऊपर की ओर ठीक उस वक्त निकलता हुआ दीखता है जब सूर्य डूबता है—अत. वास्तविक सूर्य और यह प्रतिरूप, दोनों उस जगह एक दूसरे से मिल जाते है जहाँ हमारा सूर्य डूबने वाला होता है। तत्पश्चात् ये दोनो बिम्ब या चकरियाँ एक दूसरे के ऊपर चढ़ती चलती जाती है और तब गुब्बारे आदि की शक्ल प्राप्त होती है।

दशा ख (चित्र ५०)—इस बार हम कल्पना करते है कि धरती के निकट की हवा ठण्डी है, जब कि अधिक गर्म वायुस्तर ABCD इसके ऊपर है (उत्क्रमण)।[1] बिन्दु M पृथ्वी के गोले का केन्द्र है, जिसके गिर्द दो वृत्तचाप खींचे गये है, एक चाप समुद्र की सतह प्रगट करता है और दूसरा चाप उस वायुस्तर को प्रगट करता है जहाँ घनत्व अचानक बदल गया है। अब कल्पना कीजिए O पर खड़ा प्रेक्षक इस तरह देखता है कि उसकी दृष्टिरेखा उत्तरोत्तर क्षितिज के निकट आती जा रही है; OA दिशा मे उसकी दृष्टिरेखा सूर्य की चकरी के ऊपरी हाशिये को स्पर्श करती है; OB दिशा में उसे चकरी का तनिक नीचे का भाग दिखलाई देता है, किन्तु इस बार उसकी

1. Inversion

दृष्टिरेखा घनत्व परिवर्त्तन वाले स्तर के साथ अधिक झुकी हुई है; तथा क्षैतिज दिशा OC की सीध में जानेवाली दृष्टिरेखा उस स्तर पर गिरने पर इतना बड़ा कोण बनाती है कि दृष्टिकिरण अधिक झुक जाने के कारण आगे नहीं जा पाती, बल्कि वापस पृथ्वी पर ही लौट जाती है। यदि प्रेक्षक धरती की सतह से कुछ ऊँचाई पर खड़ा होता है, तब वह नीचे की ओर अपनी दृष्टि परिवर्त्तनवाले स्तर पर अपेक्षाकृत छोटे कोण की दिशा में डाल सकता है; जैसे दिशा OD में देखने पर उसकी दृष्टिरेखा परिवर्त्तन-स्तर पर इतना छोटा आपतन कोण बनायेगी कि किरण उस स्तर के पार निकल जायगी। अतः क्षैतिज दिशा के दोनों ओर बिन्दुपथ द्वारा दिखाये गये कोण के दर्मियान वायुमण्डल के बाहर की कोई भी किरण
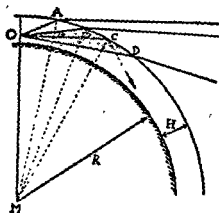
चित्र ५० क

चित्र ५० ख—दशा ख के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति का सूर्यास्त।

प्रेक्षक तक नहीं पहुँच पाती; फलस्वरूप उसे एक अन्धी पट्टी दीखती है जिसकी ऊर्ध्व चौड़ाई 2h होगी। यह निम्नलिखित प्रमेय से प्राप्त एक परिणाम है।

O से खीचे गये तमाम जीवाओं[1] में क्षैतिज जीवा OS ही ऐसी जीवा है जो वृत्त के साथ न्यूनतम कोण बनाती है। उपपत्ति—त्रिभुज MOB में $\frac{\sin \widehat{OBM}}{OM} = \frac{\sin \widehat{MOB}}{MB}$ है,

1. Chords

अतः $\sin \widehat{OBM} = \frac{R}{R+H} \sin (90^\circ+h) = \frac{R}{R+H} \cos h$

इससे यह स्पष्ट है कि $\widehat{OBM}$ अपना महत्तम मान उस वक्त प्राप्त करता है जब $h=0$ हो। अन्त में पूर्ण परावर्तन की दशा में $\sin \widehat{OBM} = \frac{1}{n}$ जिसमें n एक स्तर का दूसरे वायुस्तर के मुकाबले मे वर्तनाङ्क है। अब $\frac{H}{R}$ के लिये ϵ लिखें और $n-1$ के लिए δ तथा $\cos h$ के स्थान पर उसका निकटतम मान $1-\frac{1}{2}h^2$ लें तब h के लिए हम यह फल प्राप्त करते है —

$$h = \pm \frac{\sqrt{2(\delta-\epsilon)}}{n}$$

सन्निकटत. $h = +\sqrt{2(\delta-\epsilon)}$ क्योंकि n तो करीब-करीब 1 के ही बराबर रहता है।

अतः हम देखते हैं कि अन्धी पट्टी का विस्तार जितना क्षितिज के ऊपर है उतना ही नीचे भी (दुहरे चिह्न $\pm$ के कारण)। H यदि 55 गज हो तब $\epsilon = 78 \times 10^{-7}$ और यदि इस दशा के लिए $\delta = 100 \times 10^{-7}$ ले, तब $h = \pm 0{\cdot}021$ रेडियन$=\pm 7$ मिनट; अतः अन्धी पट्टी की कोणीय ऊर्ध्व चौडाई 14 मिनट होगी।

दरअसल इस व्याख्या में हमें किरणों की सामान्य पार्थिव वक्रता का भी विचार करना चाहिए था, किन्तु इस स्थान पर हम इस घटना की केवल प्रमुख विशिष्टताओं पर ही ध्यान दे रहे हैं।

अब यह स्पष्ट है कि वायुमण्डल की इस संरचना के अनुसार सूर्य वास्तविक क्षितिज तक पहुँचने के पहले ही अस्त हो जाता है, यानी उसी क्षण जब कि वह अन्धी पट्टी मे प्रवेश करता है। यदि प्रेक्षक पहाड़ी की चोटी या जहाज़ के डेक पर खड़ा हो तो संभवतः वह अन्धी पट्टी के नीचे की ओर से निकलती हुई सूर्य चकरी का निचला हाशिया देख सकेगा। अवश्य प्रतिबिम्ब विकृत शक्ल के दीखते हैं अर्थात् अन्धी पट्टी के ऊपर तो प्रतिबिम्ब पिचका हुआ होगा और पट्टी के नीचे वह खिंचा हुआ दीखेगा।

कुछ दशाओं में सूर्य के प्रतिबिम्ब मे छोटी-छोटी कई सीढियाँ-सी कटी दिखलाई पड़ती है—ये सहज ही इस बात की द्योतक हैं कि आकाश में घनत्व परिवर्तनवाले

एक से अधिक स्तर मौजूद हैं (चित्र ५१)। कभी-कभी सोपानों के बीच की एकाध कटान[1] दोनों ओर से इतनी गहरी हो जाती है कि ऐसा प्रतीत होता है मानो सूर्य के ऊपरी भाग से एक टुकड़ा कटकर एक क्षण के लिए हवा में उतराता रह गया हो और फिर वह सिकुड़ कर हरी किरणों की शानदार छटा की घटना प्रदर्शित करते हुए विलुप्त हो जाय। इसके बाद दूसरा टुकड़ा इसी तरह अलग हो सकता है और फिर तीसरा, चौथा आदि (चित्र ५८)।

चित्र ५१—सूर्य की विकृति, जब वायु के विभिन्न घनत्व वाले कई स्तर मौजूद हों।

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण में मैंने दो उदाहरण प्रस्तुत किये थे जिनमें बहु-अर्द्धचन्द्र का विवरण दिया गया है जो विशेष रूप से सुस्पष्ट, सुडौल और एक दूसरे पर आरोपित थे (चित्र ५२)। ये घटनाएँ असाधारण रूप से प्रबल वर्त्तन के कारण उत्पन्न हुई बतलायी गयी हैं; किन्तु प्रतिबिम्बों के बीच की दूरी इतनी अधिक थी कि इस व्याख्या में मैं कठिनता से ही विश्वास कर सका था और मन में सन्देह उठा कि कहीं प्रेक्षकों की आँखों में ही तो कोई नुक्स नहीं था।

चित्र ५२—चन्द्रमा के बहु नवचन्द्रक (From Onweders en Optische Verschijnselen in Nederland and Meteorologische Zeitschrift.)

लेकिन मैं गलती पर था। प्रकृति की सम्भावनाएँ सदैव ही हमारे अनुमान से कहीं अधिक सम्पन्न होती हैं। क्योंकि देखिए न, अभी हाल में एक प्रेक्षक ने सूर्य के सात प्रतिबिम्ब देखे जो सुस्पष्ट और नीलापन लिये हुए थे; ये सभी सूर्य के निकट थे जो समुद्र के क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर नारङ्गी वर्ण का था*। और इस बार इस घटना का फ़ोटो भी लिया गया है। प्रतिबिम्बों के सुस्पष्ट बने रहने के दौरान प्रबल वर्त्तन का होना अत्यन्त आश्चर्यजनक है।

1. Notch * Richord, meterologie 4, 301, 1953

३६. हरी किरण[1]

स्काटलैण्ड की एक प्राचीन किंवदन्ती के अनुसार जिस व्यक्ति ने 'हरी किरण' देख रखी है वह फिर कभी भी भावुकता के मामले में गलती नहीं करेगा। 'आइल आव मैन' द्वीप में इसे 'जीवित आलोक' के नाम से पुकारते हैं।

हरी किरण की घटना, लोगों का अभी तक जैसा ख्याल था उसकी अपेक्षा कहीं अधिक बहुलता से देखी जा सकती है। भारत से हालैण्ड आते समय की एक समुद्र-यात्रा में मैंने दस से भी अधिक बार इस घटना का अवलोकन किया था। निस्सन्देह इसके देखने के लिए सबसे बढ़िया ठौर समुद्र है; अवलोकन जहाज के डेक से कर सकते हैं या समुद्रतट से। वैसे भूमि पर भी यह घटना देखी जा सकती है बशर्ते क्षितिज पर्याप्त दूरी पर हो। कभी-कभी यह घटना उस वक्त भी उत्पन्न होती है जब सुस्पष्ट बादलों की पेटी की ओट में सूर्य छिपने जा रहा हो। ऐसा जान पड़ता है पहाड़ों और बादलों के ऊपर की यह घटना दृष्टिगोचर होती है बशर्ते क्षितिज से इनकी ऊँचाई करीब ३° से अधिक न हो। एकाध अवसर पर हरी किरण आश्चर्य-जनक रूप से कम फासले पर देखी गयी है। रिक्को ने बतलाया है कि किस प्रकार एक बार जब वे काफी निकट की एक चट्टान के साये के हाशिये में खड़े थे, तो सिर को केवल एक ओर या फिर दूसरी ओर तनिक हटाकर वे इच्छानुसार बार-बार 'हरी किरण' देख सके थे।[2] ह्विटनेल तथा निजलैण्ड ने इस घटना का अवलोकन एक दीवार के सिरे पर किया था जो ३३० गज की दूरी पर थी। किन्तु ये सभी अपवाद के दृष्टान्त हैं।

जिन लोगों ने इस घटना का प्रेक्षण किया है वे सभी इस बात से सहमत हैं कि 'हरी किरण' सबसे अधिक स्पष्ट ऐसी शाम को दीख पड़ती है जब सूर्य अस्त होने के क्षण तक तेज रोशनी से चमकता रहता है; इसके प्रतिकूल सूर्य जब अत्यन्त रक्त-वर्ण का होता है तो 'हरी किरण' करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहती है।

द्विनेत्री दूरबीन[3] प्रेक्षण में आम तौर से सहायक होती है और दूरबीन यन्त्र तो

1. Mulder, The 'green ray' or 'green flash' (The Hague 1922) Feenstra Kuiper. De Groene Straal (Diss. Utract 1926)

इस घटना के व्यापक अध्ययन सहित आधुनिक निबन्धों की एक सूची, तथा आश्चर्यजनक रंगीन फोटोग्राफ वैटिकन वेधशाला द्वारा प्रकाशित किये गये हैं।

D.T.K O Connell, The Gren Flash(Amsterdom-New York 1958).

2. Mem. Spettr. Ital. 31, 36, 1902. 3. Fieldglasses क्षेत्र-दूरेक्षिका।

और भी अधिक सहायक होते हैं। किन्तु इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि यन्त्र द्वारा सीधे ही सूरज की ओर न देखें सिवाय अस्त होने के ठीक पूर्व के अन्तिम क्षणों में, वरना आँख में चकाचौंध से क्षति पहुँच सकती है। फिर नंगी आँखों से भी सूर्य-चकरी के अन्तिम खण्ड का अवलोकन करने में बहुत जल्दी नहीं करनी चाहिए, बल्कि सूर्य की ओर तो अपनी पीठ ही उस वक्त तक रखिए जब तक अन्य कोई व्यक्ति आपको बतलाता नहीं है कि प्रेक्षण का ठीक अवसर अब हो गया।

यह घटना है अत्यन्त परिवर्तनशील और बस कुछ ही सेकण्ड तक यह बनी रहती है। एक बार एक टीले के ढाल के ऊपर जिसकी ऊँचाई ६ गज थी, दौड़ने पर मैं 'हरी किरण' २० सेकण्ड तक देख सका था; मेरी रफ्तार के कम होने पर यह अपेक्षाकृत अधिक आसमानी रंग की हो जाती और रफ्तार के बढ़ने पर यह अधिक धवल हो जाती। कुछ अवसरों पर बारी-बारी से जहाज के विभिन्न डेकों से भी इसे देख सकना सम्भव हो सकता है। जहाज की हरकत के कारण, निज्लैण्ड ने इस घटना को क्रम से एक के बाद एक, कई बार देखा था। एक बहुत ही खास मौके पर जब कि किरणों की वक्रता असामान्य रूप से अधिक थी, यह १० सेकण्ड तक तथा और भी ज्यादा देर तक देखी जा सकी थी। पुर्तगाल के गैगो कान्तिन्हो ने तो एक बार समुद्र के दूरस्थ प्रकाशगृह की रोशनी में काफी देर तक इस घटना का प्रेक्षण किया था।

बायर्ड के दक्षिण ध्रुव-अभियान के दौरान में जब कि ध्रुव प्रदेशीय लम्बी रात्रि के उपरान्त पहली बार उगनेवाला सूर्य ठीक क्षितिज के सहारे हरकत कर रहा था, 'हरी किरण' का अवलोकन ३५ मिनट तक किया गया था।

'हरी किरण' की घटना निम्नलिखित तीन रूप धारण कर सकती है—(क) हरे रंग का हाशिया, (चित्र ५३) जो दरअसल सदैव ही सूर्यबिम्ब के ऊपरी सिरे पर पहचाना जा सकता है। यह हरा हाशिया ज्यों-ज्यों क्षितिज के नजदीक पहुँचता है त्यों-त्यों यह अधिक चौडा होता जाता है, साथ ही साथ इसके निचले भाग का रंग लाल हो जाता है। (ख) हरा वृत्त-खण्ड डूबते हुए सूर्य-चकरी के आखिरी वृत्तखण्ड के दोनों छोर का रंग हरा हो जाता है और यह हरा रंग धीरे-धीरे वृत्तखण्ड के केन्द्र की ओर बढ़ता जाता है। यह हरा वृत्तखण्ड अक्सर नंगी आँखों को भी एकाध सेकण्ड तक दिखलाई देता है और कितनी

चित्र ५३—हरा वृत्तखण्ड।

दूरबीन से ३, ४ सेकण्ड तक कभी-कभी यह देखा जा सकता है। (ग) स्वयं हरी किरण; यह घटना जो नंगी आँखों को भी दिखाई देती है, बहुत ही दुर्लभ अवसरों पर प्रगट होती है। यह हरी किरण ठीक उस क्षण जब सूर्य क्षितिज के नीचे छिप रहा हो, लौ की भाँति ऊपर फिकती हुई दिखाई देती है (चित्र ५४)
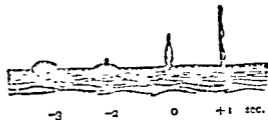
चित्र ५४—यथार्थ हरी किरण; सूर्य के अस्त होने के क्षण से समय की गणना की गयी है। (डी० पी० लागाइज के अनुसार)

इन तीनों ही शक्लों में इनका रंग अधिकतर नीलम सरीखा ही होता है और पीला तो विरले ही मौकों पर। कभी-कभी यह नीले रंग की होती है या बैंगनी भी। एक बार चन्द सेकण्ड के दौरान में, जब तक कि घटना का अस्तित्व रहा, इसका रंग हरे से नीला और फिर बैंगनी में बदलता हुआ देखा गया था।

चित्र ५५—नीला हरा पीला लाल अस्त होते हुए सूर्य का स्पेक्ट्रम प्रेक्षण; एन० डिक्वेल द्वारा।

(Hemel en Dampkring. 34, 261, 1936.)

अब हरी किरण की व्याख्या में किसी तरह के सन्देह की गुंजाइश बाकी नहीं रह जाती है। आकाश में नीचे स्थित होने के कारण सूर्य की श्वेतकिरणों को वायु-मण्डल में लम्बा फासला तय करना होता है। पीले और नारङ्गी रंग के प्रकाश का अधिकतर भाग जलवाष्प द्वारा जज्ब हो जाता है क्योंकि जलवाष्प के लिए वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) की अवशोषण पट्टियाँ प्रकाश के इन्हीं रंगों के प्रदेश में स्थित होती हैं। सूर्य के प्रकाश का बैंगनी भाग परिक्षेपण के कारण अत्यधिक क्षीण हो जाता है (देखिए § १७२)।

अतः अब शेप रहते हैं लाल और हरे-नीले रंग-जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से देखा जा सकता है।[1] (चित्र ५५)

फिर वायुमण्डल ऊपर की अपेक्षा नीचे अधिक घना होता है, अतः वायुमण्डल से गुजर कर आनेवाली प्रकाश-किरणें मुड़ जाती हैं (§२९) और किरणों का यह झुकाव लाल रोशनी के लिए थोड़ा कम, तथा अधिक वर्त्तनीय[2] नीली-हरी किरणों के लिए कुछ अधिक होता है। इस कारण सूर्य की दो चकरियाँ हमें दिखलाई पड़ती हैं जो एक दूसरे को आंशिक रूप से ढकती हैं, नीले-हरे रंगवाली चकरी कुछ ऊपर रहती है और लाल रंग की चकरी थोड़ी नीचे हटी रहती है। यही वजह है नीचे का हाशिया लाल रंग का दीखता है और ऊपर का हरे रंग का (चित्र ५६)। अब यह बात समझ

चित्र ५६—हरी किरण कैसे उत्पन्न होती है।

में आ सकती है कि क्यों जब सूर्य आकाश में नीचे स्थित होता है तो वृत्तखण्ड के छोर हरे रंग के दीखते हैं और क्यों सूर्य का श्वेत रंगवाला भाग क्षितिज के पीछे आहिस्ते-आहिस्ते छिपता है जब कि शेष बचे हुए समस्त वृत्तखण्ड पर हरा रंग छा जाता है। लेकिन कई परिस्थितियों में क्षितिज के निकट वर्त्तन असामान्य रूप से प्रबल होता है, फलस्वरूप हरा वृत्तखण्ड विशेष रूप से स्पष्ट अधिक देर तक दिखाई देता रहता है। मरीचिका के उत्पन्न होने की दशा में यह एक लपट की तरह हरी किरण के रूप में भी ऊपर को खिंच आ सकता है।

इस धारणा की पुष्टि हो सकती है यदि हम पायें कि जब हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म हो तब हरा वृत्तखण्ड (सेगमेण्ट) तथा हरी किरण अनुपस्थित हों क्योंकि

१. अत्यन्त प्रबल परिक्षेपण में हरा-नीला भी विलुप्त हो जाता है, यही कारण है कि डूबते समय सूर्य यदि गहरे लाल रंग का हुआ तो हरी किरण अदृश्य रहती है।

हरी किरण के वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) का फोटो डी. एस. जैकलसेन द्वारा लिया गया है (Journal R. Astron. Soc. Canada 46, 93, 1952, Sky and Telescope, 12, 233, 1953.

2. Refrangible

उस दशा में घनत्व में ह्रास तथा किरण का झुकाव दोनों ही विशेष रूप से कम होंगे। दरअसल आभास मिलता है कि बात ऐसी ही है।[1] (चित्र ५७)

चित्र ५७—अन्तिम वृत्त-खण्ड के छोर के सिरे ऊपर को मुड़े होते हैं। हरी किरण के उत्पन्न होने की सम्भावना है!

कहा जाता है कि हरा वृत्तखण्ड उस वक्त विशेष रूप से अच्छी तरह देखा जा सकता है जब नीचे मरीचिका के लक्षण मौजूद हों, अर्थात् जब निचला किनारा (जीवा) बिलकुल सीधा न होकर दोनों कोनों पर ऊपर की ओर मुड़ा हो।[2]

वायुस्तरों की घनत्व पृथक्ता के कारण जब सूर्य की चक्री पर बगल में कटान मौजूद होती है, तो हम देख सकते है कि किस तरह सिरे से एक टुकड़ा जब तब पृथक् होकर हरी ज्योति की शक्ल में विलुप्त हो जाता है—एक अत्यन्त चमत्कारपूर्ण दृश्य! (चित्र ५८, देखिए चित्र ५१, §३५)। एक और तथ्य पर विचार करिए जो असामान्य वर्तन के अत्यधिक प्रभाव का जबर्दस्त समर्थन करता है; दो अवसरों पर स्टीमर के एक डेक से हरी किरण देखी जा सकी थी किन्तु दूसरे डेक से नहीं, इसका अर्थ है कि घटना इस बात पर निर्भर करती है कि प्रेक्षक किस ऊँचाई पर खड़ा था।[3] फिर वर्णक्रम में वास्तविक हरी किरण की नाप करने पर पता चलता है कि हरा प्रकाश एक क्षण पूर्व के सूर्य-वर्णक्रम के हरे प्रकाश की तुलना में निश्चित रूप से अधिक प्रबल होता है। यह तर्कसगत केवल तभी हो सकता है जब असामान्य वर्तन होता हो। किन्तु इसके प्रतिकूल 'नेचर' के अनुसार कुछ सिद्धहस्त इस बात पर जोर देते हैं कि किरणों की साधारण पार्थिव वक्रता ही 'हरी किरण' उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त रूप से समर्थ है।[4]

चित्र ५८—किस प्रकार अस्त होते हुए सूर्य के ऊपरी सिरे के पृथक् होने पर हरी किरण उत्पन्न होती है।

1. R. W. Wood, Nat, 121, 501, 1928. 2. Nat 111, 13, 1923

३. इस प्रेक्षण को दुहराना उचित होगा और अच्छा होगा यदि वही प्रेक्षक बारी-बारी से दोनों डेकों पर खड़ा होकर प्रेक्षण करे।

4. Proc. R. Soc. 126, 311, 1930.

अतः हरी किरण के सम्बन्ध में प्रमुख समस्या जो हमें अभी हल करनी है, वह इस प्रकार है : वर्तन कितना प्रबल होना चाहिए कि इस घटना की एक निश्चित प्रतीति उत्पन्न हो सके ? इसे हल करने के लिए यह पर्याप्त होगा कि कोई व्यक्ति समुद्रतट पर कई दिनों तक इस बात को अङ्कित करे कि ठीक किस वक्त सूर्य अस्त होता है और साथ ही साथ वह हरी किरण की घटना का भी प्रेक्षण करे। प्रेक्षण से प्राप्त समय और गणना से मालूम किये गये समय का अन्तर इस बात का अच्छा सूचक है कि किरण की वक्रता सामान्य से कितनी अधिक विचलित हुई है।

यह ख्याल किया जाता था कि रक्त वर्ण के डूबते हुए सूर्य के अवशिष्ट भाग का पूरक रंगों मे उत्तर-बिम्ब[1] चक्षुपटल पर बन जाता है जो सम्भवतः हरी किरण की घटना का आभास कराता है (§८८)। इस धारणा का पर्याप्त रूप से खण्डन इस बात से होता है कि जिस समय सूर्य उदय होता है उस समय भी हरी किरण देखी जा सकती है यद्यपि इस दशा में यह जानना कठिन ही होता है कि प्रगट होनेवाली रोशनी के लिए ठीक किस ठौर देखा जाय। इसके लिए या तो क्षितिज के सबसे अधिक प्रकाशित भाग की ओर देखना होगा या फिर उप कालीन किरण या हेडिन्जरब्रश (§१९१,§१८२) की तलाश करनी होगी। एक और दलील यह है कि हरी किरण केवल तभी देखी जा सकती है जब क्षितिज काफी अधिक दूरी पर हो; यद्यपि नेत्र-रेटिना पर बननेवाला उत्तर-बिम्ब इस बात से किसी भी तरह प्रभावित न होगा किन्तु स्पष्ट है कि किरण की वक्रता की दृष्टि से यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। काफी दिक्कत उठाकर आटोक्रोम प्लेट पर हरी किरण का फोटो सफलतापूर्वक उतारा गया है।

कुछेक अवसरों पर चन्द्रमा और शुक्र के लिए भी 'हरी किरण' का प्रेक्षण किया गया है और एक अवसर पर बृहस्पति के लिए भी। एक प्रेक्षक ने बतलाया है कि किस तरह उसने शुक्र के प्रतिबिम्ब को इस ग्रह की ओर उठते हुए देखा और जिस क्षण ये दोनों एक दूसरे से मिले, प्रतिबिम्ब का रंग अचानक हलके लाल से हरे रंग में तब्दील हो गया।

३७. हरी तरङ्ग

सुमात्रा के समुद्रतट से यह देखा गया था कि दूर क्षितिज पर धवल शीर्षवाली लहरें हरी प्रतीत होती थीं; अवश्य ही ऐसा छोटी लहरों के लिए ही था, अधिक ऊँची

1. After-image

लहरें हमेशा की तरह धवल रंग की ही दीखती थीं। समुद्र का रंग धूसर था और क्षितिज स्पष्ट रूप से पानी में डूबता हुआ दीख रहा था।

यह घटना हरी किरण की मानिन्द जान पड़ती है, इस दशा में छोटी लहरों का चमकने वाला धवल सिरा अस्त होते हुए सूर्य के अन्तिम हाशिये जैसा प्रभाव उत्पन्न करता है।

३८. लाल किरण[1]

हरी किरण की व्याख्या से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि 'लाल किरण' भी हमें मिलनी चाहिए। उदाहरण के लिए जब क्षितिज पर छाये घने बादलों की पेटी की स्पष्ट ओट के पीछे सूर्य चला जाता है और इसका निचला हाशिया ओट के नीचे से झांकता हुआ दीखता है, तब निचले भाग में लाल किरण हमें दीख पड़नी चाहिए। कई अवसरों पर यह लाल किरण देखी गयी है किन्तु ऐसे अवसर बहुत कम ही आते हैं और जान पड़ता है कि यह घटना हरी किरण के मुकाबले में और भी कम देर तक रहती है।

३३० गज के फासले पर स्थित एक दीवार के सूराख में से हरी किरण का अवलोकन करने के दौरान में ह्विटनेल उसी मौके पर लाल किरण को भी देखने में समर्थ हुआ था।

३९. पार्थिव प्रकाश-स्रोत की झिलमिलाहट

यह घटना जिसे 'झिलमिलाहट'[2] या 'टिमटिमाना' कहते हैं सबसे अधिक स्पष्ट रूप में सड़क की सतह के लिए एसफाल्ट पिघलानेवाली भट्टी के ऊपर देखी जा सकती है। दूर की वस्तुएँ काँपती हुई जान पड़ती हैं मानो उनकी सतह पर लहरें बन रही हों, यहाँ तक कि उन्हें पहचान पाना कठिन हो जाता है; और ऐसा लगता है कि स्वयं हवा भी पारदर्शी नहीं रही। फिर रेलगाडी के इंजन के ब्वायलर या धूप में तपी हुई लोहे की चद्दरवाली छत के ऊपर से देखने पर दूर की प्रत्येक वस्तु काँपती हुई नजर आती है। ढेलों वाला खेत या रेतीला मैदान भी धूप में तप जाने पर यह प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ होता है।

1. Nat., 94, 61, 1914, सूर्यास्त के क्षण बड़े आकार के सूर्य-धब्बों के विलुप्त होते समय (चश्मे सहित) किये गये लालकिरणों के प्रेक्षण के अत्यन्त रोचक विवरण के लिए देखिए W. M. Lindley J. B. A. A., 47, 298, 1937.

2. Scintillation

झिलमिलाहट की घटना सबसे अधिक स्पष्ट रूप में चटकीली और रोशनी में चमकती हुई चीजों द्वारा उत्पन्न होती है, जैसे श्वेत छालवाले बर्च पेड़ के तने, सफ़ेद रंग के खम्भे, धवल रंग के बालू के खित्ते, वाटिका-ग्लोब, या धूप में चमकती हुई दूर की खिड़कियाँ। गर्मी के दिनों में या वसन्त में ठण्ड वाले दिन, रेल की पटरियाँ फासले पर झिलमिलाती नज़र आती हैं, वे सीधी भी नहीं मालूम पड़ती बल्कि टेढ़ी-मेढ़ी, मुड़ी हुई प्रतीत होती हैं। अगर भूमि के निकट सिर रखें तो झिलमिलाना और भी अधिक बढ़ जाता है और हवा में उतराती हुई वायु-धारियाँ सी दिखलाई पड़ती हैं। ये 'लहरें' समुद्र की लहरों से ऊँची हो सकती हैं। जिस वक्त धूप निकली हो, चश्मा लगाकर दूर की चीजों को वास्तव में स्पष्ट देखा नहीं जा सकता। (इसकी जाँच विशेषतया सूर्य की उलटी दिशा में देखकर करिए)। जाड़े के दिनों में अभ्यस्त आँखें दूरस्थ वस्तुओं के झिलमिलाते प्रतिबिम्ब के कम्पन के प्रेक्षण द्वारा मकानों की छत से ऊपर उठने वाली गर्म वायु को देख सकती हैं (ओडीमान्स)।

'क्योंकि हवा, जिसमें से होकर हम नक्षत्रों को देखते हैं, शाश्वत कम्पन की अवस्था में है; जैसा कि ऊँची मीनारों की छाया की कम्पित गति और अचल सितारों की टिमटिमाहट से देखा जा सकता है।' (न्यूटन्स 'आप्टिक्स' चतुर्थ संस्करण पृष्ठ ११०) हमारे पाठकों में से भला किसने इसका अवलोकन किया है?

इन सभी घटनाओं का समाधान गर्म वायु की धारा में से गुजरनेवाली प्रकाश-किरण की वक्रता द्वारा किया जा सकता है—वायु की यह धारा तप्त भूमि से नन्हें फौआरों की भाँति ऊपर उठती है। दो गज से कम ही की ऊँचाई पर ये धाराएँ ठण्डी हवा से इस कद्र मिलजुल चुकी होती हैं कि उसमें दीखनेवाली धारियाँ छोटी पड़ जाती हैं। सूर्य से प्रकाशित सफ़ेद रंग की सपाट दीवार पर खिड़की की चौखट के ऊपर उठती हुई वायु की धारियाँ नाचती-सी अक्सर देखी जा सकती हैं—और हलके धुएँ की भाँति ये बारीक छाया भी डालती हैं। वायु की ये धारियाँ प्रकाशकिरणों की समानान्तरता में व्याघात उत्पन्न कर देती हैं, अतः कुछ जगहों पर प्रकाश सिमट कर एकत्र हो जाता है तो कुछ जगहों पर प्रकाश की न्यूनता हो जाती है। यह प्रभाव उसी तरह का है, जैसा कि तरंगों से आन्दोलित पानी की सतह या खिड़की के असम तल काँच द्वारा अपेक्षाकृत अधिक प्रबल मात्रा में उत्पन्न होता है (§२३, २४)।

स्पष्ट है कि असमान रूप से गर्म हुए वायु-स्तरों में से जितनी ही अधिक दूरी तक देखेंगे, झिलमिलाहट उतनी ही अधिक प्रबल होगी। रात को कई मील के फासले पर स्थित रोशनी झिलमिलाती रहती है और जब निकट आते हैं तो उसका झिलमिलाना

कम हो जाता है यहाँ तक कि अन्त में, अधिक निकट आने पर, झिलमिलाना खत्म हो जाता है। सड़क पर खड़ी मोटर सूर्य के प्रकाश को तेज चकाचौंध के साथ प्रतिविम्बित करती है जो ५०० गज के फासले पर बहुत अधिक झिलमिलाहट उत्पन्न करता है; २०० गज की दूरी पर रोशनी पहले की अपेक्षा अधिक स्थिर रहती है और जब मैं और भी अधिक नजदीक पहुँचता हूँ तो झिलमिलाहट पूर्णतया विलुप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि प्रकाश-पथ का वह भाग जो आँखों के निकटतम है, झिलमिलाहट उत्पन्न करने मे सबसे अधिक योग देता है। इसी तरह चश्मा सबसे अधिक कारामद आँख के बिल्कुल नजदीक रखने पर होता है। यदि चश्मे को छपे हुए पृष्ठ पर जिसे आप पढ़ रहे है, रखे तो आप देखेंगे कि वह अक्षरो का आकार तनिक भी नही बदल पाता, किन्तु उसे आँख की ओर लाने पर अक्षर बडे या छोटे हो जाते हैं और चश्मे के लेन्स आँख के जितने ही निकट होंगे—अक्षरो के आकार की तब्दीली भी उतनी ही अधिक होगी। इसी प्रकार झिलमिलाहट का अधिकाश प्रेक्षक के निकट वाली वायु के ताप-परिवर्त्तनों के कारण उत्पन्न होता है। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि थोड़ी देर के लिए यदि घने बादल के कारण सूर्य का विकिरण प्रकाश रुक जाता है ताकि प्रेक्षक के सन्निकट क्षेत्र मे किरणपथ साये मे पड़ जाय तो लगभग तुरन्त ही झिलमिलाहट समाप्त हो जाती है और इसके प्रतिकूल बादल के हट जाने पर झिलमिलाहट पुनः लौट आती है। प्रगट है कि सूर्य से आने वाले विकिरण मे होनेवाली तब्दीली के अनुसार ही धरती की सतह का ताप भी अत्यन्त शीघ्रता से बदलता है।

एक ही स्थान से 'झिलमिलाहट' का बार-बार प्रेक्षण करके आसानी से यह ज्ञात कर सकते है कि विभिन्न ऋतु-दशाओं मे यह किस तरह बदलती है। आसमान मे जब बादल छाये रहते है तो झिलमिलाहट सदैव ही कम स्पष्ट होती हैं (ऐसे व्यापक बादल कि करीब-करीब समूचा ही प्रकाश-मार्ग छाये में रहे)। सूर्योदय के पहले झिलमिलाहट नगण्य सी ही रहती है, सूर्य के उदय होने के थोड़ी देर बाद ही यह पर्य्याप्त प्रबल हो जाती है और दोपहर के करीब यह प्रभाव अधिकतम हो जाता है। फिर चार या पाँच बजे तक झिलमिलाहट हल्की पड़ जाती है। किन्तु किसी-किसी दिन इसका विकासक्रम बिल्कुल ही भिन्न होता है।

झिलमिलाहट, न केवल रेत, मिट्टी, या मकानों के ऊपर बल्कि पानी की सतह पर, बर्फ के ऊपर और जगल में झाड़ियों के ऊपर भी देखी जा सकती है—इससे पता चलता है कि ये सभी चीजें विकिरण उष्मा से इस प्रकार प्रभावित हो सकती है कि इनका ताप

वायु के ताप से बहुत अधिक भिन्न हो जाय। समुद्रतट के नगरों में दूर की सड़कों के सहारे लगे हुए लैम्पों की क़तार बन्दरगाह में प्रवेश करते हुए जहाज से देखने पर सुन्दर दृश्य उपस्थित करती है—जहाज जब ब्रिटिश चैनेल या मेसिना जलडमरूमध्य से गुजरता है तब भी यह दृश्य देखा जा सकता है।

धरती के प्रकाश-स्रोतों की झिलमिलाहट में कभी-कभी रंग भी दीख जाते हैं लेकिन ऐसा तभी होता है जब प्रकाश-स्रोत बहुत अधिक दूरी पर हों। एक अपवादस्वरूप अवसर पर लैम्पों के प्रकाश में रंग की तब्दीलियाँ स्पष्ट देखी गयी थीं यद्यपि इन लैम्पों का फासला ३ मील से अधिक न था।

४०. सितारों की झिलमिलाहट[1]

इस बात पर ध्यान दीजिए कि लुब्धक[2] या अन्य कोई चमकीला तारा क्षितिज के निकट स्थित होन पर किस तरह टिमटिमाता है। दूरबीन से अवलोकन करने पर इनकी स्थिति में हलका परिवर्तन होता दिखाई देता है। नंगी आँखों से निहारने पर आप इनकी दीप्ति में परिवर्तन होते देखेंगे और रंगों का परिवर्तन भी।

कहने की आवश्यकता नहीं कि लुपझुप की यह घटना स्वयं सितारे पर नहीं घटती है, बल्कि इसका भी समाधान उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार धरती के प्रकाश-स्रोतों की झिलमिलाहट के लिए (§३९)।

ये स्थिति-परिवर्तन, गर्म और ठण्डी वायु की धारियों में से गुजरनेवाली प्रकाश-किरणों की वक्रता के कारण उत्पन्न होते हैं। गर्म और सर्द वायु की धारियाँ हमेशा ही वायुमण्डल में मौजूद रहती हैं, विशेषतया उस जगह जहाँ ठण्डे वायुस्तर के ऊपर से गर्म वायुस्तर गुजरता है और इस कारण वायु लहरें तथा भँवरें वहाँ उठती हैं (चित्र ५९)। दीप्ति में परिवर्तन इस बात से उत्पन्न होते हैं कि अनियमित रूप से विचलित होनेवाली किरणें धरती की सतह के किसी स्थान पर तो इकट्ठी होकर घनी हो जाती

१. विशद व्याख्या के लिए देखिए Pernter-Exner in the Handbuch der Geophyic viii Quarterly Journal 80, 241, 1954 हाल में शरीर वैज्ञानिक हार्टिज ने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि झिलमिलाहट शरीरगत प्रभाव है, जो हमारे रेटिना की कणिकामय संरचना के कारण घटित होता है। इस धारणा की सम्पुष्टि नहीं हो सकती किन्तु हार्टिज के दिलचस्प प्रयोग इस बात का संकेत देते हैं कि इस घटना में शरीरगत प्रभाव के अवयव मौजूद हो सकते हैं; विवेचन के लिए देखिए Nature 164, 165, 1950

2. Sirius

है और कही पर उनका वितरण हलका हो जाता है। यदि इसे उत्पन्न करने वाला निरन्तर परिवर्त्तनशील सस्थान समूचा ही हवा के बहाव के साथ हरकत करता है तो कभी तो प्रेक्षक अपने को अधिक प्रकाश वाले भाग मे खडा पाता है, कभी कम प्रकाश वाले भाग में। रंग की तब्दीलियाँ किरणो के सामान्य पार्थिव-वक्रता के हलके विक्षेपण के कारण उत्पन्न होती हैं, फलस्वरूप सितारे से आनेवाली किरणें अपने रग के अनुसार वायुमण्डल मे थोड़े भिन्न मार्गो पर चलती हैं। क्षितिज पर १०° की ऊँचाई पर स्थित सितारे के लिए *गणना के अनुसार* १½ *मील* की ऊँचाई पर लाल और बैंगनी रग की किरणो के बीच की दूरी ११ इच मिलती है और ३ मील की ऊँचाई पर यह दूरी २३ इच हो जाती है। वायु की स्तरधारियाँ औसत तौर पर काफी छोटी होती हैं अतः
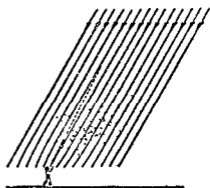
चित्र ५९——वायुमंडल की विषमता किस प्रकार तारे की प्रकाश किरणों में झुकाव पैदा करके टिमटिमाहट उत्पन्न करती है। प्रेक्षक यहाँ तारे को ऊपर उठा हुआ और अधिक चमकीला देखता है।

प्राय. ऐसा हो सकता है कि बैंगनी किरण तो उसमे से गुजरती है और इसलिए अपने मार्ग से विचलित हो जाती है जबकि लाल किरण बिना विचलन प्राप्त किये ही आगे चली आती है (चित्र ६०)। अत. झिलमिलाहट के फलस्वरूप सितारे की रोशनी की चमक के बढ़ने-घटने के क्षण विभिन्न रगो के लिए विभिन्न होते हैं।
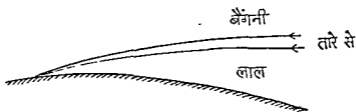
चित्र ६०——तारे की टिमटिमाहट में किस प्रकार रंग प्रदर्शित होते हैं।

हाल में इस बात की सम्भावना प्रतीत हुई है कि झिलमिलाहट उत्पन्न करने में प्रकाश का विवर्त्तन भी भाग लेता है विशेषतया अत्यधिक ऊँचाई पर अवस्थित छोटे

आकार की धारियों के लिए। प्रकाश का वितरण अकेले ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियमों द्वारा नहीं निर्धारित होता वल्कि प्रकाश की तरंग-प्रकृति के कारण उसमें थोड़ा परिवर्त्तन हो जाता है।[1]

ऊर्ध्व विन्दु (जेनिथ) के निकट झिलमिलाहट सबसे कम होती है; इस स्थिति में, जब वायुमण्डल शान्त हो तो चमकीले तारे की टिमटिमाहट केवल जब तब भी देखी जा सकती है। सितारे क्षितिज के जितने ही निकट होंगे उतना ही अधिक वे टिमटिमायेंगे—इसका सीधा-सा कारण यह है कि इस दशा मे हम हवा की अधिक मोटी तह में से इन्हे देख रहे है और इस कारण प्रकाश वहुत-सी वायुधारियों में से गुजरता है (चित्र ६३)। ऐसा प्रतीत होता है कि ५०° से अधिक ऊँचाई पर रंग की तब्दीलियाँ कभी नही होती, किन्तु ३५° के नीचे ही उनका वाहुल्य होता है। सर्वाधिक सुन्दर झिलमिलाहट चमकीले तारे लुब्धक की होती है जो जाड़े की ऋतु मे आकाश मे थोड़ी ऊँचाई पर ही दीखता है।

झिलमिलाहट इतनी तेजी के साथ होती है कि हम देख नही पाते कि वास्तव में होता क्या है। किन्तु निकट दृष्टिदोष के लिए चश्मा पहनने वाला कोई भी व्यक्ति झिलमिलाहट का वढ़िया अध्ययन कर सकता है। इसके लिए चश्मे (अवतल लेन्स वाले) को हाथ में लेकर आँख के सामने उसे लेन्स के धरातल में ही इधर-उधर डुलाना होगा। ऐसा करने से सितारे का विम्ब एक छोटी लकीर की शक्ल में खिच उठता है। और भी अच्छा होगा यदि चश्मे के लेन्स को वृत्त मार्ग में घुमाएँ, थोड़े अभ्यास के उपरान्त बिना झटका दिये आसानी से ऐसा किया जा सकता है (करीब तीन या चार घेरा प्रति सेकण्ड)। दृष्टि निर्बन्धता के प्रभाव के फलस्वरूप (§८०) चमक और रग की वे सारी तब्दीलियाँ घेरे की परिधि पर चारों ओर वितरित देखी जा सकती हैं जो सितारे के अवलोकन में क्रमात् प्रगट होती है—तेज झिलमिलाहट की दशा में यह एक शानदार नज़ारा होता है। कभी-कभी रोशनी की इस पट्टी में दीप्तिहीन धब्बे भी मिलते हैं जिससे यह प्रगट होता है कि ऐसे भी क्षण मौजूद होते हैं जब कि सितारे से हमें रोशनी करीब-करीब नही के बराबर मिलती है। इस बात का अन्दाज लगाकर कि परिधि पर कितने विभिन्न रंग दिखाई देते हैं, गणना की जा सकती है कि प्रति-सेकण्ड रग की तब्दीली कितनी बार हो रही है। प्रेक्षण की यह विधि इस सिद्धान्त पर आधारित है कि चश्मे का कॉच केवल लेन्स सरीखा ही नहीं काम करता, वल्कि एक पतले प्रिज्म सरीखा भी, बशर्ते लेन्स के केन्द्रीय भाग में से हम न देखें।

1. C. G. Little Monthly Not. R. Astron. Soc. III 289, 1951

इस झिलमिलाहट की घटना के विश्लेषण के लिए अन्य तरीके भी सम्भव हैं[1] — (क) स्वस्थ दृष्टि वाला व्यक्ति उपर्युक्त रीति से इसकी अपेक्षा नजर वाला कोई भी लेन्स इस्तेमाल कर सकता है, किन्तु उसे अपनी आँख का [illegible] इस तरह साधना पड़ेगा मानो सितारा अपेक्षाकृत अधिक निकट है। (ख) नाट्य-दूरबीन द्वारा देखें और उसे धीरे-धीरे ठकठकाते रहें। (ग) जेबी दर्पण में सितारे का प्रतिबिम्ब देखें और साथ ही दर्पण को थोड़े-थोड़े कोण पर घुमाते जायें। (घ) केवल अपनी दृष्टि को सितारे पर एक ओर से दूसरी ओर हरकत करने दें (कार्य अभ्यास के उपरान्त ही ऐसा किया जा सकता है, (देखिए §८२)।

प्रेक्षण की एक सरल विधि सम्भव है जिससे वायु की धारियों की लम्बाई-चौड़ाई का सीधे ही अन्दाज लगा सकते हैं।[2] तेज प्रकाश से झिलमिलाते हुए सितारे को इस तरह देखिए कि आपकी आँखों की दृष्टिरेखाएँ सामने की ओर थोड़ी मिलती हुई हों—अर्थात् सामने पांच या छ फुट की दूरी पर स्थित किसी वस्तु पर जो करीब-करीब सितारे की सीध में हो, अपनी आँखों को फोकस करिए। अब आप सितारे के एक नहीं, दो प्रतिबिम्ब देखेंगे और ये दोनों प्रतिबिम्ब एक साथ नहीं, बल्कि बारी-बारी से झिलमिलाते हैं क्योंकि दोनों आँखों के दर्मियान का फासला इतना अधिक है कि वायु की धारी जब तक एक आँख के सामने से गुजरती है तब तक वह दूसरी आँख के सामने अपना प्रभाव नहीं डाल पाती। अत अधिकांश धारियाँ आँखों के बीच के अन्तर ३ इंच से कम ही चौड़ी होती हैं।

अत्यन्त सुन्दर झिलमिलाहट कृत्तिका[3] तारा समूह की होती है जिसमें तारे एक दूसरे के इतने निकट होते हैं कि समष्टिरूप में उनकी टिमटिमाहट के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रेक्षण करके हम सामने से गुजरने वाली पृथक्-पृथक् वायुधारियों की पहचान कर सकते हैं।

४१. सितारे की झिलमिलाहट कैसे नापी जा सकती है?

१. किसी घटना को नापने का तरीका यदि न मालूम हो, तो विषय-प्रवेश के लिए हमेशा ही हम किसी अविछिन्न गुणात्मक पैमाने को मान कर नाप का प्रारम्भ कर सकते हैं। जैसे झिलमिलाहट-रहित सितारे के लिए मैं अङ्क ० लेता हूँ और क्षितिज के निकट की सबसे अधिक झिलमिलाहट को, जो मैंने अभी तक देखी है १० से व्यक्त करता हूँ,

1. Phil. Mag. 13, 301. 1857
2. R. W. Wood, Physical Optics (1905) 3. Pleiades

और इनके दर्मियान की चमक की पहचान में बीच की अन्य संख्याओं द्वारा करता हूँ। ध्यान देने की बात है कि इस तरह के प्रारम्भिक पैमाने प्राकृतिक विज्ञान के सभी विभागों के अध्ययन के लिए कितने उपयोगी साबित हुए हैं। आशा के प्रतिकूल अत्यन्त शीघ्र ही हम पैमाने की प्रत्येक संख्या के तात्पर्य से अभ्यस्त हो जाते हैं और बहुत जल्दी ही वह समय आ जाता है जब कि इस गुणात्मक पैमाने को मात्रात्मक पैमाने में तब्दील करना हम जान लेते हैं।

२. वायु के उद्वेलन के लिए एक और सरल मापदण्ड है क्षितिज के ऊपर की वह ऊँचाई जहाँ रंग विलुप्त हो जाते हैं या फिर वह ऊँचाई जहाँ झिलमिलाहट करीब-करीब अदृष्टिगोचर सी हो जाती है।

३. चश्मे के लेन्स के घुमाने से प्राप्त की गयी रोशनी की तब्दीली की प्रति सेकण्ड संख्या भी झिलमिलाहट की किस्म की नाप के लिए मोटे तौर पर मापदण्ड का काम करती है।

४२. सितारों की झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल कब होती है[1] ?

प्रबल झिलमिलाहट वास्तव में यही सिद्ध करती है कि वायुमण्डल सर्वत्र समांगी नही है और विभिन्न घनत्ववाले वायुस्तर आपस में मिले-जुले हैं। चूँकि असमांगी वायुमण्डल के साथ-साथ आमतौर पर विशेष प्रकार की ऋतु-दशाएँ भी विद्यमान रहती हैं, अत प्रकाश्य रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि झिलमिलाहट एक खास किस्म के मौसम के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

सामान्यतः बैरोमीटर के निम्न दाब, निम्न कोटि के ताप, प्रबल आर्द्रता तथा समदाब रेखा की तीव्र वक्रता और ऊँचाई के साथ दाब के अत्यधिक परिवर्तन के साथ झिलमिलाहट बढ़ती है। हवा के सामान्य बहाव के समय, झिलमिलाहट, उस वक्त की अपेक्षा अधिक प्रबल होती है जब कि हवा का बहाव या तो कम हो या बहुत अधिक तेज। स्पष्ट है कि वायुमण्डल की स्थिर दशा या उसकी गति अनेक पेचीदी बातों पर निर्भर है, अतः वर्तमान समय तक सितारों की झिलमलाहट के अवलोकन का उपयोग ऋतुसम्बन्धी पूर्वानुमान प्राप्त करने के निमित्त नही किया जा सका है।

यह दिलचस्प बात है कि बादलों के निकट झिलमिलाहट अधिक प्रबल हो जाती है जो यह सिद्ध करती है कि विभिन्न तापवाले वायुस्तर वहाँ मौजूद हैं।

1. Dufour, Phil. Mag. *19, 216, 1860.* Biquourdan, *C. R.,* 160, 5 79 *ff. 1915.*

यह भी कहा जाता है कि सन्ध्या के झुटपुटे में झिलमिलाहट बढ़ जाती है—इसका कारण या तो आँखों का शरीरजन्य, प्रकाशसम्बन्धी विभ्रम है या कि उस घड़ी के वायु-मण्डल की विशेष अवस्था का यह परिणाम है। यहाँ तक कहा जाता है कि उत्तरीय प्रकाश झिलमिलाहट को प्रोत्साहन देता है, किन्तु इस बात का ख्याल करते हुए कि वायमण्डल में उत्तरीय प्रकाश प्राय बहुत ऊँचाई (६० मील) पर उत्पन्न होते हैं, इस कथन का समझ में आना मुश्किल ही जान पड़ता है।

उत्तर के आकाश मे झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल होती है—इसका समाधान कुछ अन्य पेचीदा सिद्धान्तों के आधार पर किया जा सकता है।

यह प्रश्न एक पहेली ही बना रह जाता है कि रक्तिम वर्ण के तारे क्यों श्वेत तारों की अपेक्षा कम झिलमिलाते हुए प्रतीत होते हैं।

४३. ग्रहों की झिलमिलाहट

नक्षत्रों की अपेक्षा ग्रहो की झिलमिलाहट बहुत कम होती है। यह कुछ अजीब-सा लगता है क्योंकि अन्य बातों में नगी आँखों को वे बिलकुल नक्षत्रों के मानिन्द दीखते हैं। इस अन्तर का कारण यह है कि अत्यधिक दूरी के कारण सबसे बडी दूरबीन में भी नक्षत्र एक बिन्दु सरीखे ही (अधिक से अधिक कोणीय आकार ०.०५ सेकण्ड) दीखते हैं जब कि ग्रहों के लिए व्यास स्पष्ट दिखलाई पडता है—करीब १० सेकण्ड से लेकर ६८ सेकण्ड तक (शुक्र के लिए) तथा ३१ सेकण्ड से लेकर ५१ सेकण्ड तक (बृहस्पति के लिए)। अत ग्रहो की दशा मे वायुमण्डल मे ऊँचाई पर स्थित एक नन्हे से चपटे क्षेत्र AB में से होकर शकु के आकार मे किरणे गुजरेगी और इनमे से कुछ किरणे हमारी आँख में प्रवेश करेंगी। वायु की धारी, जैसा कि हमे पता है, प्रकाश-किरण में बस कुछेक सेकण्ड के कोण का ही विचलन पैदा करती है, अत इस कारण आँख मे प्रवेश करनेवाली किरण के अलग हट जाने पर शंकु की अन्य किरणें आँख मे प्रवेश करने लग जाती है और विम्ब की चमक में कोई फर्क नही आने पाता। चमक मे अन्तर केवल तब हम देख पायेगे जब किरणों का समूह जो पहले आँखों के ठीक सामने मिलता था, अब आँख मे ही प्रवेश करने लगे। किन्तु चमक की यह तब्दीली हलकी ही होगी क्योंकि वायु की बहुत-सी धारियों मे से कुछ तो किरणो को आँख की ओर विचलित करती है तो कुछ उन्हे आँख से दूर विचलित कर देती है। उदाहरणस्वरूप बृहस्पति के लिए क्षितिज से ३०° की कोणीय स्थिति पर २२०० गज की ऊँचाई पर आँख से उस ग्रह तक जानेवाली शंकु के आकार की किरणशलाका के आधार का व्यास २७ से लेकर ४० इंच तक होगा।

अब सहज ही यह बात समझ में आती है कि ग्रह की झिलमिलाहट उस वक्त दीखने लग जायगी जब उसकी प्रकाश-किरणों की मार्ग-दिशा का विचलन-मान, ग्रह के आभासी व्यास की कोटि का हो जाय।

यही कारण है कि शुक्र और बुध जो अक्सर काफ़ी सँकरी, नाखूनी शक्ल के दीखते हैं, कभी-कभी बोधगम्य तरीक़े पर झिलमिलाते हैं और इसी कारण क्षितिज के अत्यन्त निकट स्थित होने पर शुक्र मे रग की तब्दीलियाँ भी नजर आती हैं। जब वायुमंडल में उद्वेलन बहुत ही अधिक प्रबल होते हैं तथा ग्रह आकाश में नीचे ही स्थित होते हैं तो लगभग अनिवार्य रूप से चमक मे थोड़ा बहुत अन्तर अवश्य दिखलाई पड़ता है।

इस प्रकार झिलमिलाहट हमें एक ऐसा साधन प्रदान करती है जिसकी सहायता से हम नन्हें प्रकाश-स्रोतों के आकार का अन्दाज़ लगा सकते हैं जिन्हें कोरी आँखों से देखने पर उनकी चकरीनुमा शक्ल का भान भी नहीं हो पाता है। कहा तो यहाँ तक गया है कि इस तरीके से हम अचल सितारों के भी व्यास का तखमीना लगा सकते हैं, किन्तु संप्रति तो ऐसी आशा करना अतिशयोक्ति ही जान पड़ती है।

४४. छाया की पेटियाँ[1]

अतः सितारों की झिलमिलाहट, वायु के इस महासागर के घनत्व की अनियमित तब्दीलियों के कारण उत्पन्न होती है, जिसके पेंदे पर हम धरती के निवासी चलते-फिरते और जीवनयापन करते हैं। वस्तुतः यह उसी तरह की घटना है जैसी कि हलकी लहरों वाले पानी द्वारा सूर्यकिरणों का किसी ठौर घनीकरण और किसी स्थान पर विरलीकरण का होना (§२३)। मछलियों को सूर्य उसी तरह टिमटिमाता हुआ दीखता है जिस तरह हम लोगों को सितारे (चित्र ३०), अन्तर केवल इतना ही होता है कि पानी की परत की मोटाई की तब्दीली के बजाय इस दशा में वायुस्तरों के घनत्व की तब्दीली होती है। वायु-घनत्व की तब्दीली का असर अपेक्षाकृत इतना कम होता है कि इस दशा में केवल अत्यन्त नुकीले बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत को ही हम झिलमिलाते हुए देख पाते हैं।

जिस प्रकार स्वच्छ जल में प्रकाश के एकत्रीकरण का प्रदर्शन किया गया है ठीक उसी प्रकार वायु की घनत्वधारियों को भी सीधे ही दृष्टिगोचर कराया जा सकता है।

रात के समय, एक बहुत ही अँधेरे कमरे के अन्दर, जिसमें केवल एक छोटी-सी खिड़की खुली हो ताकि शुक्र का प्रकाश भीतर आ सके, सपाट दीवार या सफ़ेद दफ़्ती

1. Cl. Rozet C. R. 142, 913, 1906, 146, 325, 1906

के पर्दे की पृष्ठभूमि पर बादल सरीखा एक धुंधलापन गुजरता हुआ देखा जा सकता है। ये 'छाया पेटिकाएँ' हैं। शुक्र ग्रह जब क्षितिज के सन्निकट स्थित होता है केवल तभी ये स्पष्ट देखी जा सकती हैं। झिलमिलाते समय हर बार जब इसकी चमक थोड़ी-सी बढ़ती है तो पर्दे पर एक चटकीली पेटिका गुजरती हुई दिखलाई देती है। इसके प्रतिकूल हर बार जब चमक में कमी होती है तो अन्धकार की पेटी दीखती है (देखिए चित्र ५९)। पहले का प्रेक्षण चेतना सम्बन्धी ज्ञान की जो अनुभूति कराता है, इस बार का प्रेक्षण उसे ही वस्तुतः ज्ञान के रूप में प्रदर्शित करता है। वायु की इन धारियों की गति की कोई निश्चित दिशा नहीं होती, हवा के जिन स्तरों में इनका निर्माण होता है वहाँ की वायु के तत्कालीन बहाव की दिशा के अनुसार ये भी हरकत करती हैं।

इसी प्रकार बृहस्पति, मङ्गल, लुब्धक, आर्द्रा, प्रमाश, ब्रह्महृदय, अभिजित्, और स्वाती भी इस ढंग के प्रेक्षण के लिए उपयुक्त ठहरते हैं, यद्यपि इनकी रोशनी के अपेक्षाकृत हलकी होने के कारण प्रेक्षण करने में कठिनाई हो सकती है। वायुधारियाँ अधिक अच्छी तरह उस समय देखी जा सकती हैं जब बहुत दूर, करीब १५ मील के फासले की सर्चलाइट से रोशनी आपके निकट किसी दीवार पर गिरती हो।[1]

सूर्य के पूर्ण ग्रहण के अवसर पर ठीक सर्वग्रास के पहले या तुरन्त ही बाद सफेद दीवार या पर्दे पर अत्यन्त मार्के की 'छाया पेटियाँ' देखी जा सकती हैं। ये किसी विशाल पर्दे की सिलवटों का भान कराती हैं। ये भी वायुधारियाँ ही हैं जो सूर्य के पूर्णतया ओझल होने के ठीक पहले उसके नाखूनी हाशिये की लकीर के मानिन्द प्रकाश-स्रोत की रोशनी में दृष्टिगोचर होती हैं। इस कारण बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत के मुकाबले में यह घटना अधिक पेचीदा होती है, क्योंकि, इस दशा में प्रत्येक बिन्दु खिचकर एक चाप की शक्ल धारण कर लेता है (§१, §३); और बादल सरीखी धुंधली धारियाँ ऐसी लकीरों की बनी जान पड़ती हैं जो सभी सूर्य के नाखूनी हाशिये (सबसे अधिक प्रकाशित भाग) के समानान्तर होती हैं। हवा के बहाव से पेटिकाओं में भी हरकत होती है किन्तु हमें पेटिका की आड़ी दिशा की हरकत ही दिखलाई पड़ती है। कभी-कभी यह घटना केवल कुछ सेकण्डों तक ही रहती है, अक्सर एक मिनट तक या इससे कुछ अधिक देर तक। पेटियों के बीच की दूरी से वायु-धारियों की औसत मोटाई का अन्दाज लग सकता है—अधिकतर यह मोटाई ४ से १६ इंच तक मिलती है।

किन्तु यह आवश्यक नहीं कि छायापेटिका को देख सकने के लिए सूर्य के पूर्णग्रहण की प्रतीक्षा की जाय जो बहुत कम और लम्बे कालान्तर पर ही लगते हैं। ऊपर बतायी

1. Nat. 37, 224, 1888.

गयी विधि से हम सूर्योदय (या सूर्यास्त) के समय उन थोड़े से लमहों में प्रेक्षण कर सकते हैं जब कि क्षितिज से ऊपर सूर्य का एक सँकरा-सा ही वृत्तखण्ड निकला रहता है। और तब पेटिकाएँ क्षैतिज दिशा में स्थित होती हैं और ये हवा के बहाव की दिशा के अनुसार ऊपर, नीचे हरकत करती हैं। हवा के वेग के अनुसार इनकी हरकत का वेग प्रति सेकण्ड १ से ८ गज तक होता है और इनके बीच का अन्तर १ से ४ इंच तक होता है। साधारणतः ये तीन, चार सेकण्ड से अधिक देर तक दिखलाई नहीं देतीं, क्योंकि शीघ्र ही सूर्यचकरी का दृष्टिगोचर होनेवाला वृत्तखण्ड बहुत अधिक चौड़ा हो जाता है।

अध्याय ५

प्रकाशतीव्रता तथा द्युति की नाप

४५. तारे ज्ञात दीप्ति वाले प्रकाशस्रोत के रूप में

तारे एक ऐसा स्वाभाविक श्रेणीक्रम बनाते हैं जिसमे हर मान की दीप्तिवाले प्रकाशस्रोत पाये जाते हैं। फोटोमीटर की सहायता से इनकी दीप्ति अत्यधिक यथार्थता के साथ नापी गयी है; और दीप्तिमात्रा के अनुसार एक मापक्रम पर इनका वर्गीकरण किया गया है। दीप्तिमात्रा का मापक्रम तारे के वास्तविक आकार से कोई सम्बन्ध नही रखता, केवल इनकी द्युति या दीप्तितीव्रता यह प्रदर्शित करता है।

m=दीप्तिमात्रा श्रेणी-सूचक सख्या	i=प्रकाशतीव्रता (स्वतत्र रूप से माने गये पैमाने पर)	m	i
—1	251	0	100
0	100	0 1	91′
1	39.8	0.2	83
2	15 8	0.3	76
3	6.31	0 4	69
4	2 51	0.5	63
5	1 00	0.6	58
6	0.40	0.7	53
7	0.16	0 8	48
		0 9	44

किसी भी श्रेणी-सूचक सख्या का पूर्वगामी श्रेणी-संख्या वाले तारे से 2. 51 गुना मन्द प्रकाश देता है। इन सबमे हम पाते हैं कि $i=10^{-0\ 4m}$ केवल स्थिराक इस सूत्र मे नहीं दिया गया है। चित्र ६१ में सप्तर्षि मण्डल के पड़ोस के उन तारों की दीप्तिमात्रा श्रेणीसूचक सख्याएँ दी गयी हैं जो पूरे वर्ष भर दिखलाई देते रहते हैं। चित्र ६२ में जाड़े में दीखने वाले मृगशिरा तारा-समूह के लिए श्रेणीसूचक संख्याएँ दी
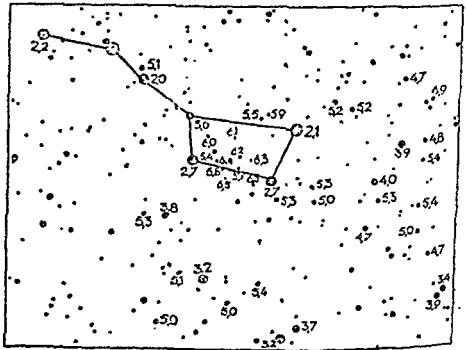
चित्र ६१

गयी है। पृष्ठ ९४ पर कुछ चमकीले और सुपरिचित तारों की श्रेणीसूचक संख्याएँ अङ्कित हैं*—

*—गगन-मण्डल के तारे पहचान और नामकरण के लिए समूहों में बाँट दिये गये हैं। जैसे सप्तर्षिमण्डल, मृगशिरा, गरुड आदि। पाश्चात्य ज्योतिष-पद्धति के अनुसार प्रत्येक तारासमूह के सदस्य तारे को इस तारासमूह के नाम के साथ यूनानी अक्षर α, β, γ, δ आदि जोड़कर इंगित करते हैं। पृ० ९४ की सारणी में विभिन्न तारासमूहों के सदस्य तारे के प्रचलित भारतीय नाम के सामने उनके नाम ज्योतिष-पद्धति के अनुसार भी दिये गये हैं।

कुछ यूनानी अक्षरों के उच्चारण इस प्रकार हैं—

α ऐल्फा	ϵ एप्साइलान	ξ जाई
β बीटा	η ईटा	π पाइ
γ गामा	θ थीटा	ϕ फाइ
δ डेल्टा	μ म्यू	ω ओमेगा

चित्र ६२

लुब्धक	=α श्वान ..—1.3	श्रवण	=α गरुड़.... 1.1
अभिजित्	=α वीणा... 0.3	रोहिणी	=α वृष.... 1.1
ब्रह्म हृदय	=α रथी .. 0.3	पुनर्वसु	=β मिथुन... 1.3
स्वाती	=α भूतेश... 0.2	मघा	=α सिंह .. 1.6
प्रमाश	=α श्वानिका..0.6	कस्तूरी	=α मिथुन... 1.7

अन्य तारों के लिए नक्षत्रों के मानचित्र का निरीक्षण करना चाहिए। अधिकांश लोग रात के स्वच्छ आकाश में और नगरों की रोशनी से बाहर कम-से-कम छठीं श्रेणी तक के तारे का प्रेक्षण कर सकते हैं।

४६. वायुमण्डल के कारण प्रकाश का ओझल होना

साधारणत, क्षितिज के निकट बहुत कम तारे दिखाई देते हैं क्योंकि हवा में से गुजरने के दौरान में किरणें वायु में अवशोषित हो जाती हैं। लगभग क्षैतिज दिशा में चलनेवाली ये किरणें तिरछी गिरने वाली किरणों की अपेक्षा अधिक लम्बा रास्ता तय करती हैं अतः अवशोषण के कारण इनकी चमक में अधिक ह्रास होता है।

अब यदि सम्भव हुआ तो चमक का ह्रास, तारों के मानचित्र और उनकी द्युति श्रेणीसूचक संख्या की सहायता से हम मालूम करेंगे, यद्यपि तथ्य तो यह है कि इसके लिए § ४५ की स्वयं हमारी सारणी ही, जब मृगशिरा आकाश में नीचे स्थित हो और सप्तर्षि मण्डल ऊँचाई पर हो, पर्याप्त होगी।

h	Δ	Z	Sec Z
90°	0	0°	1.
45°	0.09	45°	1.41
30°	0.23	60°	2.00
20°	0 45	70°	2.92
10°	0.98	80°	5.73
5°	1.67	85°	11.4
2°	3.10	88°	—

इस सारणी में दी गयी द्युति-श्रेणीसूचक संख्याएँ उस वक्त के लिए हैं जब कि तारे आकाश में ऊँचाई पर स्थित होते हैं। क्षितिज के निकट ही किसी सितारे को लेते हैं और ऊर्ध्व बिन्दु के आसपास के किसी तारे के साथ उसकी दीप्ति की तुलना

करते हैं (४५° से अधिक ऊँचाई के तारों की दीप्ति में ह्रास लगभग नगण्य ही होता है)। यथासम्भव ऐसा तारा ढूंढ़ते हैं जिसकी चमक A की चमक के ठीक बराबर हो या फिर ऐसे दो तारे प्राप्त करते हैं जिनके दर्मियान A की चमक पड़ती हो। अब A की आभासी द्युतिसूचक संख्या तथा सारणी में दी गयी इसकी वास्तविक द्युतिसूचक संख्या का अन्तर मालूम करते हैं तथा इसे Δ द्वारा व्यक्त करते हैं, साथ ही तारा A की ऊँचाई भी नाप ली जाती है (§२३५)।

विभिन्न तारों के निमित्त उनकी क्षितिज से नापी गयी विभिन्न ऊँचाइयों h के लिए (१०° की ऊँचाई प्रारम्भिक तखमीनें के लिए काफ़ी होगी) यह क्रिया पूरी करने पर जो हमें सारणी मिलेगी वह बहुत कुछ ऊपर दी गयी सारणी के समान होगी।

सारणी के द्वितीय स्तम्भ में दी गयी संख्याएँ वायुमण्डल द्वारा उत्पन्न द्युतिह्रास प्रगट करती हैं। ये संख्याएँ संसार के इस भाग के लिए द्युतिह्रास का औसत मान पूर्णतया खुले आकाश के लिए बतलाती हैं; ये मान विभिन्न स्थानों के लिए बदलते रहते हैं और विभिन्न रातों के लिए तो ये और भी अधिक बदल जाते हैं।

सारणी में ऊर्ध्व बिन्दु से नापी गयी कोणीय दूरी, $Z=90°-h$ तथा Sec Z भी दिये गये हैं। Sec Z वायुमण्डल में से होकर जानेवाले किरणपथ की लम्बाई का समानुपाती होता है (चित्र ६३)।

चित्र ६३—प्रकाश की किरण जितनी अधिक तिरछी होगी, वायुमंडल में से उसका पथ उतना ही अधिक लंबा होगा।

अब ग्राफ़ कागज पर Δ के मान को Sec Z के मान के साथ प्लाट करिए। आपको बहुत से बिन्दु मिलेंगे जो एक सीधी रेखा के आस-पास पड़ते हैं, जो यथासम्भव उन सब बिन्दुओं के निकट से गुजरती हुई खींची गयी है (चित्र ६४)। अतः इस ग्राफ़रेखा से हम पता लगा सकते हैं कि वायुमण्डल में गुजरने वाले प्रकाश-पथ की लम्बाई बढ़ने पर तारे की द्युति में कितने द्युतिसूचक अंक का ह्रास होता है।

इस रेखाचित्र की असाधारण रूप से रोचक एक विशिष्टता यह है कि रेखा को बढ़ाकर हम मालूम कर सकते हैं कि यदि धरती को घेरनेवाले वायुमण्डल से ऊपर, अर्थात् स्ट्रैटोस्फियर से भी ऊपर, हम उठ सकते तो तारा कितनी अधिक द्युति से चमकता हुआ प्रतीत होता। इस दशा में ऊर्ध्व बिन्दु के निकट स्थित तारे की चमक में ·२ अंक

द्युति की वृद्धि होगी जिसका अर्थ है कि दीप्ति ८३ से बढ़कर १०० हो जायगी (देखिए §१७२)।
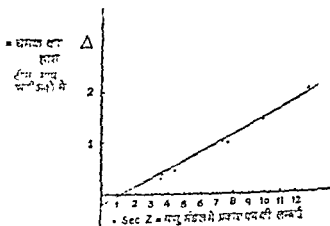
चित्र ६४—ऊर्ध्व बिन्दु से विभिन्न दूरियों पर तारे की चमक का ह्रास, दीप्तिमाप श्रेणी अंकों में।

४७. तारे की तुलना एक मोमबत्ती से

नगर से बाहर रात के समय एक खुले मैदान को हम चुनते हैं और वहाँ एक मोमबत्ती की प्रकाशतीव्रता की तुलना एक चमकीले तारे से करते हैं, जैसे ब्रह्महृदय (αरथी)। कितने आश्चर्य्य की बात है कि मोमबत्ती से इतनी अधिक दूरी पर हमें खड़ा होना पड़ता है ताकि उसकी चमक घटकर उस तारे की चमक के बराबर हो जाय। यह दूरी करीब १००० गज या ९०० मीटर मिलती है। अतः ब्रह्महृदय की प्रकाशतीव्रता का मान $\frac{1}{900^2} = \frac{1}{810000}$ 'लक्स' या 'मीटरकैन्डल' प्राप्त होता है।

इस काम के लिए पाकेट लैम्प भी इस्तेमाल किया जा सकता है, लेकिन इस दशा में दूरी और भी अधिक बढ़ानी होगी। लैम्प को मकान की छत पर लगाइए या फिर किसी ऊँची मीनार की खिड़की के बाहर उसे रखिए।

रंग के फर्क पर भी गौर कीजिए।

४८. सड़क के दो लैम्पों की परस्पर तुलना

सन्ध्या के टहलने में हम अक्सर देखते हैं कि जब कभी हम सड़क के दो लैम्पों के दर्मियान होते हैं तो हमें दो छायाएँ मिलती हैं। किसी एक लैम्प के जितने निकट हम

जाते हैं, उन दोनों में से एक छाया उतनी ही अधिक गाढ़ी हो जाती है। जिस समय दोनों छायाएँ समान रूप से गाढ़ी होती हैं उस वक्त वहाँ पर दोनों लैम्पों का प्रकाश समान रूप से तीव्र होता है; अतः उनकी दूरियों a तथा b से यह निष्कर्ष निकला कि उनकी दीप्ति की निष्पत्ति $\frac{A}{B} = \frac{a^2}{b^2}$।

तप्त मैन्टल वाले लैंम्प और बिजली के लैम्प द्वारा बनने वाली छाया के रंग में अद्भुत अन्तर दीखता है।

४९. चन्द्रमा की तुलना सड़क के लैम्प से

एक बार फिर इन प्रकाश-स्रोतों से बननेवाली दो छायाएँ प्राप्त करिए। चन्द्रमा के सामने की छाया कुछ-कुछ लालछवें रंग की होगी तथा लैम्पवाली छाया गहरा नीला रंग लिये हुए होगी (देखिए § ९६)। हम लैम्प से दूर हटते हैं तो चन्द्रमा से बनने वाली छाया तो उतनी ही गाढ़ी रहती है किन्तु लैम्पवाली छाया हलकी होती जाती है। मान लीजिए कि लैम्प से २० मीटर की दूरी पर दोनों छायाएँ समान रूप से गाढ़ी दीखती हैं। सड़क का बिजली का लैम्प जो बहुत तेज रोशनी का न होकर साधारण किस्म का होता है, मेरे अन्दाज से ५० कैन्डल शक्ति का होना चाहिए; अतः २० मीटर की दूरी पर प्रदीप्ति-तीव्रता होगी $\frac{50}{20^2} = 0.13$ लक्स।

अतः पूर्णिमा के चाँद के प्रकाश की प्रदीप्तितीव्रता भी इतनी ही होगी; प्रयोग पूर्णिमा की रात में किया गया था।

प्रयोग शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी को दुहराइए। इस बार प्रकाश की प्रदीप्ति पहले के आधे से बहुत कम होगी क्योंकि चन्द्रमा की सतह का बहुत-सा भाग चन्द्रमा के पहाड़ों की तिरछी छाया के कारण ढक जाता है (देखिए § १६८)

प्रदीप्तितीव्रता के सही मान इस प्रकार हैं—पूर्णिमा के चाँद के लिए ०.२० लक्स और शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी के लिए ०.०२ लक्स।

५०. चन्द्र-बिम्ब-द्युति

हर्शेल जब दक्षिण अफ्रीका की यात्रा पर रवाना हुआ था और केपटाउन पर उसका जहाज पहुँचा तो उस वक्त करीब-करीब पूर्णचन्द्र को उसने टेबुल पर्वत के ऊपर उगते हुए देखा, अस्त होते हुए सूर्य से उस समय पर्वत पर रोशनी पड़ रही थी। उसे ऐसा लगा कि चन्द्रमा पर्वत की चट्टानों के मुकाबले में कम चमकीला था, और इससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि चन्द्रमा की सतह मटमैले रंग की चट्टानों की बनी होगी।

स्वयं अपने आसपास के वातावरण में भी इस तरह का प्रेक्षण हम प्राप्त कर सकते हैं; इसके लिए सन्ध्या को लगभग ६ बजे उगनेवाले पूर्णचन्द्र की तुलना किसी सफेद दीवार से करनी होगी जिसपर अस्त होते हुए सूर्य का प्रकाश पड़ रहा हो। सूर्य और चन्द्रमा के बीच की दूरी तथा सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी मोटे तौर पर एक-सी ही हैं। यदि चन्द्रमा और दीवार एक ही तरह के पदार्थ से बनी हों तो हमारी आँख से उनकी दूरियों में चाहे कितना भी अधिक अन्तर क्यों न हो, उनकी चमक समान होगी (चिरप्रतिष्ठित दीप्तिमापन सिद्धान्त के अनुप्रयोग का एक बढ़िया उदाहरण)। प्रेक्षण से प्राप्त प्रदीप्ति-अन्तर अवश्य इस कारण होगा कि चन्द्रमा का धरातल गहरे रंग की चट्टानों (ज्वालामुखी की राख ?) से बना है।

पूर्णतया सही प्रेक्षण प्राप्त करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा दोनों को क्षितिज से समान ऊँचाई पर होना चाहिए ताकि वायुमण्डल के कारण उनकी प्रकाशतीव्रता में ह्रास दोनों के लिए समान हो।

५१. मैदानी दृश्यों की प्रदीप्ति के लिए कुछ अनुपात

सूर्य की द्युति = ३००,००० × नीले आकाश की द्युति। सफेद बादल की द्युति = १० × नीले आकाश की द्युति। सामान्य धूप वाले दिन जब आकाश नीले रंग का होता है, प्रकाश का ८० प्रतिशत तो सीधे सूर्य से आता है और २० प्रतिशत आकाश से।

सूर्यास्त के उपरान्त स्वच्छ आकाश में एक क्षैतिज सतह पर प्रदीप्ति*

सूर्य की ऊंचाई	0°	−1°	−2°	−3°	−4°	−5°	−6°	−8°	−11°	−17°
प्रदीप्ति	400	250	115	40	14	4	1	0.1	0.01	0.001 लक्स

आँखें हर तीव्रता की प्रदीप्ति के लिए अपने को इतनी अच्छी तरह और इतनी शीघ्रता से समानुयोजित कर लेती हैं कि पर्याप्त रूप से हम कभी भी अनुभव नहीं कर पाते कि हमारे आसपास की प्रदीप्ति-निष्पत्तियाँ कितनी अधिक हैं! आइए, ऊँचाई पर स्थित सूर्य से प्रकाशित मैदानी दृश्य की तुलना चन्द्रमा द्वारा प्रकाशित मैदान से करें।

[प्रदीप्ति तीव्रता की इकाई = 10^{-6} लैम्बर्ट]

सूर्य का मंडलक	4000,000	लाख	चन्द्रमा का मंडलक	900,000
विशुद्ध श्वेत वस्तु	70	लाख	विशुद्ध श्वेत वस्तु	15
मटमैली काली वस्तु	1.4	लाख	मटमैली काली वस्तु	0.3

* Reesinck Physica 11, 61, 1944 Siedentopf and Holl. Reichsber Phys, 1, 32, 1944

इससे पता चलता है कि एक ही मैदानी दृश्य मे अधिकतम प्रदीप्ति अनुपात ५०:१ से ऊँचा नही है, फिर भी निरपेक्ष मान के लिहाज मे प्रदीप्ति का यह अन्तर बहुत अधिक होता है। सूर्य के प्रकाश में मटमैली काली वस्तु चांदनी के प्रकाश में रखे सफेद कागज की अपेक्षा १०००० गुनी अधिक चमकीली होती है। साये मे रखी चीजें कदाचित् धूप में रखी चीजों की अपेक्षा १० गुनी कम चमकीली होती हैं। प्रवेश-द्वार के अन्दर या झाडियो के बीच की खुली जगह आदि सबसे अधिक अँधेरी होती हैं जो कभी-कभी आस-पास के धूपवाले भूमिदृश्य के मुकाबले मे अद्भुत विपर्यास उपस्थित करती हैं—चमक १ लक्स से अधिक नहीं होती।

भूमिदृश्य में प्रदीप्ति या चमक की निष्पत्ति का अनुमान हम विभिन्न वस्तुओं की परावर्तन-क्षमता की तुलना करके लगा सकते हैं : ताजे हिम के लिए ८०-८५%, पुराने हिम के लिए ४०%तक, घास के लिए १०-३३%, सूखी भूमि के लिए १४%, गीली भूमि के लिए ८–९%, नदी, खाडी के लिए ७%,गहरे महासागर के लिए ३%और ताल-तलैया के लिए २%से अधिक नहीं। वायुयान से नीचे देखने पर बीच के वायु-स्तरों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण एक हलके आवरण जैसा प्रभाव पड़ता है, अतः इन अङ्कों में थोड़ा परिवर्तन करना पड़ता है। बादल ८०%तक परावर्तन करते हैं।

५२. परावर्तन-शक्ति

क्या पानी में तारों को प्रतिबिम्बित होते आपने कभी देखा है? नगरों मे ऐसा अवसर मुश्किल से मिलता है, और देहात में केवल कभी-कभी—पानी के नाले या झील में जब कि हवा में हरकत न हो, अँधेरी रात में ये प्रतिबिम्ब विशेष स्पष्ट दिखलाई देते हैं। ऊर्ध्वबिन्दु के निकट के प्रथम श्रेणी के तारे हलका प्रतिबिम्ब बनाते हैं जिनकी चमक लगभग पाँचवीं श्रेणी के तारे के बराबर होती है। दीप्तिमात्रा की श्रेणी में अंक ४ का अन्तर करीब-करीब प्रकाश-तीव्रता के निष्पत्ति-मान ४० के बराबर होता है, अत. लम्बवत् गिरनेवाली किरणों के प्रकाश के केवल २.५ प्रतिशत भाग को ही पानी परावर्तित करता है। आकाश में कम ऊँचाई पर स्थित तारों का प्रतिबिम्बन अपेक्षाकृत बढ़िया होता है।

परावर्तन-शक्ति और वर्तनाङ्क का पारस्परिक सम्बन्ध फ्रेनेल के सूत्र द्वारा प्राप्त होता है। लम्बवत् गिरनेवाली किरणों के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{परावर्तन शक्ति} = \left(\frac{n-1}{n+1}\right)^2$$

निम्नलिखित तालिका में विभिन्न आपतन कोणों[1] के लिए काँच और पानी की परावर्तन-शक्ति के मान दिये गये हैं।

आपतन कोण	परावर्तन-शक्ति	
	पानी की	काँच की (n=1.52)
0°	0.020	0·043
10°	0.020	0 043
20°	0.021	0·043
30°	0.022	0·043
40°	0.024	0 049
50°	0.034	0 061
60°	0.060	0 091
70°	0.135	0·175
75°	0.220	0·257
80°	0.350	0·388
85°	0.580	0·615
90°	1.000	1·000

अब हम समझ सकते हैं कि क्यों नगरों में हम कभी भी तारों को प्रतिबिम्बित होते हुए नहीं देख सकते; आकाश में पर्याप्त अँधेरा नहीं रहता है, तृतीय द्युति श्रेणी के तारे मुश्किल से ही दृष्टिगोचर हो पाते हैं, और फिर पानी की सतह पर बहुत अधिक रोशनी पड़ती रहती है। परावर्तन में तो केवल ग्रह ही दृष्टिगोचर हो पाते हैं, सो भी केवल उसी वक्त जब कि वे प्रथम श्रेणी के तारों की अपेक्षा कहीं अधिक चमकीले होते हैं।

दिन में प्रतिबिम्बित नीले आकाश, मकान और वृक्ष आदि की प्रदीप्तियाँ २ प्रतिशत से कहीं अधिक जान पड़ती हैं। कुछ चित्रों में वस्तु और उसके प्रतिबिम्ब की प्रदीप्ति में मुश्किल से ही अन्तर देखने को मिलता है। यह आँखों की प्रकाश सम्बन्धी प्रवञ्चना का परिणाम है। इसकी व्याख्या अंशतः इस प्रकार है, अधिकतर पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते हैं जो क्षैतिज दिशा के अत्यन्त निकट होती है (चित्र १५६) और अंशतः यह कि मानसिक परिस्थितियों के कारण ऐसा होता है।

1. Angles of incidence

ठीक नीचे दीखने वाली पानी की सतह पर होनेवाले परावर्त्तन की तुलना पाकेट-दर्पण या साधारण कांच के टुकडे के परावर्त्तन से कीजिए। भिन्न परावर्त्तन कोणो के लिए भी प्रदीप्तियो की तुलना करिए।

इस तरह का अन्धविश्वास प्रचलित है कि गहरे पानी मे तारे कभी भी नही प्रतिबिम्बित होते। निस्सन्देह इसके लिए कोई भी आधार नहीं है।

काँच के पर्दे की प्रत्येक सतह से ० ०४३ प्रतिशत प्रकाश परार्वात्तत होता है, अतः दोनों सतहो से कुल ० ०८६ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित होगा। काँच के बने छोटे कमरो मे जैसे टेलीफोनकक्ष आदि, जिसमे बीच मे लटकनेवाले बिजली के बल्व से रोशनी की गयी हो, आमने-सामने की खिडकियो के काँच मे प्रतिबिम्बो की पुनरावृत्ति देखी जा सकती है, साधारण दूधिया काँच के बल्व के लिए प्रत्येक दीवार पर चार प्रतिबिम्ब तक दृष्टिगोचर हो सकते है। पहला प्रतिबिम्ब एक परावर्त्तन से, दूसरा किरणो के तीन वार के परावर्त्तन से, तीसरा पाँच बार के परावर्त्तन से और चौथा सात वार के परावर्त्तन से बनता है। चौथे प्रतिबिम्ब की दीप्ति आरम्भ के आपतित प्रकाश-दीप्ति से $(\alpha\text{-}086)^7$ गुना कम होती है अर्थात् एक करोडवे भाग से भी कम। यह सीधी-सादी गणना इस बात का अत्युत्तम उदाहरण है कि हमारी आँख द्वारा अनुभूत होनेवाली प्रकाश-दीप्ति का परास कितना विशाल है!

५३. तार की जाली मे से प्रकाश का गमन

मकानों की छत पर लगे विज्ञापन प्रदर्शित करने वाले प्रकाशस्रोत प्राय. धातु के ढाँचे पर तार की जाली मे फिट किये गये होते है।
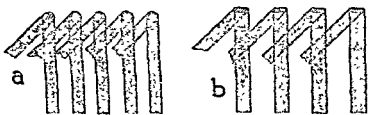
चित्र ६५—तार की जाली से रुकनेवाले प्रकाश का प्रेक्षण दो दिशाओं से—

(a) जब तार वृत्ताकार अनुच्छेद के है।

(b) जब जाली के तार चिपटी पत्ती के बने है।

दूर से देखने पर जाली के तार अलग-अलग नहीं जान पड़ते वल्कि जाली समान रूप से प्रकाशित भूरे रंग के काँच की सतह सी दिखाई पड़ती है। यह दिलचस्प बात होगी यदि जाली को उत्तरोत्तर तिरछी दिशा से देखें; तब आकाश की पृष्ठभूमि पर इसकी प्रदीप्ति क्रमशः कम होती जाती है। इससे सिद्ध होता है जाली के तार बेलनाकार शक्ल के हैं क्योंकि यदि चिपटे फीते की शक्ल के ये होते तो हर दिशा से देखने पर जाली एक सी ही प्रदीप्त की दीखती (चित्र ६५)।

५४. वनों की अपारदर्शिता का गुण

जंगल की एक सँकरी पट्टी के आरपार वृक्षों के तनों के बीच से पीछे का प्रकाशित आकाश हम देख सकते हैं। यह ज्ञात करने के लिए कि प्रकाश का कितना भाग जंगल में से होकर बिना बाधा के गुजर सकता है, कोई न कोई सूत्र हम अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। मान लीजिए कि वन में वृक्षों का वितरण आकस्मिक ही है, अर्थात् प्रति वर्ग गज वृक्षों की संख्या N है, और आँख की ऊँचाई पर वृक्ष के तने का व्यास D है।
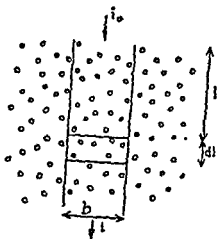
चित्र ६६—वन के वृक्षों के तनों के बीच से दीख सकने वाले प्रकाश की गणना कैसे कर सकते हैं।

प्रकाश-किरणों की एक शलाका पर विचार करिए जिसकी चौड़ाई b है। वन के भीतर यह दूरी l तय कर चुकी है (चित्र ६६)। मान लीजिए कि वन में प्रवेश करने के पहले इसकी दीप्ति i_0 थी और अब दीप्ति i है। इसके आगे किरणें जब क्षुद्र दूरी dl वन के अन्दर और तय करती है तो इसकी क्षुद्र प्रकाशमात्रा di का ह्रास हो जाता है; अतः

$$\frac{di}{i} = \frac{NDbdl}{b} = -dlND$$

अनुकलन करने पर,

$$i = i_0 e^{-NDL} = i_0 . 10^{-0.43NDL}$$

अतः आपतित किरणों की दिशा में वन जितनी अधिक दूर तक फैला हुआ होगा, उसमें से गुजरनेवाली प्रकाशमात्रा उतनी ही कम होती जायगी, ठीक उसी प्रकार

जैसे गहरे रंग के द्रव में से गुजरने वाला प्रकाश द्रव के स्तर की मोटाई बढ़ने के साथ घटता जाता है। देवदार के वन के लिए मान लीजिए, प्रति वर्ग गज वृक्ष सख्या N=1 तथा तने का व्यास D=0.10 गज, तब मोटे तौर पर हमें निम्नलिखित प्राप्त होते हैं—

l=10 गज	$\frac{1}{i_o}$=0·37
l=25 गज	=0·10
l=50 गज	=0 01
l=70 गज	=0 001

अपारदर्शिता की वृद्धि की दर अद्भुत रूप से तीव्र है। क्षितिज के उस प्रकाश को देखकर जो अभी तक पेड़ो की आड़ मे नहीं आ सका है, हम वन की चौड़ाई का अन्दाज लगा सकते हैं।

बीच (beech) वृक्ष के वन के लिए ND का क्या मान होगा? और देवदार के नये पौदों, तथा पूर्ण विकास पाये हुए देवदार वृक्षों के लिए क्या मान होगा?

५५. दो कठघरों के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन (प्लेट VII,a)

जब कभी एक कठघरे के खम्भों के दर्मियान दूसरे कठघरे के खम्भे दिखलाई पड़ते हैं तो हमे रोशनी और अन्धकार की चौड़ी पट्टियाँ दृष्टिगोचर होती हैं जो हमारे चलने के साथ-साथ ही चलती हुई जान पड़ती हैं। इसका कारण यह है कि एक कठघरे के खम्भो के बीच की प्रत्यक्ष दूरी दूसरे कठघरे के खम्भों की पारस्परिक दूरी से कुछ भिन्न होती है—या तो इसलिए कि एक कठघरे के खम्भो के बीच का अन्तर दूसरे के खम्भों की दर्मियानी दूरी से भिन्न है या इसलिए कि आँख से एक कठघरे की दूरी दूसरे की दूरी से भिन्न हो सकती है। कुछ दिशाओ से देखने पर एक कठघरे के खम्भे दूसरे के खम्भो की सीध मे पड़ते हैं और कुछ अन्य दिशाओं से देखने पर एक कठघरे की खुली जगहे दूसरे के खम्भों द्वारा पूरी-पूरी भर जाती हैं, अतः औसत प्रदीप्ति मे अन्तर दीखता है। हम कह सकते हैं कि खम्भे कभी सामञ्जस्य की दशा में आते हैं, और कभी असामञ्जस्य की दशा में।

एक बार इस तरह के क्रमिक प्रकाशदर्शन का निरीक्षण कर लेने के उपरान्त यत्र-तत्र हर कहीं यह घटना हमें देखने को मिलती रहती है। प्रत्येक पुल जिसके दोनों ओर रेलिंग की मुंडेर लगी होती है, दूर से देखने पर प्रदीप्ति में चढाव-उतार प्रदर्शित करता है। प्रकाश का यह क्रमिक चढाव-उतार उस वक्त भी मिलता है जब रेलिंग के खम्भों

के दर्मियान उन्हीं की छाया को हम देखते हैं। इस दशा में खम्भों के बीच तथा छाया चिह्नों के बीच के अन्तर तो समान होते हैं, किन्तु आँख से खम्भे तथा छाया की दूरियाँ भिन्न होती हैं।

कुछ स्टेशनों पर सामान उठानेवाले लिफ्ट तार की जाली के घेरे के अन्दर स्थित होते हैं। हमारी ओर की जाली और सामने की दूसरी ओर जाली मिलकर एक तरह का म्वारे (moire) सा प्रस्तुत करती हैं, जैसा तार की एक जाली को दूसरी जाली पर रखने पर प्राप्त होता है या एक कंघे को दूसरे कंघे पर रखने पर, जबकि दोनों के दाँतों के बीच के अन्तर असमान हो।
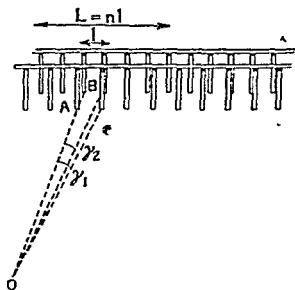
चित्र ६७–दो रेलिंगों के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन।

आइए, चित्र ६७ के सरल उदाहरण की विस्तृत व्याख्या करें जिसमे समान अन्तर पर लगे खम्भों की दो पंक्तियाँ देखी जा रही हैं जो आँख से क्रमशः x_1=OA तथा x_2=OB दूरी पर स्थित हैं। मानो दो क्रमागत खम्भों के बीच का फासला l है जो आँख पर क्रमश: कोण $\gamma_1=\frac{l}{x_1}$ तथा $\gamma_2=\frac{l}{x_2}$ बनाता है। एक क्रमिक प्रकाशदर्शन में n खम्भे पड़ेंगे जबकि $n=\frac{\gamma_1}{\gamma_1-\gamma_2}=\frac{x_2}{x_2-x_1}$; अर्थात् हमारी दूरी बढ़ने पर यह संख्या भी बढती है। इसके प्रतिकूल एक क्रमिक प्रकाश-दर्शन द्वारा कोणीय दूरी θ हमारी आख के लिए उतनी ही बनी रहती है क्योंकि $\theta=n\gamma_2=\frac{l}{x_2-x_1}$ एक क्रमिक प्रकाशदर्शन की सही लम्बाई $L=nl=\frac{lx_2}{x_2-x_1}$ हम खम्भों की पंक्ति के समानान्तर चलकर मालूम कर सकते हैं; क्रमिक प्रकाशदर्शन भी उसी रफ्तार से चलेगा जिस रफ्तार से हम चलते हैं। अब वह दूरी नापिए जिसे तय कर लेने पर आप प्रकाशदर्शन

को ठीक उसी स्थिति मे देखते है जिस स्थिति में वह पहले था। यही दूरी उस क्रमिक प्रकाशदर्शन की लम्बाई होगी। उपर्युक्त विभिन्न सूत्रों की सत्यता की जाँच कीजिए। या फिर n, 0 और L ज्ञात करके x_2, x_2-x_1, तथा l के मान सूत्र से प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार बिना किसी अन्य साधन के दूर से ही रेलिंग के लिए इन सभी राशियों को हासिल कर लेना सम्भव हो जाता है।

यदि दोनों रेलिंग के खम्भो के दर्मियानी फासले एक दूसरे से भिन्न हो तो हमारी आँख के हरकत करने पर क्रमिक प्रकाशदर्शन अद्भुत तरीके से चलते नजर आते है।

यदि प्रकाश स्रोत s (चित्र 68) के हम सामने है तो क्रमिक प्रकाशदर्शन उसी तरफ़ चलते है जिधर हम जा रहे है और यदि हम प्रकाश स्रोत के पीछे हैं, तो ये उल्टी
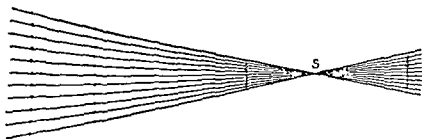
चित्र ६८—दो रेलिंग व्यवस्थाओं के दर्मियान क्रमदर्शन, जिनके आवर्त भिन्न है।

ओर जाते हुए प्रतीत होते हैं। दूसरे शब्दों में ये हमारी दिशा में चलते हैं यदि $\gamma_1 < \gamma_2$ तथा उल्टी दिशा में चलते है जब $\gamma_1 > \gamma_2$। फिर प्रकाशसूत्र के जितने निकट हम जायेंगे उतनी ही तेजी से ये चलते हुए नजर आयेंगे।

सीधे खड़े खम्भो वाली बाड़ की छाया समतल भूमि पर पड़ती है तो इस दशा में क्रमिक प्रकाशदर्शन कुछ भिन्न किस्म के नजर आते हैं। सिरे पर ये पेंदे की अपेक्षा
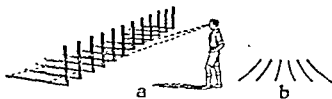
चित्र ६९—रेलिंगों और उनकी छाया के दर्मियान क्रमिक प्रकाश दर्शन
(a) प्रेक्षण के समय की परिस्थिति (b) क्रमदर्शन तरंग का स्वरूप।

अधिक निकट होते हैं और थोड़ी-बहुत वक्रता भी इनमें देखी जा सकती है। किन्तु यह उपर्युक्त व्याख्या के अनुकूल ही है क्योंकि परस्पर व्यतिकरण करनेवाले दोनों ढांचों की दूरी में सबसे अधिक अन्तर सिरों पर ही होता है। अतः बगल के छड़ों के बीच की कोणीय दूरियाँ जो आँखों को दीखती हैं, एक दूसरे से बहुत अधिक भिन्न हो जाती हैं, फलस्वरूप क्रमिक प्रकाशदर्शन इस दशा में एक दूसरे के बहुत निकट होंगे। पेंदे पर ठीक इसका उलटा होता है।

५६. फोटोग्राफी द्वारा दीप्तिमापन[1]

फोटोग्राफी की हर दुकान पर बिक्री के लिए 'डे-लाइट पेपर' मौजूद रहते हैं जो धूप में तेजी के साथ लालछौंवे भूरे रंग में तब्दील हो जाते हैं। मोटे तौर पर कागज को एक खास रंग धारण करने में जो समय लगता है वह उस पर पड़नेवाली प्रकाश-तीव्रता के उत्क्रम अनुपात में होता है (बुन्सन और रोस्को का नियम)। अतः यदि एक ही किस्म का 'डेलाइट पेपर' हमेशा इस्तेमाल करें और सामान्य लालछौंवें भूरे रंग के कागज के एक टुकड़े को तुलना के लिए 'रंग का प्रामाणिक शेड' मान लें, तब कहीं पर भी, केवल यह मालूम करके कि सुग्राही कागज को रंग के उस प्रामाणिक शेड को प्राप्त करने में कितना समय लगता है, प्रकाश की तीव्रता आसानी से ज्ञात कर सकते हैं। प्रामाणिक कागज को रोशनी में जहाँ तक सम्भव हो बहुत कम ही रखना चाहिए वरना इसका रंग उड़ जायगा।

प्रामाणिक शेड का चुनाव अत्यधिक सावधानी के साथ करना चाहिए। 'डेलाइट पेपर' की एक पतली पट्टी लेकर एक सिरे से दूसरे सिरे तक उसे कई खण्डों में धूप में खोलते जाते हैं। क्रम से पहले खण्ड को १० सेकण्ड तक, दूसरे को २०, तीसरे को ४०, चौथे को ८०, पाँचवें को १६०, छठे को ३२० और सातवें को ६४० सेकण्ड तक खुला रखकर ढकते चले जाते हैं। मन्द प्रकाश में कागज की जांच करने पर हम देखते हैं कि प्रथम और अन्तिम खण्ड के रंग में उभार कम है किन्तु बीचवाले खण्ड के रंग सबसे अधिक स्पष्ट उभरे हैं। अब किसी पुस्तक का कवर या पोस्टर का कागज इस तरह का चुनिए कि इसका रंग पूर्णतया हमवार हो और 'डेलाइट पेपर' के बीचवाले किसी खण्ड के रंग से बिलकुल ठीक-ठीक मेल खाता हो। तुलना करते समय रंग के शेड यदि पूर्णतया मेल न खाते हों तो आपको उनकी चमक पर अधिक ध्यान देना होगा और इसके लिए आपको चाहिए कि अधमुँदी आँख से दोनों सतहों को देखें। स्मरण रखिए कि 'डेलाइट

1. J. Wiesner, Der Lichtgenuss der Pflanzen (Leipzig, 1907)

पेपर' को मसाले में न तो धोना है और न हाइपो में डुबाकर उसे स्थायी ही बनाना है, वास्तव में कागज की यह पट्टी एक बार इस्तेमाल कर लिए जाने पर बाद के लिए रखी भी नहीं जा सकती।

इसी तरीके से वीजनर ने विभिन्न पौदों के विकास के लिए आवश्यक 'प्रकाश के जलवायु' के सिलसिले में अनेक परीक्षण किये थे। इस तरीके से भले ही केवल मोटे तौर पर ही तखमीना लग पाता हो, किन्तु विभिन्न परिस्थितियों में और तरह-तरह के स्थानों पर प्रदीप्ति के मान निकालने की यह एक अत्युत्तम विधि है जिसके बारे में हमें पहले कुछ भी अन्दाज़ न था।

सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयों के लिए एक क्षैतिज तल की प्रदीप्ति का अध्ययन कीजिए।

जिस समय सूर्य चमक रहा हो, किसी क्षैतिज तल पर आने वाले प्रकाश की तुलना करिए; (क) जब किसी परदे की छाया उस पर पड़ रही हो,; (ख) जब परदा हटा लिया गया है; इस रीति से सीधे सूर्य से आनेवाले प्रकाश की तुलना नीले आकाश से आनेवाले प्रकाश के साथ करिए।

क्षैतिज तल में रखे कागज की ऊपरी और नीचे वाली सतह की प्रदीप्ति की तुलना करिए। इसके लिए पानी के ऊपर अनुपात ६, बजरी के ऊपर १२ और घास पर २५ मिलता है।

समान आकार की नलियाँ लीजिए, उनके पेंदे पर फोटोग्राफ़ी का कागज लगाकर नली को विभिन्न कोणो पर तिरछी करके खड़ी करिए और इस प्रकार नीले आकाश की दीप्ति की तुलना विभिन्न दिशाओं के लिए करिए। आम तौर पर सूर्य की दिशा से १०° के कोण बनाने वाली दिशा मे आकाश की रोशनी न्यूनतम होती है (देखिए § १७६)

वन के अन्दर की रोशनी की तुलना बाहर से करिए ('बाहर' का अभिप्राय है वन के हाशिये से कम-से-कम ७ गज़ दूर)।

बीच वृक्ष के वन के भीतर प्रदीप्ति की तुलना करिए—

(क) एप्रिल महीने के मध्य मे, (ख) जब नयी कोंपलें फूट रही हों और (ग) जून महीने के शुरू मे। एक निरीक्षण में वन के बाहर की प्रदीप्ति की तुलना मे भीतर की प्रदीप्ति क्रमशः $\frac{१}{६}$, $\frac{१}{३०}$, तथा $\frac{१}{६४}$ मिली थी।

प्रदीप्ति-तीव्रता उन स्थानों की नापिए जहाँ निम्नलिखित पौदे उगते हैं—

बड़े केले	(Plantago major)	१
इवी	(Hedera helix)	१ से ०.२२ जब इसमें फूल लगते हों १ से ०.०२ ठूंठी टहनियों के समय
हीदर	(Calluna vulgaris)	१ से ०.१०
ब्रैकेन	(Pteridum aquilinum)	अत्यन्त कम, लगभग ०.०२

घने वन के अन्दर पेड़ों के झुरमुट के नीचे प्रकाश की तीव्रता नापिए—यह रोशनी की न्यूनतम मात्रा है जिसमें टहनियों का विकास पाना सम्भव हो सकता है। इक्के दुक्के वृक्ष के तले प्रकाश की तीव्रता निम्नलिखित प्राप्त हुई हैं—लार्च, ०.२०; बर्च, ०.११; चीड़, .१०; सरो, ०.०३; बीच, ०.०१; (वृक्ष के बाहर की प्रकाश-तीव्रता के भिन्नांश में प्रदर्शित)।

अध्याय ६

आँख[1]

प्रकृति के अध्ययन मे अनिवार्यत. मानव इन्द्रियो का अध्ययन भी सम्मिलित करना चाहिए। भूमि के दृश्यो का यथार्थ प्रेक्षण कर पाने के लिए सर्वप्रथम हमे उस यत्र–मानव नेत्र–से भलीभाँति परिचित होना चाहिए जिसे हम इस कार्य के लिए निरन्तर काम में लाते हैं। इस बात की पहचान कर सकना अत्यन्त शिक्षाप्रद है कि प्रकृति वास्तव में क्या प्रदर्शित करती है और हमारी दृष्टिइन्द्रिय उसमे अपनी ओर से क्या योग देती है या उसमें से हटाकर वह क्या निकाल देती है। आँख की विशेषताओं का अध्ययन करने के लिए घर से बाहर के वातावरण से अधिक अनुकूल अन्य कोई वातावरण नही मिल सकता; विशेषतया जबकि प्रकृति ने हमे ऐसे ही वातावरण के लिए समानुयोजित (adapted) किया है।

५७. पानी के अन्दर देखना

क्या आपने कभी पानी के अन्दर आँखो को खुली रखने का प्रयत्न किया है? बस, थोड़ी सी हिम्मत चाहिए, फिर तो ऐसा करना काफ़ी आसान हो जाता है। किन्तु अब तैरनेवाले तालाब में भी, जहाँ पानी अत्यन्त स्वच्छ रहता है, प्रत्येक वस्तु जिसे हम देखते हैं असाधारण रूप से अस्पष्ट और धुधली नज़र आती है। क्योंकि हवा मे तो आँख की बाहरी सतह, कोर्निया ही किरणों को एकत्र करके रेटिना पर बिम्ब का निर्माण करती है; आँख के स्फटिक लेन्स का सहयोग इस क्रिया मे थोडा ही होता है। किन्तु पानी के अन्दर कोर्निया की यह क्रिया बहुत कुछ इस कारण रद्द हो जाती है कि आँख के भीतरवाले द्रव और बाहर के पानी के वर्तनाङ्क लगभग एक दूसरे के बराबर होते हैं, अत: किरणें कोर्निया को घेरनवाली सतह पर बिना मुडे ही सीधी भीतर

१. इस और अगले तीन अध्यायों को पढ़ते समय वांछनीय होगा कि हेल्महोल्ट्ज की हैण्डबुख डेर Physiologische Optik (द्वितीय या अच्छा होगा कि तृतीय संस्करण) देख लें।

चली जाती है (चित्र ७०)। इस बात की जाँच करने का यह एक बढ़िया तरीका है कि यदि अकेले नेत्र के स्फटिक लेन्स द्वारा ही बिम्ब का निर्माण होता तो यह क्या कितनी अपूर्ण होती। इस दशा में आँखों में दूर दृष्टि का दोष इतनी बुरी तरह बढ़ जाता है कि आँख को फोकस करने के सभी प्रयत्न एक तरह से व्यर्थ ठहरते हैं, अतः प्रकाश-पुंज को चाहे किसी भी दूरी पर क्यों न रखें, हर हालत में यह धुवला ही दीखता है।
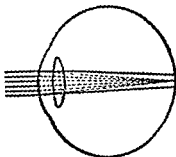
चित्र ७०—जब पानी के अंदर देखते हैं तो आँखों में बिम्ब का निर्माण नहीं होता है।

मोटी रेखाएँ—पानी के अंदर देखते समय प्रकाश-किरणों का पथ।

बिन्दु रेखाएँ—वायु में देखते समय प्रकाश-किरणें।

चीजों को पहचान सकने का एकमात्र तरीका यह रह जाता है कि उन्हें आँख के इतने निकट रखें कि वे आँख पर काफी बड़ा कोण बनायें, अवश्य इस दशा में अनिवार्य रूप से मौजूद बिम्ब का धुंधलापन उतनी बाधा नहीं पहुँचाता।

स्वच्छ पानी के अन्दर फ़ार्दिंग का सिक्का करीब एक हाथ की दूरी (२५ इंच) पर दीखने लगता है, तथा लोहे का पतला तार तो किसी भी फासले पर नहीं दिखलाई देता। इसके प्रतिकूल कोई भी तैरता हुआ व्यक्ति १० गज के फासले पर भी दिखाई दे जाता है, क्योंकि इतने बड़े आकार की वस्तु ध्यान आकृष्ट कर ही लेती है। मोटे तौर पर v लम्बाई की वस्तु अधिक से अधिक $30v$ की दूरी पर से देखी जा सकती है, तथा इसकी शक्ल $5v$ के फासले से पहचानी जा सकती है, किन्तु वास्तविक अर्थों में इसे ठीक-ठीक देख सकना तभी सम्भव है जब इसकी दूरी इसके आकार के लगभग बराबर हो जाय।

पानी के अन्दर निगाह को बाहर की तरह की औसत दृष्टिक्षमता प्रदान करने के लिए हमें बहुत ही अधिक शक्तिवाले चश्मे की आवश्यकता पड़ेगी। लेकिन दुर्भाग्य-वश काँच के चश्मे पानी के अन्दर हवा की तुलना में केवल एक चौथाई ही प्रभाव उत्पन्न कर पाते हैं। और भी बुरी बात तो यह है कि इतनी अधिक शक्ति के लेन्स आँख के निकट चन्द मिलीमीटरों की दूरी पर रखे जाने पर अपना पूरा प्रभाव उत्पन्न नहीं कर पाते हैं! इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक होगा कि शक्ति

१०० का लेन्स इस्तेमाल करें अर्थात् इसका फोकस अन्तर ½ इंच हो ! सूती कपड़े के धागे की जाँच के लिए काम में आनेवाले गणकयन्त्र का लेन्स उपयुक्त होगा।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के अन्दर कोरी आँखों से देखे या फिर लेन्स वाले चश्मे लगाकर, दोनों ही दशाओं मे दूरी का अन्दाज लगाना समानरूप से कठिन होता है। वस्तुएँ अस्पष्ट तथा भूतप्रेतों-जैसी दीखती हैं।

पानी के अन्दर डूबी हुई स्थिति से ऊपर की ओर भी देखना चाहिए। बाहर से आनेवाली प्रकाश-किरणें पानी के अन्दर प्रवेश करते समय ऊर्ध्व दिशा से अधिक से अधिक ४५° का कोण बनाती हैं अत आपके सिर के ऊपर प्रकाश का एक बडा वृत्त दीखेगा, और यदि आप तिरछी दिशा मे देखे तो ऑख से चलनेवाली किरणों का पानी की सतह पर पूर्ण परावर्तन होगा और आपको केवल धुधली रोशनी से प्रकाशित पेंदे की भूमि का ही प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ेगा (चित्र ७१)। मछलियो को हमारी दुनिया बस इसी तरह की दीखती है !

चित्र ७१—एक क्षण के लिए दृश्य को हम उसी प्रकार देखते हैं, जिस प्रकार मछलियाँ !

पानी के भीतर से दिखाई देनेवाले दृश्य का अत्युत्तम आभास प्राप्त करने का एक तरीका यह है कि पानी में सीधे खडे हो जाइए और इस बात की विशेष सावधानी बरतिए कि पानी में हिलोरें न उठने पायें। अब पानी के अन्दर एक दर्पण को तिरछी स्थिति में रखिए। आप देखेंगे कि किस प्रकार पानी के बाहर की सभी चीजें ऊर्ध्व दिशा में दबी हुई जान पड़ती हैं और क्षितिज के जितने ही अधिक निकट होती हैं उतनी ही अधिक वे दबी हुई जान पड़ती हैं, तथा प्रत्येक वस्तु में सुन्दर रंगीन हाशिया नजर आता है।

५८. नेत्र के आन्तरिक भाग कैसे दृष्टिगोचर हो सकते हैं?

एक अभ्यस्त निरीक्षक स्वयं अपनी आँख का पीतविन्दु (रेटिना का केन्द्र, सबसे अधिक सुग्राहक स्थल) देख सकता है, जो एक ऐसे अधिक गहरे रंग के छल्ले से घिरा होता है जिसमें रक्त-वाहिनियाँ मौजूद नहीं होती हैं।[1] सन्ध्या को, बाहर कुछ समय व्यतीत कर लेने के बाद, बादलविहीन, खुले विस्तृत आकाश को ठीक उस क्षण देखिए, जब प्रथम तारे प्रगट हो रहे हों। अपनी आँखें कुछ सेकण्डों के लिए बन्द रखिए और फिर आकाश की ओर मुँह करते हुए उन्हें फुर्ती के साथ खोलिए। सबसे पहले, अन्धकार दृष्टिक्षेत्र की परिधि पर विलुप्त होगा और फिर तेजी के साथ यह केन्द्र की ओर सिकुड़ेगा जहाँ पीतविन्दु, गहरे रंग के हाशिये सहित दिखाई भर दे जाता है और कभी-कभी एक लमहे के लिए इससे चमक भी फूट निकलती है।

यदि एक ऊँचे कटघरे के बगल में आप चले और उस पर तेज सूर्य की रोशनी पड़ रही हो, तो सूर्य की रोशनी प्रति सेकण्ड कई बार आपकी आँखों में चमक के रूप में पहुँचेगी। यदि आप ठीक सामने की ओर देखते रहें और सूर्य की ओर दृष्टि न डालें तो आप यह देखकर आश्चर्यचकित होंगे कि प्रत्येक चमक के साथ काली पृष्ठभूमि पर चमकीले अनियमित धब्बों, जालीदार नमूनों और हाशिये की लकीरों की अस्पष्ट शक्लें प्रगट होती हैं।[2] सम्भव है कि ये रेटिना के कतिपय भाग हों जो इस असामान्य तरीके की प्रकाश-व्यवस्था में दिखाई पड़ जाते हैं।

५८ क. रात्रि की निकट-दृष्टि

सन्ध्या के धुंधलके में अक्सर चलने-फिरने वाले व्यक्ति ने देखा होगा कि प्रकाश ज्यों-ज्यों कम होता जाता है त्यों-त्यों उसकी आँख अधिक निकट दृष्टा होती जाती है। आप अपनी आँखों की संविधान शक्ति की तबदीली आसानी से नाप सकते हैं। मान लीजिए कि सामान्य परिस्थितियों में कदाचित् चश्मे की सहायता से दूर की वस्तुओं को बहुत ही स्पष्ट आप देख सकते हैं जबकि आँखें पूर्ण रूप से विश्रान्त होती हैं। अब यदि सन्ध्या के धुंधलके में आप केवल १ मीटर दूरी की वस्तुएँ देख सकते हैं तो आपकी निकट दृष्टि १ डायप्टरी की है, यदि २ मीटर तक देख सकते हैं तो निकट दृष्टि ½ डायप्टरी

१. हेल्महोल्ट्ज कृत Physiologische Optik

२. यह प्रेक्षण सम्भवतः धब्बों की धूप-छाँह आकृति से मेल खाता है (हेल्महोल्ट्ज Physiologische Optik)।

की होगी। औसत प्रेक्षक के लिए रात्रि की निकट दृष्टि 0.6 D की होती है, किन्तु अनेक दशाओं में यह 2D तक पहुंच जाती है।

इस घटना की व्याख्या भिन्न-भिन्न प्रकार से की गयी है—

(१) प्रदीप्ति जब घटती है तो आंख की पुतली फैल जाती है और नेत्र-लेन्स के हाशिये वाले भाग प्रतिबिम्ब-निर्माण में अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं और केन्द्रीय भागों की अपेक्षा ये अधिक मात्रा में निकट-दृष्टि उत्पन्न करते हैं। दूसरे शब्दों में घटना का कारण नेत्र का गोलीय विपथन है।

(२) दिन के समय हमारी आंखें पीली किरणों के लिए सबसे अधिक सवेदी होती हैं जबकि सन्ध्या के धुधलके में महत्तम सवेदिता हरे-नीले प्रकाश की ओर हट जाती है (§७६)। किन्तु आंख किसी भी साधारण लेन्स की भाँति पीली किरणों की अपेक्षा हरी-नीली किरणों का अधिक मात्रा में वर्त्तन करती है। अत. हरे-नीले प्रकाश के लिए हमारी निकट दृष्टि करीब 0.5 D अधिक होती है। अत रात्रि की निकट दृष्टि आंख के वर्णविपथन दोष के कारण होती है। उन दशाओं के लिए जिसमें एक या दो डायप्टरी तक की निकट दृष्टि के लिए कारण ज्ञात करना है, हमे किसी अन्य व्याख्या की तलाश करनी होगी।

५८ ख. अन्धविन्दु

नेत्र-रेटिना के बारे मे एक और महत्त्वपूर्ण बात उसका 'अन्धबिन्दु' है जहाँ चाक्षुप-शिरा नेत्र में प्रविष्ट होती है—इस बिन्दु पर प्रकाश-सवेदी कोष नहीं पाये जाते। यह स्थल पीतबिन्दु से नाक की ओर लगभग १५° की दूरी पर स्थित होता है। अतः दृष्टिरेखा से १५° की दिशा में बायीं ओर हटी हुई वस्तु हमारी बायीं आँख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी और उतनी ही दाहिनी ओर हटी हुई वस्तु दायीं आँख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी। तारों का अवलोकन करते समय यह बात भलीभाँति देखी जा सकती है।

उस वक्त तक प्रतीक्षा करिए जब तक कि सप्तर्षि मण्डल के तारे δ तथा η एक-सी ही ऊँचाई पर न आ जायें। भारत में ऐसा जनवरी-फरवरी की सन्ध्या को होगा। यदि दाहिनी आँख की दृष्टि आप मन्द रोशनी के नक्षत्र δ पर गड़ाएँ तो आप देखेंगे कि चमकीला तारा η विलुप्त हो जाता है! (देखिए चित्र ६१; 3.6 तथा 2.2 श्रेणी सख्या के तारे) इसके लिए आवश्यक हो सकता है कि आप को अपना सिर थोड़ा दाहिने या बायें झुकाना पड़े। अन्य उदाहरण आसानी से मिल सकते हैं; जैसे सप्तर्षि

मण्डल के नक्षत्र α तथा ϵ, मृगशिरा के β तथा γ; तथा अभिजित और γ कालिय (ड्रैकोनिस) आदि।

सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह है कि सामान्यत. दृष्टिक्षेत्र के इस 'छिद्र' का हमें भान भी नही होता; कारण यह है कि हमारी आँखें एक बिन्दु से दूसरे बिंदु पर फुदकती रहती हैं और फिर हमारे पास दो आँखें होती हैं!

५९. आँख द्वारा बनने वाले अपूर्ण बिम्ब

तारे हमें पूर्ण बिन्दु सरीखे नही दिखाई देते, बल्कि टेढ़ी-मेढ़ी अनियमित शक्ल के ये दीखते हैं, अक्सर एक प्रकाशबिन्दु की भाँति जिससे किरणें चारों ओर निकल रही हों। आम तौर पर तारे को प्रदर्शित करने के लिए प्रकाबिन्दु से पाँच किरणें निकलती हुई दिखायी जाती हैं, जो वास्तविकता के अनुकूल नही है। इस प्रयोग के लिए सबसे चमकीला तारा चुनिए, जैसे लुब्धक या और भी अच्छा होगा यदि शुक्र या बृहस्पति ग्रह को लें क्योंकि इनके बिम्ब की चकरी इतनी छोटी होती है कि उसे हम बिन्दु मान सकते हैं और फिर इनकी द्युति सबसे अधिक चमकीले तारे से भी अधिक होती है।

सिर एकतरफ़ हटाइए, पहले दाहिनी ओर, फिर बायीं ओर; अब इसी के अनुसार बिम्ब भी एक ओर, फिर दूसरी ओर खिंच उठता है। यह प्रभाव विभिन्न व्यक्तियों के लिए विभिन्न मात्रा में उत्पन्न होता है तथा उसकी प्रत्येक आँख के लिए भी यह भिन्न होता है। लेकिन एक आँख को हाथ से बन्द करके आप दूसरी आँख से यदि विभिन्न तारों को देखें तो आप को सदैव एक सी ही शक्ल दिखाई देगी।

इससे यह सिद्ध होता है कि स्वयं तारे टेढ़ी-मेढ़ी शक्ल के नहीं हैं बल्कि यह तो हमारी आँखों का दोष है जो बिन्दु को ठीक बिन्दु के रूप में निरूपित नही कर पाती।

किरणें उस वक्त और भी लम्बी और बेतरतीब हो जाती हैं जबकि आँख के गिर्द वातावरण अन्धकारमय हो, और इस कारण आँख की पुतली फैली हुई हो। पर्याप्त प्रकाश के वातावरण में, जब कि पुतली सिकुड़ कर एक छोटे सूराख की शक्ल अख्तियार कर लेती है, ये किरणें लम्बाई में छोटी हो जाती हैं। वास्तव में गुल्स्ट्रैण्ड ने यह सिद्ध किया है कि आँख का स्फटिक लेन्स उन सिराओं के कारण जिनसे यह जुड़ा होता है, हाशिये पर ही आम तौर पर विकृत हो जाता है, अतः प्रकाशकिरणें जब हाशिये वाले भाग में से गुजरती हैं तो बिम्ब की स्पष्टता कम हो जाती है।

कागज का तख्ता लेकर उसमें १ मिलीमीटर व्यास का सूराख करिए, और तख्ते को आँख की पुतली के सामने रखिए। थोड़ी तलाश करने पर लुब्धक तारा या कोई ग्रह

अवश्य आप को आकाश में मिल जायगा। कागज के पीछे से उसे देखने पर आप पायेंगे कि प्रतिबिम्ब पूर्णतया गोल है। अब सूराख को पुतली के हाशिये की तरफ़ हटाइए तो बिम्ब का प्रकाशबिन्दु अनियमित रूप से विकृत हो जाता है। अपने प्रयोग में मैंने पाया कि प्रकाशबिन्दु पुतली की त्रिज्या की दिशा में एक लकीर की शक्ल में खिंच उठता है।

चित्र ७२—निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को बिना चश्मे के, तारा या दूर का लैम्प इस प्रकार दीखता है।

अनेक व्यक्तियों को हँसिया के आकार वाले चन्द्रमा की कोरें दुहरी तिहरी दिखाई देती हैं। प्रतिबिम्ब में अस्पष्टता के ये दोष मुख्यत. कोर्निया की सतह की क्षुद्र विकृतियों के कारण उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार के आकृति-दोष निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को भी चश्मा उतार देने पर दिखाई देते हैं (चित्र ७२); दूर का प्रत्यक्ष लैम्प प्रकाश की चकरी जैसा दीखता है जिसमें दीप्ति का वितरण अत्यन्त ही असम होता है। यदि पानी बरस रहा हो तो आपको रह रह कर नन्हीं प्रकाश चकरी पर अचानक एक छोटा गोल गोल धब्बा दीख जायगा, कारण यह है कि कोर्निया की सतह का कुछ भाग पानी की बूँद से ढक जाता है (चित्र ७३)। आप देखेंगे कि पूरे १०
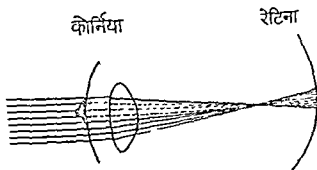
चित्र ७३—निकट-दृष्टि वाली आँख बिना चश्मे के दूर के लैंप को छोटे अनियमित मंडलकों के रूप में देखती है। कोर्निया पर स्थित वर्षा की बूँद एक काले धब्बे की शक्ल में निरूपित होती है।

सेकण्ड तक यह धब्बा अपनी शक्ल बनाये रख सकता है बशर्ते इतनी देर तक आप बिना पलक झपकाये देखते रह सकें!

बहुत दूर की मोटरकार-लैम्प की चकाचौंध उत्पन्न करने वाली रोशनी जब आँखों पर पड़ती हैं तो उस तीव्र प्रकाशविन्दु के गिर्द, समूचा दृष्टिक्षेत्र धुंधले प्रकाश से भर जाता है जिसमें धारियाँ सी पड़ी होती हैं या कभी-कभी त्रिज्याओं की दिशा में धारियाँ प्रगट होती हैं। बिम्ब की यह सरचना, आँख की आकृति के अनेक दोषों के कारण होने वाले विवर्तन या वर्तन से उत्पन्न होती है। लम्बी सकरी नली की शक्ल के सोडियम लैम्प भी प्रकाश-स्रोत के गिर्द धुंधले प्रकाश की चमक देते हैं, किन्तु इस चमक में बारीक रेखाएँ दीखती हैं जो प्रकाश-स्रोत के ठीक समानान्तर स्थित होती हैं, क्योंकि विवर्तन उत्पन्न करने वाली प्रत्येक कणिका बिन्दु के बजाय प्रकाशरेखा का निर्माण करती है।

६०. किरणों के समूह जो तेज चमक वाले प्रकाश-स्रोत से विसर्जित होते जान पड़ते हैं

दूर के लैम्प से अक्सर लम्बी सीधी किरणें हमारी आँखो की ओर आती हुई जान पड़ती हैं, विशेषतया उस वक्त जबकि हम उन्हें अधखुली आँखों से देखते हैं। प्रत्येक पलक के हाशिये के किनारे पर अश्रु द्रव एक नन्हे लवचन्द्रक[1] का निर्माण करता है जिससे प्रकाश की किरणों का वर्तन हो जाता है।[2] चित्र ७४ a में दिखलाया गया है ऊपर की पलक से किरणें इस प्रकार से वर्तित होती हैं कि वे नीचे की ओर से आती हुई प्रतीत होती हैं; अतः प्रकाश-स्रोत में नीचे की ओर पूंछ सी लगी दीखती है। इसी प्रकार नीचे की पलक के कारण प्रकाश-स्रोत में ऊपर की ओर पूंछ बन जाती है। इन पूंछों के निर्माण की क्रिया इस प्रकार भलीभाँति समझी जा सकती है; एक पलक को दबाकर बन्द कर लीजिए और दूसरी को धीरे-धीरे बन्द करिए, या आँख को अधखुली रख कर सिर को ऊपर-नीचे डुलाइए। किरणें ठीक उस क्षण प्रगट होती हैं जब पलक पुतली को ढकना शुरू करती है। निकट-दृष्टि वाले प्रेक्षक को यह घटना आसानी से दीख जाती है क्योंकि प्रकाश-स्रोत जो उसे एक फैली हुई चकरी की शक्ल का दीखता है, आंशिक रूप से उस क्षण छिप जाता है।

ये किरणें पूर्णतया समानान्तर नहीं होतीं, एक आँख तक पहुँचने वाली किरणें भी पूर्णतया समानान्तर नहीं होतीं। सामने स्थित प्रकाश-स्रोत को देखिए और फिर अपने सिर को दाहिनी ओर थोड़ा घुमा लीजिए और तब अपनी आँख इस तरह वापस

1. Meniscus 2. H. Meyer, Pogg Ann, 89, 429, 1853

घुमाइए कि प्रकाश-स्रोत आप को पुनः दीख जाय। किरणें अब तिरछी दीखेंगी (चित्र ७४, b)। प्रगटतः इसका कारण यह है कि पलक के हाशिये जो इस वक्त पुतली के सामने हैं, अब क्षैतिज नहीं रहे और किरणों का प्रत्येक समूह, उसे उत्पन्न करने वाली पलक के हाशिये के समकोण ही पड़ता है, प्रेक्षण मे प्राप्त दिशा ठीक इस व्याख्या के अनुसार ही मिलती है। अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यों जब हम सीधे सामने की ओर देखते हैं तो किरणें समानान्तर नहीं होती हैं, क्योंकि केवल पुतली की चौड़ाई के विस्तार में भी पलक की वक्रता का बोध हमें हो जाता है। अपनी उंगली पुतली के दाहिने छोर के सामने रखिए तो समूह की बाये तरफ की किरणें विलुप्त हो जाती हैं, ठीक जैसा कि उन्हें करना चाहिए था।

लम्बी पूंछ सरीखी किरणों के अलावा (चित्र ७४,c) अत्यन्त चमकीली, कुछ छोटी किरणें भी दीखती हैं जो पलकों के किनारे से होनेवाले परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं (चित्र ७४, d)। प्रयोग द्वारा इस बात का इतमीनान करिए कि इस
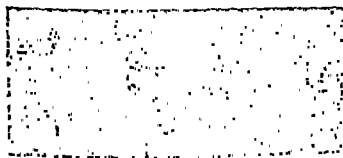
चित्र ७४, a–d—दूरस्थ लैंप के गिर्द प्रकाशकिरणें किस प्रकार उत्पन्न होती हैं।

बार ऊपर की ओर की नन्ही पूंछ ऊपरी पलक द्वारा उत्पन्न होती है तथा नीचे की पूंछ नीचेवाली पलक द्वारा। साधारणतया इन परावर्तित किरणों मे विवर्तन के आड़े नमूने प्रगट होते हैं।

६१. चश्मे के कांच से उत्पन्न प्रकाशीय घटनाएँ

चश्मे के मामूली लेन्स मे से तिरछी दिशा मे देखने पर रेखाएँ विकृत हो जाती हैं। लेन्स जब अवतल होते हैं तो हमें 'बैरल-विकृति' मिलती है और उत्तल लेन्स द्वारा

'पिनकुशन' विकृति पैदा होती है (चित्र ७५)। भूमि के दृश्य में जब यह मालूम करना हो कि दिखाई देने वाली रेखा पूर्णतया सीधी है, या ऊर्ध्वतल में है तो प्रतिबिम्ब की यह विकृति विशेष रूप से परेशानी उत्पन्न करती है। दृष्टिक्षेत्र के हाशियों पर प्रतिबिम्ब की अबिन्दुकता[1] इतने अधिक परिमाण में उत्पन्न होती है कि बिम्ब की हर किस्म की बारीकियाँ मिट-सी जाती हैं। प्रतिबिम्ब के निर्माण के ये दोष लेन्स के अधिक अवतल या अधिक उत्तल होने के अनुसार विशेष अधिक मात्रा में उभरते हैं। नवचन्द्राकार लेन्सों के लिए ये दोष अपेक्षाकृत हल्की मात्रा में प्रगट होते हैं।

चित्र ७५—चश्मे के लेन्स द्वारा बिम्बों का निर्माण।

सन्ध्या होने पर प्रज्वलित लैम्प को चश्मे में से देखें तो लैम्प के आस-पास ही एक प्रकाश-चकरी उतराती हुई-सी दीख पड़ती है। यह विशेष स्पष्ट नहीं होती, किन्तु इसे यदि घूर कर देखते रहें तो आँख की संविधान क्षमता[2] अपने आप बदल जाती है और
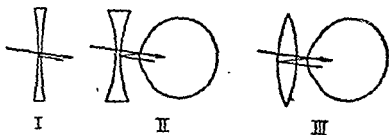
चित्र ७६—चश्मे से देखने पर दुहरे प्रतिबिम्ब किस प्रकार बनते हैं।
I कम शक्ति का लेन्स।
II अवतल लेन्स, जिनकी लेन्स शक्ति —५ से अधिक है।
III उत्तल लेन्स, जिनकी शक्ति +३ से अधिक है।

चकरी या तो हमें बड़ी होती हुई दिखाई पड़ती है या फिर आकार में घटती हुई। आँखों से चश्मा उतार कर यदि उसे आँख से कुछ फासले पर रखें तो यह चकरी एक प्रकाश

1. Astigmatism 2. Accomodation

बिन्दु की शक्ल की दीखने लगती है जो स्पष्टत स्वयं उस लैम्प का उल्टा छोटे आकार का प्रतिबिम्ब है। यदि तीन लैम्पों के एक समूह को देखें तो पता चलेगा कि प्रतिबिम्ब सीधा बनता है। यह निम्नलिखित से स्पष्ट है—प्रकाश की चकती लेन्स की सतहों या आँख की कोर्निया की सतहों पर होने वाले दो बार के परावर्तन के फलस्वरूप निर्मित होती है। वास्तव मे तीन चकतियाँ नजर आनी चाहिए, किन्तु ये तभी दिखाई दे सकती है जबकि ये बहुत अधिक अस्पष्ट न हो। व्यवहार मे, दिये गये चश्मे के लिए केवल एक ही प्रकार का दुहरा परावर्तन घटित होता है (चित्र ७६)।

बिना फ्रेम वाले चश्मे के लेन्स जिनके हाशिये सम बना लिये गये हों कभी-कभी किनारों पर सँकरा वर्णक्रम प्रदर्शित करते हैं (चित्र ७७) जो दूर के लैम्प के प्रकाश के कारण उत्पन्न होते हैं। चश्मे के लेन्स पर वर्षा की बूँद के प्रभाव के लिए देखिए §११८।

चित्र ७७—चश्मे के लेन्स द्वारा स्पेक्ट्रम किस प्रकार बनता है।

६२. दृष्टि की सूक्ष्मता

सामान्य आँखों के लिए सप्तर्षि-मण्डल के तारे वशिष्ठ और अरुन्धती को, जो लगभग १२′ के कोणीय अन्तर पर हैं, पहचानने में तनिक भी कठिनाई नहीं होती (चित्र ६१, ७८ क)। अब प्रश्न यह है दृष्टि की यह सूक्ष्मता और अधिक कितनी
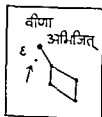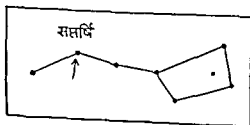
चित्र ७८ क—दूर-दूर स्थित कुछ युग्म तारे।

बारीकी तक हमें ले जा सकती है? तीक्ष्ण निगाह वाले व्यक्ति इससे आधी कोणीय दूरी पर स्थित दो बिन्दुओं को अलग-अलग पहचान सकते हैं जैसी कि युग्म नक्षत्र अल्फ़ा कैप्रिकार्नि (मकर तारा समूह) के दोनों तारे के बीच की दूरी है; यह कोणीय दूरी ६′ है तथा तारों के श्रेणी सूचक अंक क्रमशः ३.८ तथा ४.५ हैं।

विरले ही व्यक्ति ४' या ३' मिनट के कोणीय अन्तर वाले दो विन्दुओं को एक दूसरे से पृथक् देख सकते हैं।
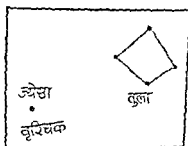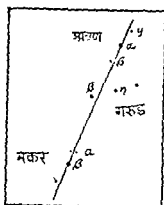
चित्र ७८ ख—कुछ अन्य युग्म तारे।

अल्फ़ा लिब्रा (तुला) के सदस्य नक्षत्रों का कोणीय अन्तर ४' है तथा उनके श्रेणी सूचक अंक क्रमशः २.८ तथा ५.३ हैं।

ε लीरा (वीणा) के सदस्य नक्षत्रों का कोणीय अन्तर ३' तथा श्रेणी-सूचक अंक क्रमशः ५.३, तथा ६.३ हैं।

विशेष निपुण प्रेक्षक, जिनकी संख्या बहुत कम ही है, खुले आकाश में जब कि वायुमण्डल शान्त रहता है, आश्चर्यजनक रूप से अधिक सूक्ष्म बारीकियों को देख सकने में समर्थ होते हैं। इनमें से एक का दावा है कि नंगी आँखों से वह तुला राशि के अल्फ़ा तारे को एक युग्म तारे के रूप में देख पाता है (दोनों तारों का कोणीय अन्तर ४')। ऐसे प्रेक्षक के लिए शनि स्पष्ट रूप से चिपटा दीखता है तथा शुक्र उपयुक्त अवसरों पर नव-चन्द्राकार दीखता है बशर्ते वह कालिख लगे काँच में से उसे देखे या सही परिमाण की पारदर्शिता वाले धुएँ के बादल में से। वह बृहस्पति के दो उपग्रहों को भी देखने में समर्थ होता है, यद्यपि केवल शाम के झुटपुटे के ही वक्त, जबकि प्रथम और द्वितीय श्रेणी के तारे प्रगट होना आरम्भ करते हैं।

सन्ध्या के झुटपुटे की वेला अन्य प्रेक्षणों के लिए भी उत्तम ठहरती है। उदाहरण के लिए उस क्षण चन्द्रमा के धरातल की विशेषताएँ रात की बनिस्बत बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं, क्योंकि तब आँखों को उतनी चकाचौंध का सामना नहीं करना पड़ता है।

अवश्य यह एक दिलचस्प प्रयत्न होगा कि अमावस्या के बाद यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र पतले नाखूनी शक्ल के चन्द्रमा का अवलोकन करें। कुछ प्रेक्षकों ने तो अमावस्या के बाद केवल ११ घण्टों के अन्दर-अन्दर चन्द्रमा को देख लिया है। अवश्य इसके लिए यह अत्यन्त जरूरी है कि हमें पता हो कि चन्द्रमा के अवलोकन के लिए हमें देखना किधर है। हमारे अपने देश (हालैण्ड) में इस अवसर पर सूर्य्य को क्षितिज से कम से कम ८° नीचे अवश्य होना चाहिए। आँख की परिमित विभेदनशक्ति से यह समझा जा सकता है कि दूर हटती हुई वस्तु का दृश्य रूप उत्तरोत्तर बदलता क्यों जाता है। ५० मीटर की दूरी पर वृक्ष की पत्तियों की शक्ल अब पहचानी नहीं जा सकती, यद्यपि आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास के कारण ये स्पष्ट अवश्य उभरती हैं; वृक्ष की चोटी का हाशिया धुंधला दीखता है। किन्तु १० किलोमीटर की दूरी पर जगल की ऊपरी सीमा-रेखा उतनी ही तीक्ष्ण दीखती है जितनी एक पथरीली पहाड़ी की सीमा-रेखा। वायुमण्डल के कारण उत्पन्न धुंधलेपन के कारण विपर्यास कुछ मन्द पड़ जाता है, किन्तु सीमारेखा स्पष्ट बनी रहती है।

फासले से एक व्यक्ति आप की ओर चला आ रहा है। पहले उसका चेहरा आप को एक 'सफेद धब्बे' की शक्ल का दीखता है यद्यपि चेहरे के मन्द प्रकाशवाले पृथक ब्योरे अभी तक दृष्टिगोचर नहीं हो पाते हैं। तदुपरान्त आप आँखें और मुँह को पहचान पाते हैं किन्तु न होंठ न भौंहें आप देख पाते हैं, यद्यपि आप को आभास मिल जाता है कि चेहरे पर तीन मन्दप्रकाश के धब्बों के अतिरिक्त और कुछ भी मौजूद है। क्षण भर बाद ही आप पहचानने लग जाते हैं कि यह व्यक्ति शक्ल में आप के मित्र से मिलता-जुलता है—और फिर आप को निश्चित रूप से इतमीनान हो जाता है कि यह आप का मित्र ही है।

अत दूर की वस्तु के प्रतिबिम्ब तथा निकट की वस्तु के प्रतिबिम्ब एक घटाये गये पैमाने पर दोनों अनन्य रूप नहीं होते। दूरस्थ वस्तु के प्रतिबिम्ब में एक विशिष्ट और रोचक ढंग की तब्दीली आ जाती है। बिम्ब में सर्वत्र ऐसे ब्योरे मौजूद रहते हैं जिन्हें आँख देख पा सकने में बस असमर्थ भर रह जाती है, किन्तु उनका अनुमान लगा लेती है और जो उस वस्तु की संरचना बतलाते हैं।

६३. दृष्टिक्षेत्र के केन्द्रीय, तथा परिधिवाले भागों की सुग्राहिता

न्यूनतम प्रकाश वाले कौन से तारे ऐसे हैं जो आप की दृष्टि की पकड़ में आ पाते हैं? सप्तर्षि-मण्डल की वर्ग आकृति को देखिए और फिर हमारे चित्र ६१ से उनकी तुलना करिए। अधिकांश लोग छठी दीप्ति श्रेणी तक के सितारे देख पाते हैं और कुछ

लोग सातवी श्रेणी तक के तारे भी देख सकते हैं। ये सभी प्रेक्षण शहर से बाहर खुले आकाश में किये जाने चाहिए।

अब हम यह मालूम करने का प्रयत्न करेंगे कि यदि हम तारों की ओर बिलकुल सीधे, दृष्टि जमा कर देखे तो उनमें से कौन-से तारे दृष्टिगोचर बने रह जाते हैं। तारे पर से निगाह को इधर-उधर बहकने न देकर दृष्टि को ठीक उस पर सीधे ही जमाये रखने के लिए कुछ थोड़ी इच्छा-शक्ति की जरूरत होती है। आप को यह देख कर आश्चर्य्य होगा कि मन्द प्रकाश का प्रत्येक तारा ज्योंही उसे आप ध्यान से घूरते हैं, विलुप्त हो जाता है और वहाँ से नजर के जरा-सा इधर-उधर हटते ही वह तारा पुनः प्रगट हो जाता है! व्यक्तिगत रूप से मेरी आँखो के लिए तो चतुर्थ श्रेणी के तारे भी इस प्रयोग मे विलुप्त हो जाते हैं जबकि तृतीय श्रेणी तक के तारे दीखते रहते हैं, (देखिए चित्र ६१, ६२)।

अतः पीत बिन्दु के लिए, तथा उसके गिर्द के रेटिना के लिए प्रकाश-अनुभूति की न्यूनतम सीमाओ मे करीब-करीब ३ दीप्तिश्रेणी इकाइयों का अन्तर है, जिसका अर्थ है कि इन सीमाओं के लिए प्रकाश-तीव्रताओं की निष्पत्ति १६ होगी! प्रकाशिक सुग्राहिता का यह अन्तर इस कारण उत्पन्न होता है कि पीत बिन्दु का केन्द्रीय भाग लगभग पूरे का पूरा, नन्हे शुकओं के आकार की क्षुद्र कोषिकाओं से बना होता है जबकि हाशिये के निकट की रेटिना की सतह नन्हें दण्डाकार कोषों से बनी होती है जोकि अपेक्षाकृत बहुत अधिक सूक्ष्मग्राही होते हैं। अनुभव-प्राप्त प्रेक्षक भी इस प्रभाव की मात्रा देखकर आश्चर्य्यचकित रह जाता है—क्योकि वास्तव में हम इस बात के अत्यन्त अभ्यस्त हो गये हैं कि नक्षत्र का अवलोकन और अच्छी तरह करने के लिए हम अनजाने ही अपनी दृष्टि को उसके इधर-उधर बहक जाने देते हैं।[1]

भलीभाँति प्रकाशित कमरे में कुछ देर ठहरने के उपरान्त जब बाहर रात के अंधेरे में हम जाते हैं तो हलकी प्रदीप्ति के स्तर के प्रति अपने को समुपयोजित करने में आँख को कुछ देर लगती है। पहले पुतलियाँ फैलती हैं, एक मिनट उपरान्त यह क्रिया समाप्त हो जाती है और अब इसके बाद से हम तृतीय तथा चतुर्थ कोटि के तारे देखने लग जाते हैं बशर्ते हम उन पर आँख गड़ाये रखें—यह सीमा अब और आगे नही बढ़ पाती किन्तु अप्रत्यक्ष दृष्टिक्षेत्र में धीरे-धीरे और अधिक मन्द प्रकाश वाले तारे दृष्टिगोचर

[1] एडगर ऐलन पो ने लिखा है कि 'यदि दृष्टि गड़ा कर देखते रहें तो शुक्रग्रह तक दृष्टि से ओझल हो जाता है' (The Murders is the Rue Morque), किन्तु यह सत्य नहीं हो सकता।

होने लग जाते हैं और आध घण्टे उपरान्त इस अनुभूति की सीमा आन पहुँचती है। प्रकाश्यतः चक्षु अन्धकार के प्रति अपना समुपयोजन कर लेते हैं।*

इस बात का पता लगाना महत्त्वपूर्ण होगा कि तड़के सुबह को किसी तारे या ग्रह (जैसे शुक्र) को कब तक देखा जा सकता है। आकाश का प्रकाश ज्यों-ज्यों बढ़ता है त्यों-त्यों उस प्रकाश-बिन्दु को पहचान पाना और कठिन होता जाता है—एक अद्भुत बात यह होती है कि अक्सर वह तारा दृष्टि से ओझल हो जाता है केवल इस कारण कि हम सही दिशा में देख ही नहीं रहे हैं, यद्यपि पुन: दृष्टि की पकड़ में आ जाने पर वह स्पष्ट रूप से दिखलाई देने लग जाता है। नीले आकाश में चहचहाती हुई नन्हीं चिड़िया लवा को देखने के प्रयत्न में भी इसी तरह का अनुभव होता है।

यदि प्रेक्षण सावधानीपूर्वक किया जाय तो शुक्र का अवलोकन पूरी तरह दिन निकल आने तक किया जा सकता है और फिर सारे दिन इसे हम देखते रह सकते हैं। कभी-कभी बृहस्पति के लिए भी ऐसा ही किया जा सकता है किन्तु इसमें कठिनाई अपेक्षाकृत बहुत अधिक है—विरले ही मौक़ों पर क्षितिज से ऊपर सूर्य के १०° की ऊँचाई तक पहुँचने के समय तक बृहस्पति को देखते रहना सम्भव हो सका है। मङ्गल को उस वक्त देख सकते हैं जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो।

ये प्रेक्षण विशेषतया उस वक्त किये जाने चाहिए जब ग्रह चन्द्रमा के निकट हो; विस्तृत नीले आकाश में तब चन्द्रमा की स्थिति की सहायता से धुँधले प्रकाशबिन्दु वाले उस ग्रह को अनन्त आकाश में सहज ही ढूँढ़ा जा सकता है। क्या ये प्रेक्षण तारों के प्रयोग से प्राप्त उस निष्कर्ष के खिलाफ़ नहीं जाते जिसके अनुसार हमने देखा कि नेत्र के पीत बिन्दु की दृष्टि-सुग्राहिता अपेक्षाकृत कम है? ऐसा कदापि नहीं है, क्योंकि दण्डाकार कोष केवल अत्यन्त धुँधले प्रकाश में ही क्रियाशील होते हैं तथा दिन के प्रकाश में ये निष्क्रिय बने रहते हैं। दिन के समय पीत बिन्दु वाला नन्हा-सा भाग अत्यन्त सुग्राही होता है, जबकि रात्रि में आँख की पुतली के हाशिये वाले भाग सुग्राही बन जाते हैं।

६४. फेश्नर का प्रयोग

किसी दिन जबकि आकाश पर धुँधले, हलके किस्म के बादल छाये हों, हम अपने प्रयोग के लिए एक ऐसा बादल चुनते हैं जो आकाश की पृष्ठभूमि पर बस दीख भर

* G. Pat foort, Annals d' Optique Oculaire 2,39, 1953. विसारित क्षेत्रों की दृष्टि-अनुभूति की क्रियाविधि भिन्न होती है।

रहा हो। कालिख लगी हुई काँच की प्लेट या समरूप से धुँधली पड़ गयी हुई फोटोग्राफी की प्लेट, अपनी आँखों के सामने रखिए, आप देखेंगे कि वही छोटा बादल अब भी अलग से पहचाना जा सकता है।

इस प्रयोग से फेश्नर ने यह निष्कर्ष निकाला कि आँख दो प्रदीप्तियों की पृथक्-पृथक् पहचान कर सकती है यदि उनका अनुपात (प्रदीप्ति का अन्तर नहीं) एक निश्चित तथा स्थिर मान का हो (एक प्रदीप्ति दूसरी से लगभग ५ प्रतिशत ऊंची हो)।

अत्यन्त गहरे काले रंग का काँच लेकर इस प्रयोग को दुहराइए। इस बार बादल नहीं दीखेगा और प्रकाश के सभी हलके शेड नजर से गायब हो जाते हैं। इससे पता चलता है कि प्रदीप्ति का वह भिन्नांश जो केवल दिखाई भर देता था, पूर्णतया स्थिर नहीं है।

फेश्नर के प्रयोग से मिलता-जुलता दृष्टान्त है तारों का दिन के समय विलुप्त होना। प्रदीप्ति के विचार से तारा की और उसके आसपास की चमक का अन्तर तो सदैव एक सा ही रहता है किन्तु उनका अनुपात दिन के समय रात की अपेक्षा बहुत अधिक भिन्न होता है। नियमानुसार हम कह सकते हैं कि नेत्रों की दृष्टि-अनुभूति मुख्यतः प्रदीप्ति-अनुपात द्वारा निर्धारित होती है। दृष्टि-इन्द्रिय की यह विशिष्टता हमारे दैनिक जीवन के लिए अत्यधिक महत्त्व रखती है। इसी की बदौलत प्रकाश की विभिन्न दशाओं में भी आस-पास की चीजों को उनकी सुनिश्चित शक्ल में पहचाना जा सकता है।

६५. चन्द्रमा के प्रकाश में भूमि के दृश्य

यदि फेश्नर का नियम पूर्णरूप से लागू होता समझा जाय और यह मान लें कि आँखें केवल प्रकाश-तीव्रता की निष्पत्तियों की ही अनुभूति कर पाती हैं तो चाँदनी में दीखने वाले भूमि के दृश्य सूर्य के प्रकाश में दीखने वाले दृश्य से किसी भी माने में भिन्न न होने चाहिए क्योंकि चाँदनी में यद्यपि सर्वत्र प्रकाश-तीव्रता हजारों गुनी कम होती है, फिर भी सभी वस्तुएँ करीब-करीब उसी शक्ल और उसी स्थिति के प्रकाश-स्रोत द्वारा ठीक दिन के ही तौर-तरीके से प्रकाशित हो रही होती हैं।

इससे स्पष्ट है कि जब प्रदीप्ति अत्यन्त क्षीण होती है तो अब इस दशा में फेश्नर का नियम लागू नहीं हो पाता। चन्द्रमा के प्रकाश में भूमि के दृश्य का अवलोकन करिए और विशेष रूप से इस बात पर ध्यान दीजिए कि दिन की तुलना में प्रदीप्ति का वितरण कितना भिन्न है! मुख्य विशेषता यह है कि वे सभी भाग, जिन पर चन्द्रमा की रोशनी

पूरी तरह नहीं पड़ रही है, करीव-करीव समान रूप से अन्धकार में होते हैं, जबकि दिन के प्रकाश में ऐसे भागों पर विभिन्न कोटि की प्रदीप्तियाँ देखी जा सकती हैं। इससे यह बात समझ में आती है कि दिन के प्रकाश में भूमि के दृश्य का फोटो उतारते समय यदि प्लेट पर प्रकाशदर्शन कम समय तक ही देकर उस निगेटिव से फोटोप्रिन्ट गाढा छाप का तैय्यार करे, तो प्रतीत होता है मानो दृश्य का फोटो चांदनी रात में उतारा गया हो। इसी प्रकार रात्रि के दृश्य उपस्थित करने के लिए, चित्रकार दृश्य की लगभग सभी वस्तुओं को समान रूप के गाढ़े शेड में दिखलाते हैं अतः शेड के विपर्यास में अन्तर हलका होने के कारण अनजाने ही हमें ऐसा प्रतीत होता है कि दृश्य पर अत्यन्त हलका प्रकाश पड़ रहा है।

६६. सूर्य के तेज प्रकाश में भूमि के दृश्य

गर्मी में दिन की प्रदीप्ति, मिसाल के लिए, समुद्र तट पर इतनी प्रबल होती है कि हमारी आँखें करीव-करीव चकाचौंध खा जाती हैं। यहाँ भी औसत प्रकाश की तुलना में प्रदीप्ति निष्पत्तियाँ हलकी जान पड़ती हैं—धूप के देदीप्यमान प्रकाश में सभी वस्तुएँ समान रूप से चकाचौंध उत्पन्न करती हुई प्रतीत होती हैं। चित्रकार इस प्रभाव का समावेश अपने चित्रों में अक्सर करते हैं (देखिए §६५)।

६७. प्रेक्षण-गम्य होने के लिए प्रदीप्ति-अनुपात का अल्पतम मान

काँच की खिड़कियाँ सूर्य की रोशनी को परावर्तित करके सड़क की पटरी पर प्रकाश के धब्बे डालती हैं (§८)। यदि उसी पटरी पर धूप भी पड़ रही हो तब प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से दीख पड़ते हैं; पटरी की सतह पूरी तरह समतल नहीं होती है। किन्तु खिड़की को हिलाने पर या जब हमारे हिलने-डुलने पर छाया उस पर से एक फिल्म की तरह गुजरती है, तो प्रकाश का यह धब्बा तुरन्त ही दीख जाता है (क्या यह एक विलक्षण मनोवैज्ञानिक विशिष्टता नहीं है? निश्चय ही हमारे नेत्रों में कुछ विशेष प्रकार की क्षमता मौजूद है जिसके कारण मन्द प्रकाश वाली घटना गत होते ही ये उसे भाँप लेती हैं।) काँच की प्लेट अपनी प्रत्येक सतह से ४ प्रतिशत प्रकाश परावर्तित करती है, अर्थात् कुल मिलाकर ८ प्रतिशत, यदि किरणों का आयतन तिरछी दिशा में होता है तो परावर्तन कुछ थोड़ा और बढ़ जाता है (§५२)। अतः प्रदीप्ति में १० प्रतिशत की वृद्धि ही वह अल्पतम सीमा है जो बिना किसी विशेष साधन के, सामान्य परिस्थितियों में, हमारी आँखों द्वारा पहचानी जा सकती है।

सूर्य से प्रकाशित दीवार के सामने यदि पानी का छोटा नाला हो, तो हम उम्मीद करते हैं कि पानी से परावर्तित होनेवाले सूर्य-प्रकाश का धब्बा दीवार पर दिखलाई देगा। अब यद्यपि हवा से जब पानी उद्वेलित होता है तो प्रकाश की धारियाँ तो दीवार पर हरकत करती हुई दिखाई देती हैं (§४)। किन्तु स्वयं प्रकाश का धब्बा, जबतक दीवार की सतह एकदम चिकनी सपाट न हो, मुश्किल से ही दीख पड़ता है। अतः प्रदीप्ति में ३ प्रतिशत की वृद्धि का प्रेक्षण कर सकना केवल अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियों में ही सम्भव है (§८७)।

किसी शाम को दो लैम्पों के दर्मियान, एक के इतने निकट खड़े होइए कि वहाँ दूसरे लैम्प के कारण बनने वाली छाया बस विलुप्त भर हो जाय। दोनों लैम्पों से अपनी दूरी नाप कर आप उनसे प्राप्त होने वाले प्रकाश की प्रदीप्ति-अनुपात का मान मालूम कर सकते हैं और इस प्रकार यह भी मालूम कर सकते हैं कि प्रदीप्ति में प्रतिशत अन्तर कम-से-कम कितना होना चाहिए कि उनसे बनने वाली छाया की बस पृथक् पहचान भर की जा सके (§४८)।

६८. हलके आवरण का प्रभाव

दिन में हम घूमने निकलते हैं—तो मलमल का पतला-सा लगभग पारदर्शी पर्दा, घरों के अन्दर क्या हो रहा है, इसे देखने से हमें रोक देता है। ऐसा कैसे हो जाता है? झीने आवरण वाला पर्दा बाहर की तेज रोशनी से प्रकाशित होता है, और यदि कमरे के अन्दर की चीजों की प्रदीप्ति इसकी अल्पांश ही है, तो पर्दे की एकसमान प्रदीप्ति में अपनी ओर से ये इतनी अल्प मात्रा की वृद्धि कर पाती हैं कि हमारी आँख को उसकी अनुभूति नहीं हो पाती है—अर्थात् यहाँ फेख्नर के नियम के लागू होने का एक दृष्टान्त हमें प्राप्त होता है (§६४)।

रात को जबकि कमरे के अन्दर रोशनी होती रहती है, आप पर्दे में से भीतर बखूबी देख सकते हैं। पर्दे की हमारी ओर की सतह करीब-करीब अँधेरे में ही रहती है और इस कारण वह कमरे के अन्दर की विभिन्न प्रदीप्ति वाली चीजों पर अपनी ओर से अत्यन्त क्षीण प्रकाश ही डाल पाती है।

कमरे के अन्दर से बाहर की ओर देखने वाले व्यक्तियों के लिए दोनों ही दशाओं में ठीक उलटा असर होता है। इसी तरह की घटना उस वक्त होती है जब चाँदनी रात में स्पष्ट दीखने वाला वायुयान, सर्चलाइट की रोशनी फेंकते ही अदृश्य हो जाता है! हमारी आँख और वायुयान के दर्मियान की वायु तेज चकाचौंध उत्पन्न करने वाली

रोशनी से प्रकाशित होती है, तो उसके पीछे स्थित वायुयान पर प्रदीप्ति का विपर्याग हल्का होने के कारण वह आँखों के लिए अदृश्य बन जाता है।

६८ क. गिर्जाघर की रंगीन काँच की खिड़कियाँ

गेटे ने लिखा है–'धब्बेदार रंगीन काँच से मढ़ी हुई गिर्जाघर की खिड़कियाँ गिर्जे के अन्दर से आश्चर्यजनक रूप से मनोहर और जगमगाते रंगों से परिपूर्ण दीखती हैं, किन्तु बाहर से देखने पर उनके रंगों की शोभा एकदम गायब हो जाती है। खिड़की के काँच, मुख्यत:, पर्दे की भाँति प्रकाश का परिक्षेपण करते हैं; उनमें नन्हें धूल, धुएँ के जर्रे तथा हवा के बबूले भरे रहते हैं। दिन के तेज प्रकाश का अधिकांश परावर्तित हो कर बाहर ही वापस आ जाता है, अतः खिड़कियाँ सामान्य भूरे रंग की दीखती हैं, इसकी तुलना में भीतर से आने वाली रंगीन, किन्तु फीके प्रकाश की खिड़कियाँ मुश्किल से ही आँखों को प्रभावित कर पाती हैं।

६९. सान्ध्य आलोक में तारों की दृष्टिगोचरता

पहचान लें। इस तरह के प्रेक्षण तड़के सुबह को अपेक्षाकृत अधिक आसान पड़ते हैं, जबकि नक्षत्र-मानचित्र की मदद से पहले ही पहचान लिये गये तारे धीरे-धीरे विलुप्त होते जाते हैं।

इस तरह से अङ्कित किये गये समय से हम क्षितिज के नीचे सूर्य की स्थिति प्राप्त करते हैं और तब आकाश की दीप्ति। अवश्य हम पाते हैं कि तुरन्त के दृष्टिगोचर होने वाले तारे की द्युति s का मान उस वक्त अधिक होता है जबकि पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति b का मान अधिक होता है, किन्तु ये दोनों पूर्णतया एक दूसरे के समानुपाती नहीं हैं; प्रकाश प्रदीप्ति के घटने पर अनुपात $\frac{s}{b}$ बढ़ जाता है। यह उस निष्कर्ष के अनुरुप है जो रात्रि के समय के लिए भूमि-दृश्य के बारे में बतलाया गया है (§६५)। s और b के दर्मियान ग्राफ खींचने पर हम सामान्यतः पाते हैं कि *s का मान* $b^{0.50}$ या कदाचित् $b^{0.66}$ का समानुपाती है।

पूर्णिमा की रात को स्वच्छ आकाश में तारों की दृष्टिगोचरता की न्यूनतम सीमा सामान्यत. द्युति-सूचक श्रेणी में दो अङ्क ऊपर चढ़ जाती है; स्वयं चन्द्रमा के गिर्द एक बहुत अधिक चमकीला प्रभामण्डल (आरिएल) मौजूद होता है।
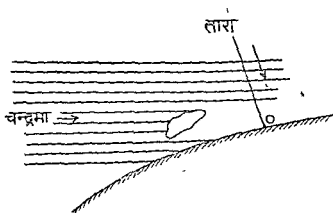
चित्र ७९—चन्द्रमा के सामने बादल का आ जाना O पर स्थित प्रेक्षक के लिए पर्याप्त नहीं होता कि वह तारा देख सके।

अतिशय सुन्दर और पूर्ण शशि के चारों ओर,
तारक-दल अपनी आभा को छिपा लेते हैं,
जब कि यह अपनी रुपहली ज्योति फैलाता है,
दूर, सुदूर व्याप्त, वसुधरा के ऊपर।—सैफो

एक बार एक बालक के ख्याल में आया कि चन्द्रमा के सामने की बादल की ओट तारो को पुन. दृष्टिगोचर बना सकने के लिए काफी होगी। किन्तु ऐसा होता क्यों नही है? (चित्र ७९)।

दीख भर जाने वाले तारो का प्रेक्षण करके हम एक वक्र रेखा का निर्माण कर सकते हैं जो चन्द्रमा के निकट आकाश की ज्योति का वितरण क्रम प्रदर्शित करेगी।

६९ a. दिन में तारों की दृष्टिगोचरता

दिन में तो आकाश में और भी अधिक प्रकाश मौजूद रहता है और तारे पूर्ण रूपसे अदृश्य रहते हैं। फिर हमारी आँख भी दिन के विशद प्रकाश के अनुकूल अपने को समानुयोजित कर चुकी होती है, अत इस समय वह सहस्रो गुना कम सुग्राही होती है।

अरस्तू के समय के एक मार्क के विवरण मे उल्लेख किया गया है कि गहरे कुएँ, खान के भीतर या चौडी चिमनी के अन्दर से देखने पर वायु सामान्य की अपेक्षा कम प्रकाशित दीखती है, और तब अपेक्षाकृत अधिक चमकीले तारो का देख सकना भी सम्भव होता है। बाद के अनेक लेखकों ने भी इस घटना का जिक्र किया है यद्यपि इसके लिए ये अधिकाश अपनी स्मरणशक्ति या दूसरो से सुनी-सुनायी कहानियों पर ही आश्रित रहे हैं।

सम्प्रति एक भी ऐसी जगह नहीं है जहाँ से सामान्यत इस घटना का अवलोकन तथा निरीक्षण किया जा सके, यद्यपि यह सुझाव दिया गया है कि इसके लिए १२ गज ऊँचा और २० इच व्यास वाला एक खोखला बेलन लेकर प्रयोग करना चाहिए। जो कुछ भी प्रभाव पड़ सकता है वह केवल इतना कि इस दशा में इर्द-गिर्द से आनेवाले प्रकाश द्वारा आँखो को चकाचौध कम लगेगी। किन्तु इससे तो कुछ विशेष अन्तर नही पडता क्योकि सीधे निरीक्षण किया जाने वाला दृष्टिक्षेत्र तो पूर्ववत् प्रकाशित ही रहता है, और प्रयोग में यही बात निर्णयात्मक है।

इससे भी और अधिक असङ्गत यह कथन है कि तारे दिन के समय, पर्वतों की छाया मे स्थित झील के प्रतिबिम्ब मे देखे जा सकते हैं। इस घटना के 'प्रेक्षकों' ने यह तो देखा कि प्रतिबिम्ब में आकाश की रोशनी कितनी कम थी, किन्तु इस बात को वे भूल गये कि परावर्त्तन के कारण ठीक उसी अनुपात में तारो की चमक भी कम हो जाती है।

७०. उद्दीपन

ऐसा प्रतीत होता है कि अस्त होनेवाला सूर्य क्षितिज रेखा पर कटान-सी उत्पन्न करता है (चित्र ८०)। द्वितीया, तृतीया का चन्द्रमा जब उदय होता है तो चन्द्रमा

के विम्ब का शेष भाग धूमिल भूरी रोशनी से कुछ-कुछ प्रकाशित दीखता है और हमारा ध्यान इस बात पर आकृष्ट हो जाता है कि नाखूनी चन्द्रमा का बाहरी हाशिया,
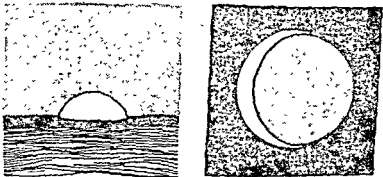
चित्र ८०—उद्दीपन के दृष्टान्त सूर्य, जब वह अस्त होता है तथा चन्द्रमा का नव चन्द्रक।

धूमिल रोशनी वाले भाग के बाहरी हाशिये की अपेक्षा एक बड़े वृत्त का हिस्सा जान पड़ता है (चित्र ८०)। टाइको ब्राहे के तखमीने के अनुसार दोनों के लिए व्यासों का अनुपात ६:५ होता है।

फिर गहरे रंग के वस्त्र में हम सफ़ेद वस्त्र की अपेक्षा अधिक छरहरे दीखते हैं।

लिनार्दो दा विन्ची ने इस घटना के बारे में एक स्थान पर लिखा है। इस घटना का अवलोकन वृक्ष की खाली टहनियों में से सूर्य को देखने पर किया जा सकता है। सूर्य के सामने पड़नेवाली ये सभी टहनियाँ इतनी पतली होती हैं कि इस दशा में वे अदृश्य सी हो जाती हैं, ठीक ऐसा ही उस वक्त होता है जब हम आँख और सूर्य के दर्मियान भाले को रखते हैं। एक बार मैंने एक स्त्री को देखा जो काले वस्त्र पहने थी और उसके सिर पर सफ़ेद शाल था। सिर पर रखे शाल की चौड़ाई काले वस्त्र से ढके कन्धों की चौड़ाई की दोगुनी प्रतीत हो रही थी। किले की मुँडेर पर कटी झिरी की चौड़ाई ठीक उतनी ही होती है जितनी बगल के ठोस भाग की, किन्तु झिरी स्पष्ट रूप से ठोस भाग की अपेक्षा अधिक चौड़ी जान पड़ती है।

अक्सर टेलिग्राफ के दो तार, एक विशेष दिशा से देखने पर एक दूसरे को अत्यन्त छोटे कोण पर काटते हुए दिखाई देते हैं, (चित्र ८१, a)। इसके बारे में अद्भुत बात यह है कि आकाश की पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर उस स्थान के गिर्द का तीव्र

प्रकाश दाहिने-बायें के गहरे रंग की, तार की दुहरी लाइन के विपर्यास में इतना प्रसार हो उठता है कि कटान विन्दु दृष्टि से ओझल हो जाता है। अवश्य इसके कारण तार जब थोड़े-बहुत भी हिलते हैं तो श्वेत वर्ण का यह रिक्त स्थल तार की लम्बाई के सहारे इधर-उधर खिसकता रहता है (चित्र ८१, b)।

इसके प्रतिकूल उस वक्त दृश्य का रूप बिलकुल भिन्न होता है, जब पृष्ठभूमि गहरे रंग की समानान्तर धारियों की बनी होती है। जैसे पृष्ठभूमि में सीढ़ियाँ, खपरैल की छत या ईटों की इमारत मौजूद हो, तो इस दशा में जहाँ कहीं तार इन धारियों को काटता हुआ दीखता है, वहीं पर तार अजीव तरह से फूला हुआ और टूटा-सा प्रतीत होता है। यही प्रभाव उस वक्त भी उत्पन्न होता है जब तार को किसी मकान की छत के हाशिये के समक्ष देखें (चित्र ८१, d)–संक्षेप में, जब कभी ठोस वस्तु का सीधा किनारा तिरछी दिशा में समानान्तर धारियों को काटता है, तभी यह प्रभाव उत्पन्न होता है।
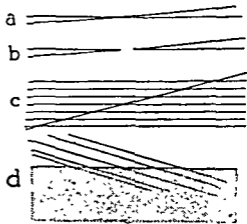
चित्र ८१—टेलीग्राफ के तार उद्दीपन के दृष्टान्त उत्पन्न करते हुए।

इन तमाम विरूपणों का मूल कारण इस तथ्य में निहित है कि आँख के अन्दर वर्त्तन तथा अपूर्ण पुनर्निर्माण के कारण प्रतिविम्बों का रूपान्तर हो जाता है। दो संलग्न धरातलों के दर्मियान की सीमारेखा अपने मस्तिष्क में हम उस ठौर बनाते हैं जहाँ प्रकाश की चमक सबसे अधिक तेजी से बदलती है, और प्रतिविम्ब यदि विवर्त्तन के कारण अस्पष्ट बनता हो, तो यह सीमारेखा आदर्श ज्यामिति-रेखा से भिन्न प्राप्त होती है। अतः गहरे रंग के क्षेत्र पर चमकीले प्रकाश के क्षेत्र का अवलोकन करने पर इसकी सीमारेखा नियमित रूप से तनिक बाहर की ओर हट जाती है। इस प्रकार के स्थानान्तर को 'उद्दीपन' कहते हैं जिसके कतिपय दृष्टान्त अभी दिये गये हैं।

७१. चकाचौंध

आँख में प्रवेश करनेवाले प्रकाश की तीव्रता जब बहुत अधिक होती है तो 'चकाचौंध' उत्पन्न होती है। चकाचौंध से दो बातों का बोध होता है—(क) दृष्टिक्षेत्र में

तेज प्रकाश-स्रोत का प्रगट होना जिसके कारण दृष्टिक्षेत्र के शेष भागों में वस्तुएँ स्पष्ट रूप में प्रेक्षणीय नहीं हो पाती है; तथा (ख) आँख में पीड़ा या सिर में चक्कर आने की अनुभूति।

प्रथम दशा का उदाहरण हमें मिलता है जब सामने से आती हुई मोटरकार की हेडलाइट का प्रकाश हमारी आँखों में पड़ता है। इस परिस्थिति में सड़क के किनारे के वृक्षों को हम देख नहीं पाते हैं और उनसे करीब-करीब हम टकरा-से जाते हैं। सामने के दृश्य का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने पर हम पाते हैं कि प्रत्येक वस्तु प्रकाश के धुन्ध से ढक जाती है, जो रात में दीखने वाले वृक्षों तथा अन्य वस्तुओं की धुँधली शक्ल के मुकाबले में कई गुना अधिक चमक वाला होता है। यह व्यापक धुन्ध, आँख के वर्तनकारी माध्यम द्वारा आपाती किरणों के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है—यह माध्यम पर्याप्त रूप से दानेदार तथा विषमांगी होता है ताकि प्रकाश का यह परिक्षेपण कर सके। ऐसा भी जान पड़ता है कि चकाचौंध उत्पन्न करने वाला प्रकाश न केवल पुतली से होकर नेत्र में प्रवेश करता है, बल्कि इसका कुछ अंश सीधे स्क्लेरोटिक में से होकर भी भीतर प्रवेश कर जाता है। फिर प्रकाशित भाग के इर्द-गिर्द रेटिना की सुग्राहिता बहुत कम हो जाती है; अतः चकाचौंध वाले प्रकाशस्रोत से 10° या इससे अधिक मान के कोण पर सुग्राहिता के घटने का प्रभाव परिक्षेपण जनित धुन्ध की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है।

चकाचौंध से उत्पन्न होनेवाली द्वितीय अनुभूति हम उस वक्त स्पष्ट महसूस करते हैं जब दिन के समय हम आकाश को निहारते हैं। हमें किसी मकान के साये में खड़ा होना चाहिए ताकि सीधे सूर्य की ओर हमें न देखना पड़े। ज्यों-ज्यों हमारी दृष्टि इस आकाशीय पिण्ड के नजदीक आती है त्यों-त्यों इसके प्रकाश की प्रचण्ड द्युति अधिक असहनीय होती जाती है, और यदि आकाश में बादल मौजूद हुए तब तो इस चमक को आँखें कठिनाई से ही सह पाती हैं। यह देखकर आश्चर्य होता है कि चकाचौंध के पीड़ाजन्य प्रभाव की अनुभूति के प्रति एक व्यक्ति दूसरे के मुकाबले में कितना अधिक संवेदनशील होता है!

अध्याय ७

वर्ण (रंग)

सभी सजीव पदार्थ रंग के प्रति सचेष्ट होते हैं— गेटे, थियरी आव कलर्स।

७२ रंगों का मिश्रण

रेलगाड़ी के कम्पार्टमेण्ट के अन्दर से बाहर का दृश्य खिड़की में से जब हम देखते हैं तो रेलगाड़ी की दूसरी ओर के दृश्य का भी हल्का प्रतिबिम्ब हमें साथ ही साथ दिखलाई पड़ता है। दोनों ही दृश्यों के प्रतिबिम्ब एक दूसरे के ऊपर पड़ते हैं, अतः ऐसी दशा में हम रंगों के मिश्रण का अध्ययन कर सकते हैं। नीले आकाश का परावर्तन हरे खेत के प्रतिबिम्ब को हरे-नीले रंग का कर देता है और मिश्रण के फलस्वरूप रंग हल्का और अपेक्षाकृत कम सपृक्त बन जाता है—रंगों के मिश्रण में यह विशिष्टता सदैव ही पायी जाती है।

चित्र ८२—दुकान की खिड़कियों से देखने पर रंगों का संमिश्रण।

आजकल दुकानों की खिड़कियों में काँच प्रायः फ्रेम के बिना ही लगाये जाते हैं, अतः स्थिति O से काँच में से होकर खिड़की की भीतरी देहली A देखी जा सकती है और साथ

ही साथ प्रतिबिम्ब द्वारा बाहरी देहली B भी उसी सीध में दिखलाई पड़ती है (चित्र ८२)। यदि खिड़की की देहली के भाग A और B के रंग एक दूसरे से भिन्न हों तो हमें रंगों के सम्मिश्रण का एक बढ़िया दृष्टान्त प्राप्त होता है। इस दशा में आँख की स्थिति यदि ऊँची होती है तो मिश्रण का रंग A के रंग से अधिक मेल खाता है, और आँख की स्थिति यदि नीची हुई तो मिश्रण से प्राप्त रंग B के रंग से अधिक मेल खाता है—इससे यह भी सिद्ध होता है कि काँच का पर्दा बड़े आयतन कोण वाली किरणों में अधिक प्रकाश परावर्तित करता है।

प्रकृति द्वारा रंगों का मिश्रण एक और तरीके से भी होता है। दूर से देखने पर घास के मैदान के फूलों के रंग मिलकर एकदिल शेड उपस्थित करते हैं, अतः हरी घास पर खिले डैन्डीलियन के फूल पीले और हरे वर्ण का मिश्रित रंग उत्पन्न कर सकते हैं। सेब और नासपाती के वृक्षों की कलियाँ समष्टि रूप से गँदला सफ़ेद (जो हौं गँदला सफ़ेद ही) रंग उत्पन्न करती हैं—जो श्वेत और गुलाबी रंग की कलियों, हरी पत्तियों, नासपाती के वृक्ष के सुर्ख परागाशय और सेव के पेड़ के पीले परागाशय आदि के रंगों के परस्पर मिलने से बनता है। रंगो के इस मिश्रण का भौतिकीय विवेचन इस प्रकार है—हमारी आँख प्रत्येक प्रकाश-बिन्दु का विसरणयुक्त प्रतिबिम्ब बनाती है (§५९) अतः विभिन्न रंगों के स्थल एक दूसरे के ऊपर पड़ते हैं। बिन्दुचित्रण[1] की शैली के लिए चित्रकार इस मानसिक प्रभाव का उपयोग प्राय. करते हैं।

७३. प्रतिबिम्ब और रंगों की क्रीड़ा

चित्रकला पर लिखते हुए लिनार्दो दा विन्ची कहता है—'अतः चित्रकारो ! अपने मानव आकृति के चित्रण मे दिखलाइए कि वस्त्र-परिधान के रंग का प्रतिबिम्बन सन्निकट की त्वचा के शेड को किस तरह प्रभावित करता है। आप गौर वर्ण के शरीर का चित्रण करना चाहते हैं जिसके गिर्द केवल वायु है। गौर या सफ़ेद वर्ण स्वयं कोई रंग नहीं होता, बल्कि आसपास के रंग को ही आंशिक रूप से ग्रहण करके यह अपना रंग बदलता है। यदि श्वेत वस्त्र-परिधान मे किसी महिला को खुले मैदान में आप देखें, तो सूर्य के रुख उसके शरीर की चमक इतनी अधिक होगी कि करीब-करीब सूर्य के समान ही उससे आँखों को चकाचौंध लगेगी। किन्तु उसके शरीर का वह पार्श्व जो आकाश की रोशनी से प्रकाशित है, कुछ-कुछ नीले शेड की झलक लिये हुए होगा। यदि वह महिला,

1. Pointillism (विशुद्ध रंगों के पृथक् बिन्दुओं द्वारा इस शैली के चित्र तैयार किये जाते हैं। विभिन्न रंगों के रंजकों को परस्पर मिलाते नहीं है जैसा कि सामान्य शैली में किया जाता है।)

मैदान में, धूप से प्रकाशित घास और सूर्य के दर्मियान खड़ी हो तो उसके गाउन के परत और मोड़ जो घास के रुख पर पड़ते हैं, हरी घास से परावर्तित रंग प्रदर्शित करेंगे।

७४. कलिल[1] दशा में धातुओं का रंग—बैंगनी रंग के खिड़की के काँच

कतिपय पुराने मकानों की खिड़कियों के काँच के रंग सुन्दर बैंगनी शेड के होते हैं। कई वरसों तक सूर्य के प्रकाश के खिड़की पर गिरते रहने के कारण काँच यह बैंगनी शेड धारण कर लेता है। आधुनिक समय मे काँच पर क्वार्ट्ज-पारे के लैम्प के प्रचण्ड प्रकाश को डाल कर रंग के समावेश की यही क्रिया अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक पूरी की जा सकती है। काँच मे मौजूद मैंगनीज की अत्यल्प मात्रा कलिल विलयन का रूप धारण कर लेती है जिसके कारण विशेष शेड का रंग उत्पन्न होता है, रंग का यह शेड न केवल धातु के प्रकाशीय गुणो पर निर्भर करता है, वरिक उसके कणो के आकार पर भी। यदि उस काँच को आप गरम करें तो यह बैंगनी रंग उड जाता है।

फैरेडे एक स्थान पर लिखते हैं कि उनके जमाने मे काँच का रंग बैंगनी रंग मे परिवर्तित हो जाता था जबकि उस पर धूप केवल ६ महीने तक ही पड चुकी हो[2]!

७५. विसर्ग लैंप[3] का रंग—गैस में प्रकाश का अवशोषण

विज्ञापन के रंग-बिरंगे विद्युत् दीप जो रात्रि में हमारे नगरो को परीलोक में परिवर्तित कर देते हैं, काँच की नली के बने होते हैं जिनके अन्दर अल्प दाब पर गैस भरी होती है। और इनके अन्दर से विद्युत्-विसर्जन होता रहता है। नली मे निअन गैस भरने से सुर्ख रंग का प्रकाश मिलता है,पारे की वाष्प भरने से नीले या हरे रंग का प्रकाश मिलता है—नीले रंग के लिए नली का काँच नीले रंग का लेते हैं और हरे रंग के लिए काँच हरे रंग का लेते हैं। ऐसा करने से पारे के वाष्प के प्रकाश के अन्य रंग कमजोर पड़ जाते हैं। पीले रंग की नली में हीलियम भरने से पीला प्रकाश मिलता है।

नीले रंग के प्रकाश वाली सीधी विसर्गनली में एक अद्भुत बात देखने को मिलती है। नली के एक दम निकट खड़े होकर उसकी लम्बाई की दिशा मे देखिए तो आप उसके रंग मे फर्क पायेंगे; इस दशा में यह नीले-बैंगनी रंग की दीखती है जबकि आड़ी दिशा से देखने पर इसके प्रकाश में नीले-हरे रंग की मात्रा अधिक रहती है। इसका कारण यह है कि नली के अन्दर से आनेवाले पारे के प्रकाश मे मुख्यत तीन विकिरण मौजूद होते हैं, बैंगनी, नीला और हरा; जिसमें प्रथम रंग का प्रकाश हल्का होता है।

1. Collidol 2. Exp-Res. in Chem. Phy p., 142 3. Discharge lamp

यह सम्मिलित विकिरण जब गैस की पतली तह को पार करके बाहर निकलता है तो प्रकाश हमारी आँख को नीले-हरे रंग का प्रतीत होता है। किन्तु लम्बाई की दिशा में देखने पर दूर के सिरे से आँख तक आनेवाले प्रकाश को वाष्प के अन्दर एक लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है, तो वाष्प में नीले रंग की अपेक्षा हरे रंग के प्रकाश का अधिक अवशोषण होता है, अत. नली के प्रकाश के अवयव रंगों के अनुपात में बिलकुल अन्तर आ जाता है, तदनुसार रंग की आभा भी बदल जाती है।

पारे की हरी, नीली और बैंगनी उत्सर्जन रेखाएँ मिलकर तीन रेखाओं का एक समुदाय बनाती हैं जो स्तर ^3P और ^3S के दर्मियान इलेक्ट्रानों के आदान-प्रदान से उत्पन्न होती हैं (चित्र ८३)। इलेक्ट्रान जब $^3P_2$ तथा $^3P_0$ के भास-स्थायी[1] स्तर
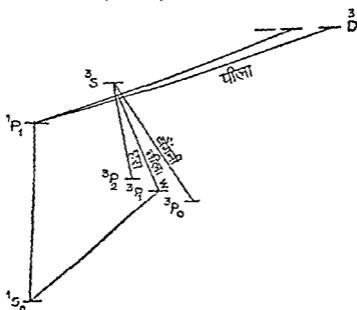
चित्र ८३—पारे के परमाणु में इलेक्ट्रान का स्थानान्तरण मुख्यतः जिसके कारण पारे के दृष्टिगोचर होनेवाले स्पेक्ट्रम की उत्पत्ति होती है।

पर गिरते हैं तो क्रमशः हरी और बैंगनी रेखाएँ उत्पन्न होती हैं—ये स्तर ऐसे हैं कि इन पर से इलेक्ट्रान निम्न ऊर्जा वाले स्तरों पर आसानी से नहीं कूद पाते हैं; अतः इन स्तरों पर उपस्थित इलेक्ट्रान वाले परमाणुओं की संख्या सदैव ही असाधारण रूप से अधिक होती है, और इसीलिए अवशोषण भी इन्हीं रंगों का अत्यधिक होता है।

1. Metastable

इसी कारण से हरी नली को जब लम्बाई की दिशा मे देखते है, तो प्रकाश में पीले-पन का पुट बढ़ जाता है। यहाँ भी दो विकिरण विशेषरूप मे प्रबल रहते हैं—पारे की हरी और पीली रेखाएँ। हमारे निरीक्षण से एक बार फिर इस बात का समर्थन होता है कि इन दोनों प्रकाशों में से हरे रग का अवशोषण अधिक मात्रा मे होता है।

७६. पर्किन्ज प्रभाव[1]; शंकु और दंड

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का पता लगाया था कि हल्की छाया मे हरे और नीले रग अनिवार्यतः अधिक चटक प्रतीत होते हैं और प्रकाशित भागों मे पीले, लाल तथा सफ़ेद रंग चटकीले दीखते हैं।

हाशिये पर खिले हुए जीरैनियम[2] के अंगारे सदृश चटकीले लाल रग के फूल और उनकी पृष्ठभूमि की गहरे हरे रंग की पत्तियों के विपर्यास पर ध्यान दीजिए। गोधूलि की वेला में और उसके कुछ देर बाद यह विपर्यास उलट-सा जाता है, अब पत्तियो के मुकाबले में फूलों का रग अधकार लिये हुए दीखता है। कदाचित् आप आश्चर्य करे, कि 'क्या सुर्ख रंग के चटकीलेपन की तुलना हरे रग के चटकीलेपन से की जा सकती है, किन्तु इनके चटकीलेपन में अन्तर इतना तीव्र दीखता है कि इस प्रश्न के बारे मे सदेह की कोई गुंजाइश बाकी नहीं रह जाती।

किसी चित्रशाला मे नीले और सुर्ख रग के दो चित्र आप को मिल सकते है जो दिन के प्रकाश में समान रूप से चटकीले दीखेगे। आप पायेंगे कि सन्ध्या के झुटपुटे मे इन दोनों में नीले रग का चित्र अपेक्षाकृत बहुत अधिक चटकीला प्रतीत होता है; इतना अधिक कि लगता है मानों उसमें से प्रकाश की किरणे विकिरित हो रही हों!

ये 'पर्किन्ज प्रभाव' के दृष्टान्त है। इसका कारण यह है कि सामान्य प्रकाश मे हमारी आँखें रेटिना के उन कोषों की सहायता से अवलोकन करती हैं जिन्हें 'शकु' कहते हैं, किन्तु बहुत हलकी रोशनी में उन कोषों की सहायता से आँखें देखती है जिन्हें 'दण्ड' कहते है। शंकु की सुग्राहिता पीत वर्ण के लिए सबसे अधिक होती है और दण्ड की सुग्राहिता हरे-नीले प्रकाश के लिए सर्वाधिक होती है—इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि विभिन्न रंगों के चटकीलेपन का अनुपात, प्रकाश की चमक की तीव्रता के बदलने पर, क्यों उलट जाता है।

1. Purkinje Effect 2. Geraniums

दण्ड केवल प्रकाश की अनुभूति करा पाते हैं, रंग की नहीं। चन्द्रमा का प्रकाश इतना मन्द होता है कि व्यावहारिक रूप में केवल दण्ड ही कार्यशील हो पाते हैं, अतः इस दशा में भू-दृश्य के रंगों की पहचान नहीं हो पाती; इस तरह से हम रंगों के लिए अन्धे बन जाते हैं। रंग के प्रति यह अन्धापन, अंधेरी रात में और भी अधिक परिपूर्ण बन जाता है (§६३)।

७७ अत्यन्त तेज रोशनी के प्रकाश-स्रोत का रंग श्वेत-सा दीखता है

अपने शहरों में प्रायः हम देख सकते हैं कि सन्ध्या को किस तरह विभिन्न प्रकाश-स्रोत नहर के पानी से प्रतिबिम्बित होकर प्रकाश-स्तम्भ के रूप में प्रगट होते हैं (§१४)। यह आश्चर्य की बात है कि इस दशा में कितनी आसानी से उनके रंगों का अन्तर पहचाना जा सकता है, जैसे प्रदीप्त गैस के लैम्प और साधारण बिजली के लैम्प के रंगों का अन्तर; जबकि स्वयं ये प्रकाश-स्रोत लगभग समान रूप के श्वेत रंग के ही दीखते हैं। इसी प्रकार उनके रंगों का अन्तर उस वक्त अधिक स्पष्ट हो उठता है जब उन्हें हम कुहरे में से या खिड़की के धुंधले काँच में से देखते हैं। और आँखों के एक विचित्र गुण के कारण जब इनके रंग उस वक्त बहुत कुछ श्वेत वर्ण सरीखे दीखने लग जाते हैं जब इनका प्रकाश एक अत्यन्त ही चमकीले बिन्दु पर केन्द्रित हो।

७८. रंगीन काँच में से भू-दृश्य को देखने पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव

गेटे अपनी कृति फार्बेनलेहर[1] में लिखता है--'पीत वर्ण से आँखें प्रफुल्लित होती हैं, हृदय आह्लादित होता है तथा आत्मा प्रसन्न होती है और तुरन्त हम राहत का अनुभव करते हैं।' पीले रंग के काँच में से बाहर का दृश्य देखने पर कितने ही व्यक्तियों के मन में हँसने की इच्छा होती है। नीला वर्ण सभी चीजों पर मातम की छाया डालता है। भलीभाँति प्रकाशित भू-दृश्य को सुर्ख रंग एक भयानक दृश्य में तबदील कर देता है--'क़यामत के दिन सारे आसमान और धरती पर यही रंग छा जायगा।' हरा रंग अत्यन्त अस्वाभाविक लगता है, सम्भवतः इसलिए कि आकाश हरे रंग का बहुत कम ही दीखता है। वागन कोलिश ने भू-दृश्य के रंगों को दो श्रेणियों में विभाजित करने का प्रयत्न किया था, एक जो प्रसन्नता की अनुभूति देते हैं, दूसरे जो एक तरह की 'मनहूसियत' लाते हैं। उसके अनुसार लाल, पीला, नारङ्गी रंग तथा पीत-हरे वर्ण प्रथम श्रेणी में आते हैं और नीला-हरा, नीला तथा बैंगनी द्वितीय श्रेणी में।

1. Farbenlehre

भू-दृश्य के रंगों के मनोवैज्ञानिक प्रभाव के लिए देखिए वागन कोर्निश की 'सीनरी एण्ड द सेन्स आव साइट'[1] (केम्ब्रिज १९३५)।

सजावट तथा प्रतीकों के रंगों के मनोवैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन अनेक लेखकों ने किया है, यद्यपि खुले प्रदेश में ऐसा कम ही किया गया है।

७९. सिर को नीचे करके रंगों का प्रेक्षण करना

भू-दृश्य के रंगों में अधिक जीवनतत्त्व, उनकी समृद्धिशालिता को परिवर्द्धित रूप में देखने के लिए चित्रकारों ने एक पुराना गुर अपनाया है—वह यह कि दृश्य की ओर पीठ करके खड़े हो जाइए, पैरों को फैला दीजिए; और तब नीचे को इतना झुकिए कि टाँगों के बीच से पीछे का दृश्य दीख सके। रंगों के गाढ़ेपन और चटकीलेपन की अनुभूति की वृद्धि, ऐसा ख्याल किया जाता है, इस बात से सम्बद्ध है कि सिर में इस दशा में रुधिर का प्रवाह बढ़ जाता है।

वागन कोर्निश का कहना है कि बगल के सहारे लेटने पर भी यही प्रभाव उत्पन्न होगा। इसके लिए वह कारण यह बतलाता है कि ऊर्ध्व दिशा की दूरी आँकने में जो अतिशयोक्ति साधारणतया हमें मिलती है (§११०) इस दशा में दूर हो जाती है; फलस्वरूप रंगों का उतार-चढाव तीव्रतर दीखता है। प्रश्न यह है कि सिर को झुकाने पर जो विशेष प्रबल प्रभाव उत्पन्न होता है, क्या उसके लिए भी यही व्याख्या लागू होती है?

1. Vaughan Cornish Scenery and the Sense of Sight (Cambridge 1935)

अध्याय ८

उत्तर-बिम्ब[1] तथा विपर्यास[2] की घटनाएँ

८०. प्रकाश की अनुभूति की अवधि

हम रेलगाड़ी में बैठे हैं और हमारी उलटी दिशा में दूसरी रेलगाड़ी तेज़ी से निकल जाती है। कुछ क्षणो के लिए सामने की रेलगाड़ी की खिड़कियों में से बाहर का दृश्य हमें स्पष्ट दिखलाई पडता है; इसमें झिलमिलाहट करीब-करीब बिलकुल ही नही होती; हाँ, दृश्य उतना चटकीला नही होता।

या फिर प्लैटफार्म पर खड़े होने पर सामने से गुजरती हुई रेलगाड़ी की खिडकियों मे से उस पार के दृश्य बखूबी हम देख पाते हैं या खिड़की के काँच में से प्रतिबिम्बित होने वाले दृश्य हम देख सकते हैं। दोनों ही दशाओं में यदि हम सामने की ओर दृष्टि जमाये रखें तो प्रतिबिम्ब हमें बिना किसी झिलमिलाहट के दिखाई पड़ेंगे।

यह मालूम करने के लिए कि प्रकाश और अन्धकार को एक के बाद दूसरे किस रफ्तार से सामने आना चाहिए ताकि झिलमिलाहट न उत्पन्न हो, आइए ऊँची छड़ों वाले एक लम्बे बाड़े के समानान्तर चलें। अपने क़दम की रफ्तार इतनी रखिए कि बाड़े की ओर एक ही दिशा मे बराबर घूर कर देखते रहने पर दृश्य एक समान प्रकाश का प्रतीत हो।

चलने की न्यूनतम रफ्तार जबकि दृश्य की झिलमिलाहट गायब हो जाय, दो बातों पर निर्भर करती है; 'प्रकाश' और 'अन्धकार' के बीच प्रकाशमात्रा के अनुपात पर, तथा प्रदीपन-काल तथा अन्धकार-काल की अवधि के अनुपात पर भी। दर असल बात यह है कि आँख पर प्रकाश का प्रभाव रोशनी के हटने पर तुरन्त ही खत्म नहीं हो जाता, बल्कि यह धीरे-धीरे घटता है। इसीलिए सिनेमा के अन्दर आँखों में प्रकाश के प्रभाव का लगार घटना-बढ़ना अवश्य एक जटिल क्रिया-विधि होती है।

एक सुविख्यात दृष्टान्त है तुषार के टुकड़ों का गिरना। लिनार्दो-दा-विन्ची का

1. After-image 2. Contrast

ध्यान इस बात पर आकृष्ट हुआ था कि 'नजदीक के तुषार के टुकड़े तेज़ी से गिरते हुए प्रतीत होते हैं जब कि कुछ फासले पर के ये टुकड़े धीरे-धीरे गिरते हुए जान पडते हैं; और निकट वाले टुकड़े ऐसे जान पडते हैं माना वे सफ़ेद धागे की लच्छियो के रूप मे लटक रहे हो जबकि दूर वाले तुषार कण लटकते हुए प्रतीत नही होते।'

वर्षा की बूँदे जो कि तुषार कणो की अपेक्षा बहुत अधिक तेज़ी से नीचे गिरती हैं, नीचे की ओर सदैव ही पतली रेखा की शक्ल मे खिच उठी-सी दीखती हैं।

८१· रेलिंग (या कटघरा) का प्रभाव[1]

रेलिंग लगे हुए कटघरे में से देखने पर तेजी से घूमते हुए पहिये की तीलियाँ आश्चर्य-जनक नमूना प्रदर्शित करती हैं। विचित्र बात तो यह है कि यह नमूना पूर्णतया समित ही बनता है, अत इसे देखकर पता नही लगा सकते कि पहिये के घूमने की दिशा क्या है (चित्र ८४)। यद्यपि पहिये में आगे की ओर तेज़ हरकत होती है और वृत्ताकार गति भी इसमें मौजूद होती है, किन्तु यह नमूना तो करीब-करीब स्थिर ही बना रहता है। स्टेशन पर रेलगाड़ी की रफ्तार जब धीमी होने लगती है तो उस वक्त सामने के रेलिंग मे से इजिन के बड़े पहियों का अवलोकन करने पर यह घटना अपने सर्वांगपूर्ण रूप में दिखलाई देती है। यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त उभरता है जब पहिये की रिम पर प्रकाश अधिक हो; तीलियों पर अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश हो, तथा कटघरे की छड़ो के दर्मियान के खुले भाग सँकरे हों। यदि पहिया केवल घूम रहा है, किन्तु आगे को लुढ़क नहीं रहा है तब रेलिंग में से देखने पर यह नमूना नहीं दिखलाई देता है—इसके प्रगट होने के लिए तो परिभ्रमण गति तथा आगे बढ़ने की रैखिक गति, दोनो का सयोजन आवश्यक है।
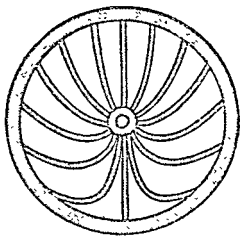
चित्र ८४—रेलिंग या कटघरे की घटना रेलिंग के लम्बे कटघरे में से देखने पर घूमता हुआ पहिया।

1. P. M. Roget, Philos Trans, 115, 131, 1825

इस प्रभाव की व्याख्या करने के लिए हम प्रारम्भ इस बात से करते हैं कि निरीक्षक पहिये पर ही आँख बराबर गड़ाये रहता है अतः जो कुछ भी वह देखता है उसका सम्बन्ध वह पहिये से ही जोड़ता है। इस प्रयोग में इस शर्त को पूरा होना है और ऊपर दिये गये उदाहरण में प्रकाश आदि का क्रम इसी शर्त के अनुसार है। अतः कल्पना कीजिए कि पहिया एक स्थिर धुरी O के गिर्द घूम रहा है और रेलिंग के खुले भाग एक समान गति से इसके सामने से गुजर रहे हैं (चित्र ८५ क)।
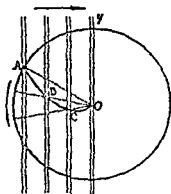
चित्र ८५—क
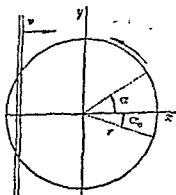
चित्र ८५—ख

मान लीजिए,आरम्भ की स्थिति मे रेलिंग का एक खास खुला भाग पहिये के किसी विशेष तीली को बिन्दु A पर काटता है; तो इस तीली का एक हिस्सा इस खुले भाग में से A पर दिखलाई पड़ेगा। कुछ क्षणों बाद यह तीली स्थिति OB पर होगी और रेलिंग का खुला भाग भी दाहिने खिसक आया होगा ताकि उस तीली को यह बिन्दु *B* पर काटे। कुछ और देर बाद कटान बिन्दु C पर पहुँचेगा। इस प्रकार बिन्दु-बिन्दु करके पूरी वक्ररेखा ABCO का निर्माण हो जायगा। अतः नमूने की प्रत्येक वक्ररेखा उन बिन्दुओं के पथ से निर्धारित होती हैं जिनपर एक खास खुले प्रदेश और एक खास तीली के कटान बिन्दु को हम बहुत ही थोड़े समय के लिए देख पाते हैं। आँख में बननेवाले प्रतिबिम्ब के प्रति दृष्टि-निर्बन्धता[1] के गुण के कारण, ऐसा प्रतीत होता है मानो समूची वक्र रेखा को एक साथ ही देख रहे हों, बशर्ते पहिया काफ़ी तेज़ रफ़्तार से घूम रहा हो।

बाद में आने वाली प्रत्येक तीली उसी खुले प्रदेश में से अपनी बारी पर दृष्टिगोचर होकर उसी जाति की वक्ररेखा का निर्माण करेगी, किन्तु इनकी परामितियाँ[2] भिन्न

1. Persistence of vision 2. Panameter

होंगी—इसका अर्थ यह है कि एक सर्वांगपूर्ण नमूना बन जायगा। यदि बाद में आनेवाला रेलिंग का खुला प्रदेश, पूर्वगामी खुले प्रदेश की स्थिति पर आने में उतना ही समय लेता है जितना समय एक तीली की स्थिति पर आने के लिए बादवाली तीली लेती है, तब स्पष्ट है कि वक्ररेखाओं का वही समुदाय बार-बार बनेगा और समूचा नमूना स्थिर बना रहेगा। किन्तु रेलिंग के दर्मियान की दूरियाँ यदि थोड़ी भिन्न हो, तो प्रत्येक तीली खुले प्रदेश पर निर्दिष्ट समय से बस कुछ पहले (या कुछ देर बाद) पहुँचेगी। इस दशा में प्रत्येक वक्ररेखा उसी जाति की अन्य वक्ररेखा में परिणत हो जायगी, विशिष्टता यह होगी कि इसकी परामिति भिन्न होगी। तब हमें ऐसा नमूना दीखेगा जो धीरे-धीरे अपना स्वरूप, पहिये के घूमने की दिशा में, या उसकी उलटी दिशा में बदलेगा। किन्तु स्वरूप के इस परिवर्तन में नमूने की पूरी आकृति नहीं घूमती है, क्योंकि यह नमूना तो ऊर्ध्वरेखा के गिर्द बराबर संमित ही बना रहता है। अन्त में इस बात की भी सम्भावना हो सकती है कि रेलिंग के दर्मियान के खुले प्रदेश बहुत ही अधिक चौड़े और बहुत ही सँकरे हो। मिसाल के लिए रेलिंग के खुले प्रदेश की चौड़ाई यदि तीलियों के बीच की चौडाई की आधी हुई तो तीलियों की सख्या की दो गुनी वक्ररेखाएँ हम नमूने में देखेंगे; और यदि खुले प्रदेशों की चौडाई एक-सी हुई तो यह नमूना भी स्थिर रहेगा।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामान्यत धीरे-धीरे अपना स्वरूप बदलने-वाले नमूने ही अकसर बनेंगे। वास्तविकता तो यह है कि पूरी रेलिंग की लम्बाई इतनी कम होती है कि समूची घटना एक सेकण्ड या उससे भी कम समय में समाप्त हो जाती है, अतः नमूने के परिवर्तन को महसूस करने का मौका मुश्किल से मिल पाता है। व्यक्तिगत रूप से मैंने इस घटना का कई बार अवलोकन किया है।

इन वक्ररेखाओं के सेट के लिए समीकरण आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं। चित्र ८५ ख की भाँति नियामक अक्ष चुनिए; तथा रेलिंग के खुले प्रदेश का वेग v मान लीजिए। यदि प्रारम्भिक स्थिति में सदिश त्रिज्या[1] (अर्थात् तीली) का झुकाव x अक्ष के साथ कोण α_0 के बराबर है और समय t के उपरान्त इसका झुकाव x अक्ष के साथ α हो, तब t क्षण पर तीली और खुले प्रदेश के कटानबिन्दु के नियामक[2] निम्नलिखित होंगे —

$$x = vt \text{ तथा } y = x \tan \alpha$$

1. Radius vector 2. Co-ordinates of the point of intersection

साथ ही भ्रमणगति तथा रैखिक गति के पारस्परिक सम्बन्ध से हमें निम्नलिखित मिलते हैं, (तीली की लम्बाई r है) —

$$\frac{vt}{r} = \alpha - \alpha_0 \text{ या } x = r(\alpha - \alpha_0)$$

ऊपर के दोनों समीकरणों से α को हटाने पर वाञ्छित वक्रसमूह का समीकरण इस प्रकार मिलता है —

$$y = x \tan\left(\frac{x}{r} + \alpha_0\right)$$

जैसा कि इस समीकरण से प्रगट है, जब α_0 और x के चिह्न एक साथ ही बदलते हैं तो y का मान एक-सा बना रहता है, अर्थात् नमूने की आकृति y अक्ष के गिर्द समित बनी रहती है।

चलती हुई गाड़ी के बड़े पहिये में से सामने के दूसरे पहिये को देखने पर और भी अधिक जटिल किस्म के नमूने बनते हैं। दृष्टिरेखा थोड़ी भी जब दाहिने या बायें हटती है ताकि दोनों पहिये एक-दूसरे को पूर्णतया ढक नहीं पाते हैं तो अत्यन्त ही विचित्र किस्म की वक्र आकृतियाँ दिखलाई पड़ती हैं। फैरेडे का ध्यान भी इन पर आकृष्ट हुआ था, इन्हे देखकर उसे चुम्बकीय बल रेखाओ का स्मरण हो आया था। ये उन बिन्दुओं द्वारा निर्मित पथरेखाएँ हैं, जहाँ दोनों पहियों की तीलियाँ एक दूसरे को काटती हैं।

८२. झिलमिलाते प्रकाश-स्रोत

हमारे बड़े नगरों में रात को अनुपम दृश्य उपस्थित करने वाले विज्ञापन दीपों में नारङ्गी प्रकाशवाले निअनलैम्प हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करते हैं। ये ५० प्रतिसेकण्ड आवृत्ति वाली प्रत्यावर्त्ती विद्युतधारा द्वारा परिचालित होते हैं। इसका अर्थ है कि लैम्प की चमक प्रतिसेकण्ड १०० बार घटती-बढ़ती है क्योंकि धारा की दिशा के एक बार के प्रत्यावर्त्तन में चमक दो बार महत्तम मान प्राप्त करती है। प्रकाश की चमक का घटना-बढ़ना इतनी तीव्र गति से होता है कि सामान्यतः हमें इस घट-बढ़ का आभास नही होने पाता।

किन्तु यदि आप किसी चमकदार वस्तु को नियनलैम्प के प्रकाश में इधर से उधर हरकत दिलाएँ तो इस तरह बनने वाला ज्योति-पथ एक लहरदार प्रदीप्त सतह-जैसा दीखेगा। उस वस्तु को जितनी अधिक तेज रफ्तार से हरकत दिलायेंगे उतनी ही अधिक दूर-दूर ये लहरें बनेंगी। लहरों की संख्या से प्रत्यावर्त्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति का हिसाब लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि एक चमकीली कैंची को दायरे में

घुमाएँ ताकि वृत्त का घेरा प्रति सेकण्ड चार बार बनता है और इससे बननेवाले ज्योति-पथ में १२ तरंग-शृंग दिखाई देते हैं तो धारा की प्रबलता के परिवर्तन की आवृत्ति १२×४=४८ होगी और स्वयं प्रत्यावर्ती धारा की आवृत्ति २४ प्रति सेकण्ड।

तेजी से दोलन करते हुए दर्पण में प्रकाश-स्रोत को परावर्तित करवाकर भी यह प्रयोग किया जा सकता है या काँच के टुकड़े द्वारा, जैसे आपके चश्मे का काँच, या आँख के सामने अपने चश्मे के एक लेन्स को आप एक छोटे दायरे में घुमा सकते हैं (देखिए § ४०)। फिर अन्त में,प्रकाश की झिलमिलाहट केवल नंगी आँखों से भी देखी जा सकती है–दृष्टि को पहले नियन लैम्प के निकट किसी बिन्दु पर जमाइए और तब एकदम अचानक, निगाह की दिशा बदल दीजिए। इस दशा में रेटिना पर प्रकाशस्रोत का प्रतिबिम्ब हरकत करता है और प्रकाशद्युति की प्रत्येक वृद्धि की अनुभूति पृथक्-पृथक् होती है। दृष्टिरेखा की दिशा को अकस्मात् बदल सकना, जबकि प्रकाशस्रोत से ध्यान हटने न पाये, अत्यन्त दुस्तर कार्य है–प्रेक्षक कभी इस प्रयत्न में सफल हो पाता है, कभी नहीं।

फिलामेण्ट वाले ऐसे विद्युत लैम्पों की भी परीक्षा कीजिए जिनमें प्रत्यावर्त्ती धारा बह रही हो। ऐसे लैम्प के प्रकाश में चाँदी की कलई वाली पेन्सिल को इधर से उधर घुमाएँ तो लहरें स्पष्ट रूप से दीखेंगी। जिससे यह सिद्ध होता है कि धारा की प्रबलता के प्रत्येक चढ़ाव पर फिलामेण्ट का ताप और उससे निकलने वाली रोशनी थोड़ी बढ़ती है, और उनके दर्मियान ये घट जाती है (चित्र ८६)। जब लैम्प में सरल धारा भेजी जाती है तो लहरें कतई नहीं दिखलाई पड़ती हैं।
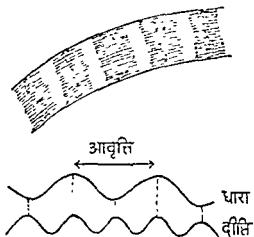
चित्र ८६—विद्युत लैंप के प्रकाश की तीव्र गति की झिलमिलाहट को दृष्टिगोचर कराना।

कभी-कभी रात में जब रेलगाड़ी के डिब्बे की खिड़की में से बाहर को देखते हैं तो प्रमुख सड़कों को प्रकाशित करने के लिए लगाये गये सोडियम लैम्प की ज्योति में निम्न-लिखित परिस्थिति में लहरें अत्यन्त स्पष्ट देखी जा सकती हैं। इसके लिए खिड़की और आपके बीच लगभग ६ फुट का फासला होना चाहिए और खिड़की का काँच भीगा

होना चाहिए या धुँधला, और इसकी भीगी सतह पर ऊपर से नीचे की ओर धारियाँ सी पड़ी हों। दूर के लैम्प की रोशनी ज्योंही काँच के कुछ भागों पर पड़ती है, त्योंही लहरें दृष्टिगोचर हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि पानी की परत की मोटाई सर्वत्र एक समान नहीं रहती; धारियों की जगह, पुंछ जाने के कारण, पतले प्रिज्मों की एक कतार-सी बन जाती है जिनके कोर तथा वर्तनकोण ऊर्ध्व दिशा में पड़े होते हैं, और इन कोणों के मान एक विन्दु से दूसरे विन्दु तक बदलते रहते हैं। इनके कारण लैम्प के प्रतिबिम्ब अनियमित रूप से और कभी-कभी अचानक स्थानान्तरित होते हैं। चूँकि इन लैम्पों में प्रत्यावर्ती धारा बहती है, अतः ठीक तेजी से हरकत करनेवाले चश्मे के लेन्स के प्रयोग की तरह ही इस दशा में भी लहरें दिखलाई पड़ती हैं।

८३. केन्द्रीय तथा परिमितीय दृष्टि-क्षेत्र के लिए अविरत दर्शन की आवृत्ति

ऐसे स्थानों पर जहाँ पावर-हाउस की सप्लाई की प्रत्यावर्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति कम होती है (प्रति सेकण्ड २०–२५), निम्नलिखित दिलचस्प प्रयोग किया जा सकता है। पहले विद्युत लैम्प की ओर देखिए; लैम्प तो स्थिर चमक का प्रतीत होगा जबकि दीवार की रोशनी झिलमिलाती दीखेगी। फिर दीवार पर दृष्टि जमाइए, तो दीवार की प्रदीप्ति स्थिर, अविरत जान पड़ती है जबकि इस बार लैम्प का प्रकाश झिलमिलाता हुआ मालूम पड़ता है।[1]

स्पष्ट है कि सीधे केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र तथा परिमितीय दृष्टिक्षेत्र की दर्शन-अनुभूति की क्षमता अवश्य विभिन्न है। सम्भव है कि लैम्प की प्रकाश-तीव्रता का चढ़ाव-उतार बहुत हलका हो और परिमितीय दृष्टि के लिए प्रकाश-तीव्रता की अन्तरीय-सीमा[2] अपेक्षाकृत कम ही हो। इसकी जाँच के लिए किसी चमकीली वस्तु को लेकर उसी लैम्प के प्रकाश में हम एक वृत्त का निर्माण करते हैं। तो प्रकाश-पथ में नियमित दूरियों पर प्रकाश की ज्योति का चढ़ाव-उतार उस वक्त भी स्पष्ट दिखलाई पड़ता है जबकि हम नजर जमाकर उसे देखते हैं (§ ८२)। इसका अर्थ है कि हमारे ठीक सामने की ओर की दृष्टि प्रकाश-तीव्रता के थोड़े अन्तर के लिए भी पर्याप्त सुग्राही अवश्य है, किन्तु प्रकाश झिलमिलाहट की तेज रफ्तार की तब्दीली का साथ देने में यह असमर्थ रहती है।

1. Woog C. R. 168, 1222; 169, 93, 1919. 2. Differential threshold

प्रयोगशाला के प्रयोग भी आँखों की इस विशिष्टता का अस्तित्व प्रमाणित करते हैं। सबसे अधिक विचित्र बात तो यह है कि न केवल परिमितीय क्षेत्र में हम प्रकाश-प्रदीप्ति के चढ़ाव-उतार की अनुभूति करते हैं, बल्कि उनकी प्रतिसेकण्ड संख्या को भी हम कम करके आँकते हैं; हमें ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचित् ये चढ़ाव-उतार प्रतिसेकण्ड १० बार से अधिक नहीं हो रहे हैं।

८४. सायकिल का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर रहता है

सामने से गुजरती हुई सायकिल का पहिया बहुत कुछ ऐसा ही दीखता है जैसा चित्र ८७ में प्रदर्शित है। हमारी आँखें तीलियों के केवल उन भागों का अवलोकन कर पाती हैं जो केन्द्र के निकट स्थित हैं, क्योंकि यहाँ ये धीरे-धीरे हरकत करती हैं।

चित्र ८७—तेजी से घूमता हुआ साइकिल का पहिया इस प्रकार दीखता है।

किन्तु ऐसी सड़क के किनारे जरा इतमीनान से बैठ जाइए जहाँ से बहुत-सी सायकिलें अवश्य गुजरने वाली हों। सड़क के किसी खास स्थल पर नजर गड़ाइए। ज्योंही सायकिल का अगला पहिया आपके दृष्टिक्षेत्र में प्रवेश करता है, आपको अचानक ही बिलकुल स्पष्ट, बहुत-सी तीलियाँ उस वक्त भी दिखलाई देती हैं जबकि सायकिल तेजी से हरकत कर रही हो। यह बहुत ही अद्भुत घटना है—खास बात यह है कि लगातार एक ही दिशा में नजर गड़ाये रखें, निकट आती हुई सायकिल की ओर नहीं देखना है।
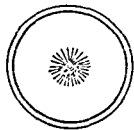
व्याख्या इस प्रकार है—पहिये की परिधि का वह बिन्दु जहाँ पहिया जमीन को छूता है, एक क्षण के लिए स्थिर हो जाता है, क्योंकि इस बिन्दु पर ही जमीन की पकड़
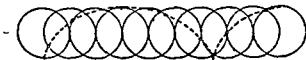
चित्र ८८—घूमते हुए पहिये की परिधि के एक बिन्दु का गमनपथ। जैसा कि हम देखते हैं, प्रत्येक चक्कर में यह बिन्दु एक क्षण के लिए, जब कि यह भूमि को स्पर्श करता है, स्थिर हो जाता है।

पहिये पर पड़ती है (चित्र ८८)। अतः इस विन्दु के निकट तीलियों के सिरे भी क्षण भर के लिए स्थिर होंगे, जबकि धरती से दूर पड़नेवाले विन्दु रैखिक और भ्रमण-गति के सम्मिलित प्रभाव के कारण वक्र मार्ग-रेखा पर चलेंगे। अतः यदि हम भूमि के किसी खास स्थल पर ध्यान जमाकर देखते रह सकें तो पहिये के निचले भाग करीब-करीब स्थिर ही जान पड़ेंगे—दरअसल वास्तविक प्रेक्षण में दिखलाई भी ऐसा ही पड़ता है। मेरा विश्वास है, तीलियाँ सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त दिखलाई पड़ती हैं जबकि ये हमारे परिमितीय दृष्टिक्षेत्र मे पड़ती हैं। अतः पर्याप्त सम्भावना इस बात की है कि परिमितीय दृष्टिक्षेत्र में प्रकाश की तेज रफ्तार की झिलमिलाहट के अवलोकन की क्षमता इस मामले मे भी कारगर होती है।

८५. मोटरकार का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर प्रतीत होता है*

जब मोटरकार निकट आती है तो इसकी रफ्तार चाहे सामान्य ही क्यो न हो, पहिये की तीलियाँ एक दूसरे से पृथक् नहीं देखी जा सकती हैं। रेटिना के प्रत्येक विन्दु पर प्रकाश और अन्धकार की झिलमिलाहट इतनी तेज रफ्तार से होती है कि रेटिना पर उत्पन्न होने वाले प्रभाव एक दूसरे में मिल जाते हैं; आँख की पेशियाँ, दृष्टि-रेखा द्वारा शंकु का निर्माण उतनी तेज रफ्तार से नहीं कर पाती जितनी तेज रफ्तार की आवश्यकता प्रत्येक तीली को अलग-अलग देख सकने के लिए होती है।

फिर भी रह-रहकर ऐसा होता है कि बस अत्यन्त छोटे लमहे के लिए तीलियाँ दृष्टिगोचर हो जाती हैं, जैसे, फोटो के 'स्नैपशाट' का दृश्य। आम तौर पर कुछ थोड़ी-सी तीलियाँ ही दिखलाई पड़ती हैं, किन्तु कुछ अवसरों पर मुझे प्रतीत होता है कि समूचा पहिया बिलकुल साफ़ दीख जाता है। सायकिल के पहिये के स्थिर दीखने की व्याख्या इस दशा के लिए सन्तोषजनक साबित न हो पायेगी। यह इतनी अद्भुत घटना है कि कभी-कभी यह कहा जाता है कि कुछ क्षणो पर पहिया वास्तव में स्थिर हो जाता है जो *नितान्त असम्भव बात है!*

किन्तु बहुत शीघ्र ही इस बात का पता चल जाता है कि मोटरकार के पहिये का क्षणिक दर्शन लगभग उस वक्त होता है जब हम अपने पैरों को जमीन पर मजबूती से जमाते हैं, या पहिया उस वक्त भी दीख जाता है जब हम अपने चश्मे को ठकठकाते हैं (यदि आप का चश्मा निकट-दृष्टि का है) या जब हम अपने सिर को झटका देते हैं।

* आजकल बहुत कम ही मोटरकार के पहियों में तीलियाँ पायी जाती हैं। अतः यह घटना कम अवसरों पर ही देखी जा सकती है।

सम्भवतः इन परिस्थितियों में हमारी आंख या दृष्टिरेखा की दिशा में तीव्र गति से अव-मन्दित कम्पन होने लगता है जो कुछ विशेष तीलियों की हरकत के अनुरूप ही होता है, अतः अत्यल्प काल के लिए रेटिना पर बने उनके प्रतिबिम्ब स्थिर बने रह जाते हैं। कदाचित् नेत्र-गोलक का अक्ष ही इधर से उधर की दोलनगति करता है या कि नेत्र-गोलक समष्टिरूप से आंख के कोटर में हिलता है (रैखिक गति) ? क्या हम परिकल्पना कर सकते हैं कि इस प्रकार के हलके झटके खाकर आंख अपने अक्ष के गिर्द अनियमित चक्रीय गति करने में समर्थ होती है ?

आंख की कम्पन-गति का प्रत्यक्ष प्रमाण निम्नलिखित से प्राप्त होता है, यदि हम रात्रि में तेज़ कदमों से झूमते हुए चलें और दूर के लैम्प पर नजर स्थिर जमाये रखें तो देखेंगे कि हर कदम के साथ प्रकाश-स्रोत एक छोटा-सा वक्रपथ बनाता है जो बहुत कुछ चित्र ८९ की आकृति के मानिन्द होता है। यह घटना अकसर उस वक्त भी दिखलाई पडती है जब प्रेक्षक स्थिर खड़ा रहकर सामने से गुजरती हुई मोटरकार को देखता है। इसका समाधान इस बात में मिलता है कि इस दशा में आंख में अनजाने ही, अचानक, थोडी-बहुत हरकत हो जाती है। आंख में हलके झटके की गति प्रायः होती है, इस बात को हम प्रमाणित कर सकते हैं यदि अस्त होते हुए सूर्य्य को सावधानी के साथ, एक क्षण के लिए देखें। तो अब उत्तर-प्रतिबिम्ब में नन्हें-नन्हें कई काले बिन्दु देख पड़ेंगे न कि अकेली, एक काली अविरत पट्टी (देखिए § ८८)।

चित्र ८९

८६. वायुयान का स्क्रू प्रोपेलर जो प्राकाश्य रूप से स्थिर दीखता है

वायुयान के एक यात्री ने देखा कि तेज़ रफ्तार के बावजूद भी घूमते हुए प्रोपेलर के ब्लेडों को वह पृथक्-पृथक् करके देख पाता था बशर्ते वह तिरछे करीब ४५° के कोण पर दृष्टि डाले अर्थात् परिमितीय दृष्टिक्षेत्र द्वारा अवलोकन करे। फिर भी प्रोपेलर प्रति सेकण्ड २८ बार घूमता है, अतः प्रति सेकण्ड यह ५६ बार रोशनी को झिलमिलाता है ! तो 'प्रोपेलर' के देखने की अनुभूति और कुछ नही है, बल्कि अत्यन्त ऊँची आवृत्ति की झिलमिलाहट की रोशनी का ही प्रभाव है। इस बात से कि केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र के मुकाबले में परिमितीय क्षेत्र में इस घटना का अवलोकन अधिक आसानी से किया जा सकता है, पैरा ८३ में दिये गये निष्कर्ष के लिए महत्त्वपूर्ण समर्थन प्राप्त होता है।

ये घटनाएँ उस वक्त और भी विलक्षण होती हैं जब प्रोपेलर कुछ धीमी गति से घूमता है, मिसाल के तौर पर, जब वायुयान उड़ान शुरू करने की तैय्यारी कर रहा

होता है। इन दशाओं में इनकी झिलमिलाहट की गति सेकण्ड संख्या को आँकने में हम आश्चर्यजनक गलतियाँ करते हैं। केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र में तो यह संख्या काफ़ी ऊँची लगभग २५ प्रतिसेकण्ड प्रतीत होती है, किन्तु परिमितीय क्षेत्र में ऐसी अनुभूति होती है मानों प्रकाश-प्रदीप्ति की झिलमिलाहट प्रति सेकण्ड केवल १० बार ही हो रही है! यह उसी तरह की घटना है जैसी हमने अभी झिलमिलाते हुए लैम्प के सम्बन्ध में देखी है (§ ८३)।

८७. सायकिल के घूमते हुए पहिये का प्रेक्षण

आम तौर पर सायकिल के घूमते हुए पहिये की तीलियाँ अलग-अलग दिखलाई नही देती; ये एक-दूसरे से मिलकर धुंधला पर्दा-सा बनाती हैं, जो केन्द्र के निकट सबसे अधिक मटमैला होता है और रिम की ओर अधिक दीप्तिमान्। समतल सड़क पर पड़नेवाली पहिये की छाया में प्रदीप्ति का वितरण इसी प्रकार का होता है। यह छाया कितनी गाढी होती है? प्रत्येक तीली की मोटाई .०८ इंच होती है और रिम पर उनके बीच का फासला औसत रूप से २ इंच होता है। सड़क के किसी बिन्दु पर प्रकाश कितनी देर तक पड़ता है, यह समय पहिये के खुले भाग के क्षेत्रफल तथा पूरे पहिये के क्षेत्रफल के अनुपात पर निर्भर करता है। अतः ऊपर दिये गये अङ्कों की मदद से हम लिख सकते हैं —

$$\frac{\text{सड़क पर प्रकाश जितनी देर तक गिरता है}}{\text{पूरा समय जबतक पहिये पर प्रकाश गिरता है}} = \frac{२}{२ + \cdot ०८} = \frac{१००}{१०४}$$

ताल्बो के नियमानुसार इससे हमारी आँखों पर वही प्रभाव पड़ता है मानो पहिये से बनने वाली छाया एक स्थिर प्रदीप्ति की हो, जो सड़क के बिना छाया वाले भाग की प्रदीप्ति के १००/१०४ के बराबर है। किन्तु सूर्य की किरणें पहिये पर लम्बवत् नहीं गिरतीं, अतः छाया में तीलियाँ एक दूसरे के अधिक निकट आ जाती हैं, यद्यपि उनकी मोटाई उतनी ही बनी रहती है। अतः स्पष्ट है कि रिम के नजदीक की छाया आसपास की भूमि के मुकाबले में ४ से लेकर ८ प्रतिशत तक कम प्रदीप्ति वाली होगी, और केन्द्र के निकट प्रदीप्ति की यह कमी सम्भवतः बढ़कर १० से २० प्रतिशत तक हो जाती है। फिर भी प्रदीप्ति के इस अन्तर की अनुभूति कर सकना नितान्त कठिन होता है क्योंकि तुलना की जाने वाली दोनों पृष्ठभूमियों को एक दूसरे से अलग करनेवाली टायर की छाया

अत्यन्त गाढी बनती है। केन्द्र की ओर प्रदीप्ति का क्रमिक ह्रास मुश्किल से ही निगाह की पकड़ मे आता है, क्योंकि हमारी प्रवृत्ति किसी घिरी हुई सर्वाङ्गपूर्ण आकृति को समष्टि रूप से देखने की होती है; और इस मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण प्रदीप्ति का वास्तविक अन्तर हमारी निगाह से चूक जाता है।

किन्तु विशेष ध्यान से देखने पर पहिये की छाया मे आम तौर पर हम एक या अधिक प्रकाश-छल्ले मौजूद पाते है (चित्र ९०)। अक्सर ये सीमित लम्बाई की वक्र आकृतियाँ होती है जो एक ओर खुली रहती हैं। सायकिल से उतर कर उस स्थल की जाँच कीजिए जहाँ प्रकाश का चाप बनता है। यह उस बिन्दु के सामने पड़ेगा जहाँ दो तीलियाँ एक दूसरे को काटती हैं—दर असल हम कह सकते है कि ऐसे प्रत्येक कटान-बिन्दु पर एक तीली विलुप्त हो जाती है, अत छाया का औसत गाढ़ापन अवश्य कम हो जाना चाहिए। लेकिन यह अन्तर कितना हलका होता है! फिर भी हमारी आँखें कितने स्पष्ट रूप से इसकी अनुभूति कर लेती है, क्योंकि इस दशा में तुलना की

चित्र ९०—सायकिल के घूमते हुए पहिये में प्रकाश तथा छाया की वक्र रेखाएं।

जानेवाली प्रदीप्तियाँ किसी विभाजक रेखा द्वारा पृथक् न होकर एक दूसरे के साथ सटी हुई रहती हैं। तीलियों के परस्पर गुंथे जाने के क्रम का वर्णन करना मुश्किल है, बहुधा चार तीलियों का समूह एक साथ गुँथा रहता है और इसी क्रम की पहिये के पूरे भाग में बार-बार पुनरावृत्ति होती है। दो तीलियों का कटान-बिन्दु एक विशिष्ट वक्ररेखा बनाता है जो एक छोटे, चमकीले चाप की शक्ल की दीखती है। पहिया जब दो तीलियों के दर्मियान की दूरी का चौगुना फासला तय कर लेता है तो छोटे चाप का पुनर्निर्माण होता है। फिर, प्रत्येक समूह मे यदि दो कटान-बिन्दु मौजूद हो तो एक बिन्दु दूसरे बिन्दु के पथ का अनुसरण करता हुआ प्रतीत होता है और तब छोटा चाप विशेष रूप से चमकीला दिखाई पडता है। पहली दशा में चाप अगल-बगल की छाया के मुकाबले मे १ प्रतिशत अधिक दीप्तिमान् दीखेगा और दूसरी दशा मे २ प्रतिशत अधिक। किन्तु चूँकि छाया मे तीलियाँ प्रक्षेपित होने पर आम तौर पर कुछ निकट आ जाती है और चमकीले चाप रिम से कुछ फासले पर ही बनते हैं, अत दीप्ति-अन्तर

का परिमाण सम्भवतः ३ से ६ प्रतिशत तक हो सकता है। अतः ये परिमाण, प्रदीप्ति अन्तर की न्यूनतम मात्राएँ प्रगट करते हैं जो दो संलग्न धरातलों के लिए नजर की पकड़ में आ सकती हैं। यद्यपि सड़क के धरातल का जो यहाँ प्रयोजन पर्दे-जैसा काम करता है, समतल न होना एक बड़ी खामी है, फिर भी प्रयोगफल हमारे पूर्ववर्ती अनुमान के साथ बखूबी मेल खाते हैं (§६७)।

इस बात का कारण ज्ञात करने का प्रयत्न कीजिए कि प्रकाश के चाप और छल्ले, पहिये की दीर्घवृत्तीय छाया के सिरे A के निकट खास तौर पर सबसे अधिक चमकीले बनते हैं और इसकी जांच कीजिए कि क्यों इनकी आकृति बिन्दु A पर वैसी नहीं है जैसी B पर।

अपनी सायकिल के पहिये की छाया को देखने के बजाय जब सीधे ही आप बगल में जाती हुई सायकिल के पहिये को देखते हैं तो ये ही चाप और छल्ले और भी स्पष्ट दीखेंगे, क्योंकि इस दशा में ये बिलकुल साफ़ उभरते हैं, बिना किसी धुंधलेपन के (देखिए §२)। चमकीली पृष्ठभूमि के सामने तीलियाँ काली प्रतीत होती हैं, अतः ये अधिक चमकीले दीखते हैं, किन्तु जब मटमैले रंग की पृष्ठभूमि के सामने पहिये पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो छल्ले अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश के दीखते हैं।

तेजी से घूमते हुए सायकिल के पहिये से प्रदर्शित होनेवाले विलक्षण प्रभावों में इसे आखिरी प्रभाव मत समझ लीजिए। अक्सर ऐसा होता है कि जब आप चक्कर लगाते हुए पहिये की छाया का अवलोकन करते हैं तो तड़ित्कौंध की तरह तेजी से तीलियों की रेखाएँ स्पष्ट चमक उठती हैं, ऐसा तभी होता है, जब आपकी आँखें तीव्र-गति से वृत्ताकार घेरे में हरकत करती हैं, ताकि अनजाने ही तीलियों की छाया के साथ उसी रफ्तार से आपकी निगाह भी चलती है (देखिए §८५)। यदि आप चश्मा पहनते हैं तो लेन्स को झटके की थोड़ी हरकत देना, इस बात के लिए पर्याप्त होगा कि तीलियों को अलग-अलग विचित्र झटके खाकर चलते हुए आप देख सकें। किन्तु सबसे अधिक विलक्षण छाया आप उस वक्त देखते हैं जब आप ऊँची-नीची सतह की पत्थर जड़ी सड़क पर सायकिल चलाते हैं।
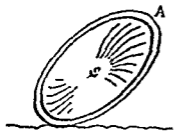
चित्र ९१—पत्थर जड़ी हुई सड़क पर से गुजरने वाली सायकिल के पहिये की छाया में वक्र रेखाएं।

पृष्ठभूमि के ऊँची-नीची होने के बावजूद भी आप छाया के करीब उसी भाग में त्रिज्यीय वक्ररेखाओं का समूह स्पष्ट देखते हैं। ये रेखाएँ उस दशा में भी प्रगट होती हैं जब आप स्वयं तो समतल सड़क पर सायकिल चलाते हैं, किन्तु पहिये की छाया फुटपाथ के ऊँचे-नीचे पत्थरों पर पड़ती है। स्पष्ट है कि प्रक्षेप-पर्दे की असमतल सतह का प्रभाव वैसा ही होता है जैसा चश्मे के लेन्स को ठक-ठकाने पर। किन्तु रेखाओं की वक्रता कैसे उत्पन्न होती है? और वे आम तौर पर छाया के उसी भाग A में ही क्यों दीखती हैं?

ऊपर वर्णन की गयी वक्ररेखाओं के अतिरिक्त एक और विचित्र हलकी आकृति भी बनती है; अवश्य इसे तभी देखा जा सकता है जब एकदम नयी चमचमाती हुई तीलियोंवाली सायकिल पर सूर्य की किरणें गिरती हैं।

८८. उत्तर-प्रतिबिम्ब

इन प्रेक्षणों के समय बहुत ही अधिक सावधानी बरतिए! आँखों पर अत्यधिक जोर मत दीजिए! एकसाथ लगातार दो से अधिक प्रेक्षण मत कीजिए!

अस्त होते हुए सूर्य को ध्यान से देखिए और तब आँखें बन्द कर लीजिए[1]। अब आँखों में बाद में बनने वाले उत्तर प्रतिबिम्ब में कई नन्हे-नन्हें गोल मंडल मौजूद होंगे जो इस बात के प्रमाण हैं कि उस अल्पकाल में जबकि आपकी नजर सूर्य पर गड़ी रही थी, आपकी आँखों ने हलके झटकों में गति की है। ये मंडल आपको विशेष छोटे प्रतीत होंगे क्योंकि अपनी प्रचण्ड चमक के कारण सूर्य आपको वास्तविक आकार से कुछ बड़ा ही दीखता है; इसका सही आकार तो उत्तर-प्रतिबिम्ब में ही प्राप्त होता है।

अपनी आँखें फिर खोलिए—जिस ओर आप दृष्टि डालें, उधर ही आपको उत्तर-प्रतिबिम्ब दीखेंगे। जितने ही अधिक फासले की वस्तु पर आप प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित करेंगे उतने ही अधिक बड़े आकार के ये उत्तर प्रतिबिम्ब प्रतीत होंगे। अवश्य उनके कोणीय व्यास तो सदैव एक समान ही बने रहते हैं। यदि आपको मालूम है अमुक वस्तु फासले पर है, फिर भी यह आँख पर उतना ही बड़ा कोण बनाती है, जितना बड़ा कोण एक निकट की वस्तु बनाती है तो आप सहज ही अपने दैनिक अनुभव के आधार पर इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि दरअसल इन दोनों में दूर वाली वस्तु अवश्य बड़ी होगी।

1. Goethe, Theory of Colours (1840) Titchener, Experimental Psychology (New, York) I, 1, 29, I, 2, 47

मटमैली पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिविम्ब हलका दीखता है (पाजिटिव उत्तर प्रतिविम्ब)। इसकी अनुभूति अच्छी तरह की जा सकती है यदि आँख को बन्द करके उसे हथेलियों से ढंक दें क्योंकि पलकें पारदर्शी होती हैं। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिविम्ब मटमैले रंग के बनते हैं (निगेटिव उत्तर-प्रतिविम्ब)। स्पष्ट है कि तीव्र प्रकाश रेटिना को स्थानीय तौर पर उत्तेजित कर देता है अतः उस प्रकाश की तो अनुभूति बनी रहती है, किन्तु साथ ही साथ अब रेटिना के उस भाग की ग्राहिता नवीन प्रकाश-अनुभूतियों के लिए घट जाती है।

इसी प्रकार सूर्य की अपेक्षा कम प्रकाश देनेवाले प्रकाश-स्रोत अपेक्षाकृत हलके उत्तर-प्रतिविम्ब उत्पन्न करते हैं। इस दशा में रेटिना पर प्रभाव डालनेवाली उत्तेजना कुछ सेकण्डों में या एक सेकण्ड से कम समय में ही बहुत ही हलकी पड़ जाती है; केवल रेटिना की थ्रान्ति बची रह जाती है अतः अब केवल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर विलोम उत्तर-प्रतिविम्ब देखे जा सकते हैं।

रंगीन प्रकाश-स्रोतों के लिए उपर्युक्त दशा में उत्तर-प्रतिविम्ब श्वेत रंग से काले रंग में तब्दील होने के बजाय अपने पूरक रंग में तब्दील हो जाता है; अतः लाल रंग हरे-नीले रंग में परिणत हो जाता है, नारङ्गी रंग नीले में, पीला रंग बैंगनी में, हरा रंग गुलाबी में और इसी तरह रंग का परिवर्तन उलटे क्रम में भी चलता है।

सन्ध्या की झुटपुटे की वेला उत्तर-प्रतिविम्ब के प्रेक्षण के लिए सर्वोत्तम समय है। गेटे द्वारा वर्णित उत्तर-प्रतिविम्ब की सभी प्रमुख घटनाएँ सन्ध्या को ही देखी गयी थी। इस बेला में आँखें पूर्ण विश्राम की अवस्था में रहती हैं तथा पश्चिम के आकाश की रोशनी और पूर्व के आकाश के अन्धकार के बीच विपर्यास स्पष्टतम होता है।

अपनी कृति 'फार्बेन्लेहर्' में गेटे लिखता है 'एक सन्ध्या को जैसे ही मैं सराय के कमरे में घुसा, एक सुन्दर लड़की मेरी ओर आयी। उसका चेहरा चमचमाते हुए गौर वर्ण का था, बाल काले रंग के थे और वह चटकीले लाल रंग की बॉडिस पहने हुई थी। मुझसे कुछ फासले पर जब वह खड़ी थी तो मैंने उस झुटपुटे में उसे गौर से देखा। एक क्षण बाद जब वह चली गयी तो सामने की सफेद दीवार पर मुझे एक काला चेहरा दिखलाई दिया, जो चमकीले प्रकाश से परिवेष्टित था और इस स्पष्ट आकृति के वस्त्र-परिधान खूबसूरत समुद्री हरे रंग के थे।'[1]

1. Goethe, Theory of Colours

है कि यह घटना, जिसके बारे में उन दिनों समूचे ग्रन्थ लिखे गये, केवल उत्तर-प्रतिबिम्ब के कारण उत्पन्न होती है। गेटे को भी ये उत्तर-प्रतिबिम्ब उस वक्त दीख पड़े थे जब उसने चटकीले रंग के फूलों पर नज़र गड़ायी और फिर रेतीली सड़क पर दृष्टि डाली। पियोनी, पूर्वीय देश के पॉपी, मेरीगोल्ड तथा पीले क्रोकस के फूलों से मनमोहक हरे, नीलें तथा बैंगनी रंग के उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त हुए थे।[1] ये निरीक्षण विशेषतया सन्ध्या के समय प्राप्त होते हैं तथा ज्वाला-जैसी चमक केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब एक क्षण के लिए हम दृष्टि एक ओर हटाते हैं—उत्तर प्रतिबिम्ब में इस तरह के सभी ब्योरे के प्राप्त होने की आशा की जा सकती है।

किसी व्यक्ति को जब यह इतमीनान हो जाय कि उसे यह घटना बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रही है तो उसे चटकीले रंग के कागज के फूल को असली फूल के निकट रखकर यह देखना चाहिए कि कागज के ये फूल उस घटना का प्रदर्शन करते हैं या नहीं।

९०. उत्तर-प्रतिबिम्बों में रंगों का परिवर्तन

उत्तर प्रतिबिम्बों के विलुप्त होने की द्रुत गति भिन्न रंगों के लिए विभिन्न होती है, विशेषतया उस दशा में जबकि प्रकाश का प्रभाव अत्यन्त प्रबल रहा हो। यही कारण है कि सूर्य तथा अत्यन्त उजले पदार्थ के उत्तर-प्रतिबिम्ब रंगीन दीखते हैं। साधारणतया मटमैली पृष्ठभूमि पर यह उत्तर-प्रतिबिम्ब पहले तो हरे-नीले रंग का बनता है, फिर यह गुलाबी रग का हो जाता है।

'सन्ध्या के करीब मैंने लुहारखाने में ठीक उस समय प्रवेश किया जबकि दहकता हुआ लोहे का एक टुकड़ा हथौड़े के नीचे रखा गया था। कुछ देर तक उसे गौर से देख चुकने के बाद मैं पीछे मुड़ा तो सामने, कोयले के खुले हुए गोदाम पर नजर पड़ी। गुलाबी वर्ण का विशालकाय प्रतिबिम्ब मेरी आँखों के समक्ष उतराता रहा, और जब उस काली पृष्ठभूमि से नजर हटा कर मैंने हलके रंग की लकड़ी की सतह की ओर देखा तो यह प्रतिबिम्ब कम प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध हरे रंग का और अधिक प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध गुलाबी रंग का प्रगट हुआ'[2]

धूप में हम बर्फ के ढेर को देख रहे हों, या जब पुस्तक पढते हों जिसपर धूप पड़ रही हो, तो निकट की प्रत्येक चमकदार वस्तु हमें गुलाबी रंग की दीखती है; बाद में साये में पड़ी गहरे रंग की प्रत्येक वस्तु मनमोहक हरे रग की दीखती है। यहाँ भी चमकीली पृष्ठभूमि पर बनने वाले उत्तर-प्रतिबिम्ब के रग अन्धकारमय पृष्ठभूमि पर बनने वाले

1. Goethe, Theory of Colours 2. Goethe, Theory of Colours

उत्तर-प्रतिबिम्ब के रंग के पूरक होते हैं। कुछ प्रेक्षकों के अनुसार ये उत्तर-प्रतिबिम्ब गुलाबी के बजाय रक्तिम वर्ण के बनते हैं।

आंशिक रूप से इसका एक और कारण भी हो सकता है, सूर्य का प्रकाश न केवल हमारी आँखों में प्रवेश करता है बल्कि आँख के ऊपर भी वह गिरता है। आँख के ऊपर गिरने वाले प्रकाश का कुछ भाग पलकों और आँख के कोटर को पार करके भीतर पहुँचता है तो इसका रंग लाल वर्ण का हो जाता है। हमारा दृष्टिक्षेत्र इस तरह लाल रंग की रोशनी से पूर्णतया भर जाता है, और यह हमें उस वक्त स्पष्ट दिखाई पड़ता है जब आस-पास की चीजें मटमैले वाले रंग की होती हैं। मिसाल के तौर पर काले अक्षर लाल दिखाई देते हैं। अब अगर हम छाया में चले जायें, या घर के अन्दर, तो लाल वर्ण के लिए हमारी आँख की श्रान्ति अब भी बनी रहती है और सभी चमकीले भाग हरे दिखलाई पड़ते हैं।

अस्त होते हुए सूर्य की ओर मुँह करके चलें, तो भू-दृश्य की सभी [illegible] वस्तुएँ हमें लाल रंग की दिखलाई पड़ती हैं, यह प्रभाव उस वक्त विशेष प्रबल होता है जब हम एक क्षण के लिए इस तरह का आयोजन कर लेते हैं कि आँख पर सूर्य की रोशनी तो न पड़े, किन्तु भू-दृश्य को हम देखते रह सकें।

सन्ध्या के प्रकाश में काले अक्षर लाल रंग[1] के देखे गये हैं, सम्भवतः इस कारण कि क्षितिज के निकट के सूर्य की किरणें पाठक की आँखों पर पड़ रही थीं।

९० अ. समकालीन विपर्यास[2]

सफेद ड्राइंग कागज का तख्ता लीजिए, इसे अपने सामने सीधा ऊर्ध्व धरातल में रखिए और ऐसी खिड़की के निकट खड़े होइए जिसपर धूप न पड़ रही हो। कागज को खिड़की के धरातल के समकोण रखते हुए दीवार के समानान्तर देखिए तो कागज भलीभाँति प्रकाशित और प्रदीप्त दीखेगा। किन्तु कागज को अब खुली हुई खिड़की के निकट ले आइए ताकि क्षितिज के ऊपर के आकाश के एक भाग को कागज ढक ले, अब अचानक ही कागज काला दिखलाई देने लगता है। तथापि पहले की अपेक्षा इस पर अब कम रोशनी नहीं पड़ रही है, बल्कि इसके प्रतिकूल यह तो खिड़की के और भी नजदीक आ गया है, अतः इस पर गिरने वाली रोशनी पहले से अधिक होगी। बात तो यह है कि इस दशा में विपर्यास उत्पन्न करने वाली पृष्ठभूमि बदल जाती है।

1. Ibid   2 Simultaneous Contrasts

यह सरल प्रयोग मौलिक सिद्धान्त प्रगट करता है। खुले आकाश में इस प्रकार के प्रभाव अक्सर दिखलाई देते हैं।

९१. परस्पर सटी हुई विभिन्न प्रदीप्तियों की सतहों के बीच की विपर्यास-सीमारेखा

मुख्यतः सन्ध्या को, अन्धकारमय मकानों की कतार का ढाँचा हलके प्रकाश वाले आकाश के सम्मुख देखने पर, हाशिये पर प्रकाशमण्डित दीखता है। इसकी व्याख्या इस परिकल्पना द्वारा की जा सकती है कि आँख में अनजाने ही थोड़ी हरकत होती है तो मकानों के दीप्तिमान् उत्तर-प्रतिबिम्ब निकट के आकाश पर प्रगट होते हैं, अतः वहाँ प्रदीप्ति बढ़ जाती है। इस रीति से इस प्रभाव की केवल आंशिक व्याख्या हो पाती है; प्रकाशित भाग के गिर्द रेटिना की सतह की सुग्राहिता में ह्रास होना, इस मामले में अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व रखता है (§ ७२)।

'एक बार मैं घास के मैदान में बैठा हुआ एक आदमी से बात कर रहा था जो कुछ फासले पर खड़ा था, उसके शरीर का ढाँचा धूमिल आकाश के सामने स्पष्ट दीख रहा था। ध्यान से, और लगातार कुछ देर तक, उसे देखते रहने के पश्चात् मैंने अपनी निगाह फेरी तो मुझे उसका सिर दिखाई पड़ा जो जगमगाती हुई प्रकाश-ज्योति से परिवेष्ठित था।'[1]

पतंगों के साथ प्रयोग करने के सिलसिले में पेटर वैक्कैरिया ने देखा कि पतंग तथा इससे बँधी डोरी के गिर्द एक छोटे बादल-जैसा ज्योति-पुंज मौजूद था। जब कभी पतंग की गति थोड़ी तेज होती, तो ज्योतिपुंज का बादल पीछे ही छूट जाता और क्षणभर के लिए वह इधर से उधर उतराने लगता।[2]

प्रकाशीय विपर्यास की एक अत्यन्त ही अद्भुत मिसाल ऊबड़-खाबड़ जमीन के उन मैदानों में देखी जा सकती है जहाँ एक के बाद दूसरे टीले दूरी बढ़ने के साथ आकाशीय परिदर्शन[3] के अनुसार हलके पड़ते जाते हैं, यहाँ तक कि अन्त में दूर के धुँधलके में वे अदृश्य हो जाते हैं (प्लेट VIII, B)। प्रत्येक टीला सिरे के हाशिये पर पेंदे की अपेक्षा अधिक अन्धकारमय दीखता है—यह प्रभाव इतना सुस्पष्ट होता है कि यह बरबस ध्यान आकृष्ट कर लेता है। फिर भी यह है केवल एक दृष्टि-भ्रम ही; जो इस कारण उत्पन्न होता है कि प्रत्येक टीले के सिरे के ऊपर प्रकाशित पट्टी मौजूद होती है और पेंदे के सहारे गहरे रंग की पट्टी। इसे प्रमाणित करने के लिए भू-दृश्य के ऊपरी भाग को

1. Goethe, Theory of Colours. 2. Ibid 3. Perspective

ढकने के उद्देश्य से कागज का एक टुकड़ा रखना चाहिए (प्लेट VIII, b में बिन्दु रेखाओं की स्थिति पर); यह क्रिया यह दिखाने के लिए पर्य्याप्त होगी कि अब विपर्यास का प्रभाव विलुप्त हो जाता है।

शार्पे बतलाता है कि अमावस्या के दो दिन उपरान्त, नाखूनी नवचन्द्र के सम्मुख मन्द रोशनी से प्रकाशित चन्द्रमडलक के बाहरी हाशिय पर हलकी रोशनी दीखती है। तथापि यह विपर्यास घटना नहीं है, वल्कि यह चन्द्रमा के हाशिये वाले भाग की परावर्त्तन-शक्ति के अधिक होने का परिणाम है; कृष्णपक्ष की अष्टमी के चन्द्रमा में यह प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।[1]

९२. छाया की सीमारेखा के सहारे विपर्यास का हाशिया[2]

सभी यह जानते है कि दफ्ती के टुकडे को धूप मे लेकर खडे हों तो पर्दे पर इसकी छाया पड़गी। हाशिये पर, छाया और प्रकाश के दर्मियान अर्द्धछाया का प्रदेश मिलता है जो सूर्य के परिमित आकार के कारण बनता है (§२)। किन्तु क्या इस बात का सबको पता है कि इन अर्द्धछाया का हाशिया उस स्थल पर जहाँ प्रकाश अर्द्धछाया में तब्दील होता है, चमकीला होता है ?

प्रयोग उस वक्त कीजिए जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो ताकि उसका प्रकाश मन्द ही रहे। दफ्ती के टुकड़े के पीछे लगभग ४ गज की दूरी पर पर्दा रखिए और इसे इधर-उधर थोड़ा हिलाइए ताकि स्थानीय शिकनें दूर हो जायँ। अब उक्त प्रभाव बिलकुल स्पष्ट दीखेगा। प्रेक्षण मे प्राप्त प्रकाश का वितरण चित्र ९२ की पूर्ण रेखा द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

क्या आप इसकी व्याख्या कर सकते है ? निम्नलिखित विवेचन से प्रकाश का प्रत्याशित वितरण प्राप्त किया जा सकता है। प्रकाशित पर्दे के क्रमागत बिन्दुओ १, २, ३ से देखने पर सूर्य-मडलक के दफ्ती के पीछे ढक जानेवाले भाग का विस्तार उत्तरोत्तर कम होता जाता है। इन बिन्दुओं की प्रदीप्ति भी सूर्य-मंडलक के खुले हुए भाग के क्षेत्रफल की वृद्धि के अनुपात मे ही बढती जाती है, अत. प्रदीप्ति बिन्दु से बने वक्रपथ का अनुगमन करती है। इस प्रकार चमकीले हाशिये का बनना नितान्त असम्भव है—सारा मामला प्रकाशीय दृष्टि-भ्रम के कारण उत्पन्न होता है।

और वास्तव में सभी परिस्थितियाँ इसी धारणा का अनुमोदन करती जान पड़ती

1. Phil. Mag. 4, 427. See also Brit. Astr. Ass. 28, 29, 45
2. K. Groes—Pettersen Ash. Nachr. 196, 293, 1913

हैं। माश ने सिद्ध किया है कि जब कभी प्रदीप्ति का ह्रास एक समान दर से नहीं होता है तो ये विपर्यास-पट्टियां अनिवार्य रूप से प्रगट होती हैं—अर्थात् विपर्यास-पट्टी तभी दीखती है जब प्रदीप्ति-ग्राफरेखा वक्रमार्ग में जाती है। हमेशा ही ऐसा प्रतीत होता है कि विपर्यास-पट्टी, ग्राफ की वक्ररेखा का ही परिवर्द्धित रूप है। दरअसल बात
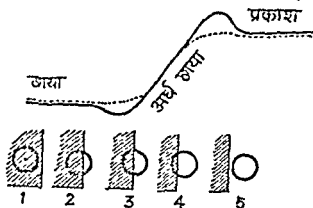
चित्र ९२—छाया की सीमारेखा के संलग्न विपर्यास हाशिये
··········दीप्ति का वास्तविक वितरण
———दीप्ति का आभासी वितरण

यही है—इसे समझने के लिए या तो हम कल्पना करें कि आँख में निरन्तर थोड़ी हरकत होती रहती है या यह कि रेटिना के प्रकाशित भाग के निकट उसकी सुग्राहिता घट जाती है।

§९१ में उल्लिखित दृष्टान्त भी माश के सिद्धान्त के पूर्णतया अनुकूल बैठते हैं—इस दशा में केवल हमें प्रदीप्ति-वक्र के कोण को, वक्रता की वृद्धि के रूप में मानना पड़ेगा।

और अन्त में, समय-समय पर हमें अत्यन्त ही विशिष्ट अवसर इस सिद्धान्त की जाँच के लिए मिलते हैं—अर्थात् सूर्य के आंशिक ग्रहण के वक्त उपर्युक्त प्रयोग को इस अवसर पर दुहराने पर जैसे-जैसे चन्द्रमा के पीछे सूर्य-मंडलक के हिस्से छिपते जाते हैं, और जैसे-जैसे छाया डालने वाली दफ्ती की स्थिति हम बदलते हैं, उसी के अनुसार अर्द्ध छाया के हाशिये पर प्रकाश के अनेक असाधारण वितरण-क्रम प्राप्त होते हैं। प्रत्येक वितरण-क्रम में प्रकाम्य रूप से विपर्यास-पट्टियां प्रदर्शित होती हैं और प्रत्येक दशा में माश के नियम का पालन होता है। अतः आश्चर्य नहीं कि ये छायाएं इतनी असाधारण दीखती हैं कि आकस्मिक प्रेक्षकों का भी ध्यान ये अपनी ओर आकृष्ट कर लेती हैं (देखिए §३)।

९३. कृष्ण वर्ण का तुषार (स्नो)

धूमिल आकाश से तिरते हुए से नीचे गिरने वाले तुषार की नन्हीं परत के टुकड़ो का अवलोकन कीजिए। आकाश की पृष्ठभूमि पर ये टुकड़े निश्चय ही काले रग के दीखते हैं। यह बात ध्यान मे रखना चाहिए कि काला, धूमिल, और श्वेत रग केवल अकेले एक गुण के कारण भिन्नता प्रदर्शित करते हैं, और वह है उनकी प्रदीप्ति, जिसकी नाप के लिए आसपास की पृष्ठभूमि ही, तुलना के मापदण्ड का काम करती है। इस दशा में सभी प्रदीप्तियो की तुलना आकाश से की जाती है, और यह आकाश जितना हम ख्याल करते हैं उससे कही अधिक प्रकाशमान है; कम-से-कम नीचे से दृष्टिगोचर होनेवाली गिरती हुई वर्फ के मुकाबले में तो आकाश अत्यधिक चमकीला है ही। इस घटना का उल्लेख अरस्तू ने भी किया था।

९४. श्वेत तुषार और धूमिल आकाश

आकाश जब समान रूप से धूमिल रहता है तो हिमाच्छादित भूमि की तुलना में यह बहुत अधिक मटमैला दीखता है। फिर भी स्पष्टत. यह प्रभाव है भ्रमोत्पादक; क्योंकि इसी आकाश से धरती प्रकाशित होती है, और जिस वस्तु पर प्रकाश गिरता है उसकी सतह की प्रदीप्ति प्रकाश-स्रोत की अपेक्षा कदापि अधिक नही हो सकती। दीप्ति-मापी यत्र द्वारा नापने पर आकाश की प्रदीप्ति-मात्रा निस्सन्देह अधिक ठहरती है। यदि दर्पण लेकर उसे इस प्रकार रखे कि आकाश का प्रतिबिम्ब तुषार के प्रतिबिम्ब से सटा हुआ बने तो आप देखेंगे कि श्वेत आकाश की तुलना में तुषार दरअसल भूरे रग का प्रतीत होता है। इस प्रयोग को अवश्य कीजिए क्योंकि यह उतना ही विश्वसनीय है जितना आश्चर्यजनक।

इतने पर भी विपर्यास का भ्रम दूर नही होता यद्यपि हम जानते है कि वास्तव मे बात ठीक उलटी है। इस दशा में तुषार और उसके आस-पास के अपेक्षाकृत अत्यन्त गहरे शेड के वृक्ष, झाड़ियाँ और मकानों के दर्मियान का विपर्यास ही निर्णायक तत्त्व बन जाता है।

इसी प्रकार बदलीवाले दिन सफेद रग की दीवार आकाश की अपेक्षा अधिक प्रकाशमान प्रतीत हो सकती है। फोटोग्राफ तथा चित्र इस भ्रमात्मक धारणा के अनुकूल न होने के कारण अत्यन्त अस्वाभाविक लगते हैं।

९५. रंगों का विपर्यास

अनेक दशाओं में जबकि वातावरण मे कोई एक विशेष रंग प्रमुखता प्राप्त करता है तो इसके बदले में पूरक रग विशेष चटकीला प्रतीत होगा। कुछ दशाओं मे इसकी

व्याख्या उसी प्रकार की जा सकती है जिस प्रकार विपर्यास हाशिये की—अर्थात् इस परिकल्पना द्वारा कि आँख में अनायास ही निरन्तर हरकत होती रहती है। किन्तु इस सम्बन्ध में अधिक महत्त्व की बात यह है कि रेटिना के वे भाग जो प्रमुख रंग द्वारा उत्तेजित होते हैं, सलग्न भागों को उस रंग के प्रति कम सुग्राही बना देते हैं। इसका अर्थ हुआ कि हमारी आँख अब पूरक रंग के लिए अधिक सुग्राही बन जाती है—अतः इस कारण आँखों को पूरक रंग द्वारा अधिक संतृप्ति और ताजगी की अनुभूति मिलती है। इस दृष्टिकोण से विचार करने पर हम पाते हैं कि रंगों का विपर्यास इस व्यापक नियम का एक और उदाहरण है कि रंग और प्रदीप्ति की अनुभूति रेटिना पर अङ्कित होनेवाले सभी प्रतिबिम्बों के संयुक्त प्रभाव द्वारा ही की जाती है।

एक प्रेक्षक ने इस बात पर गौर किया है कि सहन के फर्श में जड़े धूसर रंग के पत्थरों के दर्मियान उगी हुई घास, सन्ध्या को, जब बादल रक्तिम वर्ण की अत्यन्त हलकी आभा पत्थरों पर बिखराते हैं, अत्यन्त ही मनमोहक हरे रंग की दीखती है।[1]

जब हम औसत रूप के खुले आकाश में खेतों में टहलते हैं तो चारों ओर हरे रंग की प्रमुखता रहती है, और वृक्षों के तने, टीले तथा पगडण्डियाँ हमें ललछवें रंग की दिखलाई पड़ती हैं।

हरे काँच वाली खिड़की में से देखने पर धूसर रंग का मकान ललछवें रंग का प्रतीत होता है। फिर समुद्र की लहरें जब मनोहर हरे रंग की दीखती हैं तो छाया में स्थित भाग गुलाबी रंग के दिखलाई देते हैं[2] (देखिए §§ २१२, २१६)।

यदि आप के आसपास मिट्टी के तेल के लैम्प या मोमबत्ती की रोशनी हो रही है जो सुर्खी लिये हुए होती है, तो आर्क लैम्प या चन्द्रमा की रोशनी हरे-नीले रंग की प्रतीत होगी। यह विपर्यास विशेष रूप से उस वक्त प्रबल होता है जब प्रकाश-स्रोत अत्यधिक प्रचण्ड ज्योति के नहीं होते—मिसाल के लिए चन्द्रमा और गैस की लौ, दोनों के प्रतिबिम्ब को पानी में जब हम एक साथ देखते हैं।

वृक्षों के झुरमुट को पार करके सूर्य की किरणें नीचे जमीन पर जब गिरती हैं तो इस तरह बनने वाले रोशनी के धब्बे आसपास के सामान्य हरे रंग की तुलना में हलके गुलाबी रंग के प्रतीत होते हैं।[3]

1. Goethe, Theory of Colours 2. Ibid
3. Helmholtz 'On the relation of Optics to painting' popular science Literature 2nd Seriesce (London 1873)

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का उल्लेख किया है कि किस तरह 'काले रंग के वस्त्र-परिधान चेहरे को वास्तविकता से अधिक गौर वर्ण का बना देते हैं, तथा श्वेत वस्त्र चेहरे को साँवले रग का प्रदर्शित करते हैं, पीले रग के वस्त्र से चेहरे का रग खिल उठता है तथा लाल रग के वस्त्र चेहरे को पीला बना देते हैं।'

रग-विपर्यास उस वक्त विशेष रूप से प्रमुख होता है जबकि सलग्न प्रदेशों की प्रदीप्ति में अन्तर बहुत अधिक नही होता। जब प्रदीप्तियो में अन्तर अत्यधिक होता है तब उस दशा मे क्या नतीजा होता है? यह शाम के झुटपुटे में बखूबी देखा जा सकता है जब पश्चिम के अङ्गारे-जैसे नारङ्गी वर्ण के आकाश की पृष्ठभूमि पर मकानों की कतार काले रग में उभरी हुई प्रतीत होती है। दूर से बस उनका गहरे काले रंग का खाका ही दिखाई पडता है, तमाम ब्योरे और उनकी प्रदीप्तियों के अन्तर गायब हो जाते हैं। झाड़ियो और टहनियो की भी उसी प्रकार केवल रूपरेखा भर काले मखमल की भाँति दीखती है—उनके निज के रग गायब हो चुके रहते हैं (§२२०); ऐसा इसलिए नहीं होता कि चीजों पर पड़ने वाली रोशनी स्वयं बहुत कम है, क्योकि उसी मौके पर भूमि पर वस्तुओं के रग की सभी बारीकियाँ स्पष्ट रूप से पहचानी जा सकती हैं।

बर्फ पर कुछ घटो तक चलते रहने के दर्मियान केवल श्वेत तथा भूरे रग ही देखने को मिलते हैं, अत अब अन्य रग हमें तृप्ति की और खुशनुमा होने की अनुभूति देते हैं। मानो हमारी आँखों को इन रगों की अनुभूति के लिए पर्य्याप्त विश्राम मिल चुका होता है।

गेटे अपनी कृति 'थियरी आव कलर्स' मे लिखता है "और फिर ये घटनाएँ कुशल प्रेक्षक को हर कहीं देखने को मिल जाती हैं, यहाँ तक वह इनसे ऊब-सा जाता है।"

९६. रंगीन छाया

कागज के तख्ते पर पेन्सिल को सीधी खड़ी करे ताकि एक ओर से इसपर मोमबत्ती की रोशनी पड़े और दूसरी ओर चन्द्रमा की रोशनी। तब इसकी दोनो छायाओं मे रग का स्पष्ट अन्तर दीखता है। मोमबत्ती से बननेवाली छाया का रग नीलापन लिये हुए होता है और चन्द्रमा वाली छाया पीलापन लिये हुए होती है।[1]

यह सही है कि रंग का यह अन्तर भौतिक है क्योंकि पहली छाया जहाँ पड़ती है वहाँ कागज केवल चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है और जहाँ दूसरी छाया पड़ती

1. Goethe, Theory of Colours

है वहाँ केवल मोमबत्ती की रोशनी पड़ती है; और चाँदनी निस्सन्देह मोमबत्ती के प्रकाश की अपेक्षा अधिक श्वेत है। किन्तु फिर भी चाँद की रोशनी नीली नहीं है। स्पष्ट है कि दोनों छायाओं के रंग का अन्तर हमारी शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी[1] कारणों से उत्पन्न विपर्यास द्वारा संशोधित होकर तीव्रतर हो उठता है।

इसी प्रकार रात में सड़क के लैम्प तथा चन्द्रमा की रोशनी से बनने वाली अपनी दोनों छायाओं के अन्तर का हम निरीक्षण कर सकते हैं।

विद्युत् लैम्प के प्रकाश का नारङ्गी रंग सोडियम लैम्प की तुलना में कितना गाढ़ा है, इसका प्रेक्षण उन स्थानों पर किया जा सकता है जहाँ दोनो के प्रकाश परस्पर मिले हुए होते हैं। सोडियम लैम्प द्वारा बननेवाली छाया मनमोहक नीले रंग की होती है; और विद्युत् लैम्प वाली छाया नारङ्गी वर्ण की! ज्योंही हम अकेले सोडियम लैम्प के प्रकाश में आते हैं, हमारी छाया काले रंग की प्रतीत होने लगती है—आगे चलते-चलते जब हम साधारण विद्युत् लैम्प के निकट पहुँचते हैं तो यही छाया अचानक नीले रंग की हो जाती है; इसके विपरीत अकेले विद्युत् लैम्प के प्रकाश में बनने वाली छाया, जब हम सोडियम लैम्प के निकट जाते हैं, अचानक नारङ्गी रंग में परिवर्तित हो जाती है। स्पष्ट है कि आँखें अपने वातावरण के प्रति अपने को सामानुयोजित कर लेती हैं और इस क्रिया में आँख की प्रवृत्ति होती है कि वातावरण के प्रमुख वर्ण को वह श्वेत प्रकाश के रूप में ग्रहण कर ले, अतः अन्य सभी रंगों की अनुभूति अब इस तथाकथित 'श्वेत' प्रकाश के लिहाज से की जाती है।

गेटे लिखता है कि चटक पीले रंग की वस्तुओं की छाया बैंगनी रंग की बनती है। भौतिक दृष्टि से निस्सन्देह यह बात सच नहीं है, किन्तु शारीरिक प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न होने वाले विपर्यास के कारण ऐसा प्रतीत हो सकता है—उदाहरण के लिए जब वस्तु का प्रकाशित भाग प्रेक्षक के सामने पड़ता है, तो प्रेक्षक को इसकी छाया एक विकट रूप से तीव्र पीले प्रकाश के सांनिध्य[2] में दीख पड़ती है।

आप जानना चाहेंगे कि दोपहर को सूर्य की धूप में छाया करीब-करीब पूर्णतया रंगविहीन क्यों होती है जब कि आकाश का नीला वर्ण सूर्य के प्रकाश के रंग से इतना अधिक भिन्न होता है। इसका उत्तर यह है कि प्रकाशित भाग और छाया की प्रदीप्ति में अन्तर बहुत ही अधिक है। किन्तु पर्दे को जिसपर छाया पड़ती है यदि तिरछे झुकाएँ, ताकि सूर्य की किरणें इस पर करीब-करीब सतह के समानान्तर पड़ें, तो रंग का विपर्यास

1. Physiological 2. Juxtaposition

और अधिक स्पष्ट तौर पर उभर आता है। इसका एक प्रख्यात उदाहरण है हिम पर पड़ने वाली छायाएँ—इस दशा में इनके रंग की विशुद्धता विशेष रूप से निखर आती है। इनका रंग नीला इसलिए होता है कि इन्हें केवल नीले आकाश से रोशनी मिलती है। इनका नीलापन स्वयं आकाश के नीलेपन के बराबर तक पहुँचता है। चूंकि इन्हें हम सूर्य के पीलेपन वाले प्रकाश से प्रदीप्त हिम के बगल में देखते हैं अत: इन्हें तो और भी अधिक नीला दिखना चाहिए। किन्तु प्रदीप्ति में अन्तर अधिक होने के कारण जितनी आशा की जाती है उसकी अपेक्षा कम ही मात्रा में यह नीलापन निखर पाता है। अब छाया का प्रेक्षण उस वक्त कीजिए जब सूर्य भू-दृश्य के पीछे छिपने को होता है—विशेषतया छिपने के पूर्व के अन्तिम क्षणों में। सूर्य जैसे-जैसे नारङ्गी वर्ण, फिर लाल, तब गुलाबी रंग धारण करता है वैसे-वैसे छाया भी क्रमश: नीली, हरी और हरे-पीतवर्ण की होती जाती है। रंग के ये शेड इतने प्रमुख इस कारण होते हैं कि इस दशा में छाया और निकट के हिम की प्रदीप्ति में अन्तर दिन की अपेक्षा बहुत कम होता है। क्योंकि अब किरणें हिम धरातल पर अत्यन्त तिरछी होकर गिरती हैं, अत: अब आकाश का विस्तृत प्रकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इसके अतिरिक्त अब सूर्य के रंग और भी अधिक सतृप्त हो जाते हैं।

जाड़े के दिनों में हार्ज[1] की यात्रा में दिन छिपने के समय मैं ब्रोकेन[2] से नीचे उतरा; ऊपर तथा नीचे के खेतों पर श्वेत बर्फ पड़ी थी और झाड़ियों का मैदान हिम से ढका था; दूर-दूर खड़े वृक्ष, उभरी हुई पर्वत चोटियाँ, वृक्षों के झुरमुट तथा चट्टानें, पाले से पूर्णतया ढकी हुई थी, और ओडर झील के उस पार सूर्य बस अस्त हो ही रहा था। दिन में जबकि हिम के रंग में पीलेपन का पुट मौजूद था, छायाएँ हलके बैंगनी शेड की दिखलाई देती थीं, किन्तु अब जबकि हिम के प्रकाशित भाग से अधिक चटकीले पीतवर्ण का प्रकाश परावर्तित हो रहा था, छायाएँ निश्चित रूप से चटकीले नीले रंग की हो गयी थीं। किन्तु सूर्य जब ठीक डूबने को हुआ और उसकी रोशनी ने वायुमण्डल से प्रभावित होकर मेरे आसपास की सभी चीजों पर शानदार गुलाबी आभा फैला दी तो छाया का रंग हरे वर्ण में तब्दील हो गया जो विशुद्धता में समुद्र के रंग के मानिन्द था तथा सौन्दर्य में मरकतमणि का मुकाबला करता था। घटना का दृश्य उत्तरोत्तर अधिक सजीव होता गया; वातावरण परीलोक-सदृश बन गया क्योंकि प्रत्येक वस्तु इन दोनों पूर्णतया सन्तुलित चटकीले प्रकाश वर्णों से आच्छादित थी और तब अन्त में सूर्य के अस्त

1. Harz 2. Brocken

हो चुकने पर यह शानदार दृश्य धूसर धुंधलके में तब्दील हो गया जो बाद में स्वच्छ रात्रि में परिणत हो गया जिसमें चाँद और सितारे मौजूद थे।"[1]

बर्फ पर पड़ने वाली रंगीन छाया की घटना आंशिक तौर पर और कुछ अद्भुत तरीके से मानसिक कारणों पर अवलम्बित है।[2] दिन के वक्त जबकि आकाश नीला दीखता है, ये छायाएँ अधिक संतृप्त नीले रंग की दीखती हैं बशर्ते इस बात का पता न हो कि हम वर्फ पर देख रहे हैं। दूरी पर स्थित साये में पड़ी वर्फ की सतह से छाया में स्थित सफेद वर्फ तथा 'नीले वर्ण की झील' दोनों का आभास हो सकता है। इसी प्रकार बर्फ पर पड़ने वाली छाया कैमरे के घर्षित काँच के परदे पर प्राप्त किये जाने पर वास्तविक दृश्य के मुकाबले में कहीं अधिक नीले रंग की दीखती है, अतः तुरन्त ही यह पहचान में आ नहीं पाती है। एक प्रेक्षक ने सनोवर के घने वन में से दूर की झाड़ियों पर तुपार का अवलोकन किया तो जाहिर है कि उसका प्रेक्षण पक्षपातरहित था क्योंकि तुपार उसे वास्तव में नीले वर्ण का प्रतीत हुआ; परिस्थितियाँ इस प्रकार थी मानों दोनों ओर से खुली किसी लम्बी नली में से उसका अवलोकन किया जा रहा हो (§ १७४)।

मनोवैज्ञानिकों को इस बात का भलीभाँति पता है कि एक नन्हें सूराख में से अवलोकन करने पर रंग अपने असली वर्ण में देखे जा सकते हैं। उस दशा में प्रभाव इस प्रकार का होता है मानो वे छिद्र के ही धरातल में स्थित हों। किन्तु ज्योंही हम कल्पना करते हैं कि प्रेक्षण की जाने वाली वस्तुएँ अपने निज के वातावरण में हैं तथा उन पर रोशनी सामान्य तरीके से पड़ रही है तो स्वतः ही हम वातावरण के प्रभाव की कमी-बेशी दूर कर लेते हैं, अतः वह वस्तु बदलती हुई दशाओं में भी विशेष रूप से एक-सी बनी रहती है।

बालकों के निरीक्षण से प्राप्त इसी घटना का (बालक निष्पक्ष प्रेक्षक होते हैं) अद्भुत विवरण एक रूसी लेखक ने दिया है। एक क्षण के लिए भी इस बात में मुझे सन्देह नहीं है कि यह विवरण वास्तविक घटना से लिया गया है, यद्यपि लेखक ने कुछ तफसील की बातें छोड़ दी होंगी क्योंकि उसने विवरण अपनी याददाश्त से लिखा है— आकाश का कम-से-कम कुछ भाग तो जब वर्फ गिर रही थी और सूर्य बादलों की ओट में था, अवश्य नीला रहा होगा।

1. Goethe, Theory of Colours
2. I.G. Priest, J.O.S.A., 13, 308, 1326

"गाल्जा, देख !...अरे यह तो नीली वर्फ क्यों गिर रही है ? देखो !.. यह नीली है, एक दम नीली !......"

'बच्चे उत्तेजित हो गये और आह्लादपूर्वक एक दूसरे को सम्बोधित करके चिल्लाने लगे !'

"नीली ! नीली ! !.. नीली वर्फ !"

"नीली क्या है ? कहां ?"

'मैंने वर्फ से ढके खेतों और हिमाच्छादित पहाड़ों को देखा, मैं भी आह्लादित हो गया। कितना असाधारण दृश्य था ! हर दिशा से घूमती, फहराती वर्फ गिर रही थी, निकट भी, दूर भी, नीली परतों की लहर-जैसी । और बच्चे आह्लादमय उत्तेजना में चिल्ला रहे थे :'

"क्या नीला आकाश टुकड़े-टुकड़े होकर नीचे गिर रहा है ? क्यों, यही बात है न गाल्जा ?"

"नीला ! नीला ! !"

'और एक बार फिर मैं इन नन्हें-मुन्ने बच्चों की काव्य-जनित तीक्ष्ण अनुभूति की क्षमता से प्रभावित हो गया। एक मैं हूँ कि उनके साथ चलता जा रहा हूँ बिना इस बात की अनुभूति किये हुए कि हमारे चारों ओर नीली आभा तिरती हुई बिखर रही है। जिन्दगी में कितने शीत काल मैंने बिताये, कितनी ही बार गिरती हुई बर्फ को देखकर मैं आह्लादित हो चुका हूँ, किन्तु एक बार भी तो मैं धरती के ऊपर मँडराती हुई इस निःसीम नीली वर्फ की अजस्र वर्षा के प्रति आकृष्ट नहीं हो पाया था।'[1]

९७. परावर्तित रंगीन प्रकाश से उत्पन्न रंगीन छाया

रंगीन वस्तुओं पर जब सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो प्रायः वे इतनी अधिक रोशनी इधर-उधर बिखेरती हैं कि इनके कारण छायाएँ बन जाती हैं जो पूरक रंग प्रदर्शित करती हैं। प्रकाश के इस प्रभाव के प्रेक्षण के लिए एक छोटी पाकेटबुक एक आदर्श साधन साबित होती है। पुस्तिका को इस तरह खोलिए कि इसके दोनों ओर के भाग एक दूसरे के साथ समकोण बनाये—अब इसके दोनों फलकों में से एक तो सूर्य के प्रकाश को रोकता है और दूसरे फलक पर रंगीन परावर्तन अङ्कित होता है। पाकेटबुक की पेन्सिल को कागज के सामने रखते हैं तो इसकी छाया पूरक रंग ग्रहण कर लेती है;

1. From the Dutch translation Fj. Gladkow, Nieuwe Grond (Amsterdam, 1933) p. 161

अतः यह इस बात के लिए एक अत्यन्त ही सुग्राही निर्देशक है कि आवर्तित प्रकाश रंगीन है अथवा नहीं। दीवार की हरे रंग की सतह या हरी झाड़ियां से बननेवाली छाया गुलाबी रंग प्रदर्शित करती है। पीले रंग की दीवार नीली छाया डालती है (एक बार ४०० गज के फासले पर भी ऐसी छाया प्राप्त की गयी थी !) और पीले रंग के पहाड़ी ढाल से भी इसी रंग की छाया प्राप्त होती है।[1]

९८. विपर्यास-त्रिभुज

एक प्रेक्षक बतलाता है[2] कि एक बार स्वच्छ रात्रि में अपने जहाज से उसने चन्द्रमा को जो क्षितिज से २०° की ऊँचाई पर था, लहरों द्वारा प्रकाश के एक त्रिभुज के रूप में प्रतिबिम्बित होते देखा जो जहाज से लेकर क्षितिज तक फैला हुआ था। विलक्षण बात तो यह थी कि उसी वक्त उसने वैसा ही एक और त्रिभुज देखा जो उलटा और मटमैला था और यह चन्द्रमा से लेकर क्षितिज तक फैला था। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह एक वास्तविक घटना नहीं थी, बल्कि शारीरिक प्रक्रिया के फलस्वरूप घटी थी—ऐसा सोचने के कारण अनेक हैं; क्योंकि यह घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जब समुद्रतट के पहाड़ करीब-करीब चन्द्रमा की ऊँचाई तक पहुँचते है तथा यह उस वक्त विलुप्त हो जाती है जब नीचेवाला प्रकाश का त्रिभुज तथा चन्द्रमा किसी ओट के पीछे आ जाते हैं। और उलटी ओर मुँह फेरने के बाद उसने जब पुनः उस ओर देखा तो यह भ्रमपूर्ण दृश्य केवल चन्द सेकण्ड बाद ही फिर दृष्टिगोचर हुआ। (चित्र ९२ अ)

यह विवरण मुझे कुछ बहुत विश्वसनीय नहीं जान पड़ा और मैंने इस पुस्तक के द्वितीय संस्करण से इसे निकाल देने का निर्णय कर लिया था। संयोग देखिए कि तभी एक डच प्रेक्षक से ठीक इसी घटना का विवरण मुझे प्राप्त हुआ ! कुछ ही समय उपरान्त इसी तरह के प्रेक्षण अन्य लोगों से भी मुझे प्राप्त हुए। चित्रों तथा विज्ञापन पुस्तिकाओं में भी इस प्रभाव को हम लोगों ने देखा। प्रयोगशाला में बड़ी आसानी से इसकी पुनरावृत्ति की जा सकती है। इसमें सन्देह नहीं कि यह एक विपर्यास घटना है जिसके कारणों पर प्रेक्षक ने पर्याप्त प्रकाश डाला है; लगभग १० सेकंड के प्रेक्षण के उपरान्त क्षितिज के ऊपर पहले अन्धकारमय हाशिया दीखता है, तब मटमैला त्रिभुज धीरे-धीरे ऊपर उठता है और करीब ५ सेकण्ड उपरान्त चन्द्रमा तक पहुँच जाता है। यदि आप चमकीले त्रिभुज को ओट में ले लें, तो यह प्रभाव विलुप्त हो जाता है और यदि आप

1. C. R. 48, 1105, 1859 2. Cl. Martins, C. R. 43, 763, 1856

चन्द्रमा को ओट में लें, तो घटना में तब्दीली बहुत कम होती है, केवल मटमैले त्रिभुज का एकदम चोटी का सिरा विलुप्त हो जाता है।
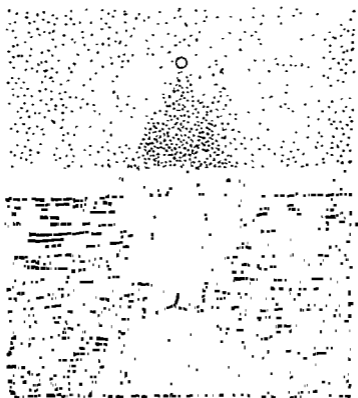
चित्र ९२ अ—विपर्यास-त्रिभुज का निर्माण किस प्रकार होता है।

यह आवश्यक प्रतीत होता है कि क्षितिज के ऊपर का आकाश धुंधली रोशनी से प्रकाशित होना चाहिए, मिसाल के लिए, जब धुन्ध चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है। प्रकाश्यतः इस विपर्यास-त्रिभुज का सम्बन्ध विपर्यास-धारियों से है। इस मटमैले त्रिभुज को एक तरह से लहरों में चमकीले त्रिभुज के प्रतिबिम्ब के रूप में हम देखते हैं—कदाचित् इस अनुभूति का कारण यह है कि हमारी सहज प्रवृत्ति चीजों को संमित रूप तथा योजनाबद्ध आकृतियों में देखने की होती है।

इसी प्रकार की घटना दिन के समय भी देखी गयी है जब चन्द्रमा का स्थान सूर्य ले लेता है, किन्तु अपेक्षाकृत यह बहुत कम स्पष्ट उभर पाती है।

अध्याय ९

प्रेक्षण द्वारा आकृति और गति का विवेचन

९९. स्थिति और दिशा सम्बन्धी प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

मान लीजिए कि दृष्टिक्षेत्र में हम वस्तुओं के दो समूहों को अलग-अलग पहचान पाते हैं। प्रत्येक समूह में वस्तुएँ या तो परस्पर समकोण हैं या एक दूसरे के समानान्तर, किन्तु दोनों समूह एक दूसरे के लिहाज से झुकी हुई स्थिति में हैं। तब इनमें से एक समूह प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हमारी प्रवृत्ति होती है कि ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज दिशा को निश्चित करने के लिए इसे ही हम अपना सही मापदण्ड मान लें।

रेलवे लाइन के मोड़ पर जब रेलगाडी खड़ी होती है या धीरे-धीरे चलती है और हमारा कम्पार्टमेण्ट एक ओर को झुक जाता है तो सभी खम्भे, मकान और स्तम्भ आदि विपरीत दिशा में झुके हुए प्रतीत होते हैं। प्रगट है कि हमें अपने कम्पार्टमेण्ट के झुके होने का ज्ञान अवश्य है, किन्तु एक सीमित हद तक ही।

बगल से आने वाली हवा के झोंके से हिलते हुए जहाज के दहलीज में जब कोई व्यक्ति मुझसे मिलता है तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ऊर्ध्व दिशा के मुकाबले में वह एक ओर को झुका हुआ है।

सड़क के हल्के ढाल का निरीक्षण करते समय भी सायकिल सवार को इसी प्रकार का अनुभव होता है।[1] सदैव ही सड़क का वह भाग जहाँ वह सायकिल चला रहा है, उसे बहुत अधिक क्षैतिज जान पड़ेगा। पहाड़ी के गहरे ढाल पर नीचे आते समय सड़क के बगल में पड़े नाले का पानी उसे क्षैतिज तल में नहीं जान पड़ेगा बल्कि ऐसा प्रतीत होगा मानो पानी की सतह का ढाल स्वयं सायकिल सवार की ओर को है। नीचे की ओर के हल्के ढाल पर ऐसा प्रतीत होता है मानो आगे चलकर सड़क का ढाल ऊपर की ओर हो गया है जबकि वास्तव में सडक वहाँ समतल ही होती है। फिर दूरी पर स्थित सड़क की चढ़ान बहुत ही अधिक तीव्र जान पड़ती है, इसके प्रतिकूल नीचे की ओर

1. Bragg, The Universe of Light (London 1933) p. 66

की ढलान हलकी ही जँचती है। और विशेष रूप से इस बात की अनुभूति करती है कि हमारे सामने सड़क के ढाल की तब्दीली किस प्रकार की है—और इस सिलसिले में हमारी दृष्टि-अनुभूति हमारे उस अनुभव से प्राय भिन्न होती है जो पैडल चलाते समय रुकावट के बल द्वारा हम महसूस करते हैं।

जिस वक्त रेलगाड़ी ब्रेक लगाकर धीरे-धीरे चलती है, हम एक अद्भुत दृष्टिभ्रम का निरीक्षण कर सकते हैं। अपना ध्यान चिमनियों, मकानों, खिड़की के चौखटों या अन्य सीधी खड़ी वस्तुओं पर जमाइए; तो जिस क्षण रेलगाड़ी की रफ्तार विशेष अधिक परिमाण में घटती है, आप को ऐसा प्रतीत होगा कि ये सभी ऊर्ध्व खड़ी वस्तुएँ सामने की ओर झुक आती हैं—यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट ठीक उस क्षण दीखता है जब रेलगाड़ी अचानक रुक जाती है—और फिर तुरन्त ही बाद ये पुन. सीधी खड़ी हो जाती हैं। इन परिस्थितियों में क्षैतिज तल का मैदान भी तिरछा झुका हुआ दीख पड़ता है और फिर यह पुन. क्षैतिज हो जाता है। व्याख्या इस प्रकार है, ब्रेक के लगने पर हम तनिक आगे की ओर झुक जाते हैं मानो धरती के गुरुत्वाकर्षण की दिशा बदल गयी हो। अब हमारी पेशियों की इस नये ऊर्ध्वधरातल की अनुभूति के लिहाज से ये वास्तविक चीजें सामने की ओर हमारी तरफ झुकी-सी प्रतीत होती हैं (चित्र ९३)।
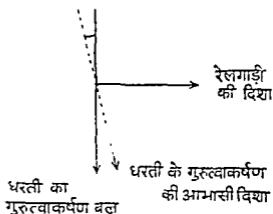
चित्र ९३—रेलगाड़ी की गति के धीमे पड़ने पर धरती के गुरुत्वाकर्षण बल की दिशा में आभासी परिवर्तन।

१००. गति की दृष्टि-अनुभूति कैसे होती है ?

आम तौर पर लोगों का ख्याल है कि हरकत उस वक्त प्रगट होती है जब किसी स्थिर बिन्दु के लिहाज से वस्तु की स्थिति में परिवर्तन का निरीक्षण करते हैं। किन्तु यह बात अनिवार्य रूप से सही नही है; ठीक लम्बाई या समय की अवधि की भाँति

ही वेग की भी स्वतन्त्र, एकाकी प्रेक्षण-अनुभूति की जा सकती है। जब आप आकाश में हरकत करते हुए बादलों को देखते हैं तो तुरन्त आप को उनकी दिशा और वेग की अनुभूति प्राप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि १' या २' प्रति सेकण्ड तक की मन्द कोणीय गति का पता हमारी दृष्टि-अनुभूति लगा लेती है किन्तु केवल उसी दशा में जबकि दृष्टिक्षेत्र में नाप के लिए स्थिर बिन्दु मौजूद हों (यद्यपि हम भले यह महसूस न कर पायें कि स्थिर बिन्दुओं के लिहाज से हम नाप कर रहे हैं।) इन स्थिर बिन्दुओं की अनुपस्थिति में इससे दस गुनी रफ्तार तक के प्रेक्षण में भी अनिश्चितता बनी रहती है—इस दशा में तुलना-तन्त्र का कार्य आप की आँख करती है जिसकी पेशियाँ आप को यह महसूस कराती है कि आँख स्थिर है और इस तुलना-तंत्र[1] के लिहाज से आप अपनी दृष्टि इन्द्रिय द्वारा अनुभव करते हैं कि प्रतिबिम्ब रेटिना पर हरकत करते हैं।

आकाश मे गुजरते हुए बादलों का अध्ययन कीजिए और अपने अवलोकन के समय इतमीनान के प्रारम्भिक क्षणों में तुरन्त उनकी हरकत करने की दिशा निश्चित करने का प्रयत्न कीजिए। इसके लिए विभिन्न परिस्थितियाँ लीजिए—ऊँचे बादल तथा अपेक्षाकृत निकट के बादल; हलकी बयार तथा तेज हवा के झोंके; चाँदनी रात तथा चन्द्रमाविहीन अँधेरी रात। यदि रफ्तार २' प्रतिसेकण्ड हो तो इसका अर्थ है कि बादल के हाशिये को चन्द्रमा के मडलक को पूर्णतया पार कर लेने में १५ सेकण्ड लगते हैं।

सूखने के लिए बाहर टाँगे गये चौड़े खाने वाले जाल पर ध्यान दीजिए। रह-रह कर आने वाली हवा के झोंके को जाल पर से गुजरता हुआ हम स्पष्ट देख सकते है, किन्तु आँख को यदि किसी एक खाने पर ही जमाये रखें तो मुश्किल से ही किसी किस्म की हरकत का आभास हो पाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी आँख परस्पर-सम्बद्ध नन्ही-नन्ही गतियों के मिश्रित प्रभाव के प्रति विशेष रूप से सुग्राही है।

१०१. गतिशील तारे[2]

सन् १८५० के लगमग एक रहस्यमय घटना के प्रति लोगो के मन में बड़ी दिलचस्पी उठी थी; तारे को जब आँख गड़ाकर देखते थे तो यह इधर से उधर हिलता हुआ

1. Frame of comparison

2. Pogg Ann 12, 655, 1957. For more recent literature concerning autokinetic visual impressios, see Hdb. d, Phys, Vol 20, Physiologische Optik p. 174

प्रतीत होता था, मानो अपनी स्थिति बदल रहा हो। कहा जाता है कि यह घटना केवल सन्ध्या के धुंधलके में देखी जा सकती थी और सो भी उस दशा में जबकि प्रेक्षण किये जाने वाले तारे की क्षितिज पर ऊँचाई १०° से कम ही हो। तेज प्रकाश से टिमटिमाता हुआ तारा शुरू में क्षितिज के समानान्तर, झटके की गति में हरकत करता हुआ प्रतीत होता था, फिर पाँच-छः सेकण्ड तक यह स्थिर अवस्था में जान पड़ता, और तब उसी प्रकार यह पुनः हरकत करता इत्यादि। कई प्रेक्षकों ने तो इस घटना को इतने स्पष्ट तौर पर देखा कि उन्होंने इसे वस्तुनिष्ठ ही समझा और इसकी व्याख्या करने के प्रयत्न में इन्होंने बतलाया कि वायु के गर्म-स्तरों की उपस्थिति के कारण यह घटना उत्पन्न होती है।

किन्तु यहाँ किसी वास्तविक भौतिक घटना की उपस्थिति का प्रश्न ही नहीं उठता। कोरी आँख से दिखाई देनेवाली ½° प्रति सेकण्ड की गति एक औसत शक्ति की दूरबीन द्वारा आसानी से १००° तक आवर्धित की जा सकती है, इसका अर्थ है कि तब तारे इधर से उधर दोलन करेंगे और दृष्टिक्षेत्र में उल्काओं की भाँति तीव्र वेग से एक सिरे से दूसरे सिरे को भागते नजर आयेंगे। और प्रत्येक ज्योतिर्विद को पता है यह एक पूर्णतया निरर्थक सम्भावना है। उस वक्त भी, जबकि वायुमण्डल का उद्वेलन चरम सीमा पर होता है, झिलमिलाहट के कारण तारे का स्थिति-परिवर्तन कोरी आँखों की सुग्राहिता की सीमा की पकड़ में नहीं आ सकता। किन्तु मानसिक दृष्टि से इस घटना का महत्त्व किसी भी तरह से कम नहीं हुआ है।

व्याख्या प्रायः इस प्रकार की जाती है कि ऐसा आँख की अनायास गति के कारण होता है जिसके लिए तुलना के निमित्त कोई सदर्भ वस्तु लभ्य नहीं होती है। किन्तु गिल्फोर्ड तथा उसके सहयोगियों के अनुसन्धान के उपरान्त यह व्याख्या युक्तिसंगत नहीं जान पड़ती, तारों का आभासी विस्थापन नेत्र के अन्दर द्रव के अनियमित स्राव के कारण उत्पन्न हुआ जान पड़ता है, और यह स्राव नेत्र की पेशियों के विभिन्न दबाव से प्रभावित होता है (Americ. journ of Psych, 1928-29)।

किसी ने मुझसे एक बार पूछा था कि बहुत दूरी पर उड़ते हुए वायुयान पर दृष्टि जमाकर देखने पर वह सदैव ही नन्हे-नन्हे झटके खाकर हरकत करता हुआ क्यों प्रतीत होता है? इस दशा में भी वही मानसिक कारण कार्य करता हुआ प्रतीत होता है जो हरकत करते हुए तारे' के लिए लागू होता है—और 'बहुत दूर' की शर्त इस बात की ओर इङ्गित करती है कि यह घटना भी सर्वाधिक रूप से क्षितिज के निकट ही उत्पन्न होती है।

और भला इस बात का समाधान हम कैसे कर सकते हैं कि अचानक ही और एक साथ तीन व्यक्तियों ने लगभग ३० मिनट तक चन्द्रमा को ऊपर नीचे नाचते हुए देखा?[1]

१०२: विराम और गति की दशा के सम्बन्ध में दृष्टिभ्रम

एक सुपरिचित दृष्टिभ्रम उस वक्त उत्पन्न होता है जब स्थिर रेलगाड़ी में बैठे हुए आप बगल की रेलगाड़ी को उस वक्त देखते हैं जबकि वह चलना आरम्भ करती है। एक क्षण के लिए तो आप समझ बैठते हैं खुद आपकी ही रेलगाड़ी स्टेशन से रवाना हो रही है। या फिर ऊँची मीनार के पार आकाश में गुजरते हुए बादलों को कुछ क्षणों तक देखते रहने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो बादल तो स्थिर हैं और मीनार ही हरकत कर रही है। इसी प्रकार कुछ लोगों को ऐसा दिखाई देता है मानो स्थिर बादलों के झुंड के दर्मियान से चन्द्रमा भागता जा रहा है। पतले तख्ते पर चल कर नाले को पार करते समय इस बात की सावधानी रखिए कि नीचे बहते हुए पानी को न देखें वरना सिर चक्कर खा जायगा—यहाँ स्थिरता और गति की दशा के निर्णय करने की आप की क्षमता अव्यवस्थित हो जाती है क्योंकि आप के दृष्टिक्षेत्र का असाधारण रूप से एक वृहत् भाग गतिशील होता है। प्रथम बार समुद्री यात्रा करनेवाले व्यक्ति को ऐसा जान पड़ता है कि केबिन में लटकी हुई चीजें इधर-उधर झूल रही हैं और स्वयं केबिन स्थिर है।

इन सभी उदाहरणों के दृष्टिभ्रम §९९ में दिये गये दृष्टिभ्रम से निकट का सम्बन्ध रखते हैं। सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विवेचन से पता चलता है कि हमारी प्रवृत्ति उन चीजों को गतिशील मानने की होती है जिन्हें अपने-अपने अनुभव द्वारा हम भू-दृश्य में अक्सर हरकत करती हुई जानते हैं। किन्तु इसके अतिरिक्त एक और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अधिक व्यापक नियम यह है—हमारे लिए स्थिरता की अनुभूति स्वतः दृष्टिक्षेत्र फ्रेम अर्थात् दृष्टिक्षेत्र को परिवेष्ठित करने वाले तत्त्वों से सम्बद्ध होती है, जबकि गति की अनुभूति दृष्टिक्षेत्र के भीतर घिरे हुए तत्त्वों से सम्बद्ध रहती है। उपर्युक्त दृष्टान्तों में कई एक के लिए यह द्वितीय नियम प्रथम नियम के खिलाफ़ जाता है और जैसा हमारे दृष्टिभ्रम से स्पष्ट है, यह नियम हमारे दैनिक जीवन के सामान्य अनुभवों के बिलकुल विपरीत ही बैठता है।

मैं रेलगाड़ी के कम्पार्टमेण्ट में खिड़की के निकट बैठा हुआ, मानो स्वप्न में बाहर की भूमि को लीन होकर देख रहा हूँ जो रेलगाड़ी की रफ्तार के कारण पीछे को तेज़ी से

1. Nat, 38, 102, 1888

भागती जा रही है। गाड़ी के खड़ी होते ही और उसके स्थिर हो जाने का पूरा अहसास करने के बावजूद भी बाहर दृष्टि डालने पर अनिवार्य रूप से ऐसा लगता है मानों रेलगाड़ी पीछे की ओर धीरे-धीरे सरकती जा रही है—किन्तु यह गति ऐसी नहीं है कि बाहर का समस्त दृष्टिक्षेत्र समान वेग से चलता हुआ जान पडे। निकट के लिए गति तेज जान पडती है, दूर के लिए अपेक्षाकृत धीमी, तथा जिस विन्दु पर मेरी दृष्टि टिकी है उसके दाहिने-बायें के स्थलों के लिए भी गति धीमी जान पड़ती है। समस्त भूदृश्य मेरे बैठने के स्थल के गिर्द चक्कर लगाता-सा प्रतीत होता है; किन्तु एक लचीले पदार्थ की तरह चक्कर लगाते हुए यह दृश्य जैसे खिंच उठता है, फिर सिकुड़ जाता है। इसके घूमने की दिशा, रेलगाडी के चलते वक्त की दिशा की उलटी रहती है (§१०७)। यह एक दिलचस्प बात होगी यदि गाडी के खड़े होते ही हम उठकर दूसरी ओर की खिड़की के निकट जा बैठें, तब दृश्य के घूमने की दिशा वही होनी चाहिए जो ट्रेन की हरकत के समय थी।

सम्भव है कि अनजाने ही हमारी आँख की पेशियाँ सामने से तेजी के साथ गुजरती हुई चीजो का अनुगमन करने की अभ्यस्त हो जाती हैं और जब गाड़ी खड़ी हो जाती है तो आँख की यह अनायास की हरकत तुरन्त नहीं रुक पाती, अतः कुछ देर तक के लिए हम वास्तविक वेग में अपनी ओर से 'क्षतिपूरक वेग' का सयोजन करते रहते हैं। किन्तु आँख की अकेली एक हरकत द्वारा इस बात का समाधान करना नितान्त असम्भव है कि क्यों दृष्टिक्षेत्र के हाशिये की ओर वेग बदलता जाता है। इस प्रकार के प्रयोग किये गये हैं जिनमें प्रेक्षक केन्द्र-बिन्दु से चारो ओर निरन्तर बिखरती रहने वाली नन्ही-नन्ही वस्तुओं का अवलोकन कुछ देर तक करता रहता है, जब हरकत बन्द हो जाती है तो चारों ओर से प्रकाशबिन्दु पुन केन्द्र की ओर आते हुए दीखते हैं। इसकी व्याख्या सम्भवतः आँख की अकेली एक गति द्वारा नही की जा सकती। अधिक सम्भावना इस बात की है कि हमारा 'मस्तिष्क' जो दृष्टिक्षेत्र के प्रत्येक भाग में वेग को एक निश्चित मात्रा में घटा देने के लिए प्रशिक्षित हो चुका होता है, गति के रुक जाने पर भी अपनी यह क्रिया जारी रखता है।[1]

उपर्युक्त घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जब कम्पार्टमेण्ट की खिड़की के काँच के किसी विशेष स्थल पर हम आँख गड़ा कर देखते हैं, इस प्रकार आँख की हरकत का विलोपन हो जाता है; इस घटना के दृष्टिगोचर होने के लिए यह शर्त्त जरूरी है कि

1. Von Kries in Helmholtz

रेलगाड़ी की रफ्तार इतनी तेज न हो कि बाहर की वस्तुएँ केवल एक लकीर-सी खींवती हुई प्रतीत हों।

फिर भी इसके प्रतिकूल ब्रूस्टर का बहुत दिनों पूर्व का प्रेक्षण[1] निश्चित रूप से यह सिद्ध करता है कि आँखें अनायास हरकत करती हैं। रेलगाड़ी की खिड़की से बाहर देखने पर निकट की पत्थर की रोड़ियाँ लकीर के रूप में खिच उठी दिखाई देती हैं; किन्तु जल्दी से जरा दूर की जमीन पर नजर डालें तो जरा से लमहे के लिए ये रोड़ियाँ स्थिर-सी जान पड़ती हैं मानों विद्युत् चिनगारियों से ये प्रदीप्त हो उठी हों। मेरी राय में इससे निश्चय ही यह सिद्ध होता है कि आँखें दरअसल हरकत करती हुई वस्तुओं का अनुगमन करती हैं यद्यपि अनुगमन की गति उनकी रफ्तार के ठीक बराबर नहीं होती।

ब्रूस्टर ने ही एक और निरीक्षण किया था---कागज के तख्ते में कटी एक झिरी में से देखते हुए उसने तेजी से भागती हुई पत्थर की उन रोड़ियों का अवलोकन किया तो उसने पाया कि सामने की ओर ही देखते हुए जब उसने आँख को अचानक इधर-उधर फिराया, ताकि रोड़ियों का प्रतिबिम्ब अप्रत्यक्ष दृष्टि-क्षेत्र में पड़े तो एक *लमहे के लिए प्रत्येक रोड़ी स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी।* आखिर इसकी *व्याख्या क्या हो* सकती है?

मेरी दाहिनी ओर एक खेल का मैदान है जिसके किनारे रेलिंग की एक लम्बी बाड़ बनी है। इसके किनारे से गुजरते समय मैं अपना सिर दाहिने मोड़े रखता हूँ और मैदान में खेलते हुए बच्चों को देखता रहता हूँ। दो-एक मिनट के बाद मैं बिलकुल सामने की ओर निगाह डालता हूँ तो सड़क के पत्थर के टुकड़े तथा सामने की अन्य चीजें दाहिने से बायें हरकत करती हुई दीखती हैं। दुबारा इस प्रयोग को दुहराने के प्रयत्न में इस बार जब मैं बच्चों पर निगाह जमाने के बजाय बाड़ की रेलिंग पर आँख गड़ाता हूँ तो यह घटना उतनी स्पष्ट नही उभर पाती है। इस किस्म के प्रेक्षण में प्राय. देखा जाता है कि यह आवश्यक नही है कि आँखें तेजी से हरकत करनेवाली वस्तुओं का ही स्वयं अनुगमन करें; बल्कि बेहतर यही होता है कि निगाह किसी तटस्थ पृष्ठभूमि पर टिका *दी जाय जबकि प्रकाश और अन्धकार के सुस्पष्ट विपर्यास वाले प्रतिबिम्ब रेटिना पर से* होकर गुजरते रहें।

नीचे गिरती हुई हिम-लच्छियों का अवलोकन करते समय मैं अपनी दृष्टि किसी एक लच्छी पर पहले जमाता हूँ जो नीचे को आ रही है, फिर फुर्ती के साथ ऊपर की

1. Proc. Brit. Ass. p. 47, 1848.

किसी और लच्छी पर दृष्टि जमा देता हूँ, और यही क्रम कई मिनट तक जारी रहता है। इसके बाद जब मैं हिमाच्छादित भूमि की ओर निगाह डालता हूँ तो यह सचमुच ऊपर उठती हुई नजर आती है और मुझे ऐसा अनुभव होता है जैसे स्वयं मैं नीचे धँसता जा रहा हूँ।

तेज बहाव वाली नदी की सतह को या पानी पर हरकत करते हुए बर्फ के शिला-खण्डों को चन्द मिनटों तक देखते रहिए और इस दौरान अपनी दृष्टि द्वीप की किसी वस्तु या, मिसाल के लिए, नौका बाँधने वाले खम्भे पर टिकाये रखिए। अब पुनः स्थिर जमीन पर नजर डालें तो आप को 'धारा की उल्टी दिशा की गति' दीख पड़ेगी। इसी प्रकार पानी के झरने का कुछ देर तक अवलोकन करने के उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानों किनारे की भूमि ऊपर की ओर उठ रही है, 'एक अन्य अवसर पर मैं एक अत्यन्त ऊँचे तथा बहुत सँकरे झरने को देख रहा था, और तब एक चिकने पर्वतीय ढाल पर मैंने नजर डाली तो मुझे उसकी एक पतली पट्टी ऊपर सरकती हुई दिखलाई दी'—पर्किन्ज। पर्किन्ज एक बार खिड़की में से सड़क से गुजरते हुए घुड़सवारों के जलूस को देख रहा था तो कुछ देर बाद उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि सड़क की दूसरी ओर के मकानों की कतार उलटी दिशा में हरकत कर रही है। खेत के पौधों की बालियों के बीच पगडण्डी से गुजरते समय यदि आप दूरस्थ चन्द्रमा को देखते रहें तो इस दृष्टिभ्रम के दृष्टिगोचर होने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ एक बार फिर प्राप्त हो जाती हैं।

संक्षेप में ये परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं (क) हरकत कम-से-कम एक मिनट तक जारी रहनी चाहिए; (ख) गति का वेग बहुत अधिक नहीं होना चाहिए, इसके लिए वेग का एक अनुकूलतम मान होता है, और (ग) दृष्टि बराबर किसी स्थिर या गतिशील वस्तु पर इस प्रकार टिकी होनी चाहिए कि रेटिना पर से गुजरने वाले प्रतिबिम्ब पर्याप्त विपर्यास और सुस्पष्ट विवरण प्रदर्शित कर सकें।

१०३. दोलन करने वाले युग्म तारे

सुविख्यात ज्योतिर्विद हर्शेल ने इस घटना का अवलोकन किया था। सप्तर्षि-मण्डल के एक छोड़कर अन्तिम तारे का द्विनेत्री दूरबीन से प्रेक्षण कीजिए। आप इस चमकीले तारे के निकट ही मन्द प्रकाश का तारा देखेंगे (चित्र ६५, ३८)। अच्छा होगा यदि प्रयोग उस वक्त आप करें जब मन्द प्रकाश का तारा चमकीले तारे के ठीक नीचे स्थित हो (यद्यपि प्रयोग उस वक्त भी सफल हो सकता है जब यह तारा अन्य किसी स्थिति में भी हो)। अपनी द्विनेत्री दूरबीन को धीरे-धीरे से बायें [illegible], फिर दाहिने ओर

तब वापस बायीं ओर उसे ले आइए और यही क्रम बस इस रफ्तार से जारी रखिए कि तारों के प्रतिबिम्ब नन्हे प्रकाशबिन्दु के रूप में दीखते रहें। तब ऐसा प्रतीत होगा मानो मन्द प्रकाश का तारा प्रत्येक हरकत में चमकीले तारे की तुलना में कुछ पिछड़ जाता है, मानों यह डोरी द्वारा बँधा हो और चमकीले तारे के गिर्द दोलन गति कर रहा हो (चित्र ९४)। इसका कारण यह है कि रेटिना को प्रभावित करने में प्रकाश को कुछ समय लगता है। और तारे की चमक जितनी अधिक होगी उतना ही कम समय यह रेटिना को प्रभावित करने में लेगी। अतः जितनी देर में मन्द प्रकाश वाले तारे की स्थिति हम देख पाते हैं उतने समय में चमकीला तारा कुछ दूर आगे जा चुका होता है।
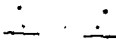
चित्र ९४—इधर-उधर हिलती हुई द्विनेत्री दूरबीन से देखने पर युग्म तारे का आभासी दोलन।

इस घटना के सिद्धान्त का उपयोग पुलिफ्रिच ने एक नये ढग के दीप्तिमापी[1] के निर्माण में किया है।

१०४. भ्रमणगति की दिशा के सम्बन्ध में प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

सन्ध्या के झुटपुटे में पवन-चक्की के घूमते हुए पंखों की सिल्युएत (चित्र ९५, a) को यदि चक्की के धरातल की तिरछी दिशा से देखें तो उसके घूमने की दिशा हमें दक्षिणावर्त्त भी प्रतीत हो सकती है और वामावर्त्त भी (चित्र ९५, b)। घूमने की दिशा को एक ओर से दूसरी ओर परिवर्तित देख सकने के लिए यह आवश्यक होता है कि पवन-चक्की पर एक क्षण के लिए ध्यान विशेषरूप से केन्द्रित किया जाय। किन्तु आमतौर पर इतना ही पर्य्याप्त होता है कि केवल शान्तिपूर्वक उसे देखते रहें तो चक्की के घूमने की दिशा अपने आप बदल जाती हुई प्रतीत होती है। अनेक ऋतु-अनुसन्धान वाले स्टेशनों पर रोबिन्सन अनीमोमीटर[2] लगे रहते हैं—यह एक छोटी पवन-चक्की होती है जो ऊर्ध्व धुरी के गिर्द चक्कर लगाती है। जब कुछ फासले से शान्तिपूर्वक मैं बिना विशेष इच्छाशक्ति लगाये उसके घूमते हुए हत्थों को देखता हूँ तो हर २५, ३० सेकण्ड पर वे अपने घूमने की दिशा को उलट देते हुए प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार वायु की दिशा बतलाने वाला हत्था इधर से उधर झूलते समय अपनी दिशा के बारे हमें भ्रम में डाल सकता है विशेषतया उस दशा में जबकि वह बहुत ऊँचाई पर न लगा हो (चित्र ९५, c)।

1. Photometer 2. Anemometer (वायु की रफ्तार नापने का यंत्र)

इन सभी दशाओं में घूमने की दिशा पहचानने की हमारी क्षमता इस बात पर निर्भर करती है कि भ्रमण-मार्ग का कौन-सा भाग हमारे निकट प्रतीत होता है और
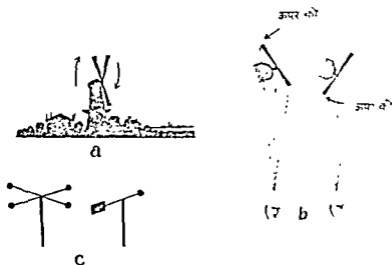
चित्र ९५—संध्या के समय पवनचक्की का सिल्युएत (छाया चित्र)

(a) प्रेक्षक इसका प्रेक्षण करता है।

(b) अपने प्रेक्षण का यह क्या अर्थ लगाता है।

(c) अन्य भ्रमोत्पादक सिल्युएत (छाया चित्र)।

कौन-सा भाग दूर। वे भाग जिन पर हमारा ध्यान विशेषरूप से आकृष्ट होता है, साधारणतया हमारे निकट जान पड़ते हैं। अतः घूमने की दिशा का जाहिरा परिवर्तन इस कारण उत्पन्न होता है कि हमारे ध्यान का केन्द्रस्थल अचानक बदल जाता है।

१०५. पिंड-दर्शन की घटना[1]

रेलगाड़ी की खिड़की में लगे घटिया किस्म के काँच में से देखने पर हमें अजीब दिलचस्प बात दृष्टिगोचर होती है। गाड़ी के खड़ी हो जाने तक इन्तजार कीजिए और जमीन पर पड़ी पत्थर की रोड़ियों का अवलोकन करिए। अपनी आँख काँच के निकट ही लगाये रखिए, अपने सिर को स्थिर बनाये रखिए और अपनी पूर्ववर्ती धारणा

1. Steoroscopic Phenomena

को भूल जाइए कि जमीन को चौरस ही दिखना चाहिए। अचानक ही आप अनुभव करेंगे कि जमीन में उतार-चढ़ाव मौजूद है, बल्कि अत्यन्त तीव्र उतार-चढ़ाव। यदि काँच के समानान्तर आप अपने सिर को हिलायें-डुलायें तो जमीन के ये उतार-चढ़ाव विपरीत दिशा में हटते जान पड़ते हैं। यदि आप खिड़की से दूर हटते हैं, तो उस दशा में भी ये उतार-चढ़ाव उतने ही ऊँचे दीखते हैं किन्तु उनके बीच का फैलाव बढ़ जाता है।

इसका कारण यह है कि खिड़की का काँच पूर्णतया समतल नहीं है बल्कि इसकी मोटाई विभिन्न स्थलों पर विभिन्न होती है। आम तौर पर काँच की सतह की उठान तथा उसका गहरापन किसी खास दिशा के समानान्तर चलते हैं, जो इस कारण उत्पन्न होते हैं कि तप्त पिघले हुए काँच को इस्पात के रोलरों के बीच से गुजरना पड़ा है। काँच की इस तरह की लहरदार सतह एक प्रिज्म सदृश काम करती है जिसके वर्तन कोर का कोणीय मान कम ही होता है,अतः यह सतह किरणों में थोड़ा विचलन पैदा कर देती है। चित्र ९६ में आँखें L और R जमीन के विन्दु A को देखती हुई मानी गयी हैं अतः काँच की सतह के ऊँचे-नीचे होने का आभास नहीं होने पाता। किन्तु आँखें जब विन्दु B को देखती हैं तो किरण B R इस बार सीधी रेखा में नहीं जाती बल्कि यह मुड़कर B C R मार्ग का अनुसरण करती है। फल यह होता है कि आँखें ऐसी दिशा में देखती हैं मानो वे B′ पर केन्द्रित हों, जो विन्दु B की अपेक्षा अधिक निकट स्थित है। काँच की सतह के अन्य किसी भाग में किरणों का विक्षेप भिन्न होगा अतः उस
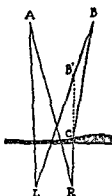
चित्र ९६—विषम मोटाई वाले काँच में से देखने पर भूमि ऊँची नीची तरंगमय जान पड़ती है।

दशा में दृश्य वस्तु का प्रतिबिम्ब पीछे हट गया हुआ प्रतीत होगा। इस व्याख्या से यह बात समझ में आ सकती है कि काँच की सतह की मोटाई का थोड़ा अन्तर भी बाहर की चीजों में अत्यधिक उभार का दृष्टिभ्रम उत्पन्न कर सकता है यद्यपि अलग अलग आँखों पर पड़ने वाले प्रभाव जिस तरीके से एक दूसरे के साथ मिलकर यह भ्रम पैदा करते हैं, वह कभी-कभी काफी जटिल होता है। उदाहरण के लिए यदि

बायीं आँख काँच के समतल भाग में से देखती है और दाहिनी आँख ऊँचे-नीचे भाग से तो पिंड-दर्शन का प्रभाव जिस तरीकेसे उत्पन्न होता है उसकी क्रिया-विधि का पता लगाया जा सकता है। अपनी बायी आँख बन्द करके सिर को इधर-से-उधर थोड़ा हिलाइए; तो भूमि का प्रतिरूप काँच के अवतल भागों के लिए उसी दिशा मे हटेगा जिस दिशा मे सिर हटता है (M, चित्र ९६) तथा उत्तल भागों के लिए प्रतिरूप विपरीत दिशा मे हटेगा (O, चित्र ९६) (क्यों ?) अब यदि आप दोनों आँखे खोल दें तो काँच के बिन्दु M और O भूमि के उन स्थलों की सीध में पडते है जिन्हे हम औसत दूरियो पर देखते हैं। दाहिनी आँख से बिन्दु N की सीध में अवलोकन करने पर हम शृंग देखते हैं और P की सीध में गर्त्त देखेंगे। स्वयं निजके प्रेक्षण से इनकी जाँच करने का प्रयत्न करिए और प्रेक्षण-फल की बारीकियों का समाधान भी करिए।

इसी से एकदम मिलती-जुलती घटना उस वक्त भी देखने को मिलती है जब हम पानी की हलकी लहरो वाली सतह के अत्यन्त निकट खडे होते हैं। मिसाल के लिए, वृक्ष की किसी डाल के परावर्तित प्रतिबिम्ब पर निगाह जमाने का प्रयत्न करिए; चूँकि दोनों आँखे उस लहरदार सतह के एक ही बिन्दु को नहीं देखती अत. इन्हे दीखने वाले दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी बराबर बदलती रहती है और आँख के अक्ष को उनपर ठीक तौर से केन्द्रित कर सकना कठिन हो जाता है। इस कारण एक विचित्र प्रकार की अनुभूति पैदा होती है जिसका विवरण दे सकना मुश्किल है। ज्यो ही हम एक आँख बन्द करते हैं त्यों ही पानी की सतह का दृष्टिगोचर होना एक तरह से बन्द-सा हो जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब के बजाय स्वय वृक्ष को ही हम देख रहे है जो हवा के कारण हरकत कर रहा है। दोनो आँखों के खोलते ही अचानक लहरदार सतह स्वयं दीखने लग जाती है, किन्तु यह सतह **चमचमाती** सी है, यह एक लाक्षणिक घटना है जो उस वक्त उत्पन्न होती है जब कि दोनों आँखों मे से प्रत्येक भिन्न प्रदीप्ति के प्रतिबिम्ब ग्रहण करती है—एक प्रकाशमय और दूसरी अदीप्तिमान्।

१०६. चन्द्रमा पर मनुष्य[1]

'चन्द्रमा पर दिखलाई देने वाला मनुष्य' इस बात के लिए एक उत्तम चेतावनी है कि हमें अपने प्रेक्षण पर्याप्त तटस्थता के साथ करने चाहिए। चन्द्रमा पर दीखने वाले काले और चमकीले धब्बे वास्तव में चिपटे मैदान तथा पहाड़ हैं और इनकी स्थितियाँ

1. Harley, Moon-Lore (London, 1885) Titchener, Experimental Psychology

प्रकाश्य रूप से बहुत ही बेतरतीब है। प्रदीप्ति के इस विलक्षण विभाजन में अनजाने ही हम सुपरिचित शक्लों को पहचानने की कोशिश करते हैं। हम इनकी कुछ विशेषताओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं तो ये और भी सुस्पष्ट हो उठती है जबकि अन्य शक्लें जिनपर हम कोई ध्यान नही देते, अस्पष्ट रह जाती हैं। इस प्रकार पूर्णिमा के चाँद में मनुष्य के चेहरे के कम-से-कम तीन पहलू देखे जा सकते हैं—बगल से दीखने वाला चेहरा, चेहरे का तीन चौथाई, तथा पूरा चेहरा। और चाँद पर स्त्री की शक्ल, टहनियों का बोझ लिये हुए बुढ़िया, खरगोश, तथा केकड़े आदि की शक्लें भी देखी जा सकती हैं।

सर्वश्रेष्ठ प्रेक्षको ने भी इस प्रकार के दृष्टिभ्रम से धोखा खाया है—मङ्गल की नहरों का प्रेक्षण इस तरह के अनेक दृष्टान्तों में से एक सुविख्यात उदाहरण है। अच्छा ही होगा कि मरीचिका या 'फाता मोर्गाना' (मिथ्या प्रकाश)[1] के अनेक अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणों के सम्बन्ध में उपर्युक्त बात का हम ध्यान रखें।

१०७. घूमता हुआ भू-दृश्य तथा साथ चलने वाला चन्द्रमा

दो ऐसे वृक्षों या दो मकानों पर ध्यान दीजिए जो हमसे असमान दूरी पर स्थित हों। ज्यों ही हम चलना आरम्भ करते हैं, हम देखते हैं कि **दूर की वस्तु हमारे साथ चलती है और निकट की वस्तु पीछे छूट जाती है।** यह विस्थापनाभास[2] का एक सरल दृष्टान्त है, जो रेखागणित की एक ऐसी घटना है जिसकी कोई विशेष भौतिक पृष्ठभूमि नही होती।

बाल्यावस्था में जब मैं एक रेलगाड़ी के अन्दर बैठा हुआ था तो सबसे पहले जिस बात ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया वह यह थी कि किस प्रकार भू-दृश्य मेरे गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता था। मान लीजिए, रेलगाड़ी में से मैं दाहिनी ओर बाहर देखता हूँ, तो निकट की प्रत्येक वस्तु दाहिनी ओर तेज़ी से भागती है जबकि दूर की प्रत्येक वस्तु मेरे साथ बायीं ओर चलती है। सारा दृश्य उस काल्पनिक बिन्दु के गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता है जहाँ हमारी दृष्टि टिकी होती है। चाहे मैं दूर के बिन्दु पर नज़र टिकाऊँ या नजदीक के बिन्दु पर हर दशा में उस बिन्दु से आगे के बिन्दु हमारे साथ चलते हुए प्रतीत होते हैं और उससे निकट के बिन्दु पीछे की ओर छूटते जाते हैं। इस प्रयोग को स्वयं करिए! स्पष्ट है कि दृष्टि के ये प्रभाव विस्थापना भास के कारण उत्पन्न होते हैं, किन्तु इसके अतिरिक्त एक नयी बात यह है कि प्रत्येक वस्तु का सम्बन्ध हम उस

1. Fata Morgana 2. Parallax

बिन्दु से जोड़ते हैं जिसपर हमारी दृष्टि टिकी होती है। हमारी दृष्टि-अनुभूति की यह एक मनोवैज्ञानिक विशिष्टता है। चाहे हम पैदल चलें, सायकिल पर सवार हों या ट्रेन में जा रहे हों, हम देखते हैं कि विश्वस्त चन्द्रमा दूर के क्षितिज पर हमारा साथ देता रहता है। सूर्य और सितारे भी ऐसा ही करते हैं, केवल हम उनकी ओर उतना अधिक ध्यान नही देते। इससे सिद्ध होता है कि हमारा ध्यान भू-दृश्य पर केन्द्रित रहता है अत: विस्थापनाभास के कारण दूरस्थित ये आकाशीय पिण्ड भू-दृश्य के मुक़ाबले में हमारे साथ चलते हुए जान पडते हैं।

१०८. सर्चलाइट की घटना[1]—बादलों की पेटी

विस्तृत खुले मैदान में सर्चलाइट प्रकाश किरणों की पतली शलाका क्षैतिज दिशा में फेंकती है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि किरणशलाका बिल्कुल सीधी रेखा में जा रही है, फिर भी इस दृष्टिभ्रम को मैं दूर नहीं कर पाता हूँ कि इसमे कुछ वक्रता मौजूद है; बीच मे सबसे ऊँची और दोनों सिरो पर भूमि की ओर मुडी प्रतीत होती है। इस बात का इतमीनान करने के लिए कि प्रकाश-किरणों की शलाका एक सिरे से दूसरे सिरे तक बिल्कुल सीधी है, एक मात्र तरीका यह है कि अपनी आँखो के सामने एक सीधी छडी मैं रखूं।

इस दृष्टिभ्रम का कारण क्या है? प्रकाश-पथ को मुडा हुआ देखने की मेरी इस प्रवृत्ति का कारण यह है कि एक तरफ़ मैं इसे बायी ओर नीचे को झुका हुआ देखता हूँ और दूसरी ओर दाहिनी ओर झुका हुआ। क्या टेलीग्राफ की साधारण क्षैतिज तार की सीधी लाइनें इसी प्रकार आचरण नही करती है! किन्तु रात्रि को प्रकाश-किरणो की शलाका का अवलोकन करते समय आस पास की वस्तुएँ हमें नजर नही आती जिनकी सहायता से हम दूरियों का अन्दाज लगा सकें, अत: शलाका की शक्ल का पहले से हमें कुछ भी पता नही लग पाता।

इसी प्रकार की घटना सड़क पर लगे ऊँचे लैम्पो की कतार का रात्रि को अवलोकन करने पर देखी जा सकती है, विशेपतया जब उसी के समानान्तर मकानों की कतार मौजूद न हो या जब वे पेड़ों के पीछे छिपे हों। तब लैम्पों की कतार ठीक सर्चलाइट की प्रकाश-शलाका की ही भांति झुकी हुई दीखती है।

इसी से एकदम सम्बद्ध यह प्रेक्षण भी है कि अष्टमी और पूर्णिमा के बीच के चन्द्रमा के दोनों कोरो को मिलाने वाली रेखा सूर्य और चांद को मिलानेवाली दिशा के

1. Bernstein, Zs. f. Psychol. und Physical der Sinnesorgane, 34,132

समकोण बिलकुल नहीं जान पड़ती। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह दिशा एक वक्र रेखा है। अपनी आँखों के सामने एक डोरी को तनी हुई खीचकर यह दिशा निश्चित करिए; तो आरम्भ में चाहे कितना ही असम्भव यह क्यों न जान पड़ा हो, अब आप देखेंगे कि समकोण होने की शर्त पूरी होती है।

आकाश की मेहराबदार छत पर क्षितिज के एक ओर से बादलों की कतारें जो फैलती हुई जान पड़ती हैं, और आकाश की दूसरी ओर मिलती हुई दीखती हैं, वास्तव में सीधी, एक दूसरी के समानान्तर, क्षैतिज दिशा में जाती है, देखिए § १९१ भी।

यदि रात के समय प्रकाश-गृह (लाइटहाउस) के निकट उसकी ओर पीठ करके खड़े हों तो अत्यन्त शानदार दृश्य देखने को मिलता है। विशाल प्रकाश-रेखाएँ आस-पास के दृश्य को जब प्रकाशित करती हुई चारों ओर घूमती हैं तो ये दूसरी ओर क्षितिज के कुछ नीचे एक कल्पित प्रति-प्रकाशस्रोत-विन्दु" पर परस्पर मिलती हुई जान पड़ती हैं और इसीके गिर्द वे घूमती हुई प्रतीत होती हैं।[1] ऐसी ही प्रकाश-रेखा को देखकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यह रेखा एक निश्चित धरातल में पड़ती है जो आकाश में प्रकाशरेखा की सही स्थिति और मेरी आँख के स्थिति-विन्दु द्वारा निर्धारित होता है। प्रकाशरेखा जब घूमती है तो इस धरातल की स्थिति भी आकाश में निरन्तर बदलती है किन्तु सदैव ही यह धरातल उस रेखा से गुजरता है जो प्रकाश-स्तम्भ, मेरी आँख तथा प्रतिप्रकाशसूत्र-विन्दु को मिलाती है। अत. बजाय इसके कि मेरे पीछे के विन्दु से विकिरित होती हुई किरणें क्षैतिज तल में बिखरी हुई रेखाओं की तरह दीखें, मुझे ये ऐसी किरणों के रूप में दीखती हुई प्रतीत होती है जिनके निचले भाग तो कटकर अदृश्य हो गये है और किरणें क्षितिज के नीचे स्थित 'प्रति-प्रकाश-स्रोत विन्दु' के गिर्द घूम रही हैं। यह तथ्य कि मैं अनजाने ही इस द्वितीय निष्कर्ष को स्वीकार करता हूँ, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। और यह मेरी इस प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न होता है कि संस्कृत किरणों को परस्पर सम्बद्ध मानकर मैं कल्पना कर लेता हूँ कि वे आगे जाकर एक अदृश्य विन्दु पर मिल जाती हैं।

1. Anti-light-source point

2. G. Colange and J. le Grand, C.R., 204, 1882, 1937. इन दोनों व्यक्तियों की यह भ्रमपूर्ण धारणा है कि यह घटना केवल अत्यन्त विशिष्ट परिस्थितियों में ही देखी जा सकती है जैसी कि हेलद्वीप के शक्तिशाली प्रकाश-स्तम्भ के लिए लभ्य हैं। किन्तु नीदरलैण्ड्स के तट स्थित छोटे प्रकाशस्तम्भ के निकट भी इस घटना का भलीभाँति अवलोकन किया जा सका है।

१०६. आकाश की मेहराबदार छत का प्रत्यक्षरूप से चिपटा दीखना[1]

खुले मैदान से आकाश का जब हम सर्वेक्षण करते है तो ऊपर का समूचा आसमान न तो अनन्त जान पड़ता है और न एक खोखला अर्द्ध गोला ही प्रतीत होता है जो पृथ्वी घेरे हो। बल्कि यह एक छत मानिन्द दीखता है जिसकी हमारे सिर के ऊपर की ऊँचाई क्षितिज तक के फासले के मुकाबले मे कम होती है (चित्र ९७)। किन्तु यह है केवल
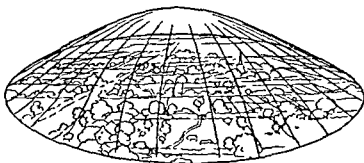
चित्र ९७—आकाश पृथ्वी को मेहराब की तरह ढके हुए जान पड़ता है।

अनुभूति, इससे अधिक कुछ भी नहीं। फिर भी हममें से अधिकतर लोगो के लिए यह अत्यन्त विश्वासोत्पादक है, अतः इसका समाधान भौतिक कारणों से नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक कारणो से ही किया जा सकता है।

स्वभावत. किसी भी तरीके से इस चिपटेपन को वास्तव में नाप सकना असम्भव है; फिर भी हम इसका अन्दाज लगा सकते है —

(क) हम प्रारम्भ इस प्रश्न से करते हैं कि अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्वबिन्दु तक दूरी}}$ का मान कितना प्रतीत होता है; यह अनुपात अधिकतर २ और ४ के दर्मियान मिलता है जो प्रेक्षक और उसके प्रेक्षण की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

(ख) हम यथासम्भव ऊर्ध्वबिन्दु[2] को क्षितिज से मिलाने वाले चाप के मध्यबिन्दु की दिशा का अन्दाज लगाते हैं। इस मध्यबिन्दु के निर्धारित हो जाने पर हम देखते

1. For the very extensive literaturre on this subject and the following one *see* A. Muller, Die Referenzflachen der sonne und Gestirne; E. Reimann, Zs. f. Psych. u. Physiol. der Sinnesorgane, 1920. R. von Sterne, Der Sehraum auf Grund der Erfahrung (Leipzig, 1907).

2. Zenith

हैं कि यह ४५° की कोणीय ऊंचाई पर नहीं स्थित होता है बल्कि और नीचे अक्सर २०° या ३०° की ऊँचाई पर यह होता है—कुछ विरले अवसरों पर यह कोणीय ऊँचाई कम-से-कम १२° और अधिक-से-अधिक ४५° तक भी पहुँचती है।

यह आवश्यक है कि इसके लिए निरपेक्ष प्रेक्षक ढूंढ़े जायँ और उन्हें यह बात सप्ट समझा देनी चाहिए कि इस प्रयोग में चाप को दो बराबर भागों में विभाजित करना है, न कि चापकोण को। ऊर्ध्व विन्दु को भी बिल्कुल सही सही निश्चित करना अत्यन्त आवश्यक है; इसके लिए सबसे बढिया तरीका यह है कि पहले दिक्सूचक की किसी एक दिशा की ओर मुंह करें और फिर ठीक इसकी विपरीत दिशा की ओर मुंह करें और देख लें कि दोनों ही बार प्राप्त ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति एक-सी है या नहीं।

यह वाञ्छनीय होगा कि (क) और (ख) प्रत्येक के लिए ५ बार निरीक्षण अङ्क प्राप्त करके उनका औसत लें।

आकाश का यह आभासी चिपटापन विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है। आकाश के मेघाच्छादित होने पर यह अधिक बढ़ जाता है, विशेषतया उस दशा में जब उच्च-पुञ्जमेघ या उच्च-स्तारमेघ का आवरण छाया रहता है जिससे गहराई का भान होता है और तब आँखें चिपटेपन का क्षितिज तक अनुगमन करती हैं। सन्ध्या के झुटपुटे में चिपटापन विशेष रूप से बढ़ जाता है और अंधेरी रात में, जबकि तारे खूब चमकते रहते हैं, यह चिपटापन घट जाता है। सामान्यरूप से क्षितिज और ऊर्ध्वबिन्दु के बीच के कोण का निचला अर्द्धभाग दिन के समय २२° होता है और रात को ३०°। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस सिलसिले में समुद्र पर प्राप्त किये गये प्रेक्षण विशेष महत्त्वपूर्ण होते हैं—चारों ओर दृष्टिक्षेत्र विस्तृत और खुला होता है तथा आसपास ऐसी कोई चीज़ नहीं रहती जो प्रेक्षण-फल प्राप्त करने में आप का ध्यान बँटाये।

लाल रंग के काँच के बड़े टुकड़े में से (इतना बड़ा जिससे उसके हाशिये दृश्य को विकृत न कर सकें) देखने पर आकाश अधिक चिपटा प्रतीत होता है; नीले रंग के काँच में से देखने पर यह ऊपर को अधिक उठा हुआ तथा अर्द्ध गोलाकार शक्ल से अधिक मिलता-जुलता दीखता है।[1]

अधिक बारीकी से प्राप्त किये गये प्रेक्षणफलों से आकाश की छत की शक्ल के बारे में और भी अधिक यथार्थ जानकारी हमें प्राप्त हो सकती है—अवश्य अनजाने ही हमें लगता है कि आकाशीय छत की शक्ल मेहराबदार है। अनेक प्रेक्षकों को आकाश की छत की शक्ल फौजी टोपी (हेल्मेट) के मानिन्द जान पड़ती है।

1. Dember en Uibe, Ann. Phys., I, 313, 1920.

११०. ऊँचाई आँकने में अतिरंजना (चित्र ९८)

आकाश की मेहराबदार छत के आभासी चिपटेपन का सम्बन्ध इस बात से जुड़ा जान पड़ता है कि क्षितिज के ऊपर की ऊँचाई के आँकने में हम अतिशयोक्ति से काम लेते हैं। स्पष्ट है कि सदैव अनजाने ही चाप तथा उसके कोण की नाप में हम धोखा खा जाते हैं—जैसे बिन्दु M को इस तरह चुनें कि HM=MZ हो तो क्षितिज से इसकी कोणीय ऊँचाई ४५° से बहुत कम होगी, यद्यपि हमें यह ठीक ऊर्ध्व बिन्दु और क्षितिज के बीचोबीच स्थित जान पड़ता है।

चित्र ९८—ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज तक के आभासी चाप का दो भागों में विभाजन।

जाड़े के दिनों में दोपहर का सूर्य आकाश में काफ़ी ऊँचाई पर मालूम पड़ता है यद्यपि हमारे (हालैण्ड के) अक्षांश प्रदेश में यह ऊँचाई क्षितिज से केवल १५° होती है। ग्रीष्म ऋतु में यह करीब-करीब ऊर्ध्व बिन्दु पर पहुँचता जान पड़ता है जबकि वास्तव में इसकी ऊँचाई मुश्किल से ही ६०° से अधिक हो पाती है।

इसी प्रकार पहाड़ियों की ऊँचाइयों और सामने की चढ़ाई के ढाल की तीव्रता के आँकने में हम अतिरंजना से काम लेते हैं। प्रेक्षकों ने तो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द २२° कोण वाले प्रभामण्डल के विवरण में इनकी ऊँचाई को चौड़ाई से ज्यादा बतलाया है (§१३४)।

ये दृष्टिभ्रम बहुत कुछ अंशों में दूर किये जा सकते हैं यदि भू-दृश्य को हम अधमुँदी आँखों से देखें; तब प्रकाशित तथा अँधेरे भाग अलग-अलग केवल बहुत [illegible] की शक्ल में दीखते हैं।

१११. क्षितिज पर सूर्य और चन्द्रमा के आकार में वृद्धि का आभास

यह एक सबसे प्रबल और व्यापक रूप से ज्ञात प्राकृतिक दृष्टिभ्रम है। "उगता हुआ चन्द्रमा बहुत ही बड़ा दिखाई देता है, किन्तु जब यह आकाश में ऊँचा चढ़ जाता है तो यह काफ़ी छोटा दीखता है! और सूर्य भी, [illegible] सूर्य' उगते समय कितना बड़ा दीखता है!"

किन्तु सचमुच क्या यह दृष्टिभ्रम ही है? आइए, सूर्य के [illegible]

करें और उसे नापें। चश्मे का एक लेन्स लीजिए जिसकी फोकसदूरी करीब दो गज हो[1]; कार्क में बने एक गाँचे में इसे लगाइए और इसे अस्त होते हुए सूर्य के सामने खिड़की की दहलीज पर रखिए (चित्र ९९ क)। खिड़की खुली होनी चाहिए, अन्यथा इसके काँच
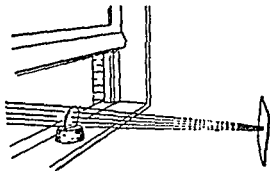
चित्र ९९ क—लम्बी फोकस दूरी वाले लेन्स द्वारा सूर्य के बिम्ब का निर्माण।

चित्र ९९ ख

प्रतिबिम्ब को अस्पष्ट बना देंगे। प्रकाश किरणों को ग्रहण करने के लिए लेन्स के पीछे करीब दो गज की दूरी पर कागज का तख्ता रखते हैं और तब इस पर सूर्य का एक बढ़िया और स्पष्ट चित्र प्रगट होता है। यदि यह बिम्ब पूर्णतया गोल नहीं है तो अवश्य ही लेन्स आपतित किरणों के समकोण स्थित नहीं है, अतः इसे इधर-उधर घुमाइए और थोड़ा बहुत इसे तिरछा झुकाइए। यह निश्चित कर लेने पर कि कहाँ पर कागज को रखने पर यथासम्भव सबसे अधिक स्पष्ट सूर्य-प्रतिबिम्ब बनता है, बिम्ब की व्यासरेखा के सिरे पेन्सिल के बिन्दुओं द्वारा अङ्कित करिए और स्केल की सहायता से आधे मिलीमीटर की शुद्धता तक इसकी नाप प्राप्त करिए। अच्छा होगा कि क्षैतिज व्यास की लम्बाई नापे क्योंकि ऊर्ध्व व्यास वायुमण्डल के वर्त्तन[2] के कारण कुछ छोटा हो जाता है। इन नापों को कई बार दुहराइए, तब उनका औसत मान लीजिए।

इसी प्रयोग को अब उस वक्त करिए जब सूर्य आकाश में ऊँचाई पर स्थित हो। इस बार प्रयोग की व्यवस्था अधिक जटिल होगी। लेन्स सहित कार्क को किसी ऊँचे स्तम्भ पर कील के सहारे लगा दीजिए। स्तम्भ का उपयुक्त पार्श्व चुनकर और कार्क

१. चश्मे के व्यापारी ऐसे लेन्स की शक्ति +०·५ मानते हैं। बिना घिसा हुआ लेन्स लीजिए जिसके हाशिये कोरे हों।

2. Refraction

को घुमाकर लेन्स के तल को सूर्य-किरणों के ठीक समकोण कर सकते हैं (चित्र ९९ग)। सूर्य के प्रतिबिम्ब की नाप करिए तो पायेंगे कि प्रतिबिम्ब उतना ही बड़ा रहता है चाहे सूर्य आकाश में ऊँचाई पर रहे या नीचे रहे (नाप की शुद्धता की न्यूनतम सीमा तक)। अत्यन्त शक्तिशाली दूरबीन की सहायता से प्राप्त की गयी अत्यन्त शुद्ध नाप में भी रत्ती भर का अन्तर नहीं पड़ता।

अतः स्पष्ट है कि क्षितिज के निकट स्थित सूर्य और चन्द्रमा के आकार की वृद्धि एक मानसिक घटना है। किन्तु यह घटना भी निश्चित नियमों के अधीन है और इसे अङ्कों में व्यक्त कर सकते हैं। करीब १२ इंच व्यास की सफेद दफ्ती की वृत्ताकार चकरी लीजिए और इसके सामने इतनी दूरी पर खड़े होइए कि दफ्ती की चकरी उतने ही बड़े आकार की दीखे जितना बड़ा चन्द्रमा दीखता है। अवश्य इसके लिए दोनों की सीधे ही तुलना नहीं की जा सकती है, अन्यथा आप देखेंगे कि वास्तविक नाप की तरह इस दशा में भी चन्द्रमा का आकार सदा एक-सा ही बना रहता है। अतः आपको चाहिए कि पहले आप चन्द्रमाको देखें और अपने मस्तिष्कपर इसकी अनुभूति को भलीभाँति अंकित कर लें कि चन्द्रमा कितना बड़ा दीखता है और तब पीछे मुड़कर दफ्ती की चकरी के प्रत्यक्ष आकार से उसकी तुलना कीजिए। इससे भी अच्छा तरीका यह है कि काली पृष्ठभूमि पर सफेद चकरियाँ बहुत-सी लगा दी जायँ और तब हर बार एक निश्चित दूरी पर खड़े होकर उन्हें देखें। आकार निर्धारित करने की यह क्रिया, चन्द्रमा जब आकाश में ऊँचाई पर स्थित हो, तब कीजिए और जब वह नीचे स्थित हो, तब भी।

इस प्रकार की तुलना सूर्य के लिए भी की जा सकती है। गहरे रंग का काँच काम में लाइए, मिसाल के तौर पर काली पड़ गयी हुई फोटोग्राफी की प्लेट; ताकि सूर्य के प्रकाश से आँखों को चकाचौंध न लगे। फिर बाद में नंगी आँख से चकरियों को देखिए। ये प्रेक्षण कठिन पड़ते हैं क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक घटना अनेक सूक्ष्म बातों से प्रभावित होती है जैसे उनके प्रति आप के ध्यान या तल्लीनता में परिवर्तन आदि। देखिए कि कुछ थोड़े अभ्यास के बाद आपको कितनी अधिक सफलता इस प्रयोग में मिलती है।

इस तरीके से प्राप्त अङ्क हमें बतलाते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा क्षितिज के निकट, आकाश में अपनी ऊँची स्थिति के मुकाबले में २.५ से लेकर ३.५ गुने तक बड़े आकार के दिखाई देते हैं। अतः निस्सन्देह भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओं में अन्तर विशेष-रूप से अधिक है। यह प्रभाव सध्या के धुंधलके के समय अथवा मेघाच्छादित आकाश के समय और भी अधिक प्रबल होता है।

सूर्यास्त के समय सूर्य के आकार की प्रत्यक्ष वृद्धि वहाँ और भी अधिक स्पष्ट होती है जहाँ भूमिखण्ड चौरस होता है वनिस्पत उस वक्त के जब सूर्य ऊँचे पहाड़ों के पीछे अस्त होता है। किन्तु समुद्र पर अस्त होने की दशा में आकार की वृद्धि थोड़ी ही होती है।[1]

अँगूठे और तर्जनी के दर्मियान में से चन्द्रमा को देखिए या किसी नली में से, यह छोटा दिखलाई देता है। ऐसे व्यक्ति जिनकी एक ही आँख होती है, क्षितिज के निकट के चन्द्रमा या सूर्य के आकार की वृद्धि से अनभिज्ञ होते हैं; यदि हम अपनी एक आँख ढंक ले, तो पहले की भाँति कुछ देर तक हमें यह दृष्टिभ्रम दिखलाई देता रहता है किन्तु फिर सन्ध्या के अन्त होते-होते यह दृष्टिभ्रम विलुप्त हो जाता है।

केवल सूर्य और चन्द्रमा ही नहीं, वल्कि तारा-समूह भी क्षितिज के निकट आवर्द्धित आकार के दिखलाई देते हैं। यहाँ तक कि हेडिजर वृश (§१८२) भी क्षितिज पर, आकाश में ऊँचाई की स्थिति के मुकावले में करीव दो गुने लम्वे तथा दो गुने चौड़े दिखलाई पडते हैं।

११२. क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार में प्रतीयमान वृद्धि, और आकाश की मेहरावदार छत की शक्ल में पारस्परिक सम्वन्ध

इस वात का प्रयत्न किया गया है कि उपर्युक्त घटनाओं का समाधान आकाशीय मेहराव के प्रतीयमान चिपटेपन के आधार पर किया जा सके। इस धारणा के अनुसार हम कल्पना करते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा हमसे उतनी ही दूर है जितनी दूर हमारे चारो ओर का आकाश। अतः आकाश में सूर्य जव नीचे की ओर होगा तो ऊँचाई की स्थिति के मुकावले में वह हमसे कई गुना अधिक दूरी पर जान पड़ेगा; किन्तु चूँकि इसका कोणीय व्याम उतना ही वना रहता है अत. हम अनजाने ही समझ लेते हैं कि इसका आकार कई गुना वड़ा हो गया है। चित्र १०० से हम देखते हैं कि चूँकि सूर्य
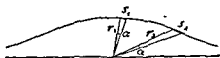
चित्र १००—जहाँ आकाशीय छत अधिक दूरी पर जान पड़ती है वहाँ सूर्य का मण्डलक *अधिक बड़ा दीखता है।*

1. Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1955) Chap II which contains an interesting theory about the phenomenon.

की दोनों स्थितियों के लिए कोण α का मान समान है, अत. $\frac{S_1}{S_2} = \frac{r_1}{r_2}$। इस सूत्र में S_2 तथा S_1 सूर्य के दीखने वाले आकार हैं तथा r_2 और r_1 तदनुसार उनकी दूरियाँ हैं।

इस सम्बन्ध की जाँच करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा के प्रतीयमान आकार विभिन्न ऊँचाइयों के लिए आँके गये हैं (देखिए § १११)। ये प्रयोग कठिन हैं। दिन के नीले आकाश में, तथा रात के तारों से जगमगाते खुले आकाश में किये गये प्रयोगों के निष्कर्ष से सिद्ध होता है सूर्य और चन्द्रमा के आकार में बहुत कुछ आकाशीय छत (चापच्छद) की दूरी के अनुपात में ही परिवर्तन होता है। आकाश में नीचे की ओर स्थित सूर्य का आकार निकटस्थ बादलों के कारण (क्षितिज की पृष्ठभूमि पर छाया आकृति के रूप में दीखने वाली पार्थिव वस्तुओं के कारण नहीं) अधिक बड़ा प्रतीत होता है। इसका कारण यह है कि मेघाच्छादित आकाश बिना बादलों वाले खुले आकाश के मुकाबले में अधिक चिपटा प्रतीत होता है अतः ऐसी दशा में क्षितिज भी हमसे अधिक फासले पर स्थित जान पड़ता है, और अनजाने ही हम सूर्य को इतनी अधिक दूरी पर मान लेते हैं कि अब हम सोच नहीं पाते कि सूर्य बादलों के सामने है। इसी प्रकार आकाश में चन्द्रमा यदि नीचे की ओर हो तो निकट के बादलों के कारण दिन में यह अधिक बड़ा प्रतीत होता है। यह एक अत्यन्त अद्भुत बात है कि यदि आसमान खुला हो तो सन्ध्या के झुट-पुटे में चन्द्रमा दिन या रात की अपेक्षा बहुत बड़ा दीखता है—यह निष्कर्ष इस तथ्य के अनुकूल ही है कि सन्ध्या के झुटपुटे में आकाश की मेहराबदार छत अधिक चिपटी दीखती है। यदि रात में कुहरा मौजूद हो तो चन्द्रमा अपने आस-पास के आकाश को तेज रोशनी से प्रकाशित करता है, और हमें प्रतीत होता है मानों रात्रि के हल्के चिपटेपन वाले आकाश की जगह सन्ध्या के झुटपुटे वाला चिपटा आकाश मौजूद है अतः चन्द्रमा एक बार फिर बड़े आकार का दीखता है। यदि कोई व्यक्ति यह सोचे कि क्षितिज के निकट स्थित होने पर या कुहरे से घिरे होने पर चन्द्रमा के आकार की प्रतीयमान वृद्धि का सम्बन्ध उसकी प्रदीप्ति की कमी के साथ जोड़ा जा सकता है तो उसकी इस गलत धारणा का समाधान निम्नलिखित दो प्रेक्षणों द्वारा किया जा सकता है—(क) नाखूनी शक्ल का नवचन्द्र कुहरे में बड़े आकार का नहीं दीखता—इसका कारण समझना आसान है, क्योंकि नवचन्द्र निकट के आकाश में कम ही प्रकाश फैला पाता है। (ख) ऊँचे आकाश में चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा का आकार बड़ा नहीं दीखता। ऊपर की इन तमाम् बातों से यह स्पष्ट है कि पृष्ठभूमि का आकाश ही प्रमुख उपादान है जो हमारे लिए सूर्य और चन्द्रमा का आकार निर्धारित करता है। फिर भी हमें स्वीकार

करना होगा कि दोनों घटनाओं में इस प्रकार का घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करने के खिलाफ कुछ आपत्तियाँ भी अवश्य हैं। अनेक व्यक्तियों को तो क्षितिज पर स्थित सूर्य या चन्द्रमा निकटतम दूरी पर जान पड़ता है और उनकी प्रत्यक्ष दूरी के बारे में कुछ भी अन्तर को महसूस करने में वे नितान्त असमर्थ रहते हैं, यद्यपि उनके आकार की वृद्धि का स्पष्ट रूप से वे अनुभव करते हैं। मेरे विचार में इस प्रकार की आपत्तियों को निर्णायक नहीं मानना चाहिए, क्योंकि बहुत सम्भव है कि दूरी के बारे में एकदम सीधे ही प्रश्न करने पर हम ऐसी मनोवैज्ञानिक प्रेरणाओं को उभार देते हैं जो उन प्रेरणाओं से भिन्न होती हैं जो उनके इस स्वतः निर्णय करने की क्षमता को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं।

११३. अवतल धरती

यह आकाशीय छत की दृष्टि-अनुभूति का प्रतिरूप सरीखा है। जब वायु स्वच्छ होती है तो गुब्बारे से सर्वेक्षण करने पर धरती ऊपर की ओर झुकी जान पड़ती है अतः ऐसा जान पड़ता है मानों हम एक वृहत् अवतल प्लेट के ऊपर-ऊपर उतरा रहे हैं। आँख से गुजरनेवाला क्षैतिज धरातल सदैव ही हमें समतल प्रतीत होता है; तथा इससे ऊपर या नीचे के दूर-स्थित अन्य क्षैतिज धरातल इस स्थिर धरातल की ओर झुके हुए प्रतीत होते हैं। बादलों की पेटी से कुछेक मील ऊपर जब गुब्बारा उतराता है तो ये बादल भी वक्र सतह के प्रतीत होते हैं जिनका उत्तल पार्श्व पृथ्वी की ओर होता है और अवतल पार्श्व ऊपर की ओर। यदि हम बादलों के दो स्तरों के दर्मियान स्थित हों, एक हमारे ऊपर और दूसरा नीचे तो हमें ऐसा महसूस होता है मानों हम घड़ी के दो विशालकाय काँच के दर्मियान उतरा रहे हैं। वायुयान पर से भी इसी प्रकार के प्रेक्षण प्राप्त किये जा सकते हैं।

११४. न्यूनानुमान का सिद्धान्त

'आकाशीय मेहराबदार छत' की प्रत्यक्षत. अस्पष्ट मनोवैज्ञानिक घटना के लिए गणित का सूत्र प्राप्त करने में स्टेर्नेक ने अत्यन्त कुशलता के साथ कामयाबी हासिल की है। यद्यपि यह सही है कि वह इस सूत्र के लिए किसी तरह की निश्चित व्याख्या नहीं दे पाया है, किन्तु उसने कम-से-कम इसका सम्बन्ध ऐसे प्रेक्षणों के एक बड़े समूह से स्थापित किया है जिनसे हम अपने दैनिक अनुभव में भलीभाँति परिचित हैं।

वस्तुएँ जितनी अधिक दूरी पर स्थित होती हैं, उनकी दूरियों का अन्तर आँक सकना उतना ही अधिक कठिन होता है। सड़क के लैम्प जो हमसे १६० या १७० गज से

अधिक फासले पर होते हैं, सबके सब रात के समय एक ही दूरी पर स्थित जान पड़ते हैं। क्षितिज के पर्वतों में से या आकाशीय पिण्डों में से कोई भी दूसरों के मुकाबले में अधिक दूरी पर नहीं जान पड़ते। सामान्य कोटि का अप्रशिक्षित प्रेक्षक सभी लम्बी दूरियों को कम ही आँकता है; उदाहरण के लिए, रात में जलती हुई आग, खुले समुद्र से दिखलाई देने वाले बन्दरगाह की बत्तियाँ, आदि।

निकट की वस्तुओं के लिए इस न्यूनानुमान की मात्रा कम होती है; तथा वस्तुओं की दूरी के बढ़ने पर यह न्यूनानुमान भी बढ़ जाता है और अन्त में प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाली यह दूरी एक सीमा तक पहुँच कर फिर आगे नहीं बढ़ती। रेलगाड़ी से देखने पर आयताकार श्वेत समलम्ब चतुर्भुज[1] ▭ के मानिन्द जान पड़ते है, क्योंकि भुजा α द्वारा बननेवाले कोण का मान इसकी सही दूरी के हिसाब से तो सही होता है, किन्तु भुजा की आभासी दूरी के हिसाब से यह कोण छोटा बैठता है। रेलगाड़ी जब सुरंग में प्रवेश करती है और खिड़की में से आप सुरंग के प्रवेश-द्वार की ईंटों की बनी दीवार को देखते हैं तो ईंटें उभरी हुई-सी प्रतीत होती हैं और आकार में वे बड़ी जान पड़ती हैं। व्याख्या इस प्रकार है; यदि सही दूरी आधी हो जाती है तो आँख पर ईंटें पहले की अपेक्षा दो गुना बड़ा कोण बनाती हैं, किन्तु आभासी दूरी केवल डेढ़ गुना ही कम होती है (मिसाल के लिए), अतः ऐसा प्रतीत होता है मानों ईंटे स्वयं आकार में बढ़ गयी हैं।

वान स्टेर्नेक ने व्यक्त दूरी d' और वास्तविक दूरी d को निम्नलिखित सरल सूत्र द्वारा परस्पर सम्बद्ध करने का प्रयत्न किया था — $d' = \frac{cd}{c+d'}$

c हर एक दशा के लिए विशेष स्थिराङ्क है जो दी हुई प्रदीप्ति की दशा में आँकी जा सकनेवाली महत्तम दूरी बतलाती है। c का मान २०० गज से लेकर १० मील तक पहुँचता है। इस सूत्र से हम देखते हैं कि c की तुलना में जबतक d का मान बहुत कम रहता है, तब तक आभासी दूरी d' करीब-करीब वास्तविक दूरी d के बराबर ही रहती है। यदि d का मान उसी कोटि[2] का हो जाता है जिस कोटि का c, तो अधो-अनुमान में वृद्धि हो जाती है; यदि c की अपेक्षा d का मान अधिक हो तो आभासी दूरी सीमा के निकट पहुँच जाती है। अतः यह सूत्र हमारे अनुभव का एक उत्तम गुणात्मक[3] विवरण प्रस्तुत करता है। और अधिक सूक्ष्म प्रेक्षणों से पता चलता है कि यह सूत्र मात्रात्मक[4] दृष्टि से भी आश्चर्यजनक रूप से सही सिद्ध होता है।

1. Trapezia 2. Order 3. Qualitative 4. Quantitative

न्यूनानुमान के सिद्धान्त से यह बात समझ में आती है कि कैसे पहाड़ के पेंदे पर खड़ा प्रेक्षक O चढ़ाई के ढाल की तीव्रता को अत्यधिक आँकता है—दूरी OB को वह OB' के बराबर समझता है अतः AB के स्थान उसे AB' दिखाई देता है। और इसी तर्क के अनुसार चोटी पर खड़ा प्रेक्षक नीचे की ढाल की तीव्रता को कम करके आँकता है (चित्र १०१)। अब हम देखेंगे कि इस सिद्धान्त द्वारा आकाशीय मेहराबदार छत की आभासी शक्ल की व्याख्या करने का प्रयत्न कैसे किया गया है तथा इसके साथ-साथ इस बात की व्याख्या भी कि क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार में प्रकट रूप से वृद्धि क्यों हो जाती है।
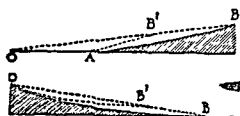
चित्र १०१—प्रेक्षक O ऊपर की चढ़ाई को अधिक बढ़ाकर आँकता है और नीचे के ढाल को घटाकर।

कल्पना कीजिए कि हमारे सिर के ऊपर डेढ़ मील की ऊँचाई पर बादलों की पेटी है। बादलों के इस स्तर को एक अत्यन्त चिपटी प्लेट के मानिन्द दीखना चाहिए क्योंकि पृथ्वी की वक्रता के कारण क्षितिज के बादलों के स्तर से हमारी आँख की दूरी करीब ११० मील होती है जबकि ऊर्ध्व बिन्दु के बादल से आँख की दूरी केवल १.५ मील है। किन्तु मेघाच्छादित आकाश इस शक्ल का बिलकुल ही नहीं दीखता। छोटी दूरी में न्यूनानुमान थोड़ी मात्रा में लगता है और लम्बी दूरी में अधिक मात्रा में। मान लीजिए कि हम अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्व बिन्दु तक दूरी}}$ का मान लगभग ५ आँकते हैं। इसका अर्थ है कि इन परिस्थितियों में $c = ६\cdot६$ मील। अतः न्यूनानुमान के सिद्धान्त के सूत्र से हमें सही मान प्राप्त होता है। (इस प्रयोग को स्वयं आजमाइए!)। इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि मेघाच्छादित आकाश हमें एक ऐसी मेहराब (चापच्छद) जैसा दीख पड़ेगा जिसकी शक्ल अति परवलयाकार खोखले पिण्ड की भीतरी सतह के मानिन्द होगी—जो वास्तव में हमारी सामान्य अनुभूति के अनुकूल ही पड़ती है। अतः ध्यान रखिए कि दरअसल आकाशीय छत हमें चिपटी नहीं दिखाई देती है, बल्कि इसके प्रतिकूल, अपनी वास्तविक ऊँचाई से कुछ अधिक ही ऊँची यह जान पड़ती है!

किन्तु दिन का नीला आकाश या रात का तारों भरा आकाश कैसा दीखता है?

इसके लिए वान स्टेर्नेक वस स्थिरांक c के लिए हर बार एक नया मान लेता है और इस प्रकार उसका सूत्र प्रत्येक विशिष्ट दशा के लिए प्राप्त प्रेक्षण का आश्चर्यजनक रूप से सही विवरण प्रस्तुत करता है। किन्तु यह समझ पाना मुश्किल है कि इन दशाओं मे हम किसी खास 'दूरी' के मान के न्यूनानुमानित होने की बात कैसे कर सकते हैं। और यह हमें अधिक व्यापक प्रश्नों की ओर ले जाता है : बादल सरीखी अनिश्चित वस्तुओं के लिए 'दूरी' की अनुभूति आखिर हमे प्राप्त ही कैसे हो पाती है? और फिर नीचे आकाश की दूरी? या फिर रात के बिना बादलो वाले खुले आकाश की दूरी? जहाँ तक पार्थिव वस्तुओं का सम्बन्ध है जिनकी लम्बाई, चौड़ाई या दूरी से हम अपने अनुभवों द्वारा भलीभाँति परिचित हैं, न्यूनानुमान का सिद्धान्त सही साबित हो सकता है, किन्तु यह अत्यन्त सन्देहजनक है कि यह ऊपर के आकाश पर भी लागू किया जा सकता है या नहीं। इसके अतिरिक्त अभी तक इस बात पर कोई प्रकाश नही डाला जा सका है कि अधोऽनुमान या न्यूनानुमान की उत्पत्ति कैसे होती है।

११५. दृष्टि-दिशा सम्बन्धी गौस का सिद्धान्त

उपर्युक्त पैराग्राफ के सम्बन्ध मे अनेक प्रेक्षण ऐसे मिलते हैं जिनसे यह पता चलता है कि आकाशीय छत की शक्ल तथा क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार में प्रगट रूप से वृद्धि, इस बात पर निर्भर करती है कि शरीर के लिहाज़ से हमारी दृष्टि-रेखा की दिशा क्या है। अत. गौस ने यह मान लिया कि पीढ़ी दर पीढ़ी के अनुभव ने समानुयोजन[1] द्वारा हमें इस योग्य बल दिया है कि अपने सामने की ओर की वस्तुओं का प्रेक्षण हम ऊपर की ओर की वस्तुओं की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह कर सके और हमारी यह क्षमता दूरी तथा आकार की लम्बाई-चौड़ाई आँकने की सामर्थ्य को प्रभावित करती है।

पूर्णिमा का चन्द्रमा जब ऊँचे आकाश पर चमक रहा हो, तो उस वक्त हम आराम कुर्सी पर बैठे या जमीन पर ही बैठे, इस तरह कि हमारा सिर किसी ढालुआँ धरातल पर टिका हो। यदि पीछे की ओर काफी झुके किन्तु सिर को शरीर के अन्य भागों के लिहाज से सामान्य स्थिति मे ही रखे, तो चन्द्रमा का अवलोकन करने पर यह काफ़ी बड़े आकार का दीखता है। यदि हम अचानक उठ खड़े हों, तब चन्द्रमा को देखने के लिए हमें निगाह ऊपर की ओर उठानी होती है, और अब वह एक बार फिर छोटा दीखता

1. Adaptation

है। इसके ठीक प्रतिकूल, क्षितिज पर पूर्णिमा का चन्द्रमा हमें उस दशा में छोटा दीखता है जब हम आगे की ओर झुकते हैं।

दोनों ही घटनाएँ एक के बाद दूसरी उस वक्त देखी जा सकती हैं जब सूर्य क्षितिज से ३०° या ४०° की ऊंचाई पर हो और धुन्ध के कारण इसकी चमक मन्द पड़ गयी हो। पीछे की ओर तथा सामने की ओर बारी-बारी से झुकिए तो उसी क्रम से सूर्यमंडलक बड़ा और छोटा दीखेगा। पीठ के बल जमीन पर लेट जाइए, अब इस वक्त आकाश, उस ओर जिधर आप का सिर है, दबा हुआ प्रतीत होता है और इसके सामने ही दिशा

चित्र १०२—आकाश, जैसा कि वह लेटने की स्थिति से तथा खड़े होने की स्थिति से दीखता है।

में वह पूर्णतया गोलाकार दीखता है (चित्र १०२)। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि (शरीर के लिहाज) से निगाह जब नीचे की ओर जाती है या सामने की ओर, तो प्रस्तुत दशा के लिए दोनों के समान प्रभाव होते हैं, जबकि ऊपर की ओर निगाह जाती है तो वस्तुएँ संकुचित हुई जान पड़ती है।

क्षैतिज दण्ड[1] के सहारे घुटनों के बल नीचे को लटक जाइए, और जबकि आप का सिर नीचे लटकता हो, चारों ओर इधर-उधर देखिए। आकाश आप को अर्द्ध गोले की शकल का दीखेगा।

ये सभी प्रेक्षण एक दूसरे का समर्थन करते हैं। इसके अतिरिक्त तारा-समूह को जब दूरबीन से देखते हैं ताकि भू-दृश्य के बाहरी प्रभावों से प्रेक्षण मुक्त रहें, तो इसी प्रकार जब वे क्षितिज के निकट नीचे ही स्थित होते हैं, तो वे बड़े दीखते हैं। इस दशा में किसी भी तरह प्रभाव डालने वाली चीज बस केवल निगाह की दिशा ही हो सकती है।

1. Horizontal bar

अतः अब दर्पण की सहायता से सूर्य और चन्द्रमा के आभासी आकार की और अधिक जांच करने का प्रयत्न मत कीजिए—क्योंकि उदाहरण के लिए, आकाश में ऊँचाई पर स्थित चन्द्रमा को दर्पण में आप इस तरह देखते हैं कि आप की दृष्टि क्षैतिज दिशा में स्थित रहती है। यदि किसी भी तरह प्रेक्षक को दर्पण की उपस्थिति का भान हो जाता है तो दृष्टि-भ्रम कुछ अंशों में नष्ट हो जाता है। इसी कारण इस ढंग के प्रयोग का पूरा करना अत्यन्त कठिन होता है।

अभी बतलायी गयी दृष्टि-अनुभूतियों के सम्बन्ध में दिये गये अन्य बहुत से सिद्धान्तों का आसानी से खण्डन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए कहा गया है कि आकाशीय छत की शक्ल के लिए एक 'भौतिक सिद्धान्त' प्रस्तुत किया जा सकता है। यह सिद्धान्त वस्तुतः इस दुर्बोध्य तथ्य के रूप में है कि आकाश जितना अधिक चमकीला होगा, उतना ही अधिक दूर वह प्रतीत होगा, दूरी प्रदीप्ति के वर्गमूल के अनुपात में बढ़ती है। ऊर्ध्व बिन्दु पर नीला आकाश क्षितिज की तुलना में मन्द प्रकाश का होता है अतः इस कारण इसकी ऊँचाई कम प्रतीत होगी। किन्तु इस सिद्धान्त का पर्याप्त रूप से खण्डन इस बात से हो जाता है कि आकाश पर जब चारों ओर समान रूप से बादल छाये रहते हैं तो ऊर्ध्व बिन्दु पर आकाश क्षितिज की अपेक्षा अधिक चमकीला रहता है, किन्तु फिर भी यह चिपटा प्रतीत होता है। फिर इसके अतिरिक्त भी, मेघाच्छादित आकाश में बादलों का वह भाग जो सूर्य के सामने पड़ता है, शेष भाग के मुकाबले में अधिक चमकीला दीखता है, तब भी यह चारों ओर के भाग के मुकाबले में हमारे अधिक निकट प्रतीत होता है।

११६. आकाशीय छत की दूरी का हमारा अनुमान पार्थिव वस्तुओं द्वारा किस प्रकार प्रभावित होता है

यदि आप मकानों की एक लम्बी कतार के सामने खड़े हों और ठीक अपने सामने के मकानों को देखें तो इनके ऊपर का आकाश कतार के दूसरे सिरे के मकानों के ऊपर के आकाश के मुकाबले में बहुत अधिक नजदीक जान पड़ेगा।

प्रगट रूप से आकाश की दूरी हम ५० से ६० गज तक आँकते हैं! किन्तु हमें ऐसी वस्तुएँ भी दिखाई देती हैं जिनके बारे में हमें अच्छी तरह ज्ञात है कि वे अत्यधिक दूरी पर हैं, यह बात इस निष्कर्ष के लिए पर्याप्त है कि उनकी पृष्ठभूमि का आकाश और भी अधिक दूरी पर स्थित प्रतीत होगा। हम कह सकते हैं कि कुछ हद तक पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु के लिए आकाश में उनकी निज की पृष्ठभूमि होती है। इससे

स्पष्ट है कि ये सभी घटनाएँ विशुद्ध रूप से मनोवैज्ञानिक ही होनी चाहिए तथा किसी आदर्श नियामक धरातल पृष्ठ की बात करना, जो हमारे लिए आकाशीय छत ही होगी, नितान्त असम्भव है।

रेल की लम्बी पटरी की सीध में देखिए या किसी ऐसी चौड़ी सड़क को देखिए जिसके दोनों ओर वृक्ष लगे हों ताकि लम्बी दूरी का भान हो सके, तो इनकी लम्बाई की दिशा में आकाश, दिक्सूचक की अन्य दिशाओं की अपेक्षा अधिक दूरीपर स्थित जान पड़ता है। किन्तु कागज के तख्ते से यदि आप क्षितिज रेखातक भू-दृश्य को ओट में ले ले, तब तुरन्त वही आकाश निकट प्रतीत होने लग जाता है।

इसके प्रतिरूप के फलस्वरूप हम इसी प्रकार अपनी निगाह ऊर्ध्व दिशा की ओर डाल सकते हैं, तब आकाश अधिक ऊँचा प्रतीत होगा। यह उस वक्त विशेष प्रभावकारी होती है जब हम एक ऊंची मीनार के पेंदे से देखते हैं या और भी बेहतर होगा यदि किसी बड़े रेडियो स्टेशन के पतले और ऊँचे खम्भों के पेंदे के निकट से देखें। तब ऊपर का आकाश झुका हुआ प्रतीत होता है, यहाँ तक कि यह गुम्बज की शक्ल अख्तियार कर लेता है। तीन ऐसे स्तम्भों के दर्मियान समूचा आकाश ऊपर को उभरा हुआ सा प्रतीत होता है।[1] विभिन्न निरीक्षक, एक दूसरे से स्वतंत्र तरीके पर, इसी प्रकार अपने लिए आकाशीय छत की आभासी शक्ल निर्धारित करते हैं (चित्र १०३)।
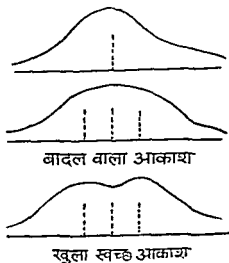
चित्र १०३—एरियल के खंभों के ऊपर आकाश की आभासी शक्ल।

यदि इनमें से किसी एक स्तम्भ की ओर देखते हुए आप क्षितिज से ऊर्ध्व बिन्दु तक के वृत्तचाप को दो भागों में विभाजित करें (§१०९), तब निचला भाग बहुत बड़ा

1. H. Stneklen, Diss. Gottingen, (1919)

प्रतीत होगा बनिस्बत उस दशा के जबकि स्तम्भ की ओर पीठ करके उतनी ही दूरी से आप विभाजन का अन्दाज लगाये। निचले भाग से बनने वाला कोण अब ४५° से बडा, करीब-करीब ५६° के बराबर भी जान पडेगा जिसका अर्थ यह है कि आकाशीय छत एक अर्द्धगोले से भी अधिक ऊँची दीखती है।

ये प्रेक्षण कितने भी अधिक विश्वसनीय क्यों न हों, किन्तु स्मरण रखिए कि वे स्वयं अपने तई आकाशीय छत की शक्ल या क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्ड के आकार की प्रगट रूप मे वृद्धि का समाधान नहीं कर सकते। अत्यन्त गहरे रंग के काँच मे से भी देखने पर सूर्य ऊँची स्थिति मे सदैव छोटा दीखेगा और नीची स्थिति मे बड़ा दीखेगा यद्यपि भू-दृश्य इस दशा मे कत्तई नही दृष्टिगोचर होते हैं।

११७. सूर्य और चन्द्रमा के आभासी आकार को इंचों में प्रगट करना—उत्तर-प्रतिबिम्ब की रीति[1]

हम जानते हैं कि सूर्य और चाँद के आकार को हम रेखीय माप मे नही व्यक्त कर सकते। हम तो केवल वह कोण नाप सकते हैं जो ये आँख पर बनाते हैं। फिर भी यह एक अद्भुत बात है कि बहुत से लोग दावा करते हैं कि ये आकाशीय पिण्ड शोरवे की प्लेट के आकार के बराबर हैं और कुछ थोड़े से लोग इन्हे सिक्के के आकार का बताते हैं। हो सकता है कि यह आपको हास्यास्पद लगे, किन्तु स्मरण रखिए कि वैज्ञानिक विचारधारा वाला व्यक्ति भी यह महसूस करता है कि यह कह सकना नितान्त असम्भव होगा कि चन्द्रमा का व्यास १ मि० मीटर मालूम पड़ता है या १० गज, जबकि वह भली-भाँति जानता है कि ४ इंच की दूरी पर १ मि० मीटर व्यास अथवा १००० गज की दूरी पर १० गज का व्यास चन्द्रमा को बिलकुल ठीक ढक लेगा। इस घटना में भाग लेने वाले मनोवैज्ञानिक तथ्यों के बारे मे अभी तक बहुत कम जानकारी प्राप्त हो पायी है।

सभी को मालूम है कि सूर्य की ओर दृष्टि डाल कर पलक झपकाने पर उसका उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त किया जा सकता है (§८८)। बाद में प्रत्येक वस्तु पर, जिसपर हम नजर डालते है, यह उत्तर-प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित होता है। निकट की दीवार पर यह अत्यन्त छोटा और तुच्छ-सा दीखता है, और दूर की चीजों पर यह बड़ा प्रतीत होता है (ध्यान दीजिए कि हम उस कोण का मान नही आँकते जो यह आँख पर बनाता है बल्कि स्वय उस वस्तु के आकार का अनुमान लगाते हैं।) यह प्रभाव भली प्रकार समझ मे

1. G. ten Doesschate Nederl. Tijdschr voor Geneesk 74, 748 1930

भी आता है क्योंकि यदि कोई वस्तु दूरी पर स्थित होकर भी आँख पर उतना ही बड़ा कोण बनाये जितना बड़ा निकट की वस्तु बनाती है, तो रेखीय माप में वह वस्तु अवश्य अधिक बड़ी होगी। यह प्रतिबिम्ब स्वयं सूर्य के आकार के बराबर कब दीखता है? विभिन्न प्रेक्षकों के मतानुसार ऐसा उस वक्त प्रतीत होता है जब दीवार की दूरी ५५ से लेकर ६५ गज तक होती है; यह शर्त्त दिन के लिए तथा रात के लिए समानरूप से लागू होती है। अतः इससे पता चलता है कि इतनी ही दूरी हम अपने और सूर्य या चन्द्रमा के बीच महसूस करते हैं। चूँकि इस दशा में आँख पर बनने वाले कोण का मान १/१०८ रेडियन होगा, अतः इस के अनुसार प्रतिबिम्ब का व्यास १८ से २२ इंच तक होना चाहिए।

इसी प्रकार यह देखा गया है कि ६५ गज से अधिक फासले की दीवार पर भी उत्तर-प्रतिबिम्ब उतना ही बड़ा दीखता है जितना बड़ा ठीक उसके ऊपर के आकाश अर्थात् क्षितिज पर, जबकि ऊँचे आकाश पर प्रक्षेपित उत्तर-प्रतिबिम्ब निश्चय ही ६५ गज के फासले वाली दीवार पर बनने वाले प्रतिबिम्ब से छोटा दीखता है। इससे एक बार फिर यह बात प्रदर्शित होती है कि हमारे लिए ऊपर के आकाश की दूरी क्षितिज के मुकाबले में कम दीखती है और अधोऽनुमान के सिद्धान्त के लिए सीमान्तक दूरी लगभग ६५ गज होती है (देखिए §११४)।

११७ अ. दृश्य-स्थल

अपने पहले के बनाये चित्रों की पुन. माप करने पर वॉगनकोनिश[1] इस नतीजे पर पहुँचा कि एक क्षेत्र के लिए, जिसे समष्टि रूप से हम एक नजर में देख पाते हैं, उसके कोणीय विस्तार को उसके एक लाक्षणिक विशिष्टता के रूप में निर्धारित करना उपयोगी होगा —इसे ही दृश्य-स्थल कहते हैं। भू-दृश्य की सामान्य दृष्टि-अनुभूति से यह घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। अंशों में नाप करें तो मैदानों में इसका विस्तार बढ़ जाता है और पहाड़ों में यह घट जाता है, रात्रि में यह अधिक विस्तृत होता है और दिन में कम। यह क्षेत्र जितना ही अधिक संकुचित होता है, हम कागज पर उसे चित्रित करते समय उसमें सूर्य और चन्द्रमा को उतना ही अधिक छोटे आकार का बनाते हैं; किन्तु कोणीय माप में व्यक्त करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वे हमें अधिक बड़े दिखलाई पड़ते हैं।

1. Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1935)

अध्याय १०

इन्द्रधनुष, प्रभामण्डल तथा कांतिचक्र[1]

इन्द्रधनुष

निम्नलिखित सरल बातें इन्द्रधनुष के अध्ययन की भूमिका समझी जा सकती हैं। पानी की अकेली एक बूंद में जिस क्रिया को सम्पन्न होते हुए हम देखते हैं वही वर्षा की लाखों बूंदों में दृष्टिगोचर होती है और फलस्वरूप चमकता हुआ रंगीन वृत्तचाप बनता है।

११८. वर्षा की बूँदों में व्यतिकरण की घटना[2]

अनेक व्यक्ति जिन्हें घरके बाहर भी चश्मा लगाना पड़ता है, इस बात की शिकायत करते हैं कि वर्षा की बूंदें प्रतिबिम्ब को विकृत कर देती हैं जिससे उसे पहचानना मुश्किल हो जाता है। कदाचित् उन्हें तसल्ली मिलेगी यदि उनका ध्यान हम उन्हीं वर्षा-बूँदों में दृष्टिगोचर होनेवाली शानदार व्यतिकरण[3] की घटना की ओर आकृष्ट करें। उन्हें बस इतना ही करना होगा कि वे किसी दूर के प्रकाश-स्रोत जैसे सड़क के लैम्प को देखें। अब पानी की बूंद जो पुतली के ठीक सामने पड़ती है, विचित्र ढंग से विकृत हो जाती है—यह प्रकाश के धब्बे सरीखी दीखती है जिसमें असाधारण रूप से दांते से कटे रहते हैं तथा जिसके हाशिये पर अत्यन्त सुन्दर विवर्त्तन धारियाँ दीखती हैं जिनमें रंग भी दृष्टिगोचर होते हैं, (चित्र १०४, a)।

इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य एक बात यह है कि चश्मे को इधर-उधर थोड़ा हटाएँ तो भी प्रकाश का धब्बा उसी स्थिति पर बना रहता है। दूसरी बात यह है कि प्रकाश के धब्बे की सामान्य शक्ल तथा इधर-उधर निकले हुए उसके हाशिये का, प्रथम दृष्टि में, बूंद की आकृति से किसी भी तरह का सम्बन्ध नहीं जान पड़ता। इसकी व्याख्या

1. Rainbow, halo and corona
2. Larmor, Proc. Cambr. Philos. Soc. 7, 131, 1891
3. Interference Phenomenon

सरल ही है। आँख को एक छोटी दूरवीन समझिए जो दूर के प्रकाश-स्रोत का प्रतिविम्ब बना रही है, और पानी की बूंद को प्रिज्मो का समूह मानिए जो दूरवीन के अभिदृश्य लेन्स के आगे रखा है। तब यह स्पष्ट है कि प्रत्येक नन्हा प्रिज्म किरणों के एक समूह को बगल की ओर वर्तित करता है; यह क्रिया अभिदृश्य लेन्स पर प्रिज्म की स्थिति
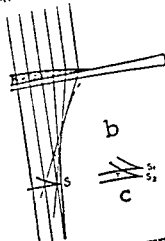
चित्र १०४—चश्मे के लेन्स पर पड़ी हुई वर्षा की बूंद से प्रकाश का विवर्तन
(a) व्यतिकरण आकृति (b) प्रकाश किरणों का मार्ग; बिन्दुरेखा रश्मिस्पर्शी वक्र है; मोटी रेखा तरंग का धरातल है निशिताग्र S पर है।
(c) दो क्रमागत तरंगाग्र, दोनों ही T बिन्दु से गुजरते हैं।

द्वारा प्रभावित नहीं होती (बशर्ते यह अभिदृश्य लेन्स पर, दूरवीन के प्रवेशमुख के अन्दर अन्दर पड़ता हो।) किन्तु प्रकाश के धब्बे की शक्ल प्रिज्म के वर्तन कोण तथा हर एक प्रिज्म के अनुस्थापन[1] पर अवश्य निर्भर करती है। पानी की बूंद जो ऊर्ध्व दिशा में खिच उठी होती है, दरअसल प्रकाश की क्षैतिज लकीर-सी बनाती है।

आइए, अब विवर्तन-धारियों[2] की बात करें! इन धारियों का अस्तित्व ही नहीं होता यदि पानी की बूंद लेन्स की सही आकृति धारण किये होती, ताकि प्रकाशस्रोत का प्रतिविम्ब ठीक एक बिन्दु पर बनता। क्योंकि उस दशा में प्रकाश तरंगाग्र के प्रत्येक भाग, चूंकि प्रकाशस्रोत से वे एक साथ ही चले थे, प्रतिविम्ब-स्थल पर बिना किसी पारस्परिक कला-अन्तर[3] के पहुँचेंगे। किन्तु बूंद की सतह की वक्रता अनियमित होती है, अत. उससे वर्तित होने पर किरणें एक फोकस पर नहीं मिलती, वल्कि वे रश्मि-

1. Orientation 2. Diffraction fringes 3. Phase-difference

स्पर्शी वक्र[1] के धरातल पर एक-दूसरे से मिलती हैं (चित्र १०४, b)। ऐसी दशा में सदैव ही हम पाते हैं कि रश्मि-स्पर्शी के निकट के किसी भी बिन्दु से दो भिन्न किरणें गुजरती हैं जो विभिन्न लम्बाइयों के प्रकाशपथ को पार किये हुए होती हैं, अतः इनके बीच व्यतिकरण होता है। तरंग की सतह का रेखाचित्र खींचने पर हम एक उत्क्रमण बिन्दु[2] प्राप्त करते हैं जहाँ निशिताग्र[3] स्थित होता है। अत. प्रत्येक क्षण पर एक बिन्दु T से सदैव ही दो तरंगाग्र एक निश्चित कला-अन्तर पर गुजरेंगे (चित्र १०४, c)।

निश्चित बिन्दु से नापी गयी अन्धकारवाली धारियों की दूरी इस सूत्र से प्राप्त होती है, $दू = \sqrt[3]{(2m+1)^2}$ जिसमें m के मान 1, 3, 5 ... हैं। अतः ये दूरियाँ उसी अनुपात में होती हैं जिस अनुपात में २१ : ३७ : ५० : ६१ आदि हैं।

११९. इन्द्रधनुष का निर्माण कैसे होता है ?

मेरा हृदय उछल-उठता है, जब मैं करता हूँ दर्शन सुरधनु का आकाश पर।

—वर्ड्सवर्थ

ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्या है और उमस बहुत ही अधिक है। पश्चिमी क्षितिज पर काले बादल छाये हैं, तूफ़ान की तैय्यारी हो रही है। बादलों का एक काला मेहराब-सा तेज़ी के साथ ऊपर उठ रहा है और इसके पीछे दूरी पर स्थित आकाश साफ़ होता नज़र आ रहा है—सामने के किनारे पर हलके रंग के अलका[4] बादलों का हाशिया है जिसपर पतली आड़ी धारियाँ दिखाई देती हैं। यह समूचे आकाश पर छा जाता है और फिर हमारे सिर के ऊपर से भयोत्पादक तरीके से गरज की एकाध गड़गड़ाहट उत्पन्न करता हुआ गुजरता है। तब अकस्मात् ही मूसलाधार वर्षा होने लग जाती है—अब पहले की अपेक्षा ठण्डक हो जाती है। सूरज जो आसमान में नीचे उतर चुका है, पुनः चमकने लगता है। और इस तूफ़ान में, जो पूर्व दिशा की ओर बढ़ रहा है, रंग-बिरंगी आभा के इन्द्रधनुष की चौड़ी मेहराब प्रगट होती है।

जब कभी इन्द्रधनुष दीख पड़ता है, सदैव ही पानी की बूँदों पर प्रकाश की क्रीडा के फलस्वरूप इसका निर्माण होता है। बहुधा ये बूँदें वर्षा-जल की बूँदें होती हैं, कभी-कभी कुहासे की नन्ही बारीक बूँदें भी। इनमें से सबसे नन्ही बूँदों से, जिनसे बादल बनते हैं, इन्द्रधनुष कभी नहीं देखे जा सकते। अतः यदि कभी आप किसीको यह कहते हुए सुनें कि गिरते हुए तुषार में या स्वच्छ आकाश में उसने इन्द्रधनुष देखा है तो निश्चय

1. Caustic 2. Point of reversal 3. Cusp 4. Cirrus

ही समझ जाइए कि तुषार आधा गलकर पानी बन चुका रहा होगा या फिर पानी की झीनी फुआर पड़ी होगी जो कभी-कभी बिना बादलों के ही उत्पन्न हो जाती है। इस तरह कुछ और दिलचस्प प्रेक्षण स्वयं करने का प्रयत्न करिए ! पानी की ये बूंदें जिनमें इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, आम तौर पर हमसे आध मील से लेकर डेढ़ मील की दूरी से अधिक फासले पर नहीं होती हैं (प्लेट IX a)। एक अवसर पर मैंने इन्द्रधनुष देखा जो मेरी आँख से २० गज की दूरी पर स्थित जंगल की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने स्पष्ट उभरा था, अतः स्वयं इन्द्रधनुष तो और भी नजदीक रहा होगा। एक ऐसे दृष्टान्त का भी पता है जबकि ३ गज के फासले के जंगल के सामने इन्द्रधनुष दिखलाई पड़ा था।[1]

इंग्लैण्ड के एक प्राचीन अन्धविश्वास के अनुसार प्रत्येक इन्द्रधनुष के पेंदे पर स्वर्ण से भरा कलश मौजूद होता है। इन दिनों भी कुछ ऐसे लोग हैं जिनका ख्याल है कि वे आसानी से इन्द्रधनुष के इस पेंदे तक पहुँच सकते हैं, या वहाँ तक साइकिल पर जा सकते हैं तथा उनका कहना है कि उस स्थल पर एक अद्भुत टिमटिमाती हुई रोशनी देखी जा सकती है। यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिए कि इन्द्रधनुष एक वास्तविक चीज की तरह किसी एक निश्चित स्थिति पर मौजूद नहीं होता, एक विशेष दिशा से आते हुए प्रकाश के अतिरिक्त यह और कुछ भी नहीं है।

आर्थोक्रोमैटिक या पैन्क्रोमैटिक फिल्म पर पीले रंग के फिल्टर[2] काँच की सहायता से $\frac{1}{50}$ सेकण्ड के प्रकाशदर्शन और F/16 के डायफ्राम पर इन्द्रधनुष का फोटोग्राफ़ प्राप्त करने का प्रयत्न करिए।

१२०. इन्द्रधनुष का विवरण

"रुबेन्स का इन्द्रधनुष. . .मटमैले नीले रंग का था, जो इन्द्रधनुष की ओर से प्रकाशित दृश्य में आकाश के मुकाबले में अधिक गहरे रंग का दीखता था। रुबेन्स को प्रकाश-विज्ञान की अनभिज्ञता का दोष नहीं देना चाहिए बल्कि इस बात का कि उसने कभी भी इन्द्रधनुष का ध्यानपूर्वक प्रेक्षण नहीं किया था।"[3]

रस्किन 'दि ईगल्स नेस्ट'

इन्द्रधनुष एक वृत्त का भाग होता है; इसे देखने पर पहली बात जो ध्यान में आती है वह यह है कि अनुमान लगायें कि इसका केन्द्र कहाँ पर स्थित है, अर्थात् वह दिशा मालूम करें जिस ओर इस वृत्त-खण्ड का केन्द्र स्थित है। तुरन्त हमें पता चलता

1. Nat. 87, 314, 1913. 2. Filter
3. किन्तु इन्द्रधनुषवाले भू-दृश्य में छायाओं की दिशा इन्द्रधनुष के केन्द्र की दिशा में नहीं पड़ती है।

है कि यह केन्द्रविन्दु क्षितिज के नीचे स्थित है और सहज ही हम मालूम कर सकते हैं कि सूर्य से प्रेक्षक की आँख तक खींची गयी रेखा को यदि बढ़ाये (पृथ्वी को भेदते हुए) तो यह उस केन्द्रविन्दु की ओर इङ्गित करेगी, अर्थात् यह प्रति-सूर्य विन्दु[1] होगा। यह रेखा ही वह अक्ष है जिससे इन्द्रधनुष का वृत्त एक पहिये की तरह जुड़ा है (चित्र १०५)।
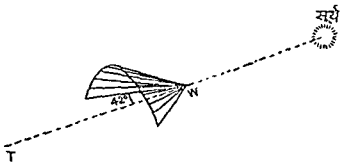
चित्र १०५—सूर्य की अपेक्षा से वह दिशा जिधर हमें इन्द्रधनुष दिखाई देता है।

इन्द्रधनुष से आँख तक आनेवाली किरणें एक शंकु की सतह बनाती हैं; इनमें से प्रत्येक किरण अक्ष के साथ ४२° का कोण (शंकु के शीर्ष-कोण का आधा) बनाती है।

सूर्य आकाश में जितना ही नीचे उतरता है, उतना ही प्रति सूर्य-बिन्दु, अतः पूरा इन्द्रधनुष ऊपर को उठता जाता है और तदनुसार वृत्त की परिधि का भी उत्तरोत्तर
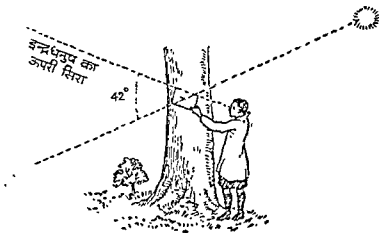
चित्र १०६—इन्द्रधनुष से प्रति-सूर्यबिन्दु तक की कोणीय दूरी नापना।

1. Antisolar point

अधिक भाग क्षितिज के ऊपर प्रगट होता है, यहाँ तक कि सूर्य के डूबने के क्षण यह अर्द्धवृत्त बन जाता है। इसके प्रतिकूल सूर्य की ऊँचाई जब ४२° से अधिक होती है तो यह क्षितिज के नीचे पूर्णतया विलुप्त हो जाता है; इसी कारण संसार के इस भाग में (हालैण्ड में) ग्रीष्म ऋतु में दोपहर के लगभग किसी ने भी कभी इन्द्रधनुष नहीं देखा।

शीर्ष के अर्द्धकोण को नापने के लिए पिन के सहारे एक कार्ड को पेड़ के तने से लगाइए और इसे घुमाकर ऐसी स्थिति में रखिए कि इसका एक हाशिया ठीक इन्द्रधनुष के सिरे की ओर इङ्गित करे। तब पिन की छाया सूर्य को निरीक्षक से मिलानेवाली रेखा की दिशा बतलाती है अतः प्रति-सूर्यबिन्दु से इन्द्रधनुष की कोणीय दूरी तुरन्त पढ़ी जा सकती है (चित्र १०६)।

§२३५ में बतलायी गयी विधियों में से भी किसी एक का उपयोग क्षितिज से इन्द्रधनुष के ऊपरी सिरे की कोणीय ऊँचाई h नापने के लिए किया जा सकता है (चित्र १०७)। तथा इसके चाप के दोनों छोर के दर्मियान के कोण 2α को भी नाप सकते
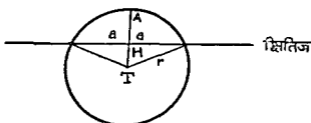
चित्र १०७—a, h, H, r सभी चाप है, जिनकी नाप अंशों में की जाती है।

हैं, साथ ही साथ प्रयोग के समय को भी अङ्कित कर लेते हैं। बाद में गणना द्वारा सूर्य की ऊंचाई भी मालूम कर लेते हैं जिससे प्रति-सूर्य बिन्दु T के लिए क्षितिज से नीचे के कोण H का भी मान मालूम हो जाता है। इन से वाञ्छित कोणीय त्रिज्या r के लिए तीन मान प्राप्त होते हैं जिनका औसत मान हम ले सकते हैं, जैसा निम्नलिखित में दिया गया है—

$$r = H + h$$

$$\cos r = \cos \alpha \cos H$$

$$\tan r = \frac{1 - \cos \alpha . \cos h}{\cos\alpha . \sin h}$$

सच पूछिए तो इन्द्रधनुष को वृत्त चाप की शक्ल में नहीं, बल्कि पूर्ण वृत्त की शक्ल का दीखना चाहिए। हम क्षितिज के नीचे इसे नहीं देख पाते हैं क्योंकि क्षितिज के नीचे उतराती हुई वर्षा की बूंदें हमें दिखलाई नहीं देतीं। फिजिका[1] में बतलाया गया था कि वायुयान से इन्द्रधनुष का पूर्ण-वृत्त देखा जा सकता है, जिसके केन्द्र पर वायुयान की छाया मौजूद होती है। दरअसल इस शानदार दृश्य का अवलोकन किया जा चुका है।

प्रमुख इन्द्रधनुष के गिर्द गौण इन्द्रधनुष का पाया जाना कुछ लोगों के ख्याल में एक अपवादस्वरूप घटना है। किन्तु वास्तविकता यह है कि गौण इन्द्रधनुष करीब-करीब सदैव ही दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि स्वभावतः प्रमुख इन्द्रधनुष की तुलना में यह अत्यन्त मन्द प्रकाश का दीखता है। यह प्रमुख इन्द्रधनुष का समकेन्द्रीय होता है, अतः इसका भी केन्द्र प्रति-सूर्य-विन्दु पर ही स्थित होता है, किन्तु इससे आनेवाली किरणें सूर्य और नेत्र की अक्षरेखा के साथ ५१° का कोण बनाती हैं।

'इन्द्रधनुष के सात रंगों' का अस्तित्व केवल काल्पनिक जगत् में ही है; यह भाषा का एक ढंग है जो बहुत दिनों से प्रचलित चला आ रहा है, क्योंकि हम बहुत कम ही चीजों को उनके वास्तविक रूप में देख पाते हैं! वास्तव में इन्द्रधनुष के रंग क्रमशः एक-दूसरे में सविलीन होते जाते हैं यद्यपि हमारी आँखें अनजाने ही उन्हें समूहों में पृथक् करने का प्रयत्न करती हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि विभिन्न इन्द्रधनुषों में भारी अन्तर पाया जाता है; बल्कि स्वयं वही इन्द्रधनुष जिसे आप देख रहे हैं, प्रेक्षण के दौरान में बदल सकता है—इसका ऊपरी भाग निचले भाग से भिन्न हो जाता है। पहली बात तो यह है कि जब कोणीय माप में रंग की समूची पट्टी की केवल चौड़ाई नापते हैं तो बहुत अधिक अन्तर प्राप्त होता है (देखिए परिशिष्ट § २३५)। इसके अतिरिक्त, रंगों का क्रम सदैव ही लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, और बैंगनी होता है, किन्तु विभिन्न रंगों की आपेक्षिक चौड़ाइयों तथा उनकी चमक में, हर सम्भव तरीके से अन्तर पाये जाते हैं। मेरा अनुभव है कि विभिन्न प्रेक्षक एक ही इन्द्रधनुष का विवरण सदैव एक ही तरह से नहीं प्रस्तुत करते। अतः इन्द्रधनुषों के अन्तर के बारे में विश्वसनीय जानकारी हासिल करने के लिए या तो एक ही प्रेक्षक के प्रेक्षणों की तुलना की जानी चाहिए या फिर पहले से इस बात का इतमीनान प्राप्त कर लेना चाहिए कि दो प्रेक्षकों की प्रेक्षण-अनुभूतियों में सामान्य रूप से परस्पर सामञ्जस्य पाया जाता हो।

1. Physica

इन्द्रधनुप के रंगों के पक्षपात-रहित विवरण हमारा ध्यान इस महत्त्वपूर्ण बात की ओर आकृष्ट करते हैं कि प्रायः इन्द्रधनुप के भीतरी हाशिये पर बैंगनी के आगे कई अतिरिक्त धनुप भी होते हैं। सामान्यतः वे सबसे अधिक स्पष्ट वहाँ दीखते हैं जहाँ इन्द्रधनुप की चमक सबसे अधिक होती है अर्थात् उसके उच्चतम बिन्दु के निकट। इनके रंग आम तौर पर एक के बाद दूसरे, गुलाबी और हरे रंग के होते हैं। सच तो यह है इन्हें गलत नाम दिया गया है क्योंकि यद्यपि इनका प्रकाश मन्द होता है फिर भी ये इन्द्रधनुप के ही भाग हैं जिस तरह उसकी 'सामान्य' रंगों की पट्टियाँ उसके भाग हैं। ये अतिरिक्त धनुप अक्सर अपनी चमक तथा चौड़ाई के लिहाज से शीघ्रता के साथ बदल जाते हैं जो इस बात का सूचक है कि पानी की बूँदों के आकार मे तब्दीली हुई है (§१२३)।

गौण इन्द्रधनुप में रंगों का क्रम प्रमुख इन्द्रधनुप के रंगक्रम का उलटा होता है; अतः एक धनुप की लाल पट्टी दूसरे की लाल पट्टी के सामने पड़ती है। गौण इन्द्रधनुप बहुत कम ही इतना चमकीला होता है कि इसके 'अतिरिक्त धनुप' दृष्टिगोचर हो सकें; ये बैंगनी पट्टी के आगे पड़ते हैं अतः गौण इन्द्रधनुप के बाहरी हाशिये से परे ये स्थित होते हैं।[1]

१२१. आँख के निकट का इन्द्रधनुप

जब हम फौआरे या झरने के ऊपर उतराती हुए पानी की बारीक फुआर पर सूर्य की किरणों को पड़ते हुए देखते हैं तो हमें स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि पानी की बूँदों के समूह से किस प्रकार इन्द्रधनुप का निर्माण होता है। स्टीमर के पार्श्व के सहारे *जहाँ लहरें स्टीमर के अग्रभाग से टकराकर फेन के रूप में ऊपर उठती हैं, कभी-कभी* इन्द्रधनुप दिखाई देते हैं जो काफ़ी देर तक स्टीमर के साथ ही लगे रहते हैं; नन्ही बूँदों के बादल के घने पड़ने पर कभी ये इन्द्रधनुप चटकीले दीखते हैं तो कभी इनके विरल होने पर इन्द्रधनुप का प्रकाश मन्द हो जाता है। इस घटना को देख सकने का उत्तम *अवसर आपको विशेपतया उस समय प्राप्त हो सकता है जब स्टीमर की पथ-दिशा सूर्य की ओर जा रही हो।*

ये कुछ सरल रीतियाँ हैं जिनकी मदद से बगीचे के अन्दर हम वर्पा की बौछार पैदा कर सकते हैं जो इन्द्रधनुप का निर्माण कर सकती हैं—(क) पानी फेंकने की किमिच

1. Observed by Brewster in 1828

की नली, (ख) टिन्डल का उपकरण[1] जिसमें दाब से उत्पन्न की गयी पानी की धार धातु की एक गोल प्लेट पर टकराकर नन्हीं बूंदों के रूप में बिखर जाती है; या (ग) अन्तोलिक का फुआर उत्पादक[2]; इसमें फुआर उत्पन्न करने के लिए केवल a पर मुँह लगाकर जोर से फूंक मारनी होती है (चित्र १०८)। अन्तोलिक के फुआर-उत्पादक में छोटी नली bcd को चौड़ी नली ef के अन्दर दो-चार मिलीमीटर ऊपर-नीचे खिसकाकर बूंदों के आकार पर नियंत्रण रखा जा सकता है, ऐसा करने के लिए कार्क की छिद्रमय चकरी को थोड़ा ऊपर-नीचे खिसकाना होगा। सिरे u के सूराख का आकार भी इस प्रयोग में महत्त्व रखता है। उपकरण को खोले बिना ही चौड़े मुह की नली a द्वारा भीतर पानी डाला जा सकता है। इस छोटे उपकरण द्वारा किये गये मेरे निज के प्रयोग अत्यन्त सन्तोषजनक रहे हैं।
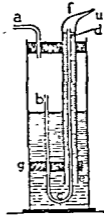
चित्र १०८—प्रयोगशाला में इन्द्रधनुष का निर्माण करने के लिए फुहार-उत्पादक।

काँच के घेरे के अन्दर उगनेवाले पौदों पर पानी छिडकने के लिए प्रयुक्त होनेवाले फुआर-उत्पादक से निकलनेवाली नन्हीं बूंदें आकार में इतनी बारीक होती हैं कि उनमें यथार्थ इन्द्रधनुष तो देखा नही जा सकता, केवल सफेद रंग का, धुन्ध का धनुष मिलता है जिसके हाशिये नीले और पीले रंग के होते हैं (देखिए § १२८)। केवल यत्र-तत्र आकस्मिक तौर पर बड़े आकार की बूंदों के एकाध समूह मिल जाते हैं तो एक क्षण के लिए सामान्य किस्म का इन्द्रधनुष दृष्टिगोचर हो जाता है।

इन्द्रधनुष के अवलोकन के लिए सदैव ही प्रति-सूर्य-बिन्दु की दिशा से ४२° के कोण पर देखिए और बेहतर होगा कि सामने की पृष्ठभूमि गहरे मटमैले रंग की हो।

प्रेक्षण के लिए इस किस्म के प्रयोग उत्तम सामग्री का काम देते हैं। हमारी क्षितिज-रेखा के नीचे भी जब पानी की बूंदों की पर्याप्त संख्या मौजूद होती है तो इन्द्रधनुष प्रायः पूर्णवृत्त के रूप में देखे जा सकते हैं। यदि हम चलें तो इन्द्रधनुष भी हमारे साथ-साथ चलता है; यह कोई यथार्थ चीज नहीं है जो किसी निश्चित स्थान पर दिखाई

1. Phil Mag. 17, 61, 1883. 2. Antolic's vaporiser

देती हो, वल्कि यह एक निश्चित दिशा में दृष्टिगोचर होता है; हम कह सकते हैं कि इसका आचरण इस तरह का है मानो यह अनन्त दूरी पर स्थित हो अतः यह हमारे साथ-साथ उसी भाँति चलता है जिस भाँति चन्द्रमा। यदि बूंदों के बादल के अत्यन्त निकट खड़े हों जैसे, उदाहरण के लिए, जब नली को पकड़कर उसमें से पानी की फुआर निकालते हैं, तो दो इन्द्रधनुष देखे जा सकते हैं जो एक-दूसरे को काटते हैं। ऐसा कैसे होता है? अपनी आँखें बारी-बारी से बन्द करिए; तो ऐसा प्रतीत होगा मानो प्रत्येक आँख अलग-से अपना निज का इन्द्रधनुष देखती है (यही निष्कर्ष इस बात से भी प्राप्त होता है कि इन्द्रधनुष हमारे साथ-साथ चलता है।) गौण इन्द्रधनुष तथा अतिरिक्त धनुष अक्सर शानदार रूप में देखे जा सकते हैं। पानी की धार की दिशा यदि बदल दे, या फुआर के अन्य स्थलों में इन्द्रधनुष का अवलोकन करें तो इन्द्रधनुष के रंगों के आपेक्षिक चटकीलेपन में अन्तर आ जाता है; इसका कारण यह है कि बूंदों का औसत आकार अब भिन्न हो गया है।

१२२. डेकार्ट का इन्द्रधनुष-सिद्धान्त[1]

पानी की बूंद के अन्दर प्रकाशपथ की जाँच करने के लिए हम एक फ्लास्क को पानी से भर कर धूप में रखते हैं (चित्र १०९, a)। अब पर्दे पर जिसमें एक गोल सूराख (फ्लास्क से तनिक बड़ा) कटा है, एक हलकी रोशनी का इन्द्रधनुष R प्रगट होगा। यह पूर्णवृत्त की शक्ल का होता है, इसकी कोणीय दूरी ४२° होती है तथा यथार्थ इन्द्रधनुष की भाँति ही इसका लाल रंग बाहरी हाशिये की ओर होता है।

काँच के गिलास की सहायता से भी यह प्रयोग इतनी ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है, अवश्य गिलास की शक्ल बहुत कुछ बेलनाकार होनी चाहिए। समय सुबह या शाम का होना चाहिए जबकि आकाश में सूर्य नीचे ही रहता है। पर्दे पर प्राप्त प्रतिबिम्ब वृत्ताकार नहीं होगा, वल्कि इसमें समानान्तर धारियाँ दिखाई देंगी।

फ्लास्क के सामने, धागे से लटकता हुआ एक नन्हाँ-सा पर्दा S पर रखिए, तो इन्द्रधनुष के निचले भाग में आप एक छाया देखेंगे (चित्र १०९,b)। यदि फ्लास्क पर v के आसपास अपनी गीली उँगली का धब्बा लगा दें तो इन्द्रधनुष के निचले भाग में तत्सम्बन्धी स्थल पर आपको मटमैले रंग का धब्बा मिलेगा। अतः स्पष्ट है कि इन्द्रधनुष का निर्माण उस वक्त होता है जब केन्द्रीय रेखा से SC की दूरी पर किरणें

1. Descartes Theory of the Rainbow

पानी की बूंद पर आपतित होकर उसकी पिछली सतह के विन्दु v से परावर्तित होती है। यदि एक छल्ला लें जिसकी मोटाई कुछेक मिलीमीटर हो तथा उसका व्यास फ्लास्क के व्यास का ०.८६ हो और इसे आपतित किरणों के पथ में इस तरह रखें कि आपतित किरण पुज की केन्द्रीय रेखा छल्ले के केन्द्र से गुजरे तो इस दशा में इन्द्रधनुष पूर्णतया विलुप्त हो जाता है (चित्र १०९, c)।
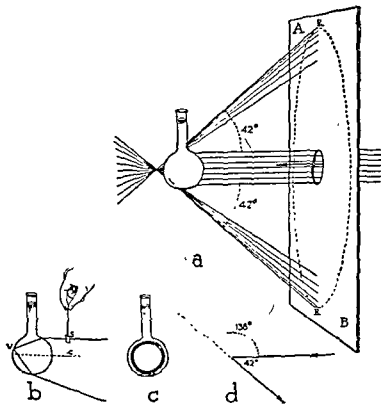
चित्र १०९—पानी से भरे फ्लास्क द्वारा इन्द्रधनुष का निर्माण करना।

चित्र ११० में परावर्तन[1] तथा वर्तन[2] के सामान्य नियमों के आधार पर प्राप्त किया गया किरणों का सही मार्ग दिखलाया गया है। इसमें यह देखा जा सकता है कि पानी की बूंद पर आपतित होनेवाली किरणें किस प्रकार अपने आपतन विन्दु की स्थिति के अनुसार विभिन्न दिशाओं में बूंद से बाहर निकलती हैं। उनमें से एक किरण अन्य

1. Reflection 2. Refraction

किरणों की अपेक्षा सबसे कम विचलित होती है, अर्थात् इसका विचलन कोण १३८° है—अतः अक्षरेखा के साथ यह १८०°−१३८°=४२° का कोण बनाती है। बाहर निकलने वाली किरणें विभिन्न दिशाओं में वितरित होती हैं—इनमें से केवल अल्पतम विचलन प्राप्त करनेवाली किरणें ही परस्पर समानान्तर दिशा में निकलती हैं, अतः आँखों में ये ही किरणें अधिकतम 'घनत्व' के साथ प्रवेश करती हैं।
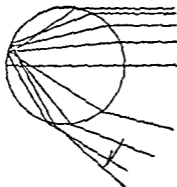
चित्र ११०—पानी की बूंद के भीतर प्रकाश किरण का मार्ग, जिससे इन्द्रधनुष बनता है मोटी रेखा तरंगाग्र इंगित करती है।
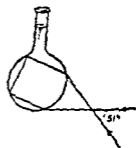
चित्र १११—गौण इन्द्रधनुष की उत्पत्ति।

पूर्णतया अँधेरे कमरे में पर्दे पर अक्षरेखा के साथ ५१° के कोण बनानेवाली दिशा में गौण इन्द्रधनुष भी देखा जा सकता है या जब किरण अपनी आपतन दिशा से १८०°+५१°=२३१° के कोण पर विचलित होती है (चित्र १११)। प्रमुख इन्द्रधनुष के लिए किये गये प्रयोगों की भाँति ही प्रयोग करके यह सिद्ध कर सकते हैं कि गौण इन्द्रधनुष दो बार परावर्तित होनेवाली किरणों द्वारा बनते हैं। इनके रंगों का क्रम प्रमुख इन्द्र-धनुष के रंगों के क्रम का उलटा होता है, ठीक जैसा [illegible] में इन्[illegible] पाया जाता है।

किरण के साथ ५१° के कोण बनानेवाली बूंदों से दो बार परावर्त्तित होनेवाली किरणें हम तक पहुँचती हैं। अस्तु, इस प्रकार प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषों का निर्माण होता है (चित्र ११२)।
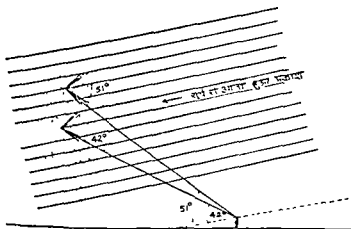
चित्र ११२—वर्षा की बूंदों के बादल पर गिरने वाली सूर्य किरणें प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषों का निर्माण करती हैं।

१२३. इन्द्रधनुष का विवर्त्तन सिद्धान्त

डेकार्ट के सिद्धान्त में केवल उन्हीं किरणों का विचार किया गया था, जो अल्पतम विचलन प्राप्त करती हैं—मानों अकेली ये ही किरणें मौजूद हों। किन्तु वास्तविकता यह है कि इससे अधिक विचलनवाली अनेक किरणें भी मौजूद होती हैं जो एक रश्मि-स्पर्शी वक्र द्वारा पूर्णतया अन्वालोपित[1] होती हैं। और ठीक ये ही वे शर्तें हैं जिनके अनुसार व्यतिकरण उत्पन्न होता है जैसा कि चश्मे के लेन्स पर पड़ी पानी की बूंद के निकट स्थित रश्मि-स्पर्शी वक्र के लिए दिखाया जा चुका है (§११८)।

और विशेषतया नन्हीं बूंदों का जब विचार करते हैं तो प्रकाश-किरणों की व्याख्या पूरी नहीं पड़ती, बल्कि इस तरह के किरणस्पर्शी वक्र के निकट जहाँ निशिताग्र[2] प्रगट होता वहाँ तरंगाग्र की व्याख्या करनी चाहिए (चित्र ११०)।

हाइजिन्स के सिद्धान्त के अनुसार तरंगाग्र के बिन्दु विकिरण के स्रोतबिन्दु माने जाते हैं, अत: अब समस्या यह है कि इसकी जाँच करें कि तरंगाग्र के प्रत्येक बिन्दु से आँख

1. Enveloped 2. Cusp

तक आने वाले कम्पन परस्पर एक-दूसरे के साथ व्यतिकरण किस प्रकार करते हैं। इस समस्या का अध्ययन एयरी ने किया और इसे स्टोक्स, मोबियस तथा पेन्तेर ने पूरा करके अनुप्रयुक्त किया—इस अध्ययन से सुविख्यात इन्द्रधनुष-अनुकल[1] प्राप्त होता है—

$$A = c\int_0^\infty \cos \frac{\pi}{2} (u^3 - zu)\, du$$

इसमें A उस प्रकाश-कम्पन का आयाम[2] है जो हमारी आँख में प्रवेश करता है, तथा यह अल्पतम विचलनवाली किरण की दिशा के साथ बननेवाले कोण Z का फलन[3] है। इस अनुकल का मान प्राप्त करने के लिए इसे श्रेणी के रूप में विकसित करना होता है तब Z की दिशा में दीखनेवाले प्रकाश की तीव्रता का मान A^2 के बराबर मिलता है।
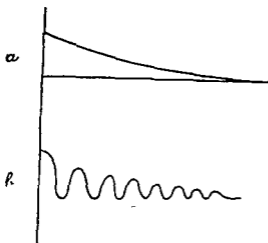
चित्र ११३—पानी की बूँद म से होकर आनेवाली किरण शलाका में प्रकाश दीप्ति का वितरण।
(a) डी कार्टो के सरल सिद्धान्त के अनुसार।
(b) विवर्तन सिद्धान्त के अनुसार।

चित्र ११३ में दिखाया गया है कि किसी एक रंग के लिए बड़े आकार की बूँदो के लिए प्राप्त प्रकाश-वितरण (a), बूँद के छोटे होने की दशा में विवर्तन द्वारा किस प्रकार बदल जाता है (b)। यह घटना प्रधानतः अल्पतम विचलन (Z=०) वाली किरणों द्वारा अभी भी निर्धारित होती है, किन्तु इसके अतिरिक्त अनेक लघु शीर्ष भी इसमें मौजूद होते हैं। अब विभिन्न रगो के प्रकाश के लिए इस तरह की वक्ररेखाएँ उनके तरंग-दैर्घ्य के हिसाब से अलग-अलग स्थितियों पर खीचिए। विचलन कोण के किसी दिये हुए मान Z के

1. Rainbow-integral 2. Amplitude 3. Function

लिए इस प्रकार हमे विभिन्न रंगो के मिश्रण का प्रकाश मिलता है, अत. इन्द्रधनुष के रग कभी भी यथार्थरूप से संपृक्त वर्ण के नही हो सकते। चूँकि प्रत्येक रग का प्रथम तथा उच्चतम शीर्ष ही इस घटना मे महत्त्वपूर्ण योग देता है और तरग-दैर्घ्य के बढने के साथ ये शीर्ष भी खिसकते जाते है, अत इन्द्रधनुष मे रगो का क्रम मोटे तौर पर हम उसी प्रकार का पाते हैं जैसा कि प्रारम्भिक-सिद्धान्त मे हमे प्राप्त होता है। विवर्त्तन के कारण रूपान्तर यह होता है कि बूँदो के आकार के अनुसार रगो मे थोड़ा अन्तर आ जाता है और इन्द्रधनुष के अन्दर की ओर अतिरिक्त धनुष प्रगट हो जाते हैं। अन्ततः यह ध्यान मे रखना चाहिए कि सूर्य केवल एक बिन्दु नही है, अत. सूर्य की किरणें एक-दूसरे के बिलकुल ठीक समानान्तर नही होती (§१)। इस कारण पूरे आधे डिग्री के कोण का फैलाव ये प्राप्त करती हैं, फलस्वरूप इन्द्रधनुष के विभिन्न रगो की सीमाएँ एक-दूसरे मे थोड़ी बहुत अभिलोपित हो जाती है। इन्द्रधनुष को देखकर विवर्त्तन के सिद्धान्त की मदद से हम तुरन्त ही उन बूँदो के आकार का पता लगा सकते हैं जिनके कारण वह इन्द्रधनुष बनता है।

मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं—

व्यास	
१—२ मिलीमीटर	अत्यन्त चमकीला बैंगनी रग तथा चटकीला हरा रग; इन्द्रधनुष का लाल रग शुद्ध होता है किन्तु नीला रग नगण्य मात्रा मे ही पाया जाता है। अतिरिक्त धनुष कई होते हैं (मिसाल के तौरपर ५), इनका रंग एक के बाद दूसरा गुलाबी-बैंगनी तथा हरा होता है जो अविरत-रूप से प्रमुख-इन्द्रधनुष में समाते हुए जान पड़ते हैं।
० ५० मिलीमीटर	इस दशा मे लाल रग अत्यन्त फीका रहता है। अतिरिक्त धनुषों की सख्या कम होती है, इस बार भी बैंगनी-गुलाबी तथा हरे रंग एक के बाद दूसरे आते हैं।
०.२०—०.३० मिलीमीटर	अब लाल रग तो नही दीखता, किन्तु शेष भाग में धनुष चौडा और सुस्पष्ट रहता है। अतिरिक्त धनुष क्रमशः अधिक पीले होते जाते हैं। यदि अतिरिक्त धनुषो के दर्मियान खाली जगह पड़ जाय तो इसका अर्थ है कि बूंदों का व्यास ० २० मिलीमीटर होगा। यदि प्रमुख इन्द्रधनुष तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच

	जगह खाली पड़ती है तो बूंदों का व्यास ०.२० मि॰ मी॰ से कम होगा।
०.०८—०.१० मिलीमीटर	इन्द्रधनुप अधिक चौड़ा तथा अधिक पीला होता है, केवल बैंगनी रंग चटकीला होता है। प्रथम अतिरिक्त धनुप तथा प्रमुख इन्द्रधनुप के बीच की खाली जगह विशेष चौड़ी होती है, तथा इस अतिरिक्त धनुप में धवल रंग की आभा स्पष्ट दिखाई पड़ती है।
.०६ मिलीमीटर	प्रमुख इन्द्रधनुप में एक सुस्पष्ट सफ़ेद पट्टी मौजूद रहती है।
०.०५ मिलीमीटर से कम	धुन्ध–धनुप (देखिए § १२८)।

१२४. इन्द्रधनुप के इर्द-गिर्द का आकाश[1]

एक सतर्क प्रेक्षक देख सकता है कि प्रमुख और गौण इन्द्रधनुपों के बीच का आकाश बाहर के आकाश के मुकाबले में मंद प्रकाश का दीखता है। अवश्य यह सही है कि पृष्ठभूमि में विभिन्न चमकीलेपन के बादल मौजूद होते हैं, फिर भी यह प्रभाव साधारणतया स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। (प्लेट IX a)।

व्याख्या इस प्रकार है कि अल्पतम विचलन की किरणों के भेजने के अतिरिक्त प्रत्येक बूंद अन्य दिशाओं में भी किरणों को परावर्त्तित करती है जो आपाती दिशा से अधिक मात्रा में विचलित होती हैं। चित्र ११४ में ये विन्दु रेखाओं द्वारा प्रदर्शित की गयीं हैं। ध्यान दीजिए कि गौण इन्द्रधनुप में इन किरणों का विचलन प्रमुख इन्द्रधनुप की किरणों के विचलन की दिशा की उल्टी ओर होता है। अतः प्रेक्षक को प्रमुख इन्द्रधनुप के भीतर के आकाश के इस भाग से सूर्य से हलका प्रकाश आता हुआ दिखाई देगा जो एक बार का परावर्त्तन प्राप्त करनेवाली उन किरणों से उत्पन्न होता है जिनका विचलन १३८° से अधिक होता है और इस कारण वे अक्ष के साथ ४२° से कम का कोण बनाती हैं; और तब गौण इन्द्रधनुप के बाहर वाले आकाश के भाग से भी हलका सूर्य-प्रकाश मिलता है जो दो बार परावर्तित हुई उन किरणो से उत्पन्न होता है जिनका विचलन २३१° से अधिक होता है, अतः ये अक्षरेखा के साथ ५१° से बड़ा कोण बनाती हैं। कभी-कभी प्रमुख और गौण इन्द्रधनुपों के दर्मियान के धुंधली रोशनी वाले भाग में प्रकाश की त्रिज्यीय लकीरें दिखलाई पड़ती हैं जिनमें किसी प्रकार का रंग नहीं होता।[2] ये उपा-

1. Nat. 109, 309, 1922. 2. S. Thompsn. Nat, 18, 441, 1878

गोधूलि किरणों (§१९१) तथा गतिशील पानी पर की किरणों (§२१७) के सदृश हों होती हैं। इस घटना का समाधान आसानी के साथ किया जा सकता है, यदि हम कल्पना करें कि सूर्य और वर्षा की बूंदों के दर्मियान कही पर एक छोटा बादल उतरा रहा है (चित्र ११४)। इस दशा मे बादल की छाया मे पड़ने वाली बूंदें प्रेक्षक की ओर कुछ भी
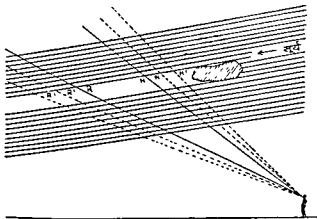
चित्र ११४--सूर्य और वर्षा की बौछार के दर्मियान के बादल के टुकड़े आकाश में त्रिज्यीय धारियों का निर्माण करते हैं।

प्रकाश नहीं भेज पातीं। प्रेक्षक को दिखाई देने वाले इन्द्रधनुष का निर्माण उसकी दृष्टि-रेखा मे पड़ने वाली तमाम बूंदों से आये हुए प्रकाश से होता है अतः इस दशा में इन्द्र-धनुष R बूंदों के प्रकाश से वञ्चित रह जाता है; इसी प्रकार गौण इन्द्रधनुष N बूंदों के प्रकाश से वञ्चित रहता है जबकि विस्तृत प्रकाश वाले भाग मे R', R'', ... तथा N', N''... सरीखी बूंदों से आने वाला प्रकाश अनुपस्थित रहता है। अतः इस कारण उसकी आँख, सूर्य तथा उस बादल से गुजरने वाले धरातल में घटना की सभी बातें हल्की पड़ जाती हैं; किरणपथ सरीखी छाया बनती है जो आगे बढ़ाने पर ठीक सूर्य के सामने वाले बिन्दु अर्थात् इन्द्रधनुष के केन्द्र से गुजरती है।

१२५. इन्द्रधनुष में प्रकाश का ध्रुवण[1]

कांच के एक टुकड़े से प्रतिबिम्बित होने वाले इन्द्रधनुष को देखने का प्रयास अत्यन्त मनोरंजक होता है—इसके लिए पारे की कलई वाला दर्पण नही लेना चाहिए जो इस

1. F. Rinne Naturwiss, 14, 1283, 1936

उद्देश्य के लिए अनुपयुक्त होगा, बल्कि साधारण काँच का टुकड़ा लेना चाहिए जिसकी पीठ पर कालिख लगी हो या उसके साथ काले रंग का कागज़ लगा हो। इसे आँख के निकट इस तरह रखना चाहिए ताकि इसमें तिरछी दिशा से देख सकें, अभिलम्ब से करीब ६०° के कोण पर। काँच को या तो क्षैतिज तल में रख सकते हैं या ऊर्ध्व तल में, जैसा चित्र ११५ में दिखाया गया है। इन्द्रधनुप के ऊपरी सिरे का अवलोकन करें, तो

चित्र ११५—इन्द्रधनुष में प्रकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण किस तरह करना चाहिए।

हम देखेंगे कि काँच को क्षैतिज स्थिति में रखने पर धनुप का प्रतिबिम्ब अत्यन्त स्पष्ट और चमकीला बनता है जबकि काँच को ऊर्ध्व तल में खड़ा करने पर प्रतिबिम्ब इतना हलका बनता है कि वह करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहता है। इससे पता चलता है कि इन्द्रधनुप के प्रकाश के गुण गमन दिशा के समकोण की विभिन्न दिशाओं में विभिन्न होते हैं, अर्थात् यह ध्रुवित[1] प्रकाश होता है।

इस प्रेक्षण के लिए एक इससे भी सरल तरीका लभ्य है; इस तरीके में एक 'निकल'[2] प्रिज्म में से इन्द्रधनुप का प्रेक्षण करते हैं—यह प्रिज्म एक छोटा-सा उपकरण होता है जिसकी सहायता से हम तुरन्त मालूम कर सकते हैं कि अमुक प्रकाश ध्रुवित है अथवा अध्रुवित। 'निकल' प्रिज्म को उसके अक्ष के गिर्द घुमाते हैं तो उसकी एक स्थिति में इन्द्रधनुप अत्यन्त चमकीला दीखता है और एक अन्य स्थिति में अत्यन्त मन्द प्रकाश का। हम कल्पना कर सकते हैं कि सम्मिश्र प्रकाश, दो प्रकाश-कम्पनों से [illegible] है;

1. Polarised 2. Nicol

इनमें से एक का कम्पन किसी निश्चित दिशा i में होता है तो दूसरे का दिशा j में कम्पन होता है जो दिशा i के समकोण पड़ती है। हमें i तथा j दिशाओं की प्रकाश तीव्रताओं के अनुपात का मान २१ : १ मिलता है, अर्थात् ध्रुवण की मात्रा बहुत हद तक पूर्ण है। गौण इन्द्रधनुष में ध्रुवण इतना अधिक प्रबल नहीं होता यद्यपि इस दशा में भी ध्रुवण सुस्पष्ट रहता है; अनुपात ८ : १ मिलती है। ये दोनों ही निष्कर्ष सैद्धान्तिक विवेचन के अनुरूप हैं।

१२६. इन्द्रधनुष पर तडित्[1] का प्रभाव

जे० डब्ल्यू० लेन ने एक चित्ताकर्षक प्रेक्षण प्राप्त किया था। बादल के गरजने पर हर बार उसने देखा कि इन्द्रधनुष में रंगों की सीमाएँ अभिलोपित हो जाती थीं। यह परिवर्त्तन अतिरिक्त धनुषों में विशेष रूप से स्पष्ट था—बैंगनी हाशिये और प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच का फासला पूर्णतया विलुप्त हो गया और पीले प्रकाश की दीप्ति बढ गयी। ऐसा प्रतीत होता था मानो समूचा इन्द्रधनुष स्पन्दन कर रहा हो। §१२३ में दी गयी सारणी के अनुसार ये परिवर्त्तन इस बात का संकेत देते हैं कि बूँदों के आकार में वृद्धि हुई होगी।

यह प्रकाशीय प्रभाव ठीक तडित् कौंध के क्षण नहीं उत्पन्न हुआ, बल्कि कई सेकण्ड उपरान्त, गरज की आवाज के साथ उत्पन्न हुआ। हम कल्पना कर सकते हैं कि वायु के कम्पन के कारण बूंदे एक दूसरे से मिल जाना चाहती हैं, किन्तु यह प्रवृत्ति इतनी नगण्य-सी होती है कि इस कारण उत्पन्न होनेवाले प्रभाव का दरअसल बोधगम्य हो सकना असम्भाव्य प्रतीत होता है। यह भी सम्भव है कि विद्युत् विसर्जन बूंदों के तलीय खिंचाव में ऐसी तब्दीली पैदा कर देता है कि वे एक दूसरे के साथ आसानी से मिल जाते हैं, किन्तु उस दशा में यह एक संयोग मात्र होगा कि इस तब्दीली में जितना समय लगता है वह तडित् कौंध और गर्जन की ध्वनि के बीच के समय अन्तर के ही बराबर हो जाय।

१२७. लाल इन्द्रधनुष

सूर्यास्त के ठीक पहले के पाँच या दस मिनट के दौरान में लाल के अतिरिक्त इन्द्रधनुष के अन्य सभी रंग हलके पड जाते हैं और अन्त में बस सम्पूर्ण लाल रंग का धनुष रह जाता है। कभी-कभी तो यह आश्चर्यजनक रूप से चमकीला होता है और सूर्यास्त के बाद भी लगभग १० मिनटतक दिखाई देता रहता है, उस वक्त तक स्वभावतः

1. Lightning

इसका निचला भाग छिप जाता है, अतः ऐसा प्रतीत होता है कि क्षितिज से कुछ ऊँचाई पर इस इन्द्रधनुष का प्रारम्भ होता है। प्रकृति यहाँ हमें सूर्य के प्रकाश के स्पेक्ट्रम का दिग्दर्शन करा रही है और इस बात का प्रदर्शन कर रही है कि सूर्यास्त के दौरान इसकी संरचना में किस प्रकार का परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन लघु प्रकाश-तरंगों के परिक्षेपण[1] के कारण उत्पन्न होता है (§१७१)।

१२८. कुहरा धनुष या श्वेत इन्द्रधनुष[2]

बूँदें जब अत्यन्त छोटी होती हैं तो इन्द्रधनुष का स्वरूप बिलकुल ही भिन्न होता है। इसका हम भलीभाँति अवलोकन कर सकते हैं यदि सूर्य की ओर पीठ करके हम पहाड़ी पर खड़े हों जबकि सामने और हमारे नीचे कुहरा छाया हो। तब धनुष का स्वरूप एक सफ़ेद पट्टी-जैसा होता है; इसकी चौड़ाई साधारण इन्द्रधनुष की चौड़ाई की दुनी होती है तथा इसके बाहरी हाशिये का रंग नारङ्गी और भीतरी का आसमानी सरीखा होता है। भीतर की ओर एक या कभी दो भी अतिरिक्त धनुष देखे जा सकते हैं जिनके बीच कुछ जगह छूटी रहती है—अद्भुत बात यह है कि उनके अन्दर रंगो का क्रम सामान्य प्रमुख इन्द्रधनुष के लिहाज से उलटा होता है (पहले हरा और तब लाल)।

ये विशिष्टताएँ आश्चर्यजनक रूप से ०.०२५ मिलीमीटर या उससे कम की त्रिज्या वाली बूँदो के लिए प्राप्त सैद्धान्तिक गणनाफलों के अनुरूप उतरती हैं (§ १२३)। अत्यन्त छोटे आकार की उन बूँदो के लिए अब इन्द्रधनुष की त्रिज्या ४२° नही रह पाती, बल्कि यह कम होने लगती है और चूँकि बूँद के आकार के छोटे होने का अभिप्राय यह है कि यह प्रकाश के तरंग-दैर्घ्य के मान के सन्निकट पहुँचती है, अत. यह प्रभाव नीली किरणों की अपेक्षा लाल किरणों के लिए अधिक सुस्पष्ट होता है। अतः अतिरिक्त धनुष में लाल रंग के लिए व्यास नीले की अपेक्षा अधिक छोटा होगा, इसलिए यह भीतर की ओर स्थित होगा।

जो लोग इतने भाग्यशाली हैं कि इस सुन्दर घटना के अवलोकन का उन्हें अवसर मिल सकता है, उन्हे धनुष के व्यास २θ (कोणीय माप अंशों में) के मान प्राप्त करने के लिए कुछ मानक्रियाएँ करनी चाहिए (देखिए § २३५)। इनमें प्रमुख इन्द्रधनुष तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच के मन्द प्रकाश वाले छल्ले की नाप सर्वाधिक शुद्धता के साथ प्राप्त की जा सकती है; इस प्रकार से प्राप्त किये गये

1. Scattering 2. Phil. Mag., 29, 456, 1890

मान से बूँदों का व्यास (मिलीमीटरों में) निम्नलिखित सूत्र

$$a = \frac{0{\cdot}31}{(41^\circ 44' - \theta)^{\frac{3}{2}}}$$

की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है—

(अथवा विकल्पतः हम प्रमुख इन्द्रधनुष के नीचे और नारङ्गी रंग के हाशिये के बीच का औसत मान ले सकते हैं, किन्तु तब उपर्युक्त सूत्र के अंश के लिए 0·31 को बदलकर 0·18 लेना पड़ेगा।)

आश्चर्य्य की बात है कि कुहरा-धनुष ऐसे समय भी देखा गया है जब कि ताप बहुत ही कम था (0° फा०), जिससे सिद्ध होता है कि वायुमण्डल में पानी की बूँद बहुत ही अधिक मात्रा में अतिशीतलन प्राप्त कर सकती है।[1] कुहरा-धनुष ऐसे समय पर भी देखा जा सकता है जब कि कुहरा इतना हलका था कि धनुष देखने वाले प्रेक्षक ने यह बतलाया कि कुहरा था ही नहीं।

कुहरा-धनुष उस वक्त करीब-करीब सदैव ही प्रगट होता है जबकि हमारे पीछे से आने वाली सर्चलाइट का चकाचौंध उत्पन्न करने वाला प्रकाश-पुन्ज सामने के धुन्ध को भेदता है। सड़क के साधारण लैम्प भी अक्सर इस धनुष का निर्माण करते हैं, अवश्य ये धनुष हल्की दीप्ति के होते हैं और केवल अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ही देखे जा सकते हैं। एक बार टिन्डल ने प्रकाशस्रोत के लिए मोमबत्ती का उपयोग करके इस तरह के धनुष का अवलोकन किया था। यदि धुन्ध के पीछे अँधेरी भूमि हो तो कुछ अवसरों पर कुहरा-धनुष सम्पूर्ण वृत्त के रूप में देखा जा सकता है—स्पष्ट है कि हमारी आँख और पैरों के निकट की भूमि के दर्मियान की दो-चार गजों की दूरी इस घटना को उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त होती है।[2] कुछ अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर दुहरे कुहरा-धनुष भी देखे गये हैं।[3] § १६५ तथा § १२१ की भी तुलना कीजिए।

१२९. ओस-धनुष या क्षैतिज इन्द्रधनुष

शरद काल की सुबह को, हीदर झाड़ी पर लगे लाखों जालों पर, जो अन्यथा दिखाई नहीं पड़ते, ओस की नन्ही-नन्ही बूँदे बिखर जाती हैं तो सूर्य्य की किरणों से वे प्रकाशित हो उठते हैं। प्रकाश की इस लुका-छिपी में हम अपने सामने एक इन्द्र-

1. Ch. F. Brooks, M. W. R. 53, 49, 1925. G.C. Simpson (38, 291, 1912). mentions the appearance of a fog-bow at a temperature of −29°C. 2. Phil. Mag., 17, 148, 1883. 3. Onweders, etc. 52, 54, 1931

धनुष उभरा हुआ देख सकते हैं जो वृत्त की शक्ल का नहीं बल्कि एक खुले मुँह के अतिपरिवलय[1] की शक्ल का होता है (चित्र ११६)।

चित्र ११६—ओस-धनुष।

इसकी व्याख्या सरल ही है—सूर्य और आँख को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के साथ ४२° का कोण बनाने वाली सभी दिशाओं से प्रकाश हमारी आँख में पहुँचता है। सूर्य जब तक नीचे रहता है, तब तक इस तरह बनने वाला शंकु भूमि की सतह को अतिपरिवलय के वक्र पर काटता है। दिन के चढ़ने पर यह वक्र दीर्घवृत्त बन जाता है, यद्यपि इस शक्ल का धनुष दुर्लभ अवसरों पर ही देखा जा सका है। आप प्रयोग में सहायता लेने के लिए किसी से कह सकते हैं कि वह वक्रमार्ग को भूमि पर चिह्नित करके उसकी माप करे, और तब सूर्य की ऊँचाई (प्रेक्षण के समय की मदद से मालूम करके) की सहायता से इस बात का सत्यापन कर ले कि यह वक्र वास्तव में एक अतिपरिवलय है, जो ऐसे शंकु से प्राप्त किया गया है जिसका शीर्षकोण ४२° है।[2] इस बात पर ध्यान दीजिए कि किस तरह आँख से दूरी बढ़ने पर रंगीन पट्टी की चौड़ाई बढ़ती जाती है। केवल एक ही ऐसे दृष्टान्त का पता है जब कि ओस में कुहरा-धनुष के साथ अतिरिक्त धनुष भी देखे गये थे।[3]

ओस-धनुष निम्नलिखित परिस्थितियों में भी देखा गया है—(क) तालाब पर जो कारण्ड घास[4] से ढका हो; घास के लॉन पर, (ख) ऐसे तालाब पर जिसकी सतह पर चिकनाई फैली हो ताकि उस पर ओस की बूँदें नीचे के पानी से मिले बिना पड़ी रह सकें; मिसाल के लिए फैक्टरी के कोयले के जर्रों से भरे धुएँ के कारण सतह

1. Hyperbola 2. A. E. Heath, Nat. 97, 6, 1916
3. W. J. Humphreys. Journ. Frankl. Inst, 20, 661, 1929
4. Duck-weed

इस प्रकार की बन सकती है। एक दशा मे बूँदों का आकार ०·१ मिलीमीटर से लेकर ०.५ मिलीमीटर तक था और प्रति वर्ग सेण्टीमीटर २० बूंदे मौजूद थी जबकि एक सुस्पष्ट ओस धनुष देखा गया।[1] (ग) झील या समुद्र पर लडके सुबह के वक्त जब कि वायु तो ठण्डी हो चुकी होती है, किन्तु पानी अब भी गर्म बना रहता है, अत पानी की सतह के ऊपर हलका धुन्ध छाया रहता है। ऐसी दशा मे सम्पूर्ण धनुष सदैव ही दृष्टिगोचर नही होता, केवल इसके दोनो छोर दिखाई देते हैं। (घ) बर्फ जमी हुई सतह पर जो प्रकाश्यतः ओस की उपयुक्त आकार की बूंदो द्वारा ढकी जा सकती है। ऐसा कैसे सम्भव होता है?[2]

इस प्रेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक पहलू भी है। इन्द्रधनुष हमें वृत्ताकार और ओस-धनुष अतिपरिवलयाकार क्यों दीखते हैं जब कि दोनों ही दशाओं मे प्रकाश किरणें एक ही दिशा मे हमारी आँख में पहुँचती हैं? यह एक प्रश्न है प्रेक्षण और आकांक्षा के सम्मिश्रण का। जब हम ओस-धनुष देखते हैं तो हम इस विचार से प्रभावित होते हैं कि यह प्रकाशीय घटना क्षैतिज तल में फैली हुई है, और अनजाने ही हम अपने से पूछ बैठते हैं कि घास पर पड़ने वाले प्रकाश के वक्र की शक्ल क्या होनी चाहिए ताकि घटना हमें इसी स्वरूप में दिखाई दे? अवश्य ही उत्तर होगा एक दीर्घ वृत्त या अतिपरिवलय। किन्तु इसके प्रतिकूल यदि हम पूछें 'ओस-धनुष हम क्योंकर देख पाते हैं?' तब हमारा उत्तर प्रेक्षण और उसकी व्याख्या दोनों पर आश्रित होगा। यदि हम केवल इस प्रकाशीय घटना को ही देखते और इसकी उत्पत्ति के बारे में हमें कुछ भी पता न होता तो हमें केवल एक वृत्ताकार धनुष का ही भान होता' (स्टोक्स)। निरीक्षणों के आधार पर पृथक बूंदों तथा उनके समूह की दूरी का अनुमान लगाने से हमें निश्चय ही इस बात का पता लगाने में सहायता मिलती कि ओस-धनुष क्षैतिज तल में स्थित है (हीमन, [illegible])।

प्रतिबिम्बित ओस धनुष के लिए, हीमन, [illegible]।

१३०. प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष

यदि हमें एक इन्द्रधनुष आकाश में [illegible] दिखाई दे रहा है, और तब हम मान लें, [illegible] तो हम इन्द्र-

धनुष को बिन्दु B की दिशा में देखेंगे; अतः प्रतिबिम्बित बादल पर, बनिस्बत उस दशा के जब कि बादल को हम सीधे ही देखते हैं, इन्द्रधनुष कुछ नीचे स्थित प्रतीत होता है (देखिए चित्र ११७)।
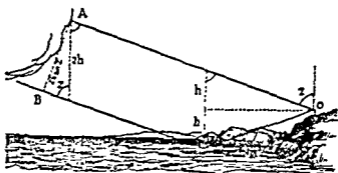
चित्र ११७ क—प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष।
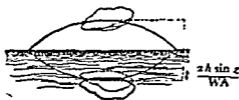
ख—

इसका कारण, जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, यह है कि इन्द्रधनुष का अस्तित्व बादल के धरातल में किसी यथार्थ वस्तु की तरह नहीं है, बल्कि एक तरह से यह अनन्त दूरी पर स्थित है। अतः सच पूछा जाय तो स्थानान्तर बादल का होता है, जबकि इन्द्रधनुष का प्रतिबिम्बन क्षितिज के लिहाज से पूर्णतया सममित[1] है। बादल के स्थानान्तर का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते हैं यदि हम पानी से कुछ ऊँचाई h पर मौजद हों। इस दशा में तब हम उसके स्थानान्तर का कोणीय मान मालूम करके उसकी दूरी OA के मान की भी गणना कर सकते हैं, क्योंकि—

$$\text{कोणीय स्थानान्तर} = \frac{2\ h\ \sin z}{OA}$$

फिर, एक नितान्त भिन्न प्रभाव उस वक्त उत्पन्न होता है जब सूर्य्य की किरणें इन्द्रधनुष का निर्माण करने के पहले ही परावर्तित हो लेती हैं। तब प्रति-सूर्य्य-बिन्दु

1. Symmetrical

T के प्रतिबिम्ब T' केन्द्र के गिर्द स्थानान्तरित चाप WS प्रगट होगा (चित्र ११८)। यह चाप विस्तार में अर्द्ध वृत्त से अधिक होता है। दोनों चापों के सिरों के बीच की दूरी बिन्दु T और T' के बीच की दूरी के बराबर होती है, अर्थात् क्षितिज के ऊपर सूर्य की कोणीय ऊँचाई α की दो गुनी। अनेक दशाओं में स्थानान्तरित चाप का एक भाग ही दृष्टिगोचर होता है—उदाहरण के लिए, केवल उसका सिरा, या केवल उसके दोनों छोर। अतः जब आप कोई असाधारण इन्द्रधनुष देखें तो सबसे पहले आपको इस तरह के प्रतिबिम्बन की सम्भावना की बात सोचनी चाहिए। तदुपरान्त उन अवस्थाओं पर विचार कीजिए जब पास-पड़ोस में बड़े जलाशय मौजूद हों और तब चाप की अपूर्णता की व्याख्या इन जलाशयों की स्थिति के आधार पर कीजिए। प्रतिबिम्बन से उत्पन्न हुए दोनों धनुष एक दूसरे के पूरक होते हैं ताकि दोनों मिलकर सम्पूर्ण वृत्त बना सकें (चित्र ११८)।
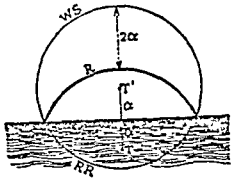
चित्र ११८—R=इन्द्रधनुष। RR=प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष। WS=सूर्य के प्रतिबिम्बन से बना हुआ इन्द्रधनुष।

१३१. प्रतिबिम्बित ओस-धनुष[1]

ओस-धनुष भी पानी में प्रतिबिम्बित हो सकते हैं और तब सतह पर तैरती हुई नन्ही बूंदों द्वारा निर्मित मनोहर रंगों का अतिपरिवलय दुहरे रूप में दिखाई पड़ता है। इन दोनों धनुषों में कम प्रकाश का धनुष प्रतिबिम्बन द्वारा बनता है, यह बात अत्यन्त स्पष्ट हो जाती है यदि हम ओसधनुष का अवलोकन बर्फ जमी हुई सतह पर करें; तब द्वितीय धनुष विलुप्त हो जाता है।

इस दशा में भी दोनों धनुषों के बीच की कोणीय दूरी सूर्य की कोणीय ऊँचाई की दो गुनी होती है। किन्तु चूँकि इस बार बूंदें स्वयं पानी की सतह पर ही स्थित हैं, अतः सीधे ही यह ज्ञात करना सम्भव नहीं हो पाता है कि किरणों का परावर्तन उनके बूंदों में से गुजरने के बाद हुआ है कि पहले। दोनों ही दशाओं में हमें अतिपरिवलय

1. W. J. Humphreys. Journ. Frankl. Instit. 207, 661, 1929

मिलेंगे (देखिए चित्र ११९, दोनों ही चित्रों में परावर्तित किरण कोण ४२°–x पर ऊपर की ओर उठती है)।
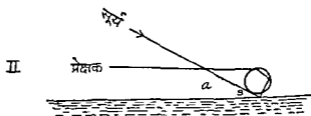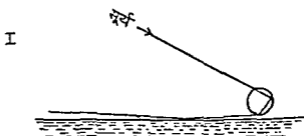
चित्र ११९—प्रतिबिम्बित ओस-धनुषों का निर्माण।

I ओस धनुष प्रतिबिम्बित होता है।

II प्रतिबिम्बित सूर्य ओस-धनुष का निर्माण करता है।

तथापि सूर्य्य जब पर्याप्त ऊँचाई पर स्थित होता है (२१° से ४२° तक) तब विवेचन के लिए दो तत्त्व प्राप्त होते हैं—

(क) प्रतिबिम्बित धनुष का सिरे के निकट का भाग अनुपस्थित रहता है। कारण यह है कि किरणें जब मार्ग II का अनुसरण करती हैं, तो आपाती किरण पुंज का कुछ भाग परावर्तित होने के पहले ही स्वयं बूंदों के कारण छिप जाता है, तब इसके बाद किरण बूंद में प्रवेश करती है। यदि किरणपथ I के अनुसार हो तब यह लाक्षणिक विशिष्टता नहीं उत्पन्न हो पाती।

(ख) यदि दोनों धनुषों के दो निकटवर्ती विन्दुओं का 'निकल' प्रिज्म द्वारा अवलोकन किया जाय तो यह पाया जाता है कि दोनों के प्रकाशकम्पन की दिशाओं में बहुत अधिक अन्तर होता है और आम तौर पर वे क्षैतिज नहीं होते हैं। यह प्रदर्शित कर सकते हैं कि ऐसा केवल तभी हो सकता है जब वर्त्तन के पूर्व ही परावर्त्तन हो जाय।

अब यह प्रश्न शेष रहता है—किरणों के लिए सामान्यतः पहले ही परावर्तित हो जाने की सम्भावना अधिक क्यों होती है? उत्तर केवल यह है कि किरणपथ I की दशा में बाहर निकलने वाली किरणें पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा में गिरती हैं और इस कारण निकटवर्ती बूंदों की आड़ में वे छिप जाती हैं।

आकाश में सूर्य्य जब नीचे होता है, तब प्रकाश की किरणें पहले बूंद में प्रवेश कर जाती हैं और तब वे परावर्तित होती हैं, इस बार भी धनुष का ऊपरी भाग छिप जाता है, किन्तु ध्रुवण की मात्रा भिन्न होती है। इस दशा का अभी तक सूक्ष्म अध्ययन नहीं किया गया है।

१३२. असामान्य इन्द्रधनुष की घटना[1]

यहाँ हम इन्द्रधनुष की विलक्षण शक्लों की कुछ आकृतियाँ दे रहे हैं जो अंशतः पानी पर होने वाले परावर्त्तन के कारण उत्पन्न होती हैं। किन्तु मेरे विचार से तो इनकी
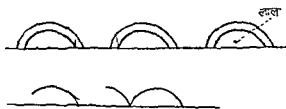
चित्र १२०—असामान्य इन्द्र-धनुष की घटनाएँ

1. Onweders, etc. 21, 54, 1900, 24, 160, 1903, 29, 110, 1908, Hemel en Dampkring. 27, 359, 1929

कोई सन्तोषजनक व्याख्या अभी तक नहीं मिल सकी है। इस तरह की घटनाओं के लिए अपनी आँखें खुली रखने के लिए यह एक और कारण है! असामान्य धनुषों के लिए लाल और बैंगनी हाशियों की पारस्परिक स्थितियों पर विशेष ध्यान दीजिए।

१३३. चन्द्र-इन्द्रधनुप

सूर्य की ही तरह चन्द्रमा द्वारा भी इन्द्रधनुष बनते हैं, यद्यपि जैसा कि स्वाभाविक है, चन्द्र-इन्द्रधनुष अत्यन्त क्षीण प्रकाश के होते हैं। यही कारण है कि वस्तुतः ये केवल पूर्ण चन्द्र के समय देखे जा सकते हैं और इनमें बिरले ही रंगीन होते हैं—ठीक उसी प्रकार, जैसे क्षीण प्रकाश से आलोकित वस्तुएँ रात को आम तौर पर रंगहीन प्रतीत होती हैं (§ ७७)।

इस सम्बन्ध में प्रभामण्डल को देखकर भ्रम में मत पड़ जाइए कि यही चन्द्र-धनुष है। इन्द्रधनुष तो चन्द्रमा के सामने के रुख, आकाश में केवल दूसरी ओर दिखलाई देता है। यदि निकट ही कोई चमकीला तारा स्थित हो, तो चन्द्र-इन्द्रधनुष की त्रिज्या का मान अत्यन्त यथार्थता के साथ नापा जा सकता है।

प्रभामण्डल[1]

१३४. प्रभामण्डल की घटना का सामान्य वर्णन[2]

वसन्त ऋतु के सुहावने खुले मौसम के चन्द दिनों के बाद बैरोमीटर का दाब कम हो जाता है और दक्षिण की वायु बहना आरम्भ करती है। पश्चिम की ओर से ऊँचाई पर पंख जैसे और मुलायम बादल प्रकट होते हैं, आकाश धीरे-धीरे दूधिया रंग धारण कर लेता है जो अलका-स्तार[3] बादलों के झीने पर्दे के कारण पोलकी[4] रत्न की तरह चमकता है। सूरज, ऐसा प्रतीत होता है, मानों धुंधले काँच के पीछे से चमक रहा हो; इसकी सीमा-रेखाएँ स्पष्ट नजर नहीं आती, बल्कि अपने परिपार्श्व में मिल-सी जाती हैं। कुछ अजीब-सी अनिश्चित रोशनी भू-दृश्य पर पड़ती है—और मैं 'महसूस' करता हूँ कि अवश्य सूर्य के गिर्द कोई प्रभामण्डल मौजूद है।

और आम तौर पर मेरा यह ख्याल सही उतरता है।

सूर्य को चारों ओर से घेरे हुए एक चमकीला छल्ला देखा जा सकता है जिसकी त्रिज्या २२° से कुछ अधिक ही होती है; इसे देखने का सबसे बढ़िया तरीका है कि मकान

1. Haloes 2. Die Haloerscheinungen (Hamburg. 1929)
3. Cirro-stratus 4. Opalescent

की छाया मे खड़े हो जायँ, या धूप मे चकाचौंध से बचने के लिए सूर्य्य को हाथ की ओट में ले लें (§ १६०)। यह एक अनुपम दृश्य होता है! पहले-पहल देखने वाले को छल्ला बहुत ही बड़ा प्रतीत होता है—यद्यपि यह 'लघु प्रभामण्डल' है; प्रभामण्डल सम्बन्धी अन्य घटनाएँ तो और भी बड़े पैमाने पर घटती हैं। अपनी भुजा को सूर्य्य की सीध मे तान कर हाथ की उँगलियों को एक दूसरे से अलग फैलाइए; आप देखेंगे कि अँगूठे और कनिष्ठ उँगली के सिरों के बीच की दूरी सूर्य्य के गिर्द मौजूद प्रभामण्डल की त्रिज्या के लगभग बराबर है (देखिए § २३५)।

चन्द्रमा के गिर्द भी आप इसी तरह का छल्ला देख सकते है। मेरा तात्पर्य कोरोना से नहीं है जिसका व्यास दो-चार डिग्री ही होता है और जो भीतर की ओर लाल और बाहरी हाशिये पर नीले रग का होता है; बल्कि उसी प्रकार के बड़े छल्ले से है जैसा कि सूर्य्य के प्रभामण्डल के लिए अभी बतलाया जा चुका है। केवल एक बार एक प्रेक्षक को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था कि डूबते हुए सूर्य्य के गिर्द एक छल्ला, और उगते हुए पूर्णचन्द्र के गिर्द भी एक छल्ला एक ही साथ वह देख सका था।

आम तौर पर जैसी उम्मीद की जाती है उसकी अपेक्षा कही अधिक बार ये छल्ले देखे जा सकते हैं। निश्चित तौर पर एक अभ्यस्त प्रेक्षक, यदि सारे दिन प्रेक्षण करता रहे तो दुनिया के इस भाग मे औसत रूप से हर चार दिन मे एक बार प्रभामण्डल देखने में समर्थ होगा और अप्रैल तथा मई के महीने मे तो हर दो दिन में वह इसे एक बार देख सकता है; सर्वाधिक सतर्क प्रेक्षक तो वर्ष भर में २०० दिन प्रभामण्डल देख सकते हैं! अत. क्या यह अविश्वसनीय नही जान पड़ता कि अब भी कितने लोग ऐसे मिलते हैं जिन्होंने सूर्य्य के गिर्द प्रभामण्डल पर कभी गौर ही नहीं किया है?

लघु आकार के प्रभामण्डल के अतिरिक्त और दूसरे भी प्रकाश-धनुष तथा धब्बों के रूप में केन्द्रित प्रकाश मिलते हैं जिनमें से प्रत्येक को अलग-अलग नाम दिये गये हैं—इन सबको मिलाकर 'प्रभामण्डल की घटना' के नाम से पुकारा जाता है। इनमे से जो सर्वाधिक प्रमुख हैं वे चित्र १२१ मे दिखलाये गये है, मानो ये एक काल्पनिक आकाशीय ग्लोब पर अंकित किये गये हों। अब हम बारी बारी से इन पर विचार करेंगे। किन्तु इस बात को ध्यान में रखना होगा कि इनमे से केवल कुछ थोड़े ही एक साथ देखे जा सकते हैं। इनमें अनेक जिनका प्रेक्षण किया गया है, सूर्य्य के कारण बने थे। चन्द्रमा से सम्बन्ध रखने वाले प्रभामण्डल क्षीण प्रकाश के होते हैं, और इसलिए वे तो एक तरह से अगोचर ही रहते है (देखिए §§ ७७, १३२)।

सामान्यतः इनका निर्माण या अलका मेघ के झीने आवरण में होता है और बिरले ही दशाओं में अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज मेघ में; ये तड़ित-अलका बादलों में देखे जा सकते हैं किन्तु अधिक मौकों पर नहीं। प्रभामण्डल उत्पन्न करने वाले सभी बादल बर्फ के नन्हे क्रिस्टलों से बने होते हैं और इन क्रिस्टलों के आकार की नियमितता ही इस प्रकाशीय घटना की सुन्दर सममिति के लिए उत्तरदायी है। बर्फ वाले अनेक और बहुत से बादलों में प्रभामण्डल की घटना बिलकुल ही नहीं प्रदर्शित होती, इसका कारण यह है कि नन्हें तुषार कण, तथा बर्फ के क्रिस्टलों के गोलाकार समूह के आकार उन शक्ल से भिन्न होते हैं जो प्रिज्म की भाँति प्रकाश का वर्त्तन करने के लिए आवश्यक है, और फिर यह भी कि अत्यन्त छोटे आकार के क्रिस्टल की दशा में विवर्तन के कारण आभा-मण्डल की घटना का अभिलोप हो जाता है।
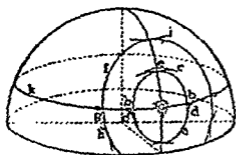
चित्र १२१—प्रभामण्डल की कतिपय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं का रेखाचित्र।

प्रभामण्डल ही फोटोग्राफी वैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है; कोणों की सूक्ष्म नाप के लिए तथा प्रकाशदीप्ति ज्ञात करने के लिए भी इसका उपयोग होता है। किन्तु इन कामों के लिए फोटोग्राफी की प्लेट को कैमरे के अक्ष के समकोण रखना चाहिए तथा प्लेट और अभिदृश्य लेन्स के बीच की दूरी सही-सही मालूम रहनी चाहिए तथा चौड़े मुह वाले अभिदृश्य लेन्स को काम में लाना होगा,साथ में नारङ्गी वर्ण का फिल्टर तथा पैन्क्रोमैटिक फिल्म का उपयोग करना होगा। सूर्य के लिए प्रकाशदर्शन का समय, १२ लेन्स के लिए, .०१ सेकण्ड होगा। चन्द्रमा के लिए ६ लेन्स को काम में लाइए और प्रकाशदर्शन का समय १० सेकण्ड रखिए। क्षितिज के कुछ भाग को, या कम से कम किसी एक वृक्ष को अपने फोटो के अन्दर अवश्य सम्मिलित कीजिए।

१३५. २२° वाले प्रभामण्डल का लघु छल्ला

(चित्र १२१ a; प्लेट IX b)

प्रभामण्डल की समस्त घटनाओं में इसी की बहुलता सबसे अधिक होती है; छल्ला, पूर्ण वृत्त की शक्ल का होता है केवल उस दशा को छोड़ कर, जबकि अलका-

स्तार मेघ आकाश में असमान रूप से बिखरे रहते हैं; सामान्यतः सबसे अधिक चमक इसके सिरे या पेंदे पर रहती है या दाहिनी या बायीं ओर, बीच के भागों की चमक अपेक्षाकृत कम ही होती है। भीतरी किनारा सुस्पष्ट होता है और लाल रंग का; फिर आता है पीला रंग, हरा और श्वेत जो नीले रंग पर समाप्त होता है। §२३५ में बतलायी गयी किसी एक विधि से लघु छल्ले की त्रिज्या नापी जा सकती है, (अधिक वाञ्छनीय होगा कि त्रिज्या की नाप, सूर्य से लेकर छल्ले के भीतरी, लाल रंग के, हाशिये तक की जाय)। श्रेष्ठतम नाप से त्रिज्या का मान २१° ५०' प्राप्त होता है।

कुछ रातों को चन्द्रमा के गिर्द के प्रभामण्डल की त्रिज्या की नाप अत्यन्त यथार्थता के साथ की जा सकती है बशर्ते प्रेक्षक किसी निश्चित तारे को ऐसी स्थिति में देख सके कि वह प्रभामण्डल के भीतरी हाशिये पर प्रभामण्डल के सबसे अधिक चमकीले स्थल पर पड़े। उस दशा में प्रेक्षक को उस तारे का नाम भर ज्ञात कर लेना होगा (आवश्यकता पड़ने पर नक्षत्र-मानचित्र की सहायता से इसे पहचाना जा सकता है;) और प्रेक्षण का समय अङ्कित कर लेना होगा। इसके उपरान्त कोई भी खगोलशास्त्री गणना करके मालूम कर सकता है कि इस क्षण दोनों आकाशीय पिण्ड एक दूसरे से कितनी दूरी पर थे (देखिए चित्र १२५)।

इस बात पर गौर कीजिए कि प्रभामण्डल के भीतर का आकाश बाहर के आकाश की तुलना में मन्द प्रकाश का दीखता है; यदि ऐसा नहीं है तो उसका कारण यह होता है कि प्रभामण्डल एक ऐसे विसृत प्रकाश के ऊपर आरोपित रहता है जिसकी प्रदीप्ति सूर्य से बाहर की ओर क्रमशः घटती जाती है। यह घटना हमें बहुत कुछ अंशों में इन्द्रधनुष के सम्बन्ध में प्रेक्षित की जानेवाली घटना का (जहाँ कि दोनों धनुषों के दर्मियान का आकाश मन्दप्रकाश का होता है) स्मरण दिलाती है और यह भी वैसे ही कारणों से उत्पन्न होती है।

लघु प्रभामण्डल बर्फ के नन्हे क्रिस्टलों युक्त बादल द्वारा सूर्यप्रकाश के वर्तित होने से बनता है—हम जानते हैं कि इन क्रिस्टलों की शक्ल प्रायः षटपहल प्रिज्म की होती है। प्रत्येक दिशा में जिधर हम देखते हैं, इस शक्ल के असंख्य प्रिज्म हर सम्भव दिशा में अनुस्थापित होकर उतराते रहते हैं (चित्र १२२)। इस किस्म का षटपहल प्रिज्म प्रकाश को इस तरह वर्तित करता है मानो इसका वर्त्तन कोर ६०° कोण का हो; आपाती किरणों के लिहाज से अपनी स्थिति के अनुसार यह उन्हें कम या अधिक मात्रा में विचलित करेगा, किन्तु क्रिस्टल के अन्दर यदि किरणपथ सममित है तब

विचलन का मान अल्पतम D होगा जो इस सुविख्यात सूत्र से प्राप्त होता है —

$$n=\frac{\sin \frac{1}{2}(A+D)}{\sin \frac{1}{2} A}$$

यहाँ n प्रिज्म के पदार्थ का वर्तनाङ्क है तथा A इसके वर्तनकोर का कोण है।
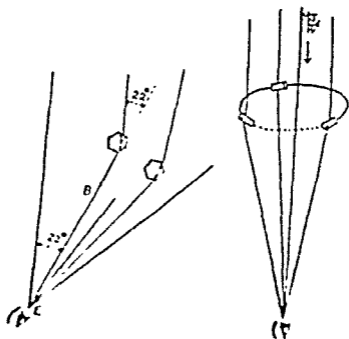
चित्र १२२—किस प्रकार लघु या २२° के प्रभामण्डल की उत्पत्ति होती है।

दिशा के निकट ही दिशाओं में प्रकाश भेज रहे है । हमारी गणना पीली किरणों के लिए की गयी थी; लाल किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ कम ही होता है, नीली किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ अधिक होता है । इस कारण से ही प्रभामण्डल का भीतरी हाशिया लाल रग का और वाहरी नीले रंग का होता है । किन्तु चूँकि किरणे EC भी जिनका विचलन अल्पतम विचलन से थोड़ा अधिक होता है, कुछ प्रकाश प्रभामण्डल मे पहुँचाती है अत. हरे और नीले प्रकाश की अल्पतम विचलनवाली किरणों के साथ कुछ हदतक पीला और लाल प्रकाश भी मिला रहता है, अत. ये पीतवर्ण का प्रदर्शन करती है । थोड़ा प्रकाश अब भी प्रभामण्डल के वाहर हर तरफ़ दिखलाई देगा किन्तु अन्दर नही—जैसा कि अभी बतलाया जा चुका है; अतः अन्दर के सुस्पष्ट हाशिये और साथ-साथ वाहर के धुंधले अस्पष्ट हाशिये,दोनों का समाधान हो जाता है । किन्तु जब कभी क्रिस्टल बिना तरतीब, हर किसी सम्भव दिशा मे वितरित नही हुए रहते है, बल्कि कुछ **विशेष वरीयता की स्थितियाँ** अख्तियार करते है तब लघु प्रभामण्डल के वाहर की उद्दीप्ति मे कुछ भिन्नता आ जाती है और प्रकाश के कतिपय धब्बे तथा वृत्तचाप प्रकट होते है जिनकी अब हम व्याख्या करने जा रहे है ।

तो आइए, पहले कम से कम इसी प्रश्न पर विचार करे कि क्या यहां भी **विवर्तन का सिद्धान्त** कार्य करता है जिस तरह वह इन्द्रधनुष के निर्माण में भाग लेता है ।[1] सिद्धान्तत. उसे भाग लेना चाहिए; वर्फ के क्रिस्टल मे से प्रकाश की एक पतली शलाका गुजरती है जिसकी चौड़ाई h है (चित्र १२२), अतः यह क्रिस्टल प्रकाश का विवर्तन उसी भाँति करता है जिस भाँति एक झिरी जिसकी चौड़ाई h हो । अत्यन्त छोटे आकार के क्रिस्टल एक श्वेत प्रभामण्डल उत्पन्न करेगे जिसका हाशिया लाल रंग का होगा, ठीक उसी प्रकार जैसे पानी की नन्ही बूंदें कुहरा-धनुष का निर्माण करती है (§१२८) । फिर, इसकी आशा की जा सकती है कि लघु छल्ले के वगल में अतिरिक्त छल्ले भी प्रकट होंगे (§१२३), और वास्तव में कतिपय अवसरों पर इन्हें देखा भी जा चुका है; किन्तु गणना से पता चलता है कि इन्द्रधनुष वाले अतिरिक्त छल्लों की तुलना में इन्हे अधिक मन्द प्रकाश का होना चाहिए तथा ये मुख्य छल्ले के वाहर तथा भीतर दोनों ओर स्थित होंगे । भीतर वाले अतिरिक्त छल्ले अधिक

1. Visser, Proc. Acad, Amsterdam, Summary in Hemel en Dampkring, 15,17 1917 and 16, 35, 1918

आसानी से देखे जा सकते हैं क्योंकि ये मन्द प्रकाश की पृष्ठभूमि पर प्रकट होते हैं। अब तक के प्राप्त प्रेक्षणों से इस बात का आभास मिलता है कि लघु प्रभामण्डल की चौड़ाई और रंग में अन्तर हो सकता है, किन्तु इस सिलसिले मे आवश्यक है कि और अधिक प्रेक्षण प्राप्त किये जायें। रंगों की जाँच करने का प्रायः सबसे बढ़िया तरीका यह है कि कालिख लगे काँच में से देखें और इस प्रकार प्रत्येक रंग की पट्टी की अलग-अलग चौड़ाई का अन्दाज़ लगाये और फिर सबकी मिली हुई चौड़ाई का। इन्हें आप अपनी स्वतत्र राय के अनुसार नाम दे सकते हैं! क्या कोई भी दो प्रेक्षक एक ही प्रभामण्डल के रंगों को सदैव एक-सा नाम दे सकते है? लाल और नारङ्गी रंग की पहचान में अक्सर लोग भ्रम मे पड़ जाते हैं, इसी प्रकार नीले और बैंगनी रंगों के दर्मियान भी लोग धोखा खा जाते हैं; ध्यान दीजिए कि प्रभामण्डल की घटना में पीला रग कितने दुर्लभ अवसरों पर प्राप्त होता है!

वर्त्तन के सरल सिद्धान्त के अनुसार लघु छल्ले में मोटे तौर पर नीला रंग नही होना चाहिए और बैंगनी रंग तो कत्तई नहीं मिलना चाहिए और यही बात ऊपर वाले स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यो के बारे मे भी लागू होनी चाहिए (§१३६)। किन्तु निरीक्षण से पता चलता है कि कभी-कभी इनमें नीला विशेष रूप से प्रबल होता है, विशेषतया ऊपर के स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यों में, और इनका वर्ण सदैव ही चटकीला होता है। विवर्त्तन का सिद्धान्त बतलाता है कि नीले और बैंगनी रग कैसे प्रकट होते हैं, बशर्ते क्रिस्टल सही आकार के मौजूद हों; और यह सिद्धान्त इसका भी समाधान करता है कि क्यों स्पर्शकीय चाप और कृत्रिम सूर्य, लघु छल्ले की अपेक्षा अधिक चटकीले रंग प्रदर्शित करते हैं। अन्त में विवर्त्तन का सिद्धान्त इस बात का भी स्पष्टीकरण करता है कि क्यों कभी तो रंग लघु छल्ले में खूब चटकीले उभरते है और अन्य अवसरों पर वृहत् छल्ले में; लघु छल्लोंके रंग अधिक चटकीले उस वक्त होते हैं, जब कि प्रिज्म के वर्त्तन करनेवाले फलक चौड़े होते हैं जैसा कि प्लेट की शक्ल वाले क्रिस्टल में होता है; किन्तु यदि ये फलक सँकरे होते हैं, जैसे स्तम्भ की शक्ल वाले क्रिस्टल में होता है, तब लघु छल्ला पीलापन लिये हुए होता है और वृहत् छल्ला चटकीले रंग प्रदर्शित करता है।

लघु छल्ले का प्रकाश ध्रुवित होता है। इन्द्रधनुष के प्रतिकूल, इस दशा में, प्रकाश के कम्पन छल्ले की समानान्तर दिशा की अपेक्षा, उसकी समकोण दिशा में, अधिक प्रबल होते हैं। यह बात ठीक समझ में भी आ जाती है, क्योंकि यहाँ परावर्तन तो कत्तई नही होता, केवल दो बार वर्त्तन होता है। फिर भी यह प्रभाव उतना स्पष्ट

नही होता जितना इन्द्रधनुष में। प्रचलित जनश्रुति के अनुसार लघु छल्ला वर्षा की पूर्व सूचना का द्योतक है, और जब वे कहते हैं कि 'प्रभामण्डल जितना ही अधिक बड़ा होगा उतनी ही जल्दी वर्षा होगी' तो उनका तात्पर्य होता है कि लघु छल्ला न कि कोरोना, वर्षा की पूर्व सूचना देता है। और वास्तविकता यह है कि अल्का-स्तार मेघ प्रायः अल्प दाबवाले प्रदेश के अग्रगामी होते हैं।

१३६. उप-सूर्य[1] या लघु प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र १२१, ग)

ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले पर मौजूद सर्वेन्द्रित प्रकाश के दो धब्बे होते हैं जो सूर्य की ही ऊँचाई पर स्थित होते हैं। प्रायः ऐसा होता है कि इन दोनों में से केवल एक ही ठीक तौर पर देखा जा सकता है, और कभी-कभी लघु छल्ला तो अदृश्य रहता है जबकि दोनो कृत्रिम सूर्य स्पष्ट दिखलाई देते हैं। आम तौर पर कृत्रिम सूर्यों की चमक अत्यधिक होती है, ये भीतर की ओर स्पष्ट रूप से लालरंग के होते हैं, फिर पीला रंग आता है जो आगे क्रमशः नीलामिश्रित श्वेत रंग में परिणत हो जाता है।

सूक्ष्म निरीक्षण करने पर पता चलता है कि दरअसल ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले के बाहर कुछ फासले पर स्थित होते हैं और सूर्य की ऊँचाई के अधिक होने पर यह दूरी और भी अधिक हो जाती है, और सूर्य जब बहुत ऊँचा होता है तो यह अन्तर कई अंशों का हो सकता है।

कृत्रिम सूर्य उस वक्त दीखते हैं जब वर्फ के पटपहल प्रिज्मों की एक बड़ी संख्या ऊर्ध्व दिशा की खड़ी स्थिति में होती है। यह शर्त नन्हे बर्फ-स्तम्भों के लिए सही उतरती है जो एक सिरे पर खोखले होते हैं, या 'छतरी की शक्ल' वाले धीरे-धीरे नीचे गिरते हुए क्रिस्टलों के लिए भी (चित्र १२३)[2]। इन प्रिज्मों में से होकर गुजरने पर किरणे अब अल्पतम विचलन के मार्ग पर नहीं चलती, क्योंकि ये अक्ष के समकोण

चित्र १२३—बर्फ के क्रिस्टल जो कृत्रिम सूर्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं।

1 Parhelia

2 इस अन्तिम दृष्टांत के विरोध में कहा गया है कि ये छतरियाँ उलट जायँगी क्योंकि पटपहल सिरा भारी होता है, किन्तु डान्जोन (Danjon) ने वस्तुतः उन्हें सीधी स्थिति में नीचे उतराते हुए देखा है (L' Astronomie 68, 420, 1954)। विसेर (Visser) ने उपसूर्य के लिए एक अन्य व्याख्या दी है।

धरातल में नहीं स्थित होती। सूर्य की ऊँचाई h हो तो इस दशा में 'आपेक्षिक अल्पतम विचलन' इस शर्त द्वारा निर्धारित होता है—

$$\frac{\sin\frac{1}{2}(A+D')}{\sin\frac{1}{2}A} = \sqrt{\frac{n^2-\sin^2 h}{1-\sin^2 h}}$$

अतः प्रकाश का आचरण इस प्रकार होता है मानों तिर्यक् किरणों के लिए वर्तनाङ्क के मान में वृद्धि हो गयी हो (देखिए §१३५)। इस समीकरण से हम निम्नलिखित सारणी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं—

सूर्य की ऊँचाई	कृत्रिम सूर्य से लघु छल्ले की दूरी
०°	०°
१०°	०° २०′
२०°	१° १४′
३०°	२° ५९′
४०°	५° ४८′
५०°	१०° ३६′

प्रेक्षण-फल के साथ ये मान बहुत अच्छी तरह मेल खाते हैं। सूर्य की ४०° से अधिक ऊँचाई के लिए दुर्भाग्यवश मुश्किल से ही कोई माप लभ्य है क्योंकि उस दशा में यह घटना बहुत कुछ अस्पष्ट हो जाती है; इस कमी को दूर करने का प्रयत्न कीजिए।

१३७ः लघु प्रभामण्डल के स्पर्शकीय क्षैतिज चाप (चित्र १२१, c)

ये चाप, जो लघु प्रभामण्डल के सिरे और पेंदे पर चमक की वृद्धि के रूप में प्रकट होते हैं, अनुकूल परिस्थितियों में अपेक्षाकृत प्रकाश के बहुत बड़े वक्र—'परिवृत्त प्रभामण्डल'—के भाग के रूप में देखे जा सकते हैं। प्रभामण्डल ही यह अति विचित्र घटना उस वक्त उत्पन्न होती है जब षटपहल प्रिज्मों के अक्ष क्षैतिज तल में होते हैं और ये प्रिज्म अपनी स्थिति के गिर्द हलका दोलन करते हैं—ऐसी परिस्थितियाँ तब उत्पन्न होती हैं जब क्रिस्टल प्लेट की शक्ल के बजाय स्तम्भ की शक्ल के होते हैं।

परिवृत प्रभामण्डल की आकृति बहुत कुछ सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करती है (चित्र १२४)। जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नहीं होता तब हम केवल इतना देख

चित्र १२५—चन्द्रमा के निकट तारे की स्थिति के लिहाज से परिवृत्त प्रभामण्डल। (After Veenhuizen, Onweders ect. 35, 119, 1914. By kind permission of the Royal Dutch Meteorological Institute,)

१३९. पैरी का चाप (चित्र १२१, e)

अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर ही यह दिखलाई देता है ! थोड़ा ही झुका हुआ छोटा-सा यह चाप, ठीक लघु प्रभामण्डल के ऊपर स्थित होता है। इसकी उत्पत्ति उस दशा में होती है जब षटपहल प्रिज्मों की प्रवृत्ति न केवल अपने अक्ष को क्षैतिज तल में रख कर उतराने की होती है बल्कि उनके एक फलक की सतह भी क्षैतिज तल में रहती है।

१४०. वृहत् छल्ला या ४६° कोण का प्रभामण्डल (चित्र १२१, f)

सूर्य से यह, लघु प्रभामण्डल की अपेक्षा, पूरे दो गुने फासले पर स्थित होता है और उसी प्रकार के रंग इसमें भी होते हैं, किन्तु इसकी चमक कम होती है तथा यह और

भी कम अवसरों पर दृष्टिगोचर होता है। भीतरी हाशिये की त्रिज्या मालूम करने के लिए सही माप की आवश्यकता होती है। इस प्रभामण्डल की उत्पत्ति भी उसी प्रकार होती है जिस प्रकार २२° कोण वाले प्रभामण्डल (लघु छल्ले) की; केवल इस बार वर्तन करनेवाले प्रिज्म के कोर ९०° वाले होते हैं जो हर सम्भव तरीके से अनु-

चित्र १२६—बर्फ के षटपहल प्रिज्म में प्रकाश-किरण का अल्पतम विचलन २२° तथा ४६° का हो सकता है।
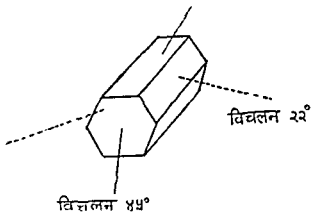
स्थापित रहते हैं। जैसा चित्र १२६ में प्रकट है, बर्फ के एक ही किस्म के [illegible] तथा वृहत् दोनों प्रकार के प्रभामण्डल का निर्माण कर सकते हैं।

१४१. वृहत् प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र [illegible])

ये बहुत ही कम अवसरों पर देखे जा सके हैं [illegible] नहीं, क्योंकि इनके निर्माण के लिए प्रिज्मों का एक [illegible] कोर को ऊर्ध्व स्थिति में होना पड़ेगा। [illegible] रखते हुए यह बात कल्पनातीत प्रतीत होती है कि [illegible] कर सकते हैं।

समकोण होते हैं। सूर्य जब बहुत ही अधिक ऊँचाई पर होता है तो चाप सीधे हो गये दीखते हैं, जहाँ तक कि अन्त में वे सूर्य की ओर अवतल भी हो जाते हैं।

१४३. वृहत् प्रभामण्डल का ऊपरी स्पर्शकीय चाप (चित्र १२१, i)

यह चाप केवल तभी उत्पन्न होता है जब ९०° वाले प्रिज्म अपने वर्त्तनकोर क्षैतिज तल में रखे हुए उतराते हैं तथा अपनी स्थिति के गिर्द घूमते हैं, या कम्पन करते हैं। अब इनमें से वे प्रिज्म जो अल्पतम विचलन करने के लिए अनुकूल स्थितियों में होते हैं, विचाराधीन स्पर्शकीय चाप उत्पन्न करते हैं। प्रायः एक ऐसा चाप दिखलाई देता है जो बहुत अधिक इस चाप के सदृश होता है, किन्तु वास्तव में इसकी उत्पत्ति का कारण और ही है—यह ऊपर वाला यथार्थ स्पर्शकीय चाप नहीं है, बल्कि यह ब्रैवेस का परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप है।

१४४. परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु[1] चाप (चित्र १२१, j)

प्रभामण्डल की एक सुन्दरतम घटना! अक्सर ही दीखनेवाला विविध चटकीले रंगों से सुशोभित यह चाप क्षितिज के समानान्तर होता है तथा इन्द्रधनुष के सभी रंग इसमें प्रदर्शित होते हैं। वृहत् प्रभामण्डल के ऊपरी स्पर्शकीय चाप की उपस्थिति की सामान्यतः जहाँ हम आशा करते हैं, वहाँ से कुछ अंश ऊपर यह स्थित होता है।
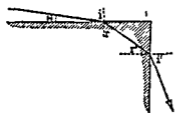
चित्र १२७—९०° वाले बर्फ के प्रिज्म से प्रकाश-किरण का वर्त्तन।

इस घटना के समाधान के लिए हमें प्लेट या छतरी की शक्ल के क्रिस्टलों की कल्पना करनी होगी जो अपने अक्ष को ऊर्ध्व दिशा में रखे हुए स्थिर-समतुलन की दशा में उतराते रहते हैं (चित्र १२७)। तब ९०° के कोण वाले प्रिज्म से सूर्य की किरण-शलाका वर्त्तित होगी, किन्तु सामान्यतः यह अल्पतम विचलन का वर्त्तन नहीं होगा। चित्र १२७ से स्पष्ट है कि—

$$\sin i' = n \sin r' = n \cos r = n\sqrt{1-\frac{\sin^2 i}{n^2}} = \sqrt{n^2-\sin^2 i}$$

इससे सहज ही हम देखते हैं कि विचलन का कोण $i'+i-$९०° है। सूर्य की कोणीय ऊँचाई $H=$ १०° के लिए यह विचलन कोण करीब ५०° आता है; फिर $H=$

1. Circum zenithal

२०° के लिए यह घटकर ४६° हो जाता है जो अल्पतम मान है; तथा H=३०° के लिए यह फिर बढ़कर ४९.५° हो जाता है। H=३२° सूत्र से i'=१०° प्राप्त होता है तथा परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप विलुप्त हो जाता है। व्यावहारिक तौर पर यह केवल सूर्य की १५° और २५° के बीच की ऊँचाइयो के लिए दिखाई देता है। इसका अर्थ हुआ कि सूर्य जब आकाश मे नीचे स्थित हो तभी परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप को ऊपरी वृहत् छल्ले के स्पर्शकीय चाप (जिसका विचलन कोण ४६° होता है) से पृथक् पहचाना जा सकता है।

जांच की एक उत्तम कसौटी यह है कि वास्तविक परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप करीब-करीब सदैव ही कृत्रिमसूर्य के साथ प्रगट होते हैं, इनकी उत्पत्ति से यह बात समझ में भी आती है। बेर्सोन के अनुसार बादल, जो कृत्रिम सूर्य प्रदर्शित करता है और बाद में ४६° की ऊँचाई तक उठ जाता है, तब परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप प्रदर्शित करेगा।

यह रोचक होगा कि अपेक्षाकृत अधिक सौर ऊँचाई (लगभग ३०° के निकट) पर परिवृत्त-ऊर्ध्वविन्दु चाप की तलाश की जाय। सिद्धान्त के अनुसार तो वृत्त के आधे भाग से अधिक को हम कभी देख ही नहीं सकते; किन्तु व्यवहार में दृष्टिगोचर होनेवाला भाग घटकर वृत्त का एक तिहाई ही रह जाता है, फिर भी कहा जाता है कि एक बार सम्पूर्ण वृत्तचाप भी देखा जा सका था (कर्न का प्रभामण्डल)[1]।

यदि स्पर्शकीय तथा परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप दोनों ही साथ-साथ दीख रहे हों तब इन दोनों के बीच कुछेक अंश के अन्तर की खाली जगह अवश्य दिखलाई देनी चाहिए। और वास्तव में इसका उल्लेख प्राप्त है कि एक बार एक चौड़ा चाप देखा गया था जो लम्बाई के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक अन्धकारमय पेटी द्वारा दो भागों में विभाजित था; तथा यह अचानक ही प्रगट हुआ और थोडी ही देर बाद विलुप्त हो गया।[2] किन्तु इस ढंग के प्रेक्षण निस्सन्देह दुर्लभ ही रहते हैं क्योंकि यह घटना तभी सभाव्य हो सकती है जब क्षैतिज तल में उतराती हुई प्लेटों का झुण्ड तथा अनियमित दिशाओं में अवस्थित प्लेटों के झुण्ड एक साथ आकाश में मौजूद हों।

१४५. क्षैतिज वृत्त या सौर परिवृत्त (चित्र १२१, k)

यह एक वृत्त है जो क्षैतिज तल के समानान्तर उसी ऊँचाई पर अवस्थित होता है जिस ऊँचाई पर सूर्य रहता है। यद्यपि कुछ अवसरों पर पूरे ३६०° के दायरे में इस

1. Observations by Lambert in 1838 after Pernter-Exner. p. 300; M. W. R., 50, 132, 1922 2. M. W. R, 506, 1920

वृत्त का अवलोकन किया जा सकता है, किन्तु अक्सर सूर्य के निकट, जहाँ आकाश अक्सर ही अधिक चमकीला होता है, इस वृत्त को देख पाना मुश्किल होता है। इस वृत्त का रंगहीन होना स्पष्ट रूप से यह बतलाता है कि इसकी उत्पत्ति परावर्तन के कारण होती है, वर्तन के कारण नहीं; इस दशा में ऊर्ध्व अक्ष की स्थिति में उतराने वाले बर्फ के प्रिज्मों के पार्श्वफलक ही परावर्तन करनेवाले तल होते हैं।
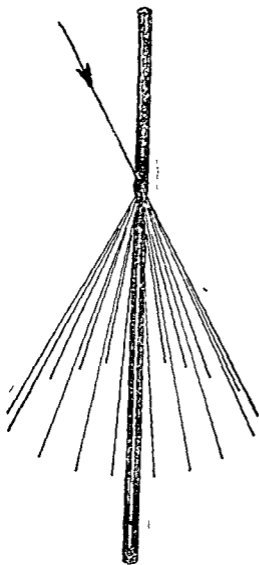
चित्र १२७ क—बेलनाकार सतह से परावर्तन द्वारा प्रकाश के शंकु का निर्माण।

इसी प्रकार की प्रकाश की पेटी उस वक्त देखी जा सकती है जब किसी प्रकाश-स्रोत को हम खिड़की के काँच में से देखते हैं जिसे किसी तेल लगे कपड़े से एक ही दिशा में पोंछा गया हो या जब प्रकाशस्रोत को ऐसे काँच द्वारा परावर्तित होते देखते हैं जिसकी सतह समानान्तर धारियों के रूप में उभरी हो। प्रकाश की पेटी सदैव ही सतह की उभार-रेखा की समकोण दिशा में होती है।

यह इस सामान्य प्रकाशीय नियम का एक उत्तम उदाहरण नियम है कि बेलन से परावर्तित होने पर किरणें

एक शंकु आकार का तल बनाती है जिसका अक्ष यह बेलन होता है[1] (चित्र १२७ क)।

१४६. प्रकाश-स्तम्भ या सूर्य-स्तम्भ[2]

उगते हुए या अस्त होते हुए सूर्य के ऊपर, ऊर्ध्व दिशा में स्थित प्रकाश-स्तम्भ या प्रकाश का गुच्छा-सा अक्सर ही देखा जा सकता है और सबसे बढ़िया तो यह उस वक्त दीखता है जब सूर्य किसी मकान के पीछे छिपा रहता है ताकि आँखों को चकाचौंध न लगे। प्रकाश का यह स्तम्भ स्वय रंगहीन होता है, किन्तु जब सूर्य नीचे स्थित होता है और इस कारण यह पीला, नारङ्गी या लाल वर्ण धारण कर लेता है, तब प्रकाश-स्तम्भ भी स्वभावतः उसी रंग की झलक अख्त्यार कर लेता है। सामान्यतः यह केवल ५° तक ऊँचा होता है, और बहुत कम अवसरों पर इसकी ऊँचाई १५° या इससे अधिक पहुँचती है। सूर्य जब आकाश मे ऊँचाई पर स्थित होता है तब ये प्रकाश-स्तम्भ अत्यन्त दुर्लभ मौकों पर ही दिखलाई देते हैं, किन्तु इसके प्रतिकूल, सूर्य जब कि सचमुच क्षितिज के नीचे स्थित होता है, तो ये प्रायः ही बहुत अच्छी तरह देखे जा सकते हैं। सूर्य के नीचे प्रकाशस्तम्भ केवल यदा-कदा ही बनते हैं; और सूर्य के ऊपर बनने वाले स्तम्भों की अपेक्षा ये छोटे होते हैं।

बर्फ की परतों के एक ऐसे बादल की कल्पना कीजिए जिसमें सभी परतें पूर्णतया क्षैतिज हों तथा अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को उतर रही हों। इन्ही परिस्थितियों में ये सूर्य की आपाती किरणों को परावर्तित करती है, किन्तु ये परावर्तित किरणें हमारी आँखों में पहुँच नही पायेंगी। किन्तु मान लीजिए कि ये परतें अपनी क्षैतिज स्थिति से एक छोटे से कोण Δ पर दिक्सूचक की सभी दिशाओं की ओर थोड़ी झुकी हैं, अतः अब परावर्तित किरणें हर प्रकार के लघु विचलन प्राप्त करेंगी। और यदि परतों का झुकाव $\frac{h}{2}$ (h=सूर्य की कोणीय ऊँचाई) मे

चित्र १२८—सूर्य के ऊपर और नीचे बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की सरलतम व्याख्या।

1. W. Maier explains on this principle most of the halo phenomena (zeitschr. f. Meteor 4, 111 1950)
2. K. Stuchtey. Ann. d. Phys. 59, 33, 1919. Cb references to § 14.

कम रहता है तो सूर्य के नीचे प्रकाशस्तम्भ का निर्माण करीब-करीब उसी प्रकार होता जिस प्रकार तरंगों वाले पानी की सतह पर प्रकाशस्तम्भ के धब्बों का निर्माण होता है (§१४)। जब परतों का झुकाव h से अधिक हो जाता है तब हम न केवल सूर्य के नीचे स्तम्भ देखते हैं बल्कि इसके ऊपर भी एक हलकी रोशनी का स्तम्भ दिखलाई देता है।

किन्तु यह विवरण दो बातों में प्रेक्षण के प्रतिकूल बैठता है। पहली बात यह कि सूर्य के नीचेवाला प्रकाशस्तम्भ ऊपरवाले स्तम्भ की अपेक्षा हमेशा अधिक चमकीला होना चाहिए; दूसरे यह कि सूर्य जब काफी ऊँचाई पर हो तब सूर्य के ऊपर का स्तम्भ तो कभी भी नहीं दीखना चाहिए क्योंकि क्षैतिज स्थिति के गिर्द बर्फ की परतों का दोलन अपेक्षाकृत थोड़ा ही होता है (देखिए § १४८)। किन्तु इन दोनों में से कोई भी बात सच नहीं उतरती।

प्रकाशस्तम्भ की उत्पत्ति का कारण बारम्बार होनेवाला परावर्तन बतलाया गया है, किन्तु तब उस दशा में प्रकाशमात्रा हलकी होनी चाहिए तथा जैसा साधारणतः प्रतीत होता है उससे कहीं अधिक चौड़ा यह स्तम्भ होता, जैसा कि गणित द्वारा निष्कर्ष प्राप्त भी किया जा सकता है। एक अन्य कारण यह बतलाया जाता था कि इसकी उत्पत्ति पृथ्वी की वक्रता के कारण होती है, लेकिन इसका एक परिणाम यह होगा कि किसी एक दिशा में प्रेक्षक को स्पष्ट रूप से विभिन्न झुकाव की परतें दीखनी चाहिए। और अन्त में यह समझा जाता था यह क्षैतिज अक्ष के गिर्द तेजी से घूमती हुई बर्फ की परतों के कारण उत्पन्न होता है जो इसीलिए खाली जगह में हर सम्भव तरीके की अनुस्थापित स्थिति धारण कर लेंगी। यह अन्तिम परिकल्पना वास्तव में सर्वाधिक सम्भाव्य प्रतीत होती है यद्यपि इस पर आधारित गणना अभी तक कभी भी पूरी नहीं की जा सकी है।

प्रकाशस्तम्भ कितनी सरल घटना प्रतीत होता था। कौन भला सोच सकता था इनके समाधान के प्रयत्न में इतनी सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा?

१४७. क्रॉस[1] (प्लेट IX, b)

जब एक ऊर्ध्वस्तम्भ तथा क्षैतिज वृत्त का एक भाग साथ-साथ प्रगट होते हैं तब आकाश में हमें एक क्रॉस दिखलाई पड़ता है। यह कहना अनावश्यक ही होगा कि अन्धविश्वास ने इस घटना को अत्यधिक महत्त्व दिया है!

1. Crosses

१४ जुलाई, सन् १८६५ को आल्प्स पर्वतारोही ह्विम्पर तथा उनके साथी, मैटर-हार्न की चोटी पर सबसे पहले पहुँचे, किन्तु वापस आते समय उसके चार साथियों के पैर फिसल गये और वे सिर के बल एक खड्डे में गिर गये। शाम के करीब ह्विम्पर ने आकाश में प्रकाश का एक भयोत्पादक वृत्त देखा जिसमें तीन क्रास थे, 'प्रकाश की यह प्रेतस्वरूप आकृति स्थिर तथा गतिहीन थी; यह एक अजीब तथा भयावह दृश्य था जो मुझे अनोखा लगा और इस मौके पर अवर्णनीय रूप से प्रभावोत्पादक भी प्रतीत होता था।'

१४८. अधोवर्ती सूर्य

इसे केवल किसी पर्वत या वायुयान से ही देख सकते हैं। यह थोड़ा-बहुत आयताकार रंगहीन प्रतिबिम्बत होता है, इस दशा में सूर्य पानी की सतह में नहीं, बल्कि बादल में प्रतिबिम्बित होता है! यह बादल दरअसल बर्फ की परतों का बना होता है जो अत्यन्त स्थिर भाव से उतराता हुआ प्रतीत होता है, तभी तो प्रतिबिम्ब अपेक्षाकृत इतना अधिक स्पष्ट बन पाता है! अनुकूल परिस्थितियों में यह आयताकार बिम्ब एक दीर्घ वृत्तीय विवर्तन-वलय से परिवेशित होता है जिसकी त्रिज्या ०.५° से लेकर १° तक होती है। प्रगटत. बर्फ के क्रिस्टल पर्दे में बने विवर्तनकारी छिद्र सरीखे काम करते हैं। चूंकि उनका प्रेक्षण हम विषमतलीय स्थिति से करते हैं, अत. ऊर्ध्व धरातल में इनका प्रक्षेपित व्यास छोटा हो जाता है अतः विवर्तन बिम्ब अधिक चौड़ा हो जाता है' (देखिए § १६२)।

१४९. दुहरा सूर्य

कभी-कभी सूर्य के ठीक ऊपर प्रकाश का एक धब्बा हम देखते हैं और केवल अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर इसके नीचे भी यह धब्बा दिखलाई पड़ता है। सूर्य और उसके इस धुंधले प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी आमतौर पर १° या २° से अधिक नहीं होती। कुछेक अपवाद स्वरूप दशाओं में सूर्य-मंडलक के ऊपर इस तरह के दो या तीन प्रतिबिम्ब भी देखे गये हैं। सम्भवतः यह घटना केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि बादलों के असमान वितरण के फलस्वरूप प्रकाशस्तम्भ की चमक स्थानीय रूप से जगह-जगह बढ़ जाती है।

1. Ch-F. Squire. Journ. Opt Soc. Amer. 42, 782, 1952 & 43, 318. 1953

१५०. अत्यन्त ही दुर्लभ तथा संदेहास्पद प्रभामण्डल की घटना

विभिन्न आकृतियों के प्रभामण्डल के बाद जिनका विवरण अभी दिया जा चुका है, हम निम्नलिखित सूची इस उद्देश्य से दे रहे हैं कि पाठक को इसका आभास मिल सके कि इन अत्यधिक दुर्लभ घटनाओं में जो सर्वाधिक अप्रत्याशित अवसरों पर आश्चर्यजनक स्पष्टता के साथ प्रगट होती हैं, कितनी अधिक विलक्षणताएं निहित हैं।[1]

सूर्य के गिर्द छल्ले के रूप में जिनका विस्तार ६°—७°, ९°, ११½°, १५°, १६½° १८°—२०°, २४½°, २६°, २७½°, ३३°, ३४° तक होता है। इन हलके प्रकाश की चमक वाले वृत्तों का अवलोकन करते समय सदैव सूर्य को ओट में रखने की सावधानी बरतिए! ये छल्ले शंकु के आकार वाले वर्फ के क्रिस्टलों में होनेवाले वर्तन से बनते हैं, जबकि ये क्रिस्टल बेतरतीब दिशाओं में अवस्थित होते हैं। इसी कारण इस तरह के कई छल्ले एक साथ ही बनते हैं।

सूर्य के गिर्द ९०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त। कभी-कभी ऊपरी स्पर्शकीय चाप सहित। अत्यन्त ही अस्पष्ट। सूर्य के गिर्द १२०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त।

प्रति सूर्य, जो कि क्षैतिज वृत्त पर सूर्य के ठीक सामने स्थित होता है—सामान्यतः यह रंगहीन और कुछ-कुछ धुंधला-सा होता है। कृत्रिम सूर्य, ९०° के वृत्त पर सूर्य से ३३° तथा १९° की कोणीय दूरियों पर।

क्षैतिज वृत्त पर सूर्य से १२०° की कोणीय दूरी पर और ४०° (?) ८४°—१००° (?), १३४° (?), १४२° (?) तथा १६५° (?) पर भी प्रतिसूर्य सरीखे प्रकाश-धब्बे मिलते हैं।

क्षितिज के नीचे का कृत्रिम सूर्य, जो वायुयान, या किसी पर्वत से, साधारण कृत्रिम सूर्य के प्रतिविम्ब के रूप में दिखलाई पड़ता है।

कृत्रिम सूर्य तथा प्रतिसूर्य के ऊपर के प्रकाश-स्तम्भ। कृत्रिम सूर्य के भी कृत्रिम सूर्य (एक गौण प्रभामण्डल की घटना)। कृत्रिम सूर्य जो उस बिन्दु पर स्थित होते हैं जहां लघु वृत्त तथा ऊर्ध्व प्रकाश स्तम्भ क्षितिज से मिलते हैं।

1. Numerous interesting observations in the periodical *Hemel en Dampkring* and in the publication of the Royal Dutch Meteorological Institute *Onweders en Optische Verschijnselen*.

कृत्रिम सूर्य की स्थिति पर लघु वृत्त के स्पर्शकीय चाप। ११½° और २४½° के वृत्त के ऊपरी स्पर्शकीय चाप। सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप तथा प्रति-सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप जो प्रायः श्वेत होते है, किन्तु एक बार ये रंगीन प्रकाश के भी देखे गये थे। सूर्य के सामने, दूसरी ओर के चाप, अर्थात् प्रतिसूर्य के गिर्द के वृत्त जिनकी कोणीय त्रिज्याएँ ३३°, ३५° तथा ३८° की होती है। असाधारण परिवृत्त-ऊर्ध्वविन्दु वाले चाप जो विभिन्न ऊंचाइयो या पर दीखते हैं।

सूर्य के गिर्द एक दीर्घवृत्त, जिसके दीर्घ अक्ष का विस्तार ऊर्ध्व दिशा में १०° होता है और क्षैतिज दिशा में लघु अक्ष का विस्तार ८° होता है।

प्रतिसूर्य के गिर्द बूगेर का प्रभामण्डल जिसकी कोणीय त्रिज्या ३५°—३८° होती है। इसे कुहरा-धनुष से पृथक् करके पहचानना कठिन होता है, किन्तु बूगेर का प्रभामण्डल पूर्णतया रंगविहीन होता है, इस पर अतिरिक्त धनुष चाप नहीं होते हैं और आम तौर पर प्रभामण्डल की अन्य घटनाएँ भी इसके साथ-साथ प्रगट होती हैं।

१५१. तिर्यक् और प्रभामण्डल की घटनाएँ

कभी-कभी प्रकाश के ऐसे स्तम्भ देखे गये है जो ऊर्ध्व दिशा मे स्थित नही थे वल्कि ऊर्ध्व तल से २०° तक झुके हुए थे!

पानी की लहरदार सतह पर दीखने वाले प्रकाश के स्तम्भ सरीखे तिरछे धब्बो की उत्पत्ति का कारण नन्ही तरंगों की प्रमुखता प्राप्त करनेवाली दिशा बतलायी गयी थी; यहाँ पर भी स्पष्ट है कि हम कल्पना कर सकते हैं कि बर्फ के क्रिस्टल क्षैतिज तल मे नहीं उतराते हैं वल्कि कतिपय वायु-धाराओ के प्रभाव से वे तिरछे होकर उतराते हैं, ऐसा ठीक-ठीक कैसे होता है, इसका समाधान करना कुछ अधिक सरल नही प्रतीत होता है।

परिवृत्त-ऊर्ध्वविन्दु चाप झुकी स्थिति में देखा गया है। ठीक सूर्य के ऊपर यह सबसे अधिक ऊँचा होता है तथा दोनों पार्श्व मे यह क्षितिज की ओर झुका रहता है। क्षैतिज वृत्त तो सूर्य से १°–२° नीचे की स्थिति से गुजरता हुआ देखा गया है! लघुवृत का कृत्रिम सूर्य एक बार अपनी सही स्थिति से ४०° अधिक ऊँचाई पर देखा गया था; यह घटना तो विशेष रूप से स्पष्ट देखी गयी थी क्योकि सूर्य अस्त होने वाला ही था।

इस सम्बन्ध में भी और अभी प्रेक्षण प्राप्त करने की आवश्यकता है और प्रेक्षण की व्यक्तिगत त्रुटियो को दूर करने के लिए भी विशेष सावधानी बरतनी चाहिए; अतः साहुल का उपयोग कीजिए। फोटो लेते समय केमरे के सामने कुछ फासले पर साहुल को लटकाइए ताकि यह फोटोग्राफी की प्लेट पर (कुछ धुंधला ही) दीखे।

१५२. प्रभामण्डल की घटना के विकास-क्रम की दशा

नौसिखुए प्रेक्षक सदैव ही प्राकृतिक घटनाओं की नियमितता के प्रति अतिशयोक्ति से काम लेते हैं; वे बर्फ के क्रिस्टलों की आकृति पूर्णतया सममित बतलाते हैं, इन्द्रधनुष में सात रंग वे गिन लेते हैं तथा आकाशीय तड़ित् को टेढ़ी-मेढ़ी वक्ररेखा के रूप में वे देख पाते हैं! इसी प्रकार प्रभामण्डल की घटनाओं के बारे में भी लोगों की प्रवृत्ति उन्हें वास्तव से अधिक पूर्ण बतलाने की होती है। फिर भी लघुवृत्त की आधी परिधि देखने में और उसके सम्पूर्ण भाग को देखने में विशाल अन्तर है। प्राकृतिक घटनाओं की 'अपूर्णता' भी निश्चित नियमों के अधीन होती है और इस दृष्टि से इस अपूर्णता को केवल एक और 'नियमितता' ही मान सकते हैं।

इसी कारण यह आवश्यक है कि प्रभामण्डल की प्रत्येक घटना के विकास-क्रम की दशा का अध्ययन करने में उसकी प्रकाश-तीव्रता के साथ-साथ दृष्टिगोचर होने वाले भाग के विस्तार का भी तखमीना लगाया जाय। इन प्रेक्षणों का औसत मान लेने पर बादलों के वितरण की ऊलजलूल अनियमितताओं के प्रभाव का भी बहुत कुछ निराकरण किया जा सकता है। आम तौर पर यह पाया जाता है कि वे ही भाग जिनकी प्रकाश-तीव्रता अधिकतम होती है, सर्वाधिक बहुलता के साथ प्रगट होते हैं। विशेष अधिक चमक वाली आभा ही औसत रूप से विशेष विस्तार भी प्राप्त करती है। बादलों के मध्यम रूप से हलकी मोटाई का स्तर प्रभामण्डल के निर्माण के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होता है, अत्यन्त पतले स्तर में क्रिस्टलों की संख्या बहुत ही कम होती है, तथा बहुत मोटे स्तर पर्य्याप्त प्रकाश को अपने में से गुजरने नहीं देते हैं, या फिर उन्हें हर किसी दिशा में बिखेर देते हैं।

एक बहुत ही दिलचस्प बात यह है कि लघु वृत्त का शीर्ष भाग, औसत रूप से निचले भाग की अपेक्षा तीन गुने बार अधिक दिखलाई पड़ता है। इसके कारण के लिए बतलाया गया है कि निचले भाग के लिए बादलों के स्तरों में से गुजरने वाला किरण-पथ बहुत अधिक लम्बा होता है, यद्यपि यह बात जितनी हितकर साबित हो सकती है उतनी ही अहितकर भी।

तथा उप-सूर्य भी देखे गये हैं। इन तमाम प्रेक्षणों से यह स्पष्ट है कि इन बादलों में बर्फ के क्रिस्टल ऊर्ध्व अनुस्थापन[1] की विशेष प्रवृत्ति प्रदर्शित करते हैं।

इन अलका बादलों मे तोप के गोले की विस्फोट तरंगे वृत्तीय तरंगिकाओं की शक्ल में प्रसारित होती देखी गयी हैं। किन्तु वास्तव में एक विलक्षण दृष्टान्त तो वह है जिसमे ये मटमैली तरङ्गें केवल क्षैतिज वृत्त के सहारे प्रसारित होती देखी गयी।[2] बरबस हमें यह मानना पड़ता है कि तरङ्ग के गमन के समय बर्फ के क्रिस्टल अपनी ऊर्ध्व अनुस्थापन की स्थिति से घूम जाते हैं।

१५३. आँख के निकट प्रभामंडल की घटना

सँकरी सडक से गुजरते हुए एक प्रेक्षक ने चन्द्रमा के गिर्द एक प्रभामण्डल देखा, किन्तु उसने विशेष बात यह देखी कि इस प्रभामण्डल का एक भाग एक मटमैली दीवार पर प्रक्षेपित हो रहा था, जो आकाश पर प्रक्षेपित होनेवाले शेष भागों के साथ मिलकर पूरी आकृति बनाता था। हाथ से चन्द्रमा को ओट दे देने पर भी उसे प्रभामण्डल दीखता रहा था, अतः यह स्वयं आँखों के अन्दर निर्मित होनेवाली घटना नही हो सकती थी; बल्कि जाहिर है कि आँख और दीवार के दर्मियान, भूमि से कुछ ही गज की ऊँचाई पर बर्फ के क्रिस्टल उतरा रहे थे।

अत्यधिक ठंड वाली शाम को (१७° फ़ा०) रेलवे स्टेशन पर रेलगाड़ी के इंजिन को भाप में एक सुन्दर प्रभामण्डल की घटना देखी जा सकी थी। एक लैम्प के निकट जहाँ हर किसी दिशा में भाप की फुहारें निकल रही थीं, सिगार की शक्ल की रोशनी की सतह दिखाई दी थी जिसका एक सिरा आँख के पास था और दूसरा सिरा लैम्प के पास (चित्र १२९); इस सतह पर पड़ने वाले सभी नन्हें-नन्हे क्रिस्टल प्रकाशित हो उठे थे, किन्तु भीतर की जगह में बिलकुल अन्धकार था। इस सतह के समंकीय शङ्कु का शीर्ष कोण लगभग ४४° का था। उससे सहज ही स्पष्ट है कि सिगार की शक्ल की यह सतह उन सभी बिन्दुओं P का बिन्दुपथ है जो इस प्रकार चलते हैं कि रेखा EP तथा PL द्वारा क्रमशः L तथा E पर बननेवाले कोणों का योग २२° हो।

इस प्रेक्षण का एक महत्वपूर्ण अंग त्रिविमितीय प्रकृति है। ऐसा केवल इसलिए सम्भव हो पाता है कि प्रकाशस्थान इतने निकट स्थित होता है और दोनों आँखें एक ही साथ पृथक्-पृथक् प्रकाश-बिन्दुओं का अवलोकन करके पिण्डदर्शन के सिद्धान्त द्वारा उनकी दूरियों का अन्दाज लगा लेती हैं।

1. Vertical orientation 2. Archenhold, Nat 154, 433, 1944.

उसी सन्ध्या को, स्टेशन के एक अपेक्षाकृत अधिक शान्त कक्ष में यह देखा गया कि वहाँ लैम्पों द्वारा प्रकाश के 'स्तम्भ' का निर्माण हो रहा था। यह घटना एकदम नयी नहीं है। रूस और कनाडा में जाड़े की ऋतु में दूर के लैम्पों के ऊपर प्रकाश के स्तम्भ अक्सर देखे जा सकते हैं जो वायु में उतराते हुए बर्फ़ के क्रिस्टलों से बने धुन्ध की उपस्थिति प्रमाणित करते हैं।

चित्र १२९—एक लघु आभामण्डल (आँख के अत्यन्त निकट प्रेक्षित)

लघु प्रभामण्डल, कृत्रिम सूर्य, ऊपरी स्पर्शकीय चाप और वृहत् प्रभामण्डल, कुछ अवसरों पर तेज़ी से चक्कर खाती हुई तुषार-राशि में देखे गये हैं।

यह विचित्र बात है कि इन परिस्थितियों में कृत्रिम सूर्य अकसर करीब-करीब बिलकुल ऊर्ध्व प्रकाश-स्तम्भ की शक्ल में देखे गये हैं जो इन्द्रधनुष के रंगों में विभूषित थे तथा कभी-कभी १५° की ऊंचाई तक पहुँचते थे। एक विशेष अवसर पर अधोसूर्य देखा गया था जो २२° वाले पूर्णवृत्त से परिवेष्टित था; सूर्य केवल ११° की ऊँचाई पर था और इस घटना का कुछ अंश दूरस्थ पर्वतों की पृष्ठभूमि के सन्मुख देखा गया था।[1]

१५४. धरती पर प्रभामण्डल की घटना

हम ओसधनुष के रूप में, इन्द्रधनुष को क्षैतिज तल पर प्रक्षेपित हुआ देख चुके हैं; उसी प्रकार ताजा गिरे हुए वर्फ़ पर हम कभी-कभी लघु तथा वृहद्वृत्त, अति परिवलय के चाप के रूप में देख सकते हैं (चित्र १३०), विशेषतया उस वक्त जबकि ताप असामान्य

1 Gabler Zeitschr f. Meteor, 8, 127, 1954

रूप से कम (१५° फा० या उससे भी कम) हो, और पाला-तुषार गिरने पर तो और भी अधिक बहुलता के साथ ये देखे जा सकते हैं।[1] इसका प्रेक्षण करने के लिए सूर्योदय के आध घण्टे या अधिक-से-अधिक एक घण्टे बाद, या सूर्यास्त के घण्टे आध घण्टे पहले इसे देखने का प्रयत्न करना चाहिए। दीप्ति पथ-रेखा नन्हें-नन्हें पृथक् क्रिस्टलों से बनी होती है जो अत्यन्त आश्चर्यजनक रंगों से जगमगाते रहते हैं; ये रंग अधिकांश लाल तथा भूरे-स्वर्णिम होते हैं, किन्तु प्रकाम्य रूप से ये रंग हलके ही रहते हैं। जब हम चलते हैं तो प्रकाश की यह घटना भी साथ-साथ चलती है।
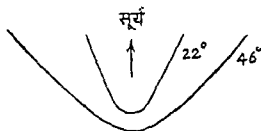
चित्र १३०—लघु और बृहद् वृत्त जो ताजे गिरे हुए तुषार से ढकी भूमि पर अति परवलय के रूप में प्रगट होते हैं।

सूर्य तथा आँख से, क्रिस्टल तक खींची गयी रेखाओं के दर्मियान का कोण सामान्य तरीकों से नापा जा सकता है और तब आप देखेंगे कि प्रकाश-किरणें क्रम से २२° या ४६° के कोण पर वर्तित होती हैं। परिवर्द्धक लेन्स द्वारा क्रिस्टल की आकृति की जाँच कीजिए और तब उस आकृति का रेखाचित्र बनाकर कोणों को नापिए।

कान्ति-चक्र (कोरोना)

१५५. तेल के धब्बों में व्यतिकरण के रंग

वर्षा की बौछार के बाद जमीन गीली हो जाती है तो सड़क के काले ऐसफाल्ट की सतह पर हमें अक्सर रंगीन धब्बे दिखलाई पड़ते हैं; ये धब्बे कभी-कभी तो २ फुट व्यास तक के होते हैं और ये रंगीन, समकेन्द्रीय वृत्तों के बने होते हैं। यद्यपि आम तौर पर ये नीले-भूरे धब्बे-से होते हैं, किन्तु विशेष दिनों पर और कुछ खास सड़कों पर ये धब्बे अत्यन्त सुन्दर भी हो सकते हैं। स्पष्टतः सड़क से गुजरने वाली मोटरकारों से गिरे हुए तेल की बूँदों से ये बनते हैं; तेल की प्रत्येक बूँद अत्यन्त पतली परत के रूप में फैल

1. Listing Ann d. Phys 122, 161, 1864. Meyer Das Wetter 42 137, 1925

किसी सुडौल आकृति के धब्बे के विभिन्न रंगों के वृत्तों के व्यास को मापिए और तब तेल की परत की अनुप्रस्थ[1] काट का रेखाचित्र पैमाने के अनुसार बनाइए। यदि आप दस मिनट बाद इस क्रिया को दुहराएँ तो आप पायेंगे कि तेल का यह नन्हां-सा स्तूप अब पिचक कर और फैल गया है। किसी एक निश्चित रंग के वृत्त का निरीक्षण इस दृष्टि
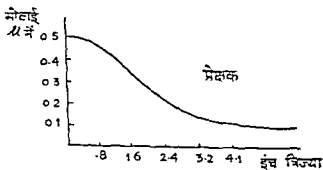
चित्र १३१—भीगे ऐसफाल्ट पर पानी की बूंद की अनुच्छेद माप (व्यतिकरण रंगों द्वारा निर्धारित)।

से कीजिए कि समय के हिसाब से इसकी आकृति कैसे बदलती है; तब आप देखेंगे कि यह वृत्त पहले तो फैलता है, फिर सिकुड़ता है। ऐसा क्यों? और अन्त में बस आप एक भूरा धब्बा देखते हैं जिसकी उत्पत्ति के कारण का आपको कभी भी पता नहीं चलता, यदि आपने इसके निर्माण की इन क्रियाओं का प्रेक्षण न किया होता। सबसे बढ़िया तरीका तो यह है कि खड़े होकर किसी एक धब्बे का अवलोकन करें और इसके हर एक परिवर्तन का नाप करें। इसके लिए कुछ अधिक धैर्य्य की आवश्यकता नहीं होगी, कदाचित् आध घंटे से अधिक समय न लगेगा। धब्बे को सायकिल वालों तथा पैदल चलने वालों से बचाइए और इस बात के लिए प्रार्थना कीजिए कि इसके जीवन-काल तक कोई मोटरकार इस पर से न गुजर जाय!

तेल के धब्बे को तिरछी दिशा से देखिए तो रंगों की स्थितियाँ बदल जाती हैं मानो तेल की परत अब पतली हो गयी हैं। क्योंकि यदि आप इसे और अधिक तिरछी दिशा से देखें तो ये रंगीन वृत्त सिकुड़े हुए प्रतीत होते हैं। इस प्रकार किसी एक स्थल के रंग, बाहरी, बारीक परतवाले वृत्त के रंग में तबदील हो जाते हैं। व्यतिकरण करने

1. Transverse

वाली दोनों किरणों के कला-अन्तर[1] की गणना करके इस बात की व्याख्या करने का प्रयास कीजिए।

तेल की परत को एक छोटा बालक उंगली से थपथपाता है तो रंग बदलने लगते हैं, किन्तु फिर तेजी के साथ ये अपनी पूर्वावस्था पुनः प्राप्त कर लेते हैं; इस बार वृत्त कुछ छोटे हो जाते हैं क्योंकि उंगली के साथ तेल का कुछ अंश अब वहाँ से हट गया है।

कभी-कभी सुडौल आकृति के दुहरे धब्बे भी दीखते हैं जो स्पष्टतः एक ही धब्बे के भाग होते हैं। इसमें रहस्य की कोई बात नहीं है, ये एक सामान्य धब्बे के भाग हैं जिस पर से मोटर कार का पहिया गुजर चुका होता है।

हमें तो उस वक्त तक पूर्ण सन्तोष नहीं प्राप्त होगा जब तक हम स्वयं रंगीन वृत्त नहीं बना लेते। तालाब के पानी पर मिट्टी के तेल या तारपीन की एक बूंद को डाल देने पर अवर्णनीय सुन्दर रंग उत्पन्न होते हैं। किन्तु इस प्रयोग के लिए यदि हम मोटर-कार में काम आने वाले तेल (**मोबिल आयल**) का उपयोग करें तो हमें एक आश्चर्य-जनक बात प्राप्त होगी। यह तेल पतली परत के रूप में फैलता नहीं है, और हमें रंग आदि कुछ भी नहीं दिखाई पड़ते। पानी की सतह की भाँति ही भीगी सड़क का भी हाल होता है। तो क्या सड़क पर बनने वाले रंगीन धब्बे मोटर के तेल के कारण न उत्पन्न होकर सम्भवतः पेट्रोल के कारण बनते हैं? लेकिन इसमें भी हमें निराश ही होना पड़ता है, क्योंकि पेट्रोल तो केवल भूरे सफ़ेद रंग का धब्बा पैदा करता है जो स्पष्ट. अत्यन्त ही पतली परत का होता है और रंगीन शानदार वृत्तों से इसका कोई सादृश्य नहीं होता। अधिक बारीकी से निरीक्षण करने पर पता चलता है कि केवल **इस्तेमाल किया हुआ, आक्सीकृत** तेल ही जो मोटर के इंजिन से नीचे टपकता रहता है, गीली सतह पर परत के रूप में फैलने की सामर्थ्य रखता है।[2] तेल का आक्सीकरण जितना अधिक परिपूर्ण होगा, उतनी ही पतली परत उससे तैय्यार होगी।

तेल के अधिकांश धब्बों में त्रिज्यीय पट्टियाँ-सी दीखती हैं। प्रत्येक रंगीन वृत्त बाद के वृत्त में मिलता है तो एक तरह की धारियाँ वहाँ बन जाती हैं, और सबसे बाहर का श्वेत-भूरा वृत्त भी इसी प्रकार धारियों के रूप में समाप्त होता है। गीली सड़क पर पेट्रोल उड़ेल कर हम देख सकते हैं कि इससे बनने वाला धब्बा किस प्रकार फैलता तथा किस प्रकार हर दिशा में इसकी शाखाएँ बन जाती हैं जो त्रिज्यीय पट्टियों और धारियों का निर्माण करती हैं। गन्दे पानी पर तैरती हुई रंगीन परत में भी यही

1. Phase-difference 2. K. B. Blodget. J. O S A, 24, 313, 1934

घटना प्रायः देखी जा सकती है। सम्भव है कि इस दशा मे जटिल आणविक बल कार्य कर रहे हो।

जहाँ कही भी पतली परते बनती है, वही व्यतिकरण के रग मौजूद होते है; उदाहरण के लिए केरासन या तारकोल की पतली सतहे जो पानी पर तैरती रहती है, एक ही रग वाली रेखा निश्चित मोटाई की दिशा इङ्गित करती है और इन रेखाओ की विकृति तथा विरूपण उस द्रव की तमाम धाराओ और भँवर आदि का पता हमे देते है। रेलगाडी के इजिनो की चिमनी की ताँबे की दागवाली सतह पर कभी-कभी मनमोहक रग देखे जा सकते है। क्या ऐसा इस कारण होता है कि ताँवा गर्म होने के बाद आक्सीकृत हो गया है? या कि इस कारण कि वायुमण्डल तथा प्रज्वलन की गैसो मे से सल्फाइड की कोई एक तह-सी चिमनी पर जम जाती है?

१५६ खिड़की के वर्फ जमे हुए काँच पर शानदार रंगों की छटा

एक वार मैने निम्नलिखित विचित्र घटना का प्रेक्षण किया था। जाडे की अत्यन्त ठण्डी रात थी (ताप १४° फा०), और रेलगाड़ी के जिस कम्पार्टमेण्ट मे मै वैठा था वहाँ मेरे सहयात्रियो की श्वास से निकलने वाली भाप पानी बनकर खिड़की पर वर्फ के रूप मे जमने लगी थी। अचानक ही मैने देखा कि रास्ते मे लगा प्रत्येक लैम्प जिसके सामने से होकर हम गुजरते थे, अद्भुत रगो का प्रदर्शन करता था; जमी हुई वर्फ की पतली तह का रग आसमानी नीला था और अन्य भागो का हरा या लाल। लगभग एकवर्ग सेण्टीमीटर के क्षेत्र तक ये रग करीव-करीव एक से ही वने रहते और ये सभी रग केवल खिड़की से गुजरने वाले प्रकाश मे दीखते थे, उससे परावर्त्तित होने वाले प्रकाश में नहीं। ये रग इतने कमनीय तथा संपृक्त थे कि तुरन्त इस बात का आभास हो सका कि यह एक अत्यन्त ही विलक्षण घटना थी! यह घटना कुछ ही मिनटों तक रही थी, तव तक वर्फ की तह कई मिलीमीटर मोटी हो गयी तथा रग विलुप्त हो गये।

अव इसके वाद मुझे पता चला है कि इस प्रकार की घटना का विवरण दिया जा चुका है[1] तथा उन चन्द मिनटों मे मेरे प्रेक्षण के लिए जितना सम्भव था उसमे कहीं अधिक विस्तार का समावेश उस विवरण मे दिया गया है। मैंने यह भी पाया कि ५° से० ग्रेड (१४° फ़ा०) से नीचे के ताप पर, घर से वाहर काँच के टुकड़े को थोडी

1. Observed by Ch. F. Brooks, M. W. R. 53, 49, 1925 and by Schlottmann Met. Zs. 10, 156. 1893

देर तक छोड़ दें ताकि इसका ताप भी उतना ही हो जाय जितना बाहर की हवा का और तब कुछ दूरी पर खड़े होकर इस काँच पर फूंक मारें तो उक्त प्रेक्षण की, हम जितनी बार चाहें उतनी बार, पुनरावृत्ति कर सकते हैं। यदि खिड़की के अत्यन्त ठण्डे काँच पर अपनी श्वास आप छोड़ें तो ऐसा जान पड़ता है कि आप की श्वास की भाप पहले एक छोटे अर्द्ध गोले की शक्ल के वर्फ के टुकड़ों के रूप में जमती है (क); फिर लगभग आधे मिनट बाद इस तह में नन्हीं दरारें-सी फट जाती हैं और वर्फ के जर्रे नन्हे-नन्हे समूहों में एकत्र हो जाते हैं (ग); यहाँ तक कि अन्त में ये लम्बी सुइयों की शक्ल धारण कर लेते हैं जिनके दर्मियान पारदर्शी वर्फ देखी जा सकती है। इनमें से केवल दशा (ख) में ही रंग प्रगट होते हैं और यही कारण है कि इनका जीवनकाल इतना थोड़ा होता है। एक और लाक्षणिक विशिष्टता यह है कि प्रेक्षित लैम्प या प्रकाश-स्रोत स्वयं रगीन जान पडता है। और जबकि आप श्वास छोड रहे हों, यह क्रमशः नीललोहित, नीला, हरा, पीला. . .आदि रंग प्रदर्शित करता है, अर्थात् न्यूटन के व्यतिकरण के सभी रंग। प्रकाश-स्रोत के गिर्द लगभग १° त्रिज्या का एक चमकीला कान्ति वृत्त प्रगट होता है जिसमें पूरक रंग प्रदर्शित होते हैं—कदाचित् इसकी त्रिज्या धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। यह सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखता है जब एक क्षण के लिए श्वास छोड़ने की क्रिया को रोक कर आप प्लेट को आँख के अत्यन्त निकट रखते हैं। दिन के समय कदाचित् हिमाच्छादित चमकीली छत को गुलाबी रंग का आप देख सकेंगे और इर्द-गिर्द का अदीप्त भू-दृश्य हरा दीखेगा। विस्तृत क्षेत्र, जैसे चमकीला आकाश, अवश्य ही अपना रंग नही बदलता क्योंकि जिस किसी ओर हम दृष्टि डालते हैं हम रगीन 'प्रकाश-स्रोत' को देखते हैं जिस पर इर्द-गिर्द के क्षेत्र का विस्तृत अनुपूरक रंग अध्यारोपित रहता है। यदि काँच की प्लेट को तिरछी करें तो रंग बदल जाते हैं मानों प्लेट की तह मोटी हो गयी हो।

प्रकाश्यतः हमें मानना होगा कि प्लेट पर उपस्थित तह वर्फ और वायु के सम्मिश्रण से बनी है[1]। प्रकाशस्रोत से आनेवाली किरणों में से कुछ वायु में से गुजरती हैं और कुछ वर्फ में से; इन दोनों किरण-समूहों में कला-अन्तर[2] मौजूद होता है। अतः कुछ विशेष तरंग-दैर्घ्य वाले प्रकाश तरंगों का शमन हो जाता है और प्रकाशस्रोत रगीन वर्ण का दीखने लगता है (चित्र १३१ क)। किन्तु सम्मिश्रण के विन्दु-स्थलों के

1. This explanation reduces the phenomenon to a case of "colours of mixed plates" as described by Wood in his Physical Optics
2. Phase-diffrence

ह्यानियों पर प्रकाश का विवर्त्तन भी होता है, अत. इस प्रकार उत्पन्न होने वाला पथान्तर[1] प्रथम क्रिया में उत्पन्न हुए कला-अन्तर की ठीक ठीक क्षतिपूर्त्ति कर देता है। अत सीधे आने वाली किरणों का जो रग विलुप्त होता है वही तिर्यक् किरणों में पुन प्रगट होता है। आकार की कोटि के लिए हमें मानना होगा कि तह की मोटाई १ μ होती है तथा कण एक दूसरे से ०.१ मिलीमीटर की औसत दूरी पर स्थित हैं।
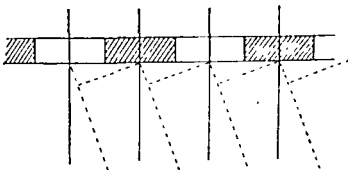
चित्र १३१ क—हलकी बर्फ की तहवाली कांच की प्लेट में से देखने पर रंग की उत्पत्ति।

अब आप समझ सकते हैं कि प्लेट को आँख से कुछ फासले पर रखने पर क्यों इसका प्रत्येक भाग एक यथार्थ, निश्चित रग प्रदर्शित करता है—किन्तु ऐसा केवल तभी होता है जब प्रकाशस्रोत से इसे एक भलीभाँति निर्धारित कोणीय दूरी पर रखे। यह भी एक रोचक बात है कि अत्यधिक चमक वाले प्रकाश-स्रोत एक हलके विषम[2] कान्ति-चक्र से परिवेष्टित दीखते हैं बशर्ते काँच की प्लेट को आप आँख के निकट रखें।

आप जबकि प्रेक्षण कर रहे होते हैं और उस पर विचार कर रहे होते हैं, उतनी देर में सम्भवतः बर्फ की तह का वाष्पीभवन (ऊर्ध्वपातन[3]) हो जाता है। अब आप जितनी बार चाहें, प्रयोग को दुहरा सकते हैं, किन्तु काँच को पहले ही पोछ कर साफ करने का प्रयत्न मत कीजिए। यह अनावश्यक कार्य होगा और नवीन सघनन की क्रिया में यह बाधक होगा।

कुछ कम ठण्डे ताप पर काँच की प्लेट पर जमनेवाली भाप सुपरिचित विवर्त्तन कान्तिचक्र प्रदर्शित कर सकती है, यद्यपि अवसर रंगों का क्रम विषम होता है, जैसा उस वक्त देखा जा सकता है जबकि संघनित जल-बूँदें बडे आकार की होती हैं (§१६२)।

1. Path-difference 2. Aonmalous 3. Sublimation

१५७. लोहमिश्रित पानी में व्यतिकरण के रंग

हीद झाड़ीवाले मैदानों में जहाँ की मिट्टी लोहमिश्रित रहती है, खाइयों के भूरे रंग के पानी की सतह कभी-कभी एक पतली उद्दीप्त परत से ढकी होती है–इसके फीके रंग मोती के सीप के रंग सदृश होते हैं। पानी में मौजूद लोह-आक्साइड के कलिल[1] विलयन के कारण ये उत्पन्न होते हैं जिसमें लोह-ऑक्साइड के कण छोटी-छोटी समान्तर प्लेटों के रूप में अपने को सजा लेते हैं जिनके बीच लगभग ½ μ की दूरी होती है और इस तरह की परतदार झिल्ली बहुत कुछ 'लिपमैन की रंगीन फोटोग्राफ़ी' की पद्धति के अनुसार काम करती है।

१५८. प्रकाश का विवर्त्तन

रात का समय है। कुछ फासले पर अन्धकार को चीरती हुई घरघराहट के साथ एक मोटरकार हमारी ओर आ रही है और इसकी 'हेडलाइट' के लैम्प चौड़ी सड़क पर चकाचौंध उत्पन्न करनेवाला तेज प्रकाश फेंकते हैं। एक सायकिल सवार इस तेज रोशनी के सामने से गुजरता है ताकि एक क्षण के लिए हम उसकी छाया में आ जाते हैं। और तभी अचानक सायकिल सवार की काली सिल्युएत[2] एक अद्भुत मनोहर प्रकाश से चारों ओर से मण्डित दीखती है; यह प्रकाश इस आकृति के हाशियो से विकिरित होता हुआ जान पड़ता है। वृक्षों तथा पैदल चलनेवाले व्यक्तियों के गिर्द भी यही प्रभाव देखा जा सकता है। यह वस्तुतः 'विवर्त्तन प्रभाव' है। 'विवर्त्तन' नाम उस प्रभाव को दिया गया जिसके अनुसार किसी अपारदर्शी पर्दे के हाशिये पर प्रकाश किरण मुड़ती है और इस तरह ज्यामितीय प्रकाश-सिद्धान्त से जहाँ छाया होनी चाहिए उस प्रदेश में तरंगाग्र का कुछ भाग प्रवेश कर जाता है। यदि विचलन कोण कम ही हो तो इस तरह मुड़ने वाला प्रकाश पर्याप्त तीव्र होता है, किन्तु विचलन कोण का मान बढ़ने पर विवर्त्तित-प्रकाश तेज़ी के साथ घटता है; इसी कारण जब सायकिल सवार काफ़ी फासले पर होता है और मोटरकार उससे आगे बहुत अधिक दूरी पर होती है तो प्रकाश का प्रभाव इतना अधिक सुन्दर होता है।

इसी प्रकार की घटना अधिक बड़े पैमाने पर पर्वतीय देशों मे उस वक्त देखी जा सकती है जब वायु स्वच्छ हो और आप किसी पहाड़ी की साया में खड़े होकर उसके वृक्ष-आच्छादित ऊपरी भाग को प्रात.कालीन आकाश की पृष्ठभूमि के सम्मुख एक काली

1. Colloidal 2. Silhouette

रेखाकृति की शक्ल में देखते हैं। सूर्य जब उगने को होता है तो वे वृक्ष जो आकाश के उस भाग के सामने पड़ते हैं जहाँ प्रकाश अधिकतम होता है, एक चमकीले रजत-श्वेत प्रदीप्ति से परिवेष्टित हो जाते हैं।[1]

कहा जाता है कि हमारे देश में भटकटैया[2] झाड़ियाँ सूर्य की पृष्ठभूमि पर देखी जाने पर इसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

१५९. नन्ही खरोंचों द्वारा प्रकाश का विवर्त्तन

रेलगाडी की खिडकी में से यदि आप सूर्य को देखें तो आपको काँच पर हजारों बारीक खरोंचे दिखलाई देगी जो सूर्य के गिर्द समकेन्द्रीय वृत्तों मे अवस्थित होती हैं। काँच के जिस किसी भी भाग से हम देखे, इन खरोंचों की आकृति सदैव एक-सी ही रहती है जिससे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि काँच की तमाम सतह पर हर दिशा मे खरोंचें
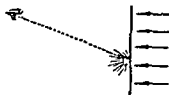
चित्र १३२—खिड़की के कांच पर बनी हुई खरोंच द्वारा प्रकाश का विवर्तन।

पडी हुई है, यद्यपि हम केवल उन्ही को देख पाते है जो प्रकाशकिरणो के आपतन धरातल के समकोण पडते हैं (देखिए § २७)। क्योंकि प्रत्येक खरोंच, प्रकाश का विस्तरण अपनी समकोण दिशा मे करती है, अत. केवल इस धरातल मे स्थित प्रेक्षक को ही यह दृष्टिगोचर हो पाती है।

जहाँ तक इतनी बारीक खरोंचो का सम्बन्ध है, हम परावर्त्तन या वर्त्तन का उल्लेख नही कर सकते; और अच्छा यही होगा कि इस दशा मे प्रकाश-किरणों के विचलन को हम विवर्तन मानें। यदि आप इनमें से किसी एक खरोंच का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करें तो आप देखेंगे कि कुछ विशिष्ट दिशाओं में यह अत्यधिक शानदार रगों का हर सम्भव क्रमो मे प्रदर्शन करता है। यदि आप एक 'निकल' का उपयोग करें तो आप पायेंगे

1. This phenomenon, superficially observed by Folie, was at that time a matter of much discussion. It can be found in Rep. Brit Ass. 42, 45, 1872, later in Nat. 47, 364, 2. Furze

कि आपतन तथा प्रेक्षण की दिशाएँ तिरछी रखने पर प्रेक्षित प्रकाश अत्यधिक मात्रा में ध्रुवित होता है। ये सभी घटनाएँ अत्यन्त जटिल होती हैं और सैद्धान्तिक भौतिकी *द्वारा केवल आंशिक रूप से ही इनका समाधान हो पाता है।*[1]

१६०. कान्तिचक्र (कोरोना)

श्वेतरंग के हलके रुई के गाले-जैसे वादल चन्द्रमा के सामने से आहिस्ते-आहिस्ते गुजरते हैं। हमारे नेत्र आकाश के इस प्रकाशित भाग की ओर अनायास ही आकृष्ट हो जाते हैं जो रात्रि के भू-दृश्य का केन्द्र-सा जान पड़ता है। हर बार, जब कोई छोटा वादल का टुकड़ा सामने आता है, तो हलकी रोशनी से चमकने वाले चन्द्रमा के गिर्द रंग-विरंगे प्रकाश के वृत्त हमें दिखलाई पड़ते हैं—*इनके व्यास चन्द्रमा के व्यास से कुछ ही गुने बड़े होते हैं।*

आइए, इन रङ्गों के क्रम की हम ध्यानपूर्वक जाँच करें। चन्द्रमा के निकटतम नीले रङ्ग का हाशिया होता है जो वाहर की ओर पीत-श्वेत वर्ण धारण कर लेता है और फिर यह रङ्ग भी वाहरी हाशिये पर भूरे रंग में परिणत हो जाता है। यह आभामण्डल[2] (आरियोल) ही कान्तिचक्र का सरलतम रूप और यही रूप सर्वाधिक अवसरों पर दृष्टि-गोचर होता है। यह उस वक्त वास्तव में चित्ताकर्षक दीखता है जब यह अन्य वृहत्तर और मनोहर रंगों के वृत्तों से परिवेष्टित होता है। निम्नलिखित सारणी से देखा जा सकता है कि ये क्रम करीव-करीब ठीक न्यूटन के व्यक्तिकरण वृत्तों के रंगक्रम सरीखे ही हैं, अन्तर केवल इतना है कि ऋतुवैज्ञानिकों ने विभिन्न 'कोटियों' की सीमाओं को भौतिक शास्त्रियों से तनिक भिन्न प्रणाली पर निर्धारित किया हैं; वह इस प्रकार कि प्रत्येक कोटि का रंगसमुदाय लाल रंग के वृत्त पर खत्म हो। अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर *आभामण्डल के बाहर तीन रंग-समुदाय देखे गये हैं (चार रंगीन वृत्तों का कान्तिचक्र)।*

I प्रभामण्डल या (नीलापन लिये हुए)—श्वेत–(पीलापन लिये हुए) —भूरामिश्रित लाल।

II नीला–हरा–(पीला)–लाल।

III नीला–हरा–लाल।

IV नीला–हरा–लाल।

करीव-करीव निश्चित रूप से यह प्रतीत होता है कि रंगों के क्रम में कभी-कभी परिवर्त्तन होता है। उपर्युक्त सारणी में कोष्ठक में दिये गये रंग कभी तो उपस्थित हो

1. Rayleigh, Phil. Mag. 14, 350, 1907, Papers v, 410.　2. Aureole

(ङ) कुछ गजों के फासले पर रखे हुए वाटिका ग्लोव में इस तरह प्रेक्षण कीजिए कि सूर्य का प्रतिबिम्ब आपके सिर के कारण विलुप्त हो जाय।

आभामण्डल लगभग हर किस्म के वादलों में हलका-हलका दृष्टिगोचर होता है। उच्च-पुञ्ज या स्तार-पुञ्ज मेघ में यह विशेष चटकीला होता है और तब प्रायः द्वितीय रंगीन वृत्त का भी हलका आभास मिलता है। सर्वाधिक सुन्दर कान्तिचक्र जिनके रंग मनमोहक रूप से विशुद्ध होते हैं, उच्चपुञ्ज बादलों में मिलते हैं; ये अलका-पुञ्ज मेघ में भी मिलते हैं। कभी-कभी छोटे आकार के, मन्द प्रकाशवाले कान्तिचक्र शुक्र, वृहस्पति तथा अधिक चमकीले सितारों के गिर्द भी दिखलाई देते हैं।

१६१. कान्तिचक्र की घटना का समाधान[1]

वादलों में दीखने वाले कान्तिचक्र का निर्माण बादल में मौजूद पानी की बूँदों द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण होता है। बूँदें जितनी छोटी होंगी, कान्तिचक्र उतने ही बड़े होंगे। उन बादलों में जिनमें बूँदें सब की सब एक ही आकार की हों, कान्तिचक्र पूर्णरूप से विकसित होते हैं और उनके रंग विशुद्ध होते हैं; किन्तु उन बादलों में जिनमें हर आकार की बूँदें परस्पर मिली-जुली रहती हैं, विभिन्न आकारों के कान्तिचक्र एक साथ ही बनते हैं और वे एक-दूसरे के ऊपर पड़ते हैं। यही कारण है कि शुद्ध रूप से विकसित कान्तिचक्र की घटना केवल विशिष्ट जाति के बादलों में ही पायी जाती है जहाँ जलवाष्प के संघनन के लिए परिस्थितियाँ पर्याप्त रूप से समान होती हैं। इसी कारण रंगों के क्रम के सूक्ष्म अन्तर विभिन्न आकार की बूँदों की संख्या, वादलों की मोटाई आदि पर निर्भर करते हैं।

सैद्धान्तिक विवेचन की सामान्य तर्क प्रणाली इस प्रकार है—

(क) एक ही आकार की बूँदों वाले, सामान्य रूप से घने बादल द्वारा विवर्त्तन यथार्थतः वैसा ही होता है जैसा अकेली एक बूँद द्वारा होनेवाला विवर्त्तन; बादल की दशा में विवर्तित प्रकाश की केवल तीव्रता अधिक होती है।

(ख) बूँद द्वारा उत्पन्न विवर्त्तन ठीक वैसा ही होता है जैसा पर्दे में बने एक नन्हें छिद्र द्वारा होनेवाला विवर्त्तन (बेबिनेट का सिद्धान्त)।

(ग) छिद्र द्वारा उत्पन्न होनेवाले विवर्त्तन की गणना करने के लिए छिद्र को हम कम्पनों का उद्गमस्थान मानते हैं (हाइजिन्स का सिद्धान्त), और तब

1. G. C. Simpson. Quart. Journ. 38, 291, 1912; Ch. F. Brooks, M. W. R, 53, 49, 1925; Kohler, Met. Zs, 40, 257, 1923

हम ज्ञात करते हैं कि छिद्र के सभी भागों से तरगे किस प्रकार नेत्र मे प्रवेश करती हैं, तथा परस्पर व्यतिकरण करती हैं।

कान्तिचक्र तथा वृत्ताकार छिद्र के विवर्त्तन-प्रतिविम्ब के वीच के सादृश्य का प्रेक्षण करना एक बिल्कुल आसान वात है। खिड़की के सामने जिस पर धूप पड़ रही हो, एक कार्डवोर्ड का पर्दा लटकाइए जिसके वीच मे एक छिद्र वना हो; किन्तु छिद्र को चाँदी के वर्क से ढका होना चाहिए जो कार्डवोर्ड पर चिपकाया गया हो। चाँदी के वर्क में सुई से नन्हा सूराख कीजिए और तव लगभग १ गज की दूरी से सूर्य की दिशा में इस चमकीले प्रकाशविन्दु को देखिए जवकि अपनी आँखो के सामने उसी प्रकार का एक और चाँदी का वर्क रखा हो, और इसमे भी सुई की नोक से छिद्र वना हो। ये सूराख वारीक से वारीक सुई द्वारा वने होने चाहिए और सूराख करते समय उँगलियों के दर्मियान सुई को इधर-उधर फिराते रहना चाहिए; स्वय ये सूराख व्यास मे ०.५ मि० मीटर से अधिक नही होने चाहिए। यह नन्हा सूराख जिसका अवलोकन आप कर रहे हैं, फैलकर एक मडलक-जैसा प्रतीत होगा जो एक छोटे पैमाने का आभामण्डल (आरिएल) है; और इस मंडलक के गिर्द आप वृत्तों के समुदाय देखेंगे जो कान्तिचक्र के भिन्न क्रमागत कोटियों के तुल्य है। आँख के सामने का छिद्र जितना ही अधिक वारीक होगा, विवर्त्तन प्रतिरूप उतना ही अधिक वड़ा होगा।

क्रमागत महत्तम तथा निम्नतम प्रदीप्तियों की हर माने में तुलना एक आयताकार झिरी पर होनेवाले विवर्त्तन से की जा सकती है, केवल इस दशा में इनके दर्मियान की दूरियाँ भिन्न होती हैं। आभामण्डल के सवसे वाहरी हाशिये के लाल रग तथा प्रथम कोटि के लाल रग, क्रमनः कोणीय दूरियो $\delta = \frac{0.00070}{2}$ तथा $\frac{0.00127}{2}$ पर पड़ते हैं, (2=सूराख का व्यास मिलीमीटर मे, तथा δ=कोणीय दूरी जो केन्द्र से नापी गयी है)।

अतः कान्तिचक्र से हम गणना कर सकते हैं कि वादल की वूंदें कितनी वड़ी है। यदि चन्द्रमा के गिर्द आभामण्डल की त्रिज्या स्वय चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है अर्थात् $\frac{४}{१०८}$ रेडियन, तव वादल ऐसी वूंदो के वने होंगे जिनके व्याम $\frac{१०८}{४} \times ०.०००७० = ०.०१९$ मिलीमीटर हैं। यह गणना पूर्णतया मही नहीं है क्योंकि सूर्य या चन्द्रमा केवल विन्दुमात्र नहीं हैं, वल्कि उनकी त्रिज्या १६' है। अतः सवमे वाहर के हाशिये का मान स्पष्टतः विशेष अधिक प्राप्त होता है और इसी कारण प्रायः

प्रेक्षित कोण θ के मान में से दर १६' को हम घटाने के बाद ही इसे उपर्युक्त सूत्र में प्रयुक्त करते हैं; किन्तु यह अत्यन्त संदेहात्मक है कि ऐसा करना उचित भी है या नहीं। परिणाम-स्वरूप आप पायेंगे कि बादल की बूँदों का आकार ०.१ से लेकर ०.२ मिलीमीटर तक प्राप्त होता है। यह सम्भाव्य है कि समान मोटाई की बर्फ़-सूचियों वाले बादलों से भी कान्तिचक्र का निर्माण हो सके—ये बर्फ़-सूचियाँ प्रकाश का विवर्तन उसी भाँति करती हैं जिस भाँति एक झिरी; क्योंकि पूर्ण विकास पाये हुए तथा सर्वोत्तम रंगों वाले कान्तिचक्र यदा-कदा पतले, ऊँचे अलका मेघों में देखे जाते हैं और ये बादल बर्फ़-सूचियों से बने होते हैं।

फिर तो बर्फ़-सूचियों की मोटाई की गणना उतनी ही आसानी से की जा सकती है जितनी आसानी से पानी की बूँदों के आकार की। ऊपर बताये गये कान्तिचक्र में जिसके भूरे हाशिये की त्रिज्या चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है, बर्फ़-सूचियों की

मोटाई $\frac{०.०६२}{४}$ = ०.०१५ मिलीमीटर प्राप्त होती है।

कान्तिचक्र के प्रेक्षण के समय यह कह सकना अत्यन्त कठिन होता है कि इसका निर्माण पानी की बूँदों से हुआ है या बर्फ़-सूचियों से। बर्फ़-सूचियों से बनने वाले कान्तिचक्र में क्रमागत अदीप्तियों[1] के दर्मियान की दूरियाँ ठीक एक दूसरे के बराबर होती हैं और यह दूरी केन्द्र और प्रथम अदीप्ति के बीच की दूरी के बराबर होती है जबकि पानी की बूँद वाले कान्तिचक्र में आभामण्डल की त्रिज्या क्रमागत कोटियों की चौड़ाई से २० प्रतिशत अधिक बड़ी होती है। फिर बर्फ़ की सूचियों के लिए क्रमागत कोटियों की प्रकाशतीव्रता पानी की बूँदों वाले कान्तिचक्र की तुलना में अधिक धीरे-धीरे घटती है। किन्तु इन अन्तरों का प्रेक्षण कर सकना सरल नहीं है। सर्वोत्तम नापजोख कभी तो कान्तिचक्रों के निर्माण की पहली विधि को इङ्गित करती है तो कभी दूसरी विधि को, किन्तु दोनों ही दशाओं में, बादलों की किस्म के विचार से जैसी आशा की जानी चाहिए उसीके अनुकूल वे पाये जाते हैं। वायुयानों द्वारा सीधे ही प्राप्त किये गये प्रेक्षणों से ज्ञात होता है कि इनमें ४५ प्रतिशत दशाओं में कान्तिचक्र का निर्माण पानी की नन्हीं बूँदों से होता है और ५५ प्रतिशत बर्फ़-सूचियों से।[1]

भौतिकज्ञ के लिए, एक सुन्दर कान्तिचक्र की उपस्थिति बादलों में केवल पानी की बूँदों अथवा बर्फ़-सूचियों की अत्यधिक समानता की ही द्योतक नहीं है। इसे देखकर

1. Dark Minima 2. Visser. Proc. Acad. Amsterdam 52, 1943

वह इस निष्कर्ष पर भी पहुँचता है कि संभवतः बादल का निर्माण अभी हाल में ही हुआ है—मानो यह एक 'अल्पवयस्क बादल' है। क्योंकि बूँदों के समूह की निरन्तर प्रवृत्ति असमान आकार धारण कर लेने की होती है; जो बूँदें तनिक छोटे आकार की होती है वे सबसे अधिक तेजी के साथ वाष्प बन जाती है जबकि बड़े आकार की बूँदे नन्ही बूँदों को मानों हड़प करके अपना आकार अत्यन्त शीघ्रता के साथ बढ़ा लेती हैं।

जब अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज (रुई के गाले सदृश) बादल चन्द्रमा के सामने से गुजरते हैं तो कभी-कभी बहुत अच्छी तरह हम यह देख सकते हैं कि हर बार जब कोई नया बादल चन्द्रमा की ओर सरकता है तो किस प्रकार एक असममित कान्तिचक्र हाशिये की ओर फैला हुआ बनता है (चित्र १३३)। स्पष्ट है कि इन बादलों में बाहरी हिस्से की बूँदे भीतरी हिस्सो की बूँदों की अपेक्षा छोटे आकार की है। वास्तव में यह बिलकुल साफ़ जाहिर है कि इन बाहरी हिस्सो की बूँदों का वाष्पीकरण आरम्भ हो चुका होता है।

चित्र १३३—एक छोटे आकार के बादल के हाशिये के निकट असममित कान्तिचक्र (कोरोना)।

यद्यपि ये सभी कान्तिचक्र जिनका अभीतक वर्णन किया गया है, बादलों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु ऐसा भी होता है कि छोटे आकार के, किन्तु मनमोहक रंगों से विभूषित कान्तिचक्र पूर्णतः निरभ्र नीले आकाश में देखे गये है। शिकागो के निकट यर्केज वेध-शाला पर एक ग्रीष्मऋतु में मैंने सूर्य के गिर्द कान्तिचक्र का बार-बार अवलोकन किया। चन्द्रमा के गिर्द भी ये देखे गये हैं—किन्तु सावधान रहिए कि आँख में होनेवाली विवर्त्तन-घटना से आप धोखा न खा जायँ (§ १६३)! ऐसा प्रतीत होता है कि वायुमण्डल की शान्त अवस्थाओं, और विशेषतया उत्क्रमण[1] के दौरान में, वायु में मौजूद धूलिकण अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को तिरते रहते हैं; अतः जो कण वायु मे उतराते रह जाते है उनके आकार में कुछ अधिक अन्तर नहीं होता और वे कान्तिचक्र का निर्माण कराते हैं।[2]

1. Inversion
2. Penndorf and Strank Zeitschr angew Meteor. *60, 233, 1943*

१६२. खिड़की के कांच पर कान्तिचक्र

जाड़े की ऋतु में यदि हम भलीभांति प्रकाशित जलपानगृह के बगल से जाते हुए गुजरें तो हम प्राय. देख सकते हैं कि लैम्प रंगीन वृत्तों से परिवेष्टित होते हैं जो खिड़की पर मौजूद नमी के कारण उत्पन्न होते हैं। खिड़की के काँच के कुछ भागों पर ये वृत्त, अन्य भागों की अपेक्षा बड़े आकार के दीखते हैं। प्राय. हम केवल 'आभामण्डल' देख पाते हैं,किन्तु कभी-कभी रंगीन वृत्त आश्चर्यजनक रूप से सुन्दर दीखते हैं; ऐसा लगता है कि कुछ खास किस्म के काँच अन्य काँच की अपेक्षा सदैव ही अधिक अच्छे कान्तिचक्र प्रदर्शित करते हैं। इस घटना की व्याख्या इस प्रकार है—खिड़की के काँच पर मौजूद पानी की नन्हीं बूँदों द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण ये कान्तिचक्र बनते हैं, और इन बूंदो के आकार में जितनी अधिक समानता होगी, कान्तिचक्र उतने ही अधिक मनोहर बनेंगे। यह असम्भाव्य नहीं कि कुछ खास किस्म के काँच पर बूँदें अन्य किस्म के काँच की अपेक्षा अधिक समरूप से घनीभूत होती हैं।

ये कान्तिचक्र बादलों के कान्तिचक्र के साथ प्रबल सादृश्य रखते हैं, किन्तु इनके निर्माण की विधि भी तो एक-सी ही है। एक दशा में विवर्त्तन करनेवाली बूँदें काँच पर स्थित होती हैं और दूसरी दशा में वे वायु में ऊँचाई पर बादलों के जर्रो के रूप में उतराती रहती हैं। फिर भी खिड़की के काँच पर बने कान्तिचक्र तथा हवा में बनने वाले कान्तिचक्र में अन्तर है; वह यह कि प्रथम दशा में प्रकाश-स्रोत एक प्रदीप्त आभामण्डल की जगह अन्धकारमय क्षेत्र से परिवेष्टित होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी उत्पत्ति बूँदों की सममित सजावट के कारण होती है जो एक दूसरे से समान दूरी पर बनती है, जबकि बादल में बूँदों का वितरण अनियमित होता है।[1] अत: खिड़की के काँच पर कान्तिचक्र के निर्माण की क्रिया अपेक्षाकृत अधिक जटिल है। भीतर वाले एक या दो वृत्त पृथक्-पृथक् नन्ही बूंदों द्वारा होनेवाले व्यतिकरण से उत्पन्न होते हैं, जो प्रकाश के अनुकूल[2] स्रोत सरीखे काम करते हैं और ये एक दूसरे से लगभग बराबर दूरी पर स्थित होते है; किन्तु बाहरी वृत्तो का निर्माण प्रत्येक अलग-अलग बूंदों द्वारा होता है और इनकी त्रिज्या इन बूंदो के करीब-करीब समान आकार द्वारा निर्धारित होती है।

1. Donle, Ann. d. Phys 34, 814, 1888. K. Exner, Sitzungsber, Akad. Wien 76, 522, 1877; 98, 1130, 1889
Prins. Hemel en Dampkring 38 244, 1940--Reesinckand devries Physica J. 603, 1940 2. Coherent

यदि हम खिड़की में से तिरछी दिशा की ओर देखें, तो हम देख सकते हैं कि कान्तिचक्र की शक्ल पहले दीर्घवृत्तीय हो जाती है, फिर परिवलय आकृति की, यहाँ तक कि अन्त में वह अति परिवलय की शक्ल की भी हो जाती है। यदि परिस्थितियाँ वैसी ही होतीं जैसी ओस-धनुष की दशा में, तब इससे हम यह समझते कि 'खिड़की के काँच पर चित्रित होनेवाले कान्तिचक्र दीर्घवृत्तीय आदि होते हैं, किन्तु मेरी आँखों से देखे जाने पर वे आँख और लैम्प को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के गिर्द पूर्णतया शंकु आकार की सतह पर स्थित होते हैं और वे वृत्त के रूप में प्रक्षेपित होते हैं। किन्तु यहाँ परिस्थितियाँ भिन्न हैं। प्रक्षेपित होने की दशा मे कान्तिचक्र वास्तव में दीर्घवृत्तीय हो गये है, वे क्षैतिज दिशा मे और भी अधिक फैल गये हैं, स्पष्टतः इसका कारण यह है कि उस दिशा में देखे जाने पर प्रत्येक बूंद सामने की ओर पिचक जाती है, अर्थात् दीर्घवृत्तीय हो जाती है। साथ ही साथ इससे यह भी सिद्ध होता है कि विवर्त्तन करने वाले जर्रे गोलीय नहीं हैं बल्कि ये अर्द्धगोलीय अथवा गोलीय-खण्ड है, क्योंकि उस दिशा में जिधर की ओर बूंदों का प्रक्षेपण सबसे अधिक छोटा पड़ता है, कान्तिचक्र सबसे अधिक चौड़े होंगे।

धुंधले काँच की खिड़कियों पर सूर्य के प्रतिबिम्ब के गिर्द भी कान्तिचक्र देखे जा सकते हैं; ठीक बात तो यह है कि यह घटना आकाश में नहीं देखी जा सकती; किन्तु वास्तविक कान्तिचक्र से यह केवल थोड़ी ही भिन्न है।

काँच के एक छोटे से टुकड़े पर लाइकोपोडियम चूर्ण की एक बारीक तह छिड़किए (यह एक चूर्ण है जिसका उपयोग औषधिविक्रेता दवा की गोलियों पर छिड़कने के लिए करते हैं।)। कम-से-कम १० गज की दूरी पर रखे विद्युत् लैम्प को इस काँच में से देखिए। आप इसे शानदार कान्तिचक्र से परिवेष्टित देखेंगे। अकेला यही चूर्ण इस घटना को उत्पन्न कर सकता है क्योंकि लाइकोपोडियम के जर्रे सबके सब करीब-करीब एक ही आकार के होने के कारण समान रूप से आचरण करते हैं जबकि अनियमित आकार के पदार्थ से उत्पन्न होनेवाले छोटे, बड़े, कान्तिचक्र एक दूसरे से मिलकर अस्पष्ट बन जाते हैं। यदि काँच को आप तिरछे रखें तो कान्तिचक्र के प्रक्षेपण में कोई परिवर्त्तन नही होता और इस लिहाज से खिड़की के धुंधले काँच से बननेवाले कान्तिचक्र से ये भिन्न होते हैं। प्रकाश-स्रोत के गिर्द का क्षेत्र, इस दशा में, प्रदीप्त होता है, अन्धकारमय नहीं; लाइकोपोडियम चूर्ण के जर्रों के दर्मियान की अनियमित दूरियों से ऐसी ही आशा भी की जाती है।

यदि खिड़की के काँच पर एक या दो फुट की दूरी से आप अपनी श्वास छोड़ें और तब इस तरह बननेवाले कान्तिचक्र की परीक्षा करें और उन्हें नापें तो आप देखेंगे कि

घनीभूत आर्द्रता ज्यों-ज्यों वाष्प बनती जाती है त्यों-त्यों कान्तिचक्रों का आकार बढ़ता नहीं है; इससे यह प्रदर्शित होता है कि बूँदें कम उत्तल हो जाती हैं किन्तु उनकी परिधि में कमी नहीं होती।

खिड़की के काँच पर प्रायः ऐसे कान्तिचक्र देखे जाते हैं जिनमें रंगों का क्रम नितान्त असामान्य होता है। प्रकाश-स्रोत की ओर से आरम्भ करें, तो क्रम इस प्रकार मिलते हैं, मन्द दीप्ति–पीतहरा–लाल–पीला–हरा–गाढ़ा नीललोहित–बादामी–श्वेत। ऐसा उस वक्त होता है जब बूँदें कुछ थोड़ी बड़ी हो रहती हैं; इस दशा में ये अपारदर्शी मंडलक सरीखा आचरण नहीं करतीं, बल्कि उनमें से गुजरने वाली किरणें भी व्यतिकरण नमूने के निर्माण में भाग लेती हैं। अवश्य, इस प्रकार के कान्तिचक्र परावर्तित प्रकाश में नहीं दिखाई देते।

न्यून ताप पर ऐसी काँच की खिड़कियों पर जिसपर पाला जम गया होता है, कभी-कभी हम लगभग ८° त्रिज्या का कान्तिचक्र देखते हैं · · जो सम्भवत. एक प्रभामण्डल है ! क्योंकि इसका भीतरी हाशिया लाल रंग का होता है और बाहरी नीले रंग का। प्रगटत. वर्फ के क्रिस्टल नन्हें प्रिज्म सरीखे काम करते हैं जैसा § १२५ में, किन्तु इस दशा में वर्तनकोर का कोण छोटा होता है।

जाड़े के दिनों में स्वयं अपनी श्वास से हवा में बनने वाले कान्तिचक्र का अवलोकन करिए; इस बादामी हाशिये की त्रिज्या ७° से लेकर ९° तक होती है। सूर्य-रश्मियों की पतली शलाका में आभामण्डल (आरिएल) के गिर्द उसे परिवेष्टित करनेवाले प्रथम रंगीन वृत्त को भी आप देखने में समर्थ हो सकते हैं।

प्याले की गर्म चाय के ऊपर भी आश्चर्यजनक कान्तिचक्र देखे जा सकते है। चाय का ताप ४०°–६५° सेण्टीग्रेड अवश्य होना चाहिए; सूर्य कम ही ऊँचाई पर रहना चाहिए, ताकि द्रव के ऊपर के नन्हें वाष्पबादल सूर्यप्रकाश की आपाती दिशा से तनिक तिरछी ओर से देखे जा सकें। कुछ फासले से वाष्प की प्रत्यक फुत्कार विलक्षण रंग प्रदर्शित करती है, विशेषतया नीललोहित या हरा रग। कभी-कभी यह अधिक सुविधाजनक होता है कि आँख वाष्प के निकट रखी जाय ताकि रगों का सभ्रम न उत्पन्न होने पाये।

लाइकोपोडियम चूर्ण से बने कान्तिचक्र की त्रिज्या नापिए और तब इसके जर्रों *की लम्बाई-चौड़ाई हिसाब लगाकर मालूम करिए और फिर सूक्ष्मदर्शी की सहायता से* अपने परिणाम की जाँच कीजिए।

१६३ प्रकाश का कान्तिचक्र जो आँख में ही उत्पन्न होता है[1]

रात को आर्क-लैम्प तथा अन्य चमकीले प्रकाश-स्रोतों के गिर्द मैं हल्के प्रकाश का वलय देख सकता हूँ जो अन्धेरी, काली पृष्ठभूमि पर प्रबल विवर्तन प्रदर्शित करता है, और यदि आसमान साफ हुआ तो चन्द्रमा के गिर्द भी यह वृत्त दीखता है तथा चकाचौंध के प्रकाश वाले सूर्य के गिर्द भी, जबकि पेड़ों के झुरमुट में से यह झाँकता है। इस प्रकाश-वलय का व्यास लगभग ६° होता है। भीतर की ओर यह नीले रंग का और बाहर की ओर लाल रंग का होता है अतः इसकी उत्पत्ति का कारण विवर्तन होगा, न कि वर्तन। बादलों से बनने वाले कान्तिचक्र के साथ इसका प्रबल सादृश्य जान पड़ता है, किन्तु इनके बीच निश्चय ही अन्तर है। यदि मैं ऐसी जगह खड़ा होता हूँ जहाँ से चन्द्रमा मकान के कोने के पीछे छिप सा जाता है, तो 'बादल वाला कान्तिचक्र' अब भी दिखलाई देता रहता है, जबकि 'आँख में बनने वाला कान्तिचक्र' प्रकाश-स्रोत की ओट में लेते ही, पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि इस कान्तिचक्र का स्वरूप आँख में ही निर्माण होता है (एन्टोप्टिक)।[2]

क्या ये आँख में मौजूद नन्हीं कणिकाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं जो प्रकाश का विवर्तन उसी प्रकार करते हैं जिस प्रकार लाइकोपोडियम चूर्ण या बादलों में मौजूद पानी की बूँदें करती हैं? कुछ प्रेक्षकों के लिए तो दरअसल बात ऐसी ही है।

किन्तु अनेक प्रेक्षकों को अपेक्षाकृत छोटे कान्तिचक्र दिखलाई पड़ते हैं जिनके प्रथम दीप्त वृत्त की त्रिज्या केवल १.५° होती है। ये कॉर्निया के कोषों के, तथा लेन्स को आच्छादित करनेवाली झिल्ली के नाभिकणों द्वारा होनेवाले विवर्तन द्वारा उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक पृथक नाभिकण से उत्पन्न होनेवाला विवर्तन विशेष महत्त्व नहीं रखता, बल्कि असल महत्त्व तो इन तमाम नाभिकणों के परस्पर सहयोग का है, ये नाभिकण एक दूसरे से करीब-करीब समान दूरी (लगभग ०.०३ मिलीमीटर) पर स्थित होते हैं। अन्य प्रेक्षक थोड़े कुछ बड़े आकार के कान्तिचक्र का विवरण देते हैं जो अधिक प्रबल तथा स्पष्ट हो जाते हैं बशर्ते (सावधानी के साथ) आँख को आस्मिक[3] अम्ल की वाष्प से स्पर्श कराएँ। इन परिस्थितियों में कॉर्निया के कोष नन्हीं-नन्हीं ढेरियों के रूप में उभर आते हैं जो आकार में पर्याप्त मात्रा में एक समान होते हैं ताकि विवर्तन द्वारा वे कान्तिचक्र का निर्माण कर सकें। इस तरह के एक कान्तिचक्र के लिए एक प्रेक्षक

1. A Gullstrand in Helmholtz, Physiologische Optik, 3rd edi
2. Entoptic 3. Osmic acid

घनीभूत आर्द्रता ज्यों-ज्यों वाष्प बनती जाती है त्यों-त्यों कान्तिचक्रों का आकार बढ़ता नहीं है; इससे यह प्रदर्शित होता है कि बूंदें कम उत्तल हो जाती हैं किन्तु उनकी परिधि में कमी नहीं होती।

खिड़की के कांच पर प्रायः ऐसे कान्तिचक्र देखे जाते हैं जिनमें रंगों का क्रम नितान्त असामान्य होता है। प्रकाश-स्रोत की ओर से आरम्भ करें, तो क्रम इस प्रकार मिलते हैं, मन्द दीप्ति—पीतहरा—लाल—पीला—हरा—गाढ़ा नीललोहित—बादामी—श्वेत। ऐसा उस वक्त होता है जब बूंदें कुछ थोड़ी बड़ी ही रहती हैं; इस दशा में वे अपारदर्शी मंडलक सरीखा आचरण नहीं करतीं, बल्कि उनमें से गुजरने वाली किरणें भी व्यतिकरण नमूने के निर्माण में भाग लेती हैं। अवश्य, इस प्रकार के कान्तिचक्र परावर्तित प्रकाश में नहीं दिखाई देते।

न्यून ताप पर ऐसी कांच की खिड़कियों पर जिसपर पाला जम गया होता है, कभी-कभी हम लगभग ८° त्रिज्या का कान्तिचक्र देखते हैं···जो सम्भवतः एक प्रभामण्डल है ! क्योंकि इसका भीतरी हाशिया लाल रंग का होता है और बाहरी नीले रंग का। प्रगटतः बर्फ के क्रिस्टल नन्हें प्रिज्म सरीखे काम करते हैं जैसा § १३५ में, किन्तु इस दशा में वर्त्तनकोर का कोण छोटा होता है।

जाड़े के दिनों में स्वयं अपनी श्वास से हवा में बनने वाले कान्तिचक्र का अवलोकन करिए; इस बादामी हाशिये की त्रिज्या ७° से लेकर ९° तक होती है। सूर्य-रश्मियों की पतली शलाका में आभामण्डल (आरिएल) के गिर्द उसे परिवेष्टित करनेवाले प्रथम रंगीन वृत्त को भी आप देखने में समर्थ हो सकते हैं।

प्याले की गर्म चाय के ऊपर भी आश्चर्यजनक कान्तिचक्र देखे जा सकते हैं। चाय का ताप ४०°–६५° सेण्टीग्रेड अवश्य होना चाहिए; सूर्य कम ही ऊँचाई पर रहना चाहिए, ताकि द्रव के ऊपर के नन्हें वाष्पबादल सूर्यप्रकाश की आपाती दिशा से तनिक तिरछी ओर से देखे जा सकें। कुछ फासले से वाष्प की प्रत्यक फुत्कार विलक्षण रंग प्रदर्शित करती है, विशेषतया नीललोहित या हरा रंग। कभी-कभी यह अधिक सुविधाजनक होता है कि आँख वाष्प के निकट रखी जाय ताकि रंगों का सम्भ्रम न उत्पन्न होने पाये।

लाइकोपोडियम चूर्ण से बने कान्तिचक्र की त्रिज्या नापिए और तब इसके जर्रों की लम्बाई-चौड़ाई हिसाब लगाकर मालूम करिए और फिर सूक्ष्मदर्शी की सहायता से अपने परिणाम की जाँच कीजिए।

१६३ प्रकाश का कान्तिचक्र जो आँख में ही उत्पन्न होता है[1]

रात को आर्कलैम्प तथा अन्य चमकीले प्रकाश-स्रोतों के गिर्द मैं हलके प्रकाश का वृत्त देख सकता हूँ जो अन्धेरी, काली पृष्ठभूमि पर प्रबल विपर्यास प्रदर्शित करता है, और यदि आसमान साफ हुआ तो चन्द्रमा के गिर्द भी यह वृत्त दीखता है, तथा चकाचौंध के प्रकाश वाले सूर्य के गिर्द भी, जबकि पेडों के झुरमुट में से यह झाँकता है। इस प्रकाश-वृत्त का व्यास लगभग ६° होता है। भीतर की ओर यह नीले रंग का और बाहर की ओर लाल रंग का होता है अतः इसकी उत्पत्ति का कारण विवर्त्तन होगा, न कि वर्तन। बादलों में बनने वाले कान्तिचक्र के साथ इसका प्रबल सादृश्य जान पडता है, किन्तु इनके बीच निश्चय ही अन्तर है। यदि मैं ऐसी जगह खडा होता हूँ जहाँ से चन्द्रमा मकान के कोने के पीछे छिप भर जाता है, तो 'बादल वाला कान्तिचक्र' अब भी दिखलाई देता रहता है, जबकि 'आँख मे बनने वाला कान्तिचक्र' प्रकाश-स्रोत को ओट मे लेते ही, पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि इस कान्तिचक्र का स्वय आँख में ही निर्माण होता है (एन्टोप्टिक)।[2]

क्या ये आँख मे मौजूद नन्ही कणिकाओं द्वारा उत्पन्न होते है जो प्रकाश का विवर्तन उसी प्रकार करते है जिस प्रकार लाइकोपोडियम चूर्ण या बादलो में मौजूद पानी की बूंदे करती है? कुछ प्रेक्षको के लिए तो दरअसल बात ऐसी ही है।

किन्तु अनेक प्रेक्षको को अपेक्षाकृत छोटे कान्तिचक्र दिखलाई पड़ते है जिनके प्रथम दीप्त वृत्त की त्रिज्या केवल १.५° होती है। ये कोर्निया के कोशो के, तथा लेन्स को आच्छादित करनेवाली झिल्ली के नाभि-कणो द्वारा होनेवाले विवर्त्तन द्वारा उत्पन्न होते है। प्रत्येक पृथक नाभिकण से उत्पन्न होनेवाला विवर्त्तन विशेष महत्त्व नही रखता, बल्कि खास महत्त्व तो इन तमाम नाभिकणों के परस्पर सहयोग का है; ये नाभिकण एक दूसरे से करीब-करीब समान दूरी (लगभग ०.०३ मिलीमीटर) पर स्थित होते है। अन्य प्रेक्षक थोड़े कुछ बडे आकार के कान्तिचक्र का विवरण देते है जो अधिक प्रबल तथा स्पष्ट हो जाते है बशर्त्ते (सावधानी के साथ) आँख को आस्मिक[3] अम्ल की वाष्प से स्पर्श कराएँ। इन परिस्थितियो मे कोर्निया के कोष नन्ही-नन्ही ढेरियो के रूप में उभर आते है जो आकार मे पर्य्याप्त मात्रा मे एक समान होते है ताकि विवर्तन द्वारा वे कान्तिचक्र का निर्माण कर सके। इस तरह के एक कान्तिचक्र के लिए एक प्रेक्षक

1. A Gullstrand in Helmholtz, Physiologische Optik, 3rd edi
2. Entoptic 3. Osmic acid

में निम्नलिखित मान दिये हैं : आभामण्डल (ऑरिओल) के लाल हाशिये की त्रिज्या १° २३'; नीले हरे भाग की, ३° ४६'; तथा लाल भाग की, ४° २२' होती है।

आँख में बनने वाले (एण्टॉप्टिक) कान्तिचक्र की एक तीसरी किस्म वह है जिसे मैं स्वयं देखता हूँ और यही किस्म सर्वाधिक दृष्टिगम्य है। कभी-कभी लगातार घण्टों तक इस कान्तिचक्र के कुछ विशेष सुस्पष्ट असाधारण रूप से स्पष्ट होते रहते हैं, इससे साबित होता है कि पहले वाले कान्तिचक्र से बिल्कुल भिन्न व्याख्या इसके लिए देनी होगी क्योंकि यह समझ पाना कठिन है कि गन्दे कणों से विवर्तन द्वारा यह घटना कैसे उत्पन्न हो सकती है। कागज का एक टुकड़ा लीजिए जिसमें २ मिलीमीटर व्यास का एक सूराख बना हो, और इसे आँख की पुतली के सामने पहले ठीक बीचोंबीच केन्द्र पर रखिए और तब धीरे-धीरे इसे पुतली के हाशियों की ओर खिसकाते जाइए, यहाँ तक कि अन्त में कान्तिचक्र के केवल दो खण्ड ही बच जायें अर्थात् प्रकाशस्रोत के बायें के तथा उसके दाहिने के खण्ड; अवश्य कागज के सूराख को पुतली के निचले भाग के सामने रखना होगा। यदि सूराख को पुतली के दाहिनी या बायीं ओर रखें तो कान्तिचक्र के ये ही भाग पुतली के नीचे तथा ऊपर दिखलाई दे जाते हैं। इससे हम यह निष्कर्ष प्राप्त करते हैं कि विचाराधीन कान्तिचक्र सम्भवतः नेत्र के क्रिस्टलीय लेन्स के त्रिज्यीय शिराओं द्वारा होने वाले विवर्तन के कारण उत्पन्न होते हैं, क्योंकि इस व्याख्या से प्रयोग की सभी बातों का समाधान हो जाता है। नेत्र में बननेवाले कान्तिचक्र की प्रथम दो किस्म के कान्तिचक्रों के मुकाबले में इस तीसरे किस्म की पहचान करने के लिए, छिद्र का उपयोग एक विश्वसनीय तरीका है। क्योंकि यदि विवर्तन के लिए केन्द्र का काम शिराएँ न करतीं, बल्कि कण करते, तब उस दशा में पुतली के सामने ओट देने से कान्तिचक्र केवल धूमिल पड़ जाते और सो भी परिधि के सम्पूर्ण भाग पर प्रदीप्ति समान रूप से घट जाती।

कुछ ऐसे अवसर आते हैं जब मेरे लिए कान्तिचक्र करीब-करीब अदृश्य-सा बन जाता है सिवाय उस दशा में जबकि मैं ऊपर की ओर या बगल की ओर दृष्टि फिराता हूँ या जबकि मैं अत्यन्त थका हुआ होता हूँ। अन्य अवसरों पर मैं इसे लगातार देख सकता हूँ।

इस तरह की अनुभूतियाँ इस बात का अधिक यथार्थता के साथ निर्णय करने में हमारी सहायता करती हैं कि आँख के किस भाग में कान्तिचक्र का निर्माण होता है। रात्रि में ज्यों ही मैं सड़क के लैम्प पर दृष्टि डालता हूँ त्यों ही कान्तिचक्र दृष्टिगोचर होता है किन्तु कुछ ही सेकण्डों में यह विलुप्त हो जाता है। मैंने देखा है कि इस घटना

या सम्बन्ध आंख की पुतली के सिकुड़ने से है जबकि अन्धेरे के प्रति समानुयोजित हो चुकने बाद अचानक आंख को तेज प्रकाश का सामना करना पडता है। यही कारण है कि अर्द्धरात्रि में जागने के उपरान्त अचानक जब हम जलती हुई मोमबत्ती या लैम्प पर दृष्टि डालते हैं तो हमें इसके गिर्द चमकीला कान्तिचक्र दिखलाई पडता है।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवत कान्तिचक्र का निर्माण क्रिस्टलीय लेन्स के एकदम बाहरी हाशिये पर होता है और इसीलिए जब पुतली सिकुडती है तो कान्तिचक्र तुरन्त विलुप्त हो जाता है।

आंख की शिराओं या कणों द्वारा उत्पन्न होनेवाली इन विवर्त्तन घटनाओं के लिए विवर्त्तन कोण, तथा विवर्त्तन उत्पन्न करनेवाले कणों के आकार के पारस्परिक सम्बन्ध सामान्य के मुकाबले में अधिक जटिल होते हैं।

आंख में बनने वाले कान्तिचक्र की परीक्षा और नापजोख सोडियम लैम्प के प्रकाश में करिए जो सड़कों के किनारे अक्सर लगे रहते हैं।

१६४. हरा तथा नीला सूर्य[2]

एक प्रेक्षक का कहना है कि इंजिन की चिमनी से निकलनेवाली भाप में से होकर उसकी दृष्टि जब सूर्य पर पड़ी तो भाप के तीन फुआरों तक सूर्य चटकीले हरे रंग का प्रतीत हुआ यद्यपि बाद की फुआरों का कोई विशेष असर उस पर नही पड़ा। एक स्थानीय रेलगाड़ी के रवाना होते समय मैंने भी इसी तरह का प्रभाव देखा था। यह इंजिन (जो काफी पुरानी चाल का था) भाप के बादल छोड़ता था जो बार-बार ऊपर उठकर आकाश की अल्प ऊँचाई पर स्थित सूर्य के प्रकाश को एक क्षण के लिए मन्द बना देते थे। इस तरह का एक बादल जब धीरे-धीरे हलका पड़कर विलुप्त हुआ तो एक क्षण ऐसा भी आया कि सूर्य पुनः दिखलाई दे सका; इसका रंग कभी हलका हरा, कभी हलका नीला होता और कभी-कभी तो ऐसे हलके हरे रंग का दीखता जो हलके नीले रंग मे परिणत हो जाता या फिर हलके नीले रंग से हलके हरे रंग मे यह बदल जाता। एक सेकण्ड से कम समय के अन्दर प्रकाश इतना तेज़ हो गया तथा बादल का आवरण इतना झीना कि अब कुछ भी स्पष्ट नही दिखलाई दे सका।

1. Cf. a similar observation by Descartes in Goethe's Theory of Colours

2. Nat, 37, 440, 1888, Quart. Journ. 61, 177, 1935,

इस तरह घटनाएँ उस वक्त घटती हैं जब कि भाप में मौजूद पानी की बूँदें अत्यन्त छोटे आकार की, 1 μ और 5 μ के दर्मियान की होती हैं। इस दशा में प्रकाश पर दे किस प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती हैं इस बात की सही व्याख्या यह मानकर नहीं की जा सकती कि पानी की बूँदों की जगह नन्हे सूराख या अपारदर्शी मण्डलक हैं जो प्रकाश का विवर्त्तन करते हों। बूँदों से विवर्तित होनेवाले प्रकाश, उसकी सतह से परावर्तित होनेवाले प्रकाश, तथा उसमें से गुजरकर सीधे आनेवाली रोशनी के सम्मिलित प्रभाव की जाँच करने पर इस घटना की क्रियाविधि मोटे तौर पर समझी जा सकती है।[1]

वाष्प की अनुपस्थिति में भी सूर्य और चन्द्रमा के हरे, हलके नीले, तथा आसमानी नीले रंग बार-बार देखे गये हैं जो घण्टों तक वैसे ही बने रहे थे। ये रंग सर्वाधिक स्पष्ट क्राकातोआ के सुविख्यात ज्वालामुखी उद्गार (१८८३) के बाद के बरसों में देखे गये थे।[2] हम जानते हैं कि उस वक्त ज्वालामुखी के अत्यन्त बारीक धूलिकणों की एक बृहत् राशि वायुमण्डल के उच्चतम स्तरों में फिक गयी थी और इन धूलिकणों को नीचे आकर एकत्र होने में बरसों लगे थे तथा इस बीच ससार के एक विशाल क्षेत्र में ये फैल गये थे और इस प्रकार सर्वत्र अत्यन्त शानदार सूर्योदय तथा सूर्यास्त के दृश्य इन्होंने उपस्थित किये थे। हम कल्पना कर सकते हैं कि किन्हीं दिनों धूल के इन बादलों में सब एक ही आकार के नन्हे-नन्हे कण मौजूद रहे होंगे जो सूर्य के आश्चर्यजनक रंगों का समाधान कर सकते हैं। रेत के तूफ़ान में सूर्य का रंग नीला देखा गया है।

२६-२८ सितम्बर १९५१ के नीले वर्ण के सूर्य ने समस्त पश्चिमी तथा मध्य यूरोप में विशेष उत्सुकता जगायी है।[3] चन्द्रमा भी, और यहाँ तक कि तारे भी, नीले रग के हो गये थे। सूर्य का विकिरण मद्धिम पड़ गया था, क्षितिज के निकट सूर्य पीला नहीं, बल्कि आस्मेत था। शीघ्र ही यह दिखलाया जा सका कि इस घटना की उत्पत्ति तैलीय कणों के वृहत्काय बादलों के कारण हुई थी—ये कण ०.५ से बड़े न थे और कदाचित् इनमें कालिख के जर्रे भी मिले हुए थे जो कनाडा के एलबर्टा स्टेट के वनों की आग से निकलकर आकाश में ऊँचे चढ़े थे। ये ५-७ किलोमीटर की ऊँचाई पर उतराते

1. R Meche, Ann. der Phys. 61, 471, 1920; 62, 623, 1920—Van de Hulst, Light Scattering (1957),

2. Kiessling Met, Zs, 1,117, 1884, Nat, 1883,

3. W. Gelbke, Zeitschr, f, Meteor 5, 82, 1951—P. Wellmann, Zeitschr, f, Astroph, 28, 310, 1951,

—Wilson, Monthly Not, R, Asir, Soc, 111, 478, 1951,

हुए ४ दिनों उपरान्त यूरोप पहुँच गये थे। वायुयान से देखने पर पता चला कि ये बादल १३ किलोमीटर तक की ऊँचाई पर भी पहुँचे थे।

इसी किस्म की घटनाओं मे हम एक असाधारण कान्तिचक्र को भी सम्मिलित कर सकते हैं जिसका प्रेक्षण एक बार कुहरे मे किया गया था[1]—एक चटकीले पीत-हरे वर्ण का आभामण्डल (आरिएल) लाल रग के एक चौड़े वृत्त से परिवेशित था जो स्वय भी नीले वृत्त से घिरा था तथा उसमे हरे वृत्त भी मौजूद थे। निश्चय ही इसका समाधान कुहरे मे स्थित बूंदो के क्षुद्र आकार द्वारा किया जा सकता है।

इन घटनाओं की दुर्लभता जनसाधारण मे प्रचलित इस वाक्याश मे परिलक्षित होती है कि "एक बार जबकि चन्द्रमा नीला था।"

१६५. प्रकाशमण्डल[2] (प्लेट I, मुखपृष्ठ)

यदि हम किसी पहाड़ी की चोटी पर उस वक्त मौजूद हों जबकि सूर्य आकाश में नीचे ही स्थित हो तो कभी-कभी हम स्वय अपनी ही छाया कुहरे की सतह पर पड़ती हुई देखते हैं; इस दशा में छाया का सिर एक प्रकाशमण्डल से परिवेष्टित पाया जायगा जिसमे वे ही चटकीले रग पाये जाते हैं जो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द बननेवाले कान्तिचक्र मे दीखते हैं। एक अवसर पर इस तरह का एक प्रकाशमण्डल देखा गया था जिसके गिर्द पाँच वृत्त मौजूद थे। किन्तु यह स्मरण रखिए कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपनी छाया तथा आसपास के अन्य व्यक्तियो की भी छाया देख पाता है बशर्ते ये लोग उसके काफी नजदीक हों तथा कुहरा काफ़ी फासले पर हो; किन्तु **प्रकाशमण्डल तो केवल अपनी ही छाया के सिर के गिर्द देखा जा सकता है !** अत्यन्त विशिष्ट परि-स्थितियो मे सड़क के लैम्प की रोशनी प्रकाशमण्डल उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त सिद्ध हुई थी, किन्तु इसके लिए पृष्ठभूमि को अत्यन्त गहरे मटमैले रग का होना जरूरी था।

बादलो की हमवार तह के ऊपर वायुयान में उडते समय करीब-करीब सदैव ही वायुयान की छाया को रगीन वृत्तों से परिवेष्टित देखा जा सकता है (चित्र १३३ क)। ये वृत्त बादल में स्थित जलबूँदो के आकार के अनुसार ही छोटे या बड़े होते है। प्रकाश-मण्डल के लिहाज से वायुयान की छाया की स्थिति को देखकर प्रेक्षक तुरन्त जान सकता है कि वह वायुयान के सिरे के निकट है या उसकी पूँछ के निकट; क्योंकि प्रकाशमण्डल

1. H. Kohler, Met. Zs. 46, 164, 1929
2. The Glory

का केन्द्र ठीक सूर्य-नेत्र रेखा पर पड़ता है। अक्सर प्रकाशमण्डल अपेक्षाकृत बहुत बड़े कुहरा-धनुप से घिरा होता है जो करीब-करीब सफ़ेद रंग का होता है (§ १२८)।

चित्र १३३ क—बादलों पर वायुयान की छाया के गिर्द प्रकाशमंडल।

कुछ काल तक तो इसका समाधान अनिश्चित-सा ही रहा। कान्तिचक्र से तुलना करने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि जलबूँदों का बादल सूर्य के प्रकाश को किसी-न-किसी प्रकार पीछे की ओर परिक्षेपित करता है और तब ये वापस आने वाली किरणें अन्य बूँदों द्वारा विवर्तित हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे कान्तिचक्र में सूर्य से सीधे ही आनेवाली किरणों का विवर्त्तन होता है। किन्तु अब यह प्रमाणित हो चुका है कि पीछे की ओर होनेवाले परिक्षेपण के फलस्वरूप ही प्रकाशमण्डल का निर्माण हो जाता है[1]।

प्रकाशमण्डल की त्रिज्या प्रायः बदलती रहती है; स्पष्ट है कि कुहरे के कुछ हिस्सों में बूँदें *अन्य भागों की अपेक्षा बड़े आकार की होती होंगी*। कुहरा जब अभी-अभी बना हो तो प्रकाशमण्डल का आकार बहुत बड़ा होता है और इसमें मौजूद पानी की बूँदों का आकार, गणना के अनुसार ६μ से अधिक नहीं होता। प्रकाशमण्डल अक्सर कुहरा-धनुप द्वारा परिवेष्टित होता है, और यदि आँख से कुहरे की दूरी ५० गज से *अधिक हो तब तो सदैव ही यह कुहराधनुप दिखलाई पड़ता है। यह विलक्षण बात* है कि कुहरा-धनुप प्रकाशमण्डल की तुलना में हमसे बहुत अधिक दूर मालूम पड़ता है—अवश्य ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव के कारण ही प्रतीत होता है।

इन दोनों घटनाओं का एक साथ उत्पन्न होना विश्वसनीय तरीके पर यह प्रगट करता है कि प्रकाशमण्डल का निर्माण पानी की नन्ही बूँदों के कारण होता है, बर्फ के क्रिस्टलों के कारण नहीं (स्मरण रखिए कि कान्तिचक्र का निर्माण दोनों ही कारणों से हो सकता है!)। यह दिलचस्प बात है कि इन दशाओं में तापक्रम शून्य से कुछ डिग्री कम ही था, फलस्वरूप ये बूँदें बहुत कम शीतलीकृत[2] अवस्था में थीं। केवल अपवादस्वरूप ही बर्फ के बादलों से बने हुए प्रकाशमण्डल देखे जा सके हैं।

1. B. Ray Proc Ind. Assoc. 8, 23, 1923—Van de Hulst, Journ. Opt. Soc. Amer. 37, 16, 1947 and Light Scattering (1957)—Naik and Noshi, Journ. Opt. Soc. Amer, 45, 733, 1954, 2. Under-cooled

और उस दशा में ये प्रकाश के चमकीले श्वेत धब्बे सरीखे दिखाई पड़ते हैं जो ऊपर अभी बतायी गयी घटना से पूर्णतया भिन्न होते हैं।

यद्यपि प्रथम दृष्टि में प्रकाशमण्डल कान्तिचक्र के मानिन्द जान पड़ता है, फिर भी कतिपय लाक्षणिक अन्तर देखे जा सकते हैं। प्रथम अदीप्तवृत्त कुछ-कुछ अधिक धुँधला होता है, और इसकी त्रिज्या अपेक्षाकृत छोटी होती है, बाहरी वृत्त अपेक्षाकृत अधिक चटकीले होते हैं। किन्तु सबसे प्रमुख विशेषता है इसका प्रबल ध्रुवण, वायुयान की करीब-करीब प्रत्येक उड़ान के अवसर पर एक साधारण पोलरायड की मदद से इसका प्रेक्षण किया जा सकता है—हम देखते हैं कि त्रिज्यीय कम्पन प्रमुखता प्राप्त किये होते हैं। यह प्रेक्षण थियरी से प्राप्त निष्कर्ष की आश्चर्यजनक रूप से सम्पुष्टि करता है।

ऐसी ही है तू, जैसे कि जब,

वह लकड़हारा पश्चिमवर्ती मुड़ता हुआ हरी घाटी से ऊपर
शिशिर उषा में, जहाँ मेषमर्दित लीकों की झुरमुटों पर
दृश्यहीन हिमकुहर एक जगर-मगर धुंध में ताने-बाने बुनता है,
निहारता है पूर्ण अपने सम्मुख, पगचापहीन सरकती हुई,
एक बिम्ब छवि को जिसका शीश है आभा परिवेष्टित,
विमुग्ध ग्रामीण इसके शुभ्रवर्णों की पूजा करता है,
और जानता नहीं कि जिसका वह अनुगमन करता है, वह छाया उसी ने बनायी है।

—एस. टी. कोलरिज ('एक आदर्श-वस्तु के प्रति स्थिरता' से)।

१६६. उद्दीप्त बादल (प्लेट X)

उन लोगों को जो आकाश का अध्ययन करने के अभ्यस्त नहीं हैं, यह [illegible] आश्चर्य होगा कि बादल प्रायः अत्यन्त चमकदार और विशुद्ध रंगों [illegible] सकते हैं जैसे हरा, बैंगनी-लाल, नीला... । [illegible] रंगों का कोई भी सम्बन्ध नहीं है क्योंकि आकाश में सूर्य चाहे [illegible] नीचे हो, दोनों ही दशाओं में ये रंग प्रकट होते हैं। [illegible] रंगीन हाशिये, धब्बों और पट्टियों की [illegible] नहीं हैं। कुछ [illegible] दावा है कि इन रंगों में मातृ-जैसी चमक होती है—[illegible] है? ऐसे मनोहर बादलों को देखकर सदा [illegible] की अनुभूति होती है [illegible] वर्णन करना कठिन है, किन्तु यह निश्चय ही बहुत कुछ [illegible]

उनके मृदु सम्मिश्रण तथा उनके विकीर्ण प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है। इस अनुपम दृश्य से हम अपनी आँखें हटा नही पाते।

इस तरह के उद्दीप्त बादल वर्ष के हर मौसम में प्रगट होते हैं, किन्तु शरद ऋतु में विशेष रूप से। ये सूर्य के निकट प्रगट होते हैं, और सूर्य से २° की दूरी के अन्दर ये अधिकांश चकाचौंध उत्पन्न करनेवाले धवल प्रकाश के होते हैं। यदि गहरे रंग का कांच काम में लायें तो ये सर्वाधिक बहुतायत से ३° से १०° की दूरी तक देखे जाते हैं और केवल कोरी आँखों से ये १०° से २०° की दूरी तक देखे जा सकते हैं; नीललोहित तथा लाल रग ही सबसे अधिक बहुलता से प्रगट होते हैं जो दूरी बढने के साथ फीके पड़ते जाते हैं। कुछ इक्के-दुक्के प्रेक्षकों ने और भी अधिक दूरी पर (५०° की दूरी तक) उद्दीप्त बादल देखे हैं, यहाँ तक कि प्रति-सूर्य के बिन्दु के आसपास भी (ब्रुक्स)[1]। इनके प्रकाश की तीव्रता प्रायः इतनी प्रचण्ड होती है कि अनेक प्रेक्षकों के लिए यह असह्य सिद्ध होती है। इनके प्रेक्षण के लिए सदैव किसी मकान या पेड़ के साये में खड़े होना चाहिए या फिर आँख की रक्षा के लिए § १६० में बतायी गयी कोई विधि काम मे लानी चाहिए।

आँखों की सुरक्षा के किसी साधन का सहारा लिये बिना ही उद्दीप्त बादलों की ओर देर तक देखते रहने के बाद मैंने अक्सर यह पाया कि नील-लोहित और लाल रग मेरी आँखों के सामने नाचते रहे थे—ये वे ही रंग है जो प्रकाश की इन सभी प्रचण्ड अनुभूतियों के उत्तर-प्रतिबिम्ब स्वरूप रह जाते हैं (§ ९०)। और, जैसा कि तथ्य है, ये ही उद्दीप्त बादलों के सर्वाधिक प्रमुख रंग हैं। अत. एक तरह से आश्चर्यचकित होकर मैंने सोचा कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह समूची घटना आँखों की भ्रान्ति का नतीजा हो। किन्तु निश्चय ही ऐसी बात है नहीं, क्योंकि दो विभिन्न प्रेक्षकों को एक से ही रग दिखाई देते हैं, और ऊपर बताये गये किसी भी तरीके से प्रकाश के मार्ग मे व्यवधान उपस्थित करने पर भी ये रग दिखाई देते रह जाते है, और अन्त में अपेक्षाकृत हलकी चमक के बादलो में भी उद्दीपन प्राय. दिखलाई पड़ता है।

यदि आकाश में बादल के टुकड़े यत्र-तत्र बिखरे हों तो बादलो में रंग की झलक करीब-करीब सदैव ही देखी जा सकती है। पुञ्ज-मेघ[2], पुञ्ज-जलद[3], तथा पुञ्जस्तारीय बादलों में रगीन हाशिये दीखते हैं, किन्तु इन पर हम कम अवसरों पर ही ध्यान दे पाते हैं क्योंकि इर्द-गिर्द प्रकाश की चमक इतनी अधिक होती है। यदि काले कांच के बने

1. Brooks loc, cit. 2. Cumuli. 3. Cumulonimli

दर्पण या इसी तरह के अन्य किसी उपकरण से देखे तो ये मनोरम रंगों का प्रदर्शन करते हैं। उदाहरण के लिए किसी ऐसे पुन्ज-मेघ का अवलोकन करिए जो अब विघटित ही होने वाला हो और सूर्य के सामने से गुजर रहा हो! तथापि अभी यह वास्तविक उद्दीपन नहीं है; इन बादलों के रंगों का विचार कान्तिचक्र के भाग के रूप में करना चाहिए जो इतनी फीकी ज्योति के इसलिए होते हैं कि उनका निर्माण करने वाली बूंदों के आकार में बहुत अधिक विभिन्नता होती है।

वास्तविक उद्दीप्त बादल अलका-पुञ्ज तथा उच्च-पुञ्ज जाति के कुछ विशेष बादल होते हैं—खास तौर से ऐसे बादल जो तेजी के साथ तूफान के पूर्व या बाद अपना रूप परिवर्तन करते होते हैं (विशेषतया पुञ्ज-मेघ जो पार्श्वों में उभरे से रहते हैं)। रंगों का वितरण, धारियों, पट्टियों या 'आँखों' की शक्ल में होता है। प्रथम दृष्टि में यह वितरण-क्रम अत्यन्त बेतरतीब जान पड़ता है, किन्तु कुछ देर उपरान्त एक तरह की क्रमबद्धता इनमे हम देख पाते हैं। प्रगटतः यह क्रम बादल की सरचना पर निर्भर करता है; कुछ धारियो का रग एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक-सा रहता है अथवा हाशिया नीललोहित–लाल रग का होता है।

उद्दीपन के रगों का समाधान अक्सर उन्हें कान्तिचक्र के टुकड़े मानकर किया गया है कि बादल के प्रत्येक भाग में तमाम बूंदों का आकार बहुत ही अधिक एक समान होता है, किन्तु एक भाग में स्थित बूंदें दूसरे भाग की बूंदो से आकार में भिन्न होती हैं। किन्तु इस दृष्टि-बिन्दु से यह समझ पाना कठिन होता है कि सूर्य से ३०° से अधिक ऊँचाई पर भी उद्दीपन कैसे दिखलाई दे पाते हैं—स्वयं अपने अनुभव से मैं जानता हूँ कि ऐसी घटना वास्तव में देखी गयी है। इन दशाओं के लिए हमें अत्यन्त सूक्ष्म आकार (2μ) के कणों की या नन्हें परतदार पंख जैसे बर्फ-क्रिस्टलों की कल्पना करनी होगी जो एक प्रकार की विवर्त्तन-ग्रेटिंग[1] का निर्माण करते हैं—[illegible] अभी हाल में विश्वसनीय तर्क के साथ प्रस्तुत किया गया है।[2] [illegible] तेज चमक का समाधान [illegible] बर्फ की नन्ही, पतली [illegible]।

नन्ही-नन्ही [illegible] के कारण [illegible] विशेष [illegible]।

1. Diffraction grating 2. [illegible]

किरणशलाका प्लेट के सामनेवाली सतह तथा पीछे वाली सतह दोनों से परावर्त्तित होती हैं अतः साबुन के बुलबुले की ही भाँति यहाँ भी व्यतिकरण की घटना उत्पन्न होगी। चित्र १३३ ख से सहज ही देखा जा सकता है कि दोनों किरणों के दर्मियान प्रकाशीय

$$\text{पथान्तर का मान} = n\,BCD - bcd = 2\left(\frac{np}{\cos r} - p\tan r \sin i\right)$$

$$= \frac{2\,np}{\cos r}\left(1 - \frac{\sin i \sin r}{n}\right)$$

$$= \frac{2np}{\cos r}(1-\sin^2 r)$$

$$= 2\,np\cos r$$
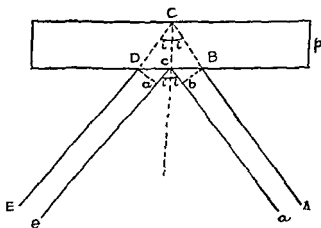
चित्र १३३ ख—(ऊपर C के नीचे i i की जगह r r तथा बायीं तरफ D a की जगह D d समझिए)

चूँकि अधिकतर उद्दीप्त बादल सूर्यके निकट देखे जाते हैं अतः कोण i का मान लगभग ७०°—८०° होता है और पथान्तर लगभग २p के बराबर। इस व्यतिकरण से उत्पन्न होने वाले रंग अधिक संपृक्त नहीं होते, प्रकाश्यतः इसका कारण यह है कि पथान्तर तरंग दैर्घ्य के ४ या ५ गुने के बराबर होता है; अतः प्लेट की मोटाई अवश्य १ या २ माइक्रॉन (माइक्रान=.००० ४ से० मी०) के बराबर होगी। बादल पर रंगों का वितरण इन प्लेटों की मोटाई पर निर्भर करता है जो बादलके भिन्न भागों में भिन्न होती है। उद्दीपन दुर्लभ अवसरों पर ही देखे जाते हैं अत.हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्लेटो की मोटाई एकसम दुर्लभ अवसरों पर ही हो पातीहै। उद्दीप्त बादल बर्फ की क्रिस्टल-प्लेटों से बने होते हैं—इस बात की सम्पुष्टि उन अनेक

दृष्टान्तों से हो जाती है जब–५०° सेन्टीग्रेड ताप पर और ४—११ किलोमीटर की ऊँचाई वाले बादलों में ये उद्दीपन देखे गये हैं।

उद्दीप्त बादलों का प्रकाश ध्रुवित नहीं होता।

उद्दीप्त बादल चन्द्रमा के गिर्द भी देखे गये हैं यद्यपि उतनी बार नहीं जितनी बार सूर्य के गिर्द; फिर ये अपेक्षाकृत फीके रंगके होते हैं। स्पष्ट है कि इसका कारण उनकी अत्यन्त हलकी चमक है।

केवल अकेले एक बार आकाश में विज्ञापन लिखने वाले वायुयान से बने कृत्रिम बादल में उद्दीपन देखा गया था।

१६७. मोती के सीप[1] वाले बादल

ये अत्यन्त दुर्लभ और अद्भुत किस्म के उद्दीप्त बादल होते हैं जो सामान्य बादलों की तुलना में कही बड़े पैमाने पर प्रगट होते हैं; बादलों की पूरी की पूरी पट्टी मछली के शरीर की परतों (चोइयो) की तरह चमकती है और कभी-कभी विशुद्ध वर्ण और मनोरम रंगो से परिपूर्ण दीखती है। सूर्यास्त से पहले सूर्य से १०° से लेकर २०° तक की दूरी पर ये बादल विशेषरूप से सुन्दर प्रतीत होते हैं। इनकी प्रमुख विशेषता यह है कि सूर्य के अस्त होने के बाद भी करीब दो घण्टे तक ये दृष्टिगोचर होते रहते हैं—यह बात उनकी अत्यधिक ऊँचाई की सूचक है।[2] हाल में अधिक सूक्ष्म तरीकों से इस ऊँचाई का मान १६ मील प्राप्त किया गया है जबकि सामान्य ढग के बादल कभी भी आठ मील से अधिक ऊँचाई पर नहीं होते। मोती के सीप वाले बादल जब दीप्तिहीन होने लगते हैं तो पर्याप्त तेजी के साथ, लगभग अचानक ही, करीब चार मिनटके दौरान में ये प्रकाशहीन हो जाते हैं—ठीक इतना ही समय सूर्य के गोले को क्षितिज से नीचे डूबने में लगता है। अत. बहुत सम्भव यह प्रतीत होता है कि इनकी दीप्ति सन्ध्या के धुधलके के कारण नही, बल्कि सीधे सूर्य के कारण उत्पन्न होती है।

रंगों का वितरण-क्रम लगभग पूर्णतया बादलों की किस्म पर निर्भर करता है। कभी-कभी ये बादल धारीदार, लहरदार या अलकामेघ-जैसे होते हैं; कभी-कभी

1. Mother-of-pearl
2. Their height follows the time their illumination lasts; accurate computations in Mohn, Met. Zs. 10, 82, 1893, also is Jesse. Met. Zs., 3, 1886, etc. Stormer Geofysiske Publikasjoner g., No. 4, 1931. Beitrage Zur Geophys. 32, 63, 1931 Nat. 145, 221, 1940 Weather 3, 13, 1948, H, Wehner, Meteor, Rundschau 4, 180, 1951

बादलों की समूची पट्टी करीब-करीब एक ही रंग की होती है जिसके हाशिये पर स्पेक्ट्रम के रंग प्रकट होते हैं या फिर क्षैतिज दिशा की आड़ी आयताकार पंक्तियों की शक्ल में ये दीखते हैं जिनके बीचसे हम आकाश की पृष्ठभूमि पोलकी रत्न सरीखे दूधिया रंग को देख सकते हैं। ये रंग कभी तो स्थिर बने रहते हैं, कभी वे धीरे-धीरे बदलते जाते हैं। सूर्य से जब बादलों की दूरी ४०° से अधिक हो जाती है तो ये रंग विलुप्त हो जाते हैं। सारा दृश्य अवर्णनीय रूप से मनोरम तथा शानदार होता है।

यदि इन बादलों का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण करें तो 'निकल' को घुमाने पर रंग बदलते हुए दीखते हैं। एक अवसर पर इन मोती के सीप वाले बादलों में एक प्रभामण्डल देखा गया था जो इस बात का सूचक है कि सम्भवतः इनमें बर्फ-क्रिस्टल मौजूद हैं (§१३४)। अधिकाश इनका निर्माण ठीक निम्नदाव[1] के गुजर जाने के बाद होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल हो जाता है। आस्लो में आमतौर पर ये जाड़े की ऋतु में दिखाई देते हैं जबकि उत्तर या पूर्व दिशा में एक अत्यन्त निम्नदाव मौजूद होता है या जबकि अटलाण्टिक महासागर पर तूफ़ान चलता होता है और उष्ण, सूखी वायु-धारा बहती होती है; क्योंकि ऐसे मौक़ों पर आकाश बहुत ही निर्मल होता है अतः आकाश के उच्चतम स्तर भी देखे जा सकते हैं।

१९ मई १९१० के दिन, जब कि हेली धूमकेतु की पूँछ में से पृथ्वी गुजरी थी, मोती के सीप वाले बादलों का अलौकिक रूप से मनोरम निर्माण देखा गया था। लगता है मानों इन दोनों घटनाओं के बीच परस्पर कोई सम्बन्ध मौजूद है।[2]

परा-अलका तथा रात्रि के दीप्तिमान् बादलों के लिए देखिए §§ १९८, १९९

हेलीगेन्शीन[3]

१९८. ओस से ढकी घास[4] पर हेलीगेन्शीन (प्लेटXI)

तड़के सुबह को जबकि सूर्य अभी आकाश में नीचे ही रहता है और ओस वाली घास पर लम्बी साया डालता है, हम अपने सिर की छाया के ऊपर और उसके निकट एक अद्भुत् रंगहीन आभामण्डल (आरिएल) देखते हैं। नहीं, यह कोई प्रकाशीय भ्रम नहीं है और न ही विपर्यास की कोई घटना; क्योंकि जब वही साया बजरी वाली

1. Depression
2. *Slocum, J. R. A. S., Can, 28, 145, 1934, with a beautiful photo*
3. Heiligenschein
4. *Quart. Journ, 39, 157. 1913, E, Macy, Met. Zs, 39, 229, 1922*

सडक पर पड़ती है तो फिर इस दशा में हमें प्रकाश का यह आभामण्डल दिखलाई नहीं पड़ता।

यह घटना सर्वोत्तम उस वक्त होती है जब छाया की लम्बाई कम-से-कम १५ गज हो तथा वह छोटे क़द की घास या तिनपतिया पौदों पर पड़ती हो जो घनी ओस के कारण भूरा सफ़ेद रंग धारण किये हुए हों। इन परिस्थितियों मे हेलिगेन्शीन बहुत स्पष्ट दीखता है। दोपहर को पानी की बौछार के बाद, या रात को विद्युत् लैम्प के तेज प्रकाश मे यह उतना स्पष्ट नही बन पाता। यदि इस घटना के बारे मे किसी किस्म का सशय हो तो वास्तविकता की जाँच का सबसे बढ़िया तरीक़ा इस प्रकार है—(i) घास के समूचे मैदान का सर्वेक्षण करिए और देखिए कि आप की छाया के निकट प्रकाश की मात्रा कैसे बढ़ती है; (ii) दो चार क़दम चलिए; आप देखेंगे कि प्रकाश की झलक आपके साथ-साथ चलती है तथा वे स्थल जहाँ घास विशेषरूप से प्रकाशित नहीं थी, छाया के निकट आते ही प्रकाशित हो उठते हैं; (iii) अपनी छाया की तुलना अन्य लोगों की छाया से करिए; आप देखेंगे कि हेलिगेन्शीन केवल आप के ही सिर के गिर्द दिखाई देता है। इससे सभवतः आप दार्शनिक विचारों में खो जायेंगे। जब सोलहवी शताब्दी के सुविख्यात इटैलियन कलाकार बेन्वेन्यूतो चेलिनी[1] ने यह बात देखी तो उसने सोचा कि प्रकाश की यह झलक स्वय उसकी विशेष प्रतिभा का सूचक है!

इस अद्भुत घटना का समाधान क्या हो सकता है? इसके लिए ओस की बूंदें निश्चय ही अनिवार्य है क्योंकि एक बार जब ओस का वाष्पीकरण हो चुकता है तो हेलिगेन्शीन करीब-करीब विलुप्त ही हो जाता है; घास पर पानी की बूंदें छिडक देने पर पुन इसे उत्पन्न किया जा सकता है। सफ़ेद चादर या सफेद कागज के तख्ते पर छिड़की गयी पानी की बूंदों के निकट जब हमारे सिर की छाया पहुँचती है, तो वे स्पष्ट रूप से प्रकाश से जगमगाती हैं।

काँच का गोल पेंदे का फ्लास्क लेकर उसे पानी से भरिए और सूर्य की किरणो के मार्ग मे उसे रखिए; यह फ्लास्क अब एक बडे पैमाने पर पानी की बूंद जैसा काम करता है। इसके पीछे कागज का तख्ता रखिए जो घास की ऐसी पत्ती का स्थान लेता है जिस पर ओस की बूंद पड़ी हो। यदि फ्लास्क का हम आपाती किरणो से थोड़ी ही हटी हुई दिशा से प्रेक्षण करें, तो यह अत्यधिक मात्रा मे प्रकाशित दीखता है बशर्ते कागज इससे थोड़ी ही दूरी पर, करीब-करीब इसके फोकस बिन्दु पर, रखा गया हो।

1. Benvenuto Cellini

इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ओस की प्रत्येक बूँद, जिस पत्ती पर वह स्थित होती है, उसपर सूर्य का प्रतिविम्ब बनाती है; तब इस प्रतिविम्ब से करीब-करीब आपाती किरणों की दिशा में ही, अर्थात् सूर्य की ओर, किरणे उत्सर्जित होती हैं (चित्र १३४ a)। इससे यह बात समझ में आ जाती है कि क्यों बूंदें अपने
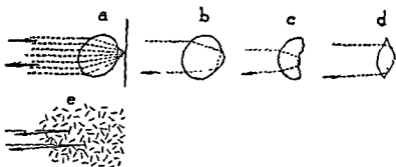
चित्र १३४—ओस से ढकी घास पर हेलिगेंशीन।

अन्दर से प्रकाश उत्सर्जित करती हुई जान पड़ती ह, उसी प्रकार जैसे बिल्ली की आँखों से प्रकाश निकलता हुआ जान पड़ता है। यह इस बात की भी उत्तम व्याख्या है कि *क्यों घास से प्रतिसूर्य बिन्दु की दिशा में इतना अधिक प्रकाश आता हुआ दीखता है तथा क्यों इस दिशा से हट कर जब हम देखते हैं तो प्रकाश की तीव्रता तेज़ी के साथ घट जाती है। किन्तु यह प्रकाश हरे वर्ण का क्यों नहीं होता ?*

अवश्य ही अन्य बातें भी इस घटना में भाग लेती हैं। यदि हम फ्लास्क का पुनः प्रेक्षण करें तो हम देखेंगे कि इसके सामने के भाग तथा पीछे के भाग दोनों से ही प्रकाश का परावर्त्तन होता है। साधारण-सी गणना करने पर पता चलता है कि फ्लास्क के पृष्ठभाग से परावर्तित होने वाले प्रकाश की दीप्ति घास की पत्ती से पुनः उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश की लगभग आधी होती है तथा सामने के भाग से परावर्तित होनेवाले प्रकाश की तुलना में करीब आठवाँ हिस्सा।

किन्तु फ्लास्क की गर्दन तथा उसके चिपटे पेंदे से अत्यधिक चमक का प्रकाश आता है; यह प्रकाश पूर्ण परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। और हमारी ओस की बूंदों के लिए सम्भवतः यह सर्वाधिक महत्त्व की बात है, क्योंकि बूंदें अनियमित रूप से विकृत हुई शक्ल की होती हैं (चित्र १३४, b, c, d) विशेषतया रोएँदार, सफ़ेद रुई जैसी सतह वाले पौधों पर। अतः विभिन्न बिन्दुओं से पूर्ण परावर्तित होकर आनेवाली किरणें उतनी ही उज्ज्वल तथा प्रचण्ड तीव्रता की होती हैं जितनी कि वे उस वक्त होती हैं जब

कि वे सूर्य से चलकर बूँदों तक पहुँचती हैं। द्वितीय समूह की ये परावर्तित किरणें आपाती दिशा में परावर्तित होने के लिए कोई निश्चित प्रवृत्ति नही दिखलातीं। किन्तु निम्न-लिखित विलक्षण प्रेक्षण प्राप्त किया गया है--घास की केवल वे ही पत्तियाँ प्रकाश का पुन उत्सर्जन करती हैं जिनपर सूर्य की किरणे वास्तव मे गिरती हैं, और स्वभावतः, सूर्य की दिशा मे अन्य पत्तियों के कारण इनके लिए प्रकाश की कोई रुकावट मौजूद नही होती, जबकि अन्य बहुत-सी दिशाओं के लिए पत्तियों के सामने कोई स्पष्ट खुला मार्ग नही होता (चित्र १३४, e)। यही कारण है कि प्रेक्षक जब आपाती दिशा मे देखता है तो उसे सदैव ही अधिक प्रकाश दिखाई पड़ता है। इस अद्भुत रूप से सरल सिद्धान्त (सीलिगर तथा रिशाज[1] द्वारा प्रवर्तित) का उपयोग तो ज्योतिर्विज्ञान मे, शनि के वलय में प्रकाश के वितरण की व्याख्या के लिए किया जा चुका है; हम जानते हैं कि शनि के वलय पत्थर के नन्हें टुकड़ो से बने हैं।

अभी बताये गये प्रकाशीय प्रभावों को मिले-जुले लेने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये हेलिगेन्शीन के प्रकाश की उज्ज्वलता तथा उसकी दिशा की व्याख्या पर्याप्त रूप से प्रस्तुत करते हैं।

१६९. विना ओसवाली सतहों पर हेलिगेन्शीन

इस घटना का प्रेक्षण करना अत्यन्त कठिन है; और §१६८ मे बतलायी गयी विधियाँ इस कार्य्य के लिए विशेष उपयोगी होंगी। हेलिगेन्शीन कटी फस्लवाले ठूँठदार खेत पर, नन्ही घास पर, और यहाँ तक कि खुरदरी मिट्टी पर भी देखा गया है; जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नहीं था, तो उस वक्त बढ़िया कटी हुई घास के लॉन पर जिसकी घास की पत्तियाँ सीधी तथा बराबर ऊँचाई की थीं, मैंने स्पष्ट और निश्चित तौर पर इसे देखा है और उससे अधिक स्पष्टता के साथ मैंने इसे 'मोलिना कोयरुला'[2] घास के गुच्छे पर देखा है।

यदि प्रेक्षक लॉन से कुछ फासले पर खड़ा हुआ है, मान लीजिए सौ डेढ़ सौ गज की दूरी पर, तो उसकी छाया इतनी धुँधली होती है कि वह एक तरह से पहचानी भी नहीं जा सकती (देखिए §२) और बस स्वय हेलिगेन्शीन ही लगभग २° व्यास के एक धब्बे की शक्ल मे (चन्द्रमा के व्यास के लगभग चार गुने आकार का) विशेष तौरपर दिखलाई पड़ता है जो हमारी दिशा मे थोडा बहुत चिपटा होकर खिंचा रहता है।[3]

इसकी व्याख्या वैसी ही है जैसी ओसवाली घास की हेलिगेन्शीन के लिए विन्टर-

1. Seelinger and Richarz 2. Molinia coerulea 3. Nat. 90, 621, 1913

फील्ड की व्याख्या (देखिए §१६८)। इसे हम निम्नलिखित ढंग पर व्यक्त कर सकते हैं—अधिकांश ठूंठों पर, सामने की कतारों के बीच की खाली जगह में से होकर सूर्य की रोशनी पड़ती है; सूर्य-रश्मियों की दिशा में प्रेक्षण करने पर इस प्रकार प्रकाशित सभी छोटी सतहें देखी जा सकती हैं; यदि और तिरछी दिशा से देखें तो साये में पड़नेवाली घास की अनेक पत्तियाँ दिखाई देंगी, अतः औसत चमक कम हो जाती है।

अक्सर श्वेत रंग के शेनोपोडियम[1] पर सुस्पष्ट हेलिगेन्शीन देखा जा सकता है। इस पौदे की सतह पर नन्हे-नन्हे, गोल आकार के कोष मौजूद होते हैं जो निश्चय ही ओस की बूंदों सदृश काम करते हैं और इस पौदे की कुछ किस्मों पर ये कोष विशेषरूप से सुस्पष्ट उभार पाये हुए होते हैं।[2]

१७०. गुब्बारे की छाया के गिर्द हेलिगेन्शीन

गुब्बारे में उड़ते समय, इससे लटकने वाली टोकरी की छाया को गौर से देखिए जो नीचे के देहाती क्षेत्र पर पड़ती है। लगभग सदैव ही इस छाया के गिर्द प्रकाश का एक आभामण्डल (आरिएल) मौजूद रहता है। और यह प्रेक्षक के भ्रम से उत्पन्न होनेवाली कोई विपर्यास की घटना नहीं है; ऐसा इस बात से सिद्ध होता है कि यह आभामण्डल ओस से ढके खेतों और घास के मैदानों पर और भी सुस्पष्ट दीखता है, तथा अनाज के खेतों पर यह प्रकाश के ऊर्ध्व स्तम्भ का रूप धारण कर लेता है जो अनाज के पौदों की डण्डियों की समानान्तर दिशा में अवस्थित होता है। यह हेलिगेन्शीन का एक विशेष मनोरम रूप है, क्योंकि धरती से गुब्बारे की अत्यधिक दूरी के कारण हम धरती की सभी चीजों को ऐसी दिशा से देखते हैं जो सूर्य की आपाती किरणों के साथ अत्यन्त छोटा कोण बनाती है। यदि छाया बादलों की पेटी पर से गुजरती है तो इस बात की सम्भावना उत्पन्न होती है कि रंगीन प्रकाश-वृत्तोंवाली शानदार छाया की घटना दीख पड़े (§§१२८, १६५)।

डाक्टर ह्विप्पल (हार्वर्ड वेधशाला) मुझे लिखते हैं कि उन्होंने अक्सर हर प्रकार की भूमि पर इस घटना का अवलोकन वायुयान से किया है; शरत ऋतु के रंग-बिरंगे फूलपत्तियों से ढके वनों पर यह घटना विशेषरूप से सुन्दर दीखती है। चमकीले धब्बे की चौड़ाई २° के करीब होती है। मरुभूमि पर भी यह दिखलाई देती है, ओस से ढके खेतों पर यह अधिक चमकीली होती है, पानी की सतहों पर हम केवल सामान्य गहरे रंग की छाया देखते हैं।[3]

1. Chenopodium 2. V. Lommel, Ann. d. Phyd. 1874, Jubelband10
3. See also Butler, Journ. Opt. Soc. Amer. 45, 328, 1955

अध्याय ११

आकाश का प्रकाश तथा उसका वर्ण

१७१. धुएँ द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण[1]

प्रकाश के परिक्षेपण के अध्ययन का आरम्भ हम एक ऐसी नहर के किनारे टहलने से करेंगे जिसमें किश्तियों का आना-जाना बहुतायत से होता है। गुजरनेवाली अनेक किश्तियों मे तेल या पेट्रोल के इंजिन लगे होते हैं जो बारीक धुआं फेंकते हैं, यह धुआं मटमैले आकाश की पृष्ठभूमि पर नीले रंग का दीखता है। किन्तु यदि हम धुएँ को खुले आकाश की प्रकाशित पृष्ठभूमि पर देखे तो यह बिलकुल ही नीला नही प्रतीत होता बल्कि यह पीले रंग का दीखता है। स्पष्ट है कि धुएँ के लिए नीलापन उस तरह का विशिष्ट गुण नही है जैसा नीले काँच के लिए नीलेपन का गुण, बल्कि धुएँ का रंग इस बात पर निर्भर करता है कि उस पर प्रकाश किस तरह पड रहा है और ऊपर दिये गये दोनों दृष्टान्तों मे धुएँ के प्रकाशित होने के तरीके भिन्न हैं। व्याख्या इस प्रकार है—

मटमैली पृष्ठभूमि के सामने धुआं सूर्य की उन समस्त किरणों द्वारा प्रकाशित होता है जो पीछे की दिशा को छोडकर अन्य दिशाओं से उसपर तिरछी गिरती हैं। ये किरणें धुएँ द्वारा हर दिशा मे परिक्षेपित होती हैं, इन परिक्षेपित किरणों मे कुछ किरणें हमारी आँख मे प्रवेश करती हैं तो धुआं हमें दृष्टिगोचर होता है। जिन जर्रों मे धुएँ का निर्माण हुआ रहता है, वे लाल या पीले प्रकाश की अपेक्षा नीले प्रकाश का परिक्षेपण अधिक मात्रा मे करते हैं; इसलिए धुआं हमे नीला दिखलाई देता है। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि के सामने धुआं हमे उस प्रकाश के कारण दीखता है जो उसे पार करके हमारी ओर आता है और तब यह पीला प्रतीत होता है क्योंकि आपतित श्वेत प्रकाश का नीला रंग इधर-उधर सभी दिशाओं में परिक्षेपित हो जाता है, बहुत थोड़ा अंश ही आँख में पहुँच पाता है अत. केवल पीला और लाल बच जाता है जो धुएँ को पार करके आगे आता है और धुआं यही रंग धारण कर लेता है।

1. Scattering

'कई वर्ष पहले की बात है, कुछ इसी तरह की चीज किलार्नी में मैंने देखी थी जबकि वायुरहित दिनों में छोटे मकानों की छत से धुएँ का स्तम्भ ऊपर उठता था प्रत्येक स्तम्भ का निचला भाग देवदार वृक्षों की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने पड़ता था और ऊपरी भाग बादलों की चमकीली पृष्ठभूमि के सामने। स्तम्भ का निचला भाग नीला दीखता था क्योंकि यह मुख्यतः परिक्षेपित प्रकाश की सहायता से देखा जाता था, और ऊपरी भाग लाल वर्ण का था क्योंकि यह उसमें से पार आनेवाले प्रकाश द्वारा देखा जाता था।' (जे. टिन्डल[2])।

परिक्षेपित प्रकाश में नीले तथा पार आने वाले प्रकाश में लाल रंग की यही घटना अत्यन्त स्पष्टरूप से डिजल इंजिन से विसर्जित धुएँ में उस वक्त देखी जा सकती है जब रेलगाड़ी को रवाना करने के लिए इंजिन को तेज़ी से चलाते हैं और डिज़ेल बस, तथा डिजल मोटर लारी में भी यह घटना देखी जा सकती है। या 'फिर, सूखी पत्तियों के सुलगने से उत्पन्न होनेवाले धुएँ, पतझड़ के मौसिम में झाड़ झखाड़ के ढेर के जलने से पैदा होनेवाले धुएँ, या स्वयं अपने घर की चिमनी के धुएँ में, जबकि हम लकड़ी जलाते हैं, यह घटना देखने को मिलती है।

इन सभी दशाओं में धुआँ कोलतार सरीखे द्रव की असाधारण रूपसे नन्ही बूँदों से बना होता है जबकि साधारण पत्थर के कोयले के धुएँ में कालिख के अधिक बड़े टुकड़ मौजूद होते हैं। और प्रकाश के तरंगदैर्घ्य λ (लगभग ०.०००6 मि० मी०) की तुलना में आँका गया परिक्षेपण करनेवाले जर्रों का आकार ही धुएँ का रंग निर्धारित करता है। यदि जर्रे प्रकाश के तरंग-दैर्घ्य के एक दशमांश या दो दशमांश से छोटे ही होते हैं तब परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^4}$ का समानुपाती होता है और स्पेक्ट्रम के बैंगनी रंग की ओर के प्रकाश के लिए परिक्षेपण की मात्रा तेजी से बढ़ती है, इतने छोटे जर्रों से होनेवाले परिक्षेपण से, चाहे वे किसी भी पदार्थ के क्यों न बने हों, सदैव ही सुन्दर नीला-बैंगनी प्रकाश मिलता है। किन्तु बड़े आकार के जर्रों के लिए प्रकाश के बैंगनी रंग की ओर परिक्षेपण की मात्रा की वृद्धि थोड़ी ही हो पाती है, क्योंकि इस दशा में परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^2}$ का समानुपाती होता है। जर्रों का आकार जब बहुत बड़ा होता है तब प्रकाश के तरंगदैर्घ्य पर परिक्षेपण की निर्भरता उल्लेखनीय नहीं हो पाती और इस दशा में परिक्षेपित प्रकाश भी श्वेत ही रहता है। 'बहुत बड़े' आकार से अभिप्राय है कि प्रकाश के तरंगदैर्घ्य की तुलना में बहुत बड़ा, उदाहरण के लिए ०.०1 मिलीमीटर के आकार के जर्रे!

1. Kilarney 2. J. Tyndall

इससे यह बात समझी जा सकती है कि क्यों सिगार या सिगरेट का धुआँ तुरन्त ही हवा में फेंके जाने पर नीला दीखता है, किन्तु कुछ देर तक मुँह में उसे रख कर धुआँ बाहर निकाले तो यह सफ़ेद रंग का हो जाता है। बाद वाली दशा में धुएँ के जर्रे पानी की परत से घिर जाते हैं अतः अपेक्षाकृत ये बहुत बड़े आकार के बन जाते हैं।

वाष्प-इंजिन की भाप सेफ्टीवाल्व के बहिर्द्वार (एक्जास्ट छिद्र) के निकट तो नीलापन लिये रहती है किन्तु और ऊपर जाने पर सफ़ेद हो जाती है, क्योंकि ऊपर जाने पर वाष्प का और अधिक सघनन¹ हो जाता है अतः उसमे स्थित बूंदों का आकार बढ़ जाता है। इंजिन के धुएँ और भाप के रंग के अन्तर का, आपतित प्रकाश, तथा उनमें से गुजर कर आनेवाले प्रकाश, दोनों ही में ध्यानपूर्वक अवलोकन करिए और इस बात की सावधानी बरतिए कि इन दोनों के बीच आप कभी धोखा न खाएँ!

अभी तक हमने केवल अपेक्षाकृत हलके धुएँ के बादलों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण पर विचार किया है; किन्तु अत्यन्त घने धुएँ में यह घटना जटिल हो जाती है, क्योंकि तब प्रकाश का एक जर्रे से दूसरे जर्रे तक बारम्बार परिक्षेपण होता है। सूखी पत्तियों की ढेरी की आग से उठते हुए धुएँ का प्रेक्षण कीजिए, तो आप देखेंगे कि धुएँ के स्तम्भ के हाशिये तो मनोरम नीले रंग के होते हैं जिस प्रकार लकड़ी से उठनेवाले सभी धुएँ होते हैं, किन्तु केन्द्र के निकट की ओर के भाग जहाँ धुआँ सबसे अधिक घना होता है, करीब-करीब सफ़ेद रंग के ही होते हैं। सरलता से यह सिद्ध कर सकते हैं कि जो प्रकाश काफी मोटी तहों से परिक्षेपित होकर हमारी आँखों में पहुँचता है वह सदैव ही श्वेत रंग का होगा चाहे उसके प्रत्येक जर्रे से परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश कितना ही अधिक नीला क्यों न हो, क्योंकि धुएँ के बादल पर गिरनेवाला समस्त प्रकाश अन्त में उससे बाहर निकलेगा ही, बशर्ते क्रिया केवल परिक्षेपण की हो रही हो, अवशोषण की नहीं (§१७६)।

हमारी चिमनी का धुआँ तथा फैक्टरी से निकलनेवाला धुआँ आपतित प्रकाश में आमतौर पर काला दीखता है, धुएँ का स्तम्भ चाहे कितना ही मोटा तथा अपारदर्शी क्यों न हो--इससे प्रगट होता है कि कालिख के टुकड़े प्रकाश का न केवल परिक्षेपण करते हैं बल्कि उसका प्रबल अवशोषण भी करते हैं। इस किस्म के धुएँ की पतली तहों में से देखने पर आकाश बादामी रंग का प्रतीत होता है, फिर भी परिक्षेपण के प्रकाश में इस धुएँ का जो रंग दीखता है उसे मुश्किल से ही नीलापन लिये हुए कहा जा

1. Condensation

सकता है। अतः आकाश का यह बादामी रंग, धुएँ के जर्रों द्वारा अन्य रंगों के अवशोषण के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए। *यह व्याख्या इस बात के अनुरूप ही है कि कार्बन* द्वारा प्रकाश का अवशोषण स्पेक्ट्रम के लाल रंग से बैंगनी रंग की ओर तेजी से बढ़ता जाता है; जब किसी आग लगे हुए मकान से उठते हुए धुएँ में से होकर हम सूर्य को देखते हैं तो उसका रंग रक्तिम वर्ण का दीखता है जो इसी विशिष्टता का प्रदर्शन करता है।

१७३. नीला आकाश[1]

मेघ-दलों के ऊपर है व्योम सतत नीलवर्णी—एच. ड्राखमान्[2]।

निःसीम सौन्दर्य के साथ नीला आकाश पृथ्वी को परिवेष्टित किये हुए है। लगता है मानो यह नीलापन अथाह है, जैसे स्वयं इसकी गहराई घनीभूत हो गयी हो। इसके रग की किस्में अपरिमित है, और यह रंग दिन प्रति दिन तथा आकाश के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक बदलता रहता है।

इस आश्चर्यजनक नीले वर्ण का कारण क्या हो सकता है? स्वयं वायुमण्डल से उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश के कारण यह उत्पन्न नही हो सकता क्योंकि तब तो रात्रि के समय भी यह चमक पैदा करता। न ही इस कारण कि इसके पीछे नीले प्रकाश का *कोई स्रोत मौजूद है क्योंकि रात को हम उस अँधेरी पृष्ठभूमि के सौन्दर्य का अवलोकन* करते है जिसके सम्मुख वायुमण्डल हमें दृष्टिगोचर होता है। अतः इस घटना का कारण तो स्वय वायुमण्डल में ही निहित होना चाहिए। फिर भी यह सामान्य रग–अवशोषण की क्रिया नही है, क्योंकि सूर्य तथा चन्द्रमा किसी भी माने में नीले नहीं दीखते बल्कि कुछ-कुछ पीले ही ये दिखाई देते है। अतः निस्सन्देह यह अत्यन्त बारीक जर्रों वाले धुएँ-जैसी ही घटना है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि आकाश का प्रकाश सूर्य का परिक्षेपित प्रकाश मात्र है! हम जानते है कि स्पेक्ट्रम के बैंगनी सिरे के ज्यो-ज्यो निकट हम पहुँचते है त्यों-त्यो नन्हे जर्रों द्वारा होने वाला परिक्षेपण भी बढ़ता जाता है। दरअसल आकाश का रंग अधिकाश बैंगनी प्रकाश से (जिसके लिए हमारी आँख

1. The famous Swiss geologist, A. Heim, has written a splendid book called Luftfarben (Zurisch, 1912), in which he describes in popular and enthusiastic way the colours of the sky and the twilight phenomena. The coloured reproduction of water-colours are superb 2. H. Drachman

अधिक नवेदी नहीं है) निर्मित होता है, और इनमे काफी मात्रा नीले रग की होती है और थोडी मात्रा हरे रग की तथा अत्यन्त मात्रा पीले और लाल की; इन सभी रंगो का योग आकाशीय नीला रग प्रदान करता है।

तो अब पदार्थ के वे जर्रे कौन से है जो वायुमण्डल मे प्रकाश का परिक्षेपण करते है ? ग्रीष्म ऋतु में, एक लम्बी अवधि के सूखे के उपरान्त, हवा, रेत और मिट्टी के असख्य जर्रों से भर जाती है जो हवा मे उतराते है और जिनके कारण दूर के भू-दृश्य हमें धुधले दीखते है; ऐसे ही अवसरो पर आकाश का नीलापन हल्का पड जाता है और वह कुछ सफेदी लिये हुए प्रतीत होता है। किन्तु पानी की कुछ भारी बौछारो के उपरान्त जबकि वर्षा के कारण गर्द घुल जाती है, वायु स्वच्छ और पारदर्शी बन जाती है और तब आकाश का रग गहन और सपृक्त नीला हो जाता है। जब कभी ऊँचे अलकामेघ प्रगट होते है जिनके कारण वायु बर्फ के हिमकणों से भर जाती है, तो यह मनोरम नीला रंग विलुप्त हो जाता है तथा यह अपेक्षाकृत अधिक श्वेत वर्ण मे परिणत हो जाता है। अत न तो वास्तव में धूल के कण और न ही पानी और बर्फ के नन्हे जर्रे, आकाशीय महराबदार छत के नीले रग का परिक्षेपण करते है। एक मात्र सम्भावना यह है कि स्वय हवा के अणु परिक्षेपण-केन्द्र सरीखे काम करते है—अवश्य यह प्रभाव हलका ही होता है, फिर भी इतना प्रबल तो होता ही है कि हवा की कई मील मोटी तहों की चमक में उल्लेखनीय वृद्धि हो जाती है और यह वृद्धि बैंगनी तथा नीली किरणो के लिए निश्चय ही विशेष अधिक होती है ($\frac{1}{\lambda^4}$ का नियम)।

सूर्य की रोशनी, जो हमें अब दीखती है, नीले और बैंगनी प्रकाश से वञ्चित होती है जिसे हवा में परिक्षेपित कर दिया होता है। इसीलिए सूर्य हलका पीला वर्ण धारण कर लेता है जो उस वक्त और भी प्रमुख हो उठता है जब सूर्य आकाश में कम ऊँचाई पर स्थित होता है, तब इसकी किरणों को वायु मे अपेक्षाकृत लम्बा मार्ग तय करना पड़ता है। सूर्य का यह पीतवर्ण क्रमश. नारगी वर्ण और फिर लाल रग में परिणत हो जाता है—यह लाल रग अस्त होते हुए सूर्य की एक प्रमुख विशिष्टता है।

प्रकाश के तरगदैर्ध्य के ०.१ भाग से भी छोटे कणो द्वारा परिक्षेपण का रैले का प्रख्यात सूत्र निम्नलिखित समीकरण द्वारा व्यक्त होता है।

$$S = \text{नियताङ्क} \times \frac{(n-1)^2}{N\lambda^4}$$

जिसमें S इकाई आयतन द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रगट करता है; N प्रति इकाई आयतन जर्रों की सख्या है, तथा n वर्तनाङ्क है।

१७३ क. वायुजनित अनुदर्शन[1]

वायुमण्डल के अनुदर्शन का निरीक्षण करने के निमित्त दूर-स्थित वन एक उत्तम मटमैली पृष्ठभूमि का काम देता है और जितनी ही अधिक इसकी दूरी होती है उतना ही अधिक धुंधला तथा नीला यह प्रतीत होता है। हमारे और वन के बीच हवा की मोटी तह सूर्य की किरणों द्वारा बगल से प्रकाशित होती है, तो उससे परिक्षेपित होने वाला प्रकाश उस पृष्ठभूमि पर उसी प्रकार छा जाता है जैसे किसी झीने पर्दे का प्रकाश उसके पीछे स्थित चीजों पर छा जाता है। इस प्रकार प्रकाशित भाग तथा अँधेरे वाले भागों के बीच का अन्तर बहुत कुछ अंशों में कम हो जाता है, फलस्वरूप पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति अधिक एकसम दीखती है, साथ ही साथ अधिक नीले वर्ण की भी। इस वायुजनित अनुदर्शन की मात्रा के अनुसार वृक्षों के झुरमुट की दूरी का हमारा अन्दाज भी अनायास ही प्रभावित होता है। एक वृक्ष जो १०० गज की दूरी पर हो, निकट के वृक्ष की अपेक्षा अधिक नीला वर्ण लिये हुए दीखता है। हरे रंग की घास का मैदान, दूरी के बढ़ने पर आश्चर्यजनक तेजी के साथ नीले-हरे वर्ण का हो जाता है और बाद में नीले रंग का। दूर की पहाड़ियाँ अक्सर मनमोहक नीले रंग की दीखती हैं, ठीक उसी प्रकार का नीला रंग जैसा सोलहवीं शताब्दी के चित्रकार वान आइक[3] तथा मेम्लिंग[3] आदि अक्सर एक बड़े पैमाने पर पृष्ठभूमि के दृश्य के चित्रण के लिए इस्तेमाल करते थे। समुद्रतट के टीले भी जो हरियाली से परिपूर्ण तरंगों की भाँति, एक के पीछे दूसरे, श्रृंग की श्रेणियों की शक्ल में दूर तक चले जाते हैं, मनमोहक 'नीले' क्षितिज उपस्थित करते हैं। इस वायुजनित अनुदर्शन के कारण प्रत्येक वर्ण उसी नीलेपन को धारण करके एक-दूसरे के साथ समरूप से मिल जाता है; केवल मकानों के लाल रंग तथा अत्यन्त निकट के घास के मैदानों के हरे रंग प्रमुखरूप से उभरकर रंगों के इस साम्य में व्यवधान उपस्थित करते हैं। भू-दृश्यों में इसका आप स्वयं अवलोकन कीजिए।

इसके प्रतिकूल हम चमकीली पृष्ठभूमि में रंगों का परिवर्तन उनके पूरक रंगों में प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकते हैं। पर्वतीय प्रदेशों में हिमाच्छादित पहाड़ को चुन सकते हैं; मैदानों में पुञ्ज-मेघों की पंक्तियों का अवलोकन कर सकते हैं जो

1. *Aerial Perspective*
2. *Heim, Luftfarben (cf, §172); Vaughan Cornish, Geogr. Journ. 67, 506, 1926, from which paper especially the end of § 173 has been taken* 3. *Van Eyck and Memling*

निकट में तो चकाचौंध उत्पन्न करनेवाले श्वेत रंग के दीखते हैं, किन्तु दृश्य में अधिक दूरी पर दीखनेवाले बादल क्रमशः पीले पड़ते जाते हैं।

फिर भी मटमैली पृष्ठभूमि पर परिक्षेपित नीला प्रकाश चमकीले भागों के पीलेपन की तुलना में कहीं अधिक सुस्पष्ट दीखता है। पहली दशा में अँधेरे का स्थान प्रकाश की अल्पमात्रा ले लेती है, और दूसरी दशा में प्रचुरमात्रा की प्रदीप्ति में केवल अल्पमात्रा का परिवर्तन हो पाता है, अतः आपेक्षिक अन्तर बहुत ही कम होता है (§६४)।

देश के मैदानी इलाकों के विस्तृत क्षितिज पर वायुजनित अनुदर्शन अपने पूर्ण गौरव के साथ विकसित होता है और आर्द्रता की मात्रा में निरन्तर परिवर्तन होते रहने के कारण वायु के अणुओं द्वारा परिक्षेपित नीले प्रकाश तथा धुंधले आकाश के प्रबलतर और अधिक भूरे प्रकाश, बारी-बारी से प्रमुखता प्राप्त करते रहते हैं।

कभी-कभी पानी की दो बौछारों के दर्मियान उच्च दाब की वायु का क्षेत्र हमारे ऊपर से गुजरता है और तब वायु अत्यन्त पारदर्शी तथा स्वच्छ हो जाती है। अग्रभूमि में छाया तथा रंग स्पष्ट उभरते हैं तथा पृष्ठभूमि के अंधेरे भाग नीललोहित–नीला वर्ण धारण कर लेते हैं।

धुन्ध वाले दिन अग्रभूमि में रंगों की विविधता उतनी नहीं हो पाती, और ये भूरे से ही प्रतीत होते हैं। बीच की भूमि के उभार अधिक स्पष्ट हो उठते हैं क्योंकि गड्ढे वाले भाग उभारवाले भागों की अपेक्षा धुन्ध की अधिक मोटी तह में से देखे जाते हैं (किन्तु §९१ देखिए) और अन्त में बहुत दूर के दृश्य अधिक अस्पष्ट हो जाते हैं।

ग्रीष्म की बढ़िया ऋतु में, जबकि बैरोमीटर की ऊँचाई अधिक होती है, वायु में धूल के बहुत से कण मौजूद होते हैं, और तब आकाश बहुत ही चमकीला दीखता है किन्तु इसका नीलापन अधिक नहीं होता; अतः प्रकाश और छाया के बीच विपर्यास कम ही उभर पाता है और फिर यह भी बात है कि प्रेक्षक की आँखें आकाश की चमक से निरन्तर चकाचौंध खाती रहती हैं।

चाँदनी रात का दृश्य सर्वोत्तम उस वक्त होता है जब हवा में धुन्ध कतई मौजूद नहीं होती है, क्योंकि इसकी वजह से प्रकाश मन्द पड जाता है, विपर्यास हलका जान पड़ता है, और दृश्य के लिए अधिक सम्भावना यह होती है कि वह एकरस भूरापन धारण कर ले।

वायुजनित अनुदर्शन के कारण ही नाविक को दूर का समुद्रतट नीले रंग का तथा वायव्य-सा दीखता है, जिसके मुकाबले में लहर अधिक गाढे नीले रंग की प्रतीत होती

हैं और दृश्य की अग्रभूमि में इनकी अधिक सुस्पष्ट शक्ल उभर आती है। दूर का प्रदेश उसे शान्ति का परिचायक, एक मायावी राज्य सा प्रतीत होता है····।

१७३ ख, पर्वतीय प्रदेश में प्रकाश और वर्ण। वायुयान से दीखनेवाला भू-दृश्य

चौरस मैदानों में रहनेवालों के लिए पर्वतीय दृश्य का आश्चर्य्यजनक आकर्षण मुख्यतः वहाँ की वायु की स्वच्छता के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए, न कि पहाड़ों की ऊँचाई के कारण। फैक्टरी या बड़े नगरों का धुआँ वहाँ मौजूद नहीं होता, फलस्वरूप वहाँ की हवा में धूल के बड़े जर्रों की संख्या कम होती है, रंग अधिक संपृक्त होते हैं और वायु में दृश्यों का अनुदर्शन अधिक आकर्षक होता है। भू-दृश्य के रंगविन्यास के मौलिक सौन्दर्य्य का, जो मैदानी इलाकों में औद्योगिक विकास के प्रभाव से निरन्तर दूषित होता जा रहा है, पहाड़ों पर अभी भी पूर्ण वैभव के साथ आनन्द लिया जा सकता है। फिर अधिक ऊँचाई के कारण यहाँ वायु विशेषरूप से अधिक विरल होती है अत. इसकी परिक्षेपण-क्षमता घट जाती है। १०००० फुट से अधिक ऊँचाई पर अनुभवहीन यात्री दूरियों के आँकने में वार-वार एकसी ही गलती करता है। अनजाने ही वह हलके परिक्षेपण का कारण यह समझ बैठता है कि सामने का दृश्य निकट ही स्थित है। पहाड़ों पर से हम देख सकते हैं कि सूर्य की तेज रोशनी से प्रकाशित नीचे की हवा किस प्रकार घाटी को एक आवरण की तरह ढक लेती है, जबकि नीचे घाटी के लोगो के लिए तेज रोशनी से प्रदीप्त पर्वतचोटियो के देखने मे बाधा डालनेवाली कोई भी चीज मौजूद नहीं होती।

१३००० फुट से अधिक ऊँचाई पर आकाश नीला-काला दीखता है, सूर्य और चन्द्रमा अपना सामान्य खुशनुमा पीतवर्ण प्रदर्शित करने के बजाय प्रचण्ड श्वेत प्रकाश के दीखते हैं। चमकीले बर्फ से ढके मैदान चकाचौंध उत्पन्न करते हैं और परछाइयाँ गहरे कालेरंग की और तीव्र होती हैं। इन तीव्र विपर्यासों को देख कर ही हम यह बात पूर्णरूप से महसूस कर पाते हैं कि चौरस प्रदेशों के दृश्यों में कितना साम्य तथा कोमलता रहती है।

वायुयान से देखने पर भी प्रकाशीय प्रभाव भिन्न होता है। कम ऊँचाई पर उड़ते समय नीचे के भू-दृश्य से आँख तक पहुँचने वाले प्रकाश को परिक्षेपण करने वाले वायु-स्तरों में से होकर कम दूरी पार करनी होती है। जब तक हम ठोस भूमि पर होते हैं, दृश्यों को एक धुँधलेपन का आवरण ढके रहता है; यह आवरण इस दशा में लगभग

पूर्णतया विलुप्त हो चुका होता है और पहली बार सभी रंग अपने पूर्ण वैभव तथा संपृक्तता के साथ प्रदर्शित होते हैं। इससे यह बात समझ मे आती है क्योकि प्रत्येक व्यक्ति जिसे वायुमार्ग से यात्रा करने का अवसर मिल चुका है, इन दृश्यों के प्रति आकर्षण का अनुभव करता है और अधिक ऊँचाइयों पर यह प्रभाव उत्तरोत्तर आल्पसपर्वत के प्रेक्षणो के सदृश होता जाता है।

१७३ ग. हाथ की ओट में आँख—एक बेलनाकार नली द्वारा प्रेक्षण[1]

दूरी पर गौर से देखते समय हम स्वभावतः अपने हाथ से आँख के ऊपर ओट दे लेते हैं। ऐसा हम क्यों करते हैं? हाथ इधर-उधर से आनेवाले प्रकाश को आँख में प्रवेश करने से रोकता है जो आँख में स्थित माध्यम द्वारा परिक्षेपित होकर भू-दृश्य को एक सामान्य श्वेत प्रकाश के आवरण से आच्छादित कर देता। सुरक्षा का यह साधन उस वक्त और भी कारगर होता है, जब उँगलियों को हम इस तरह मोड़ लेते हैं कि वे मोटे तौर पर एक खोखले बेलन की शक्ल धारण कर लेती हैं और तब इसके भीतर से हम देखें तो भू-दृश्य के रंग आश्चर्यजनक रूप से संशोधित हो जाते हैं। और ये प्रभाव उस दशा में और भी लाक्षणिक होते हैं जब हम कार्डबोर्ड की बनी खोखली बेलनाकार नली में से देखते हैं जिसके सिरों पर नन्हे छिद्र वाले डायफ्राम[2] बने हों, जैसा अगले अध्याय में बतलाया गया है।

पहले निकट की चीजो को देखिए। उनके सभी रंग अधिक संपृक्त और समृद्ध हो जाते हैं। देवदार का वृक्ष अधिक हरा दीखता है। सूराख को, जिसमें से आप देख रहे हैं, धीरे-धीरे यदि आप चौड़ा करे तब रग में पीलेपन का पुट नजर आता है; चौड़ाई में थोड़ी भी वृद्धि करें तो उसके कारण रंग में पर्याप्त अन्तर आ जाता है जिससे सिद्ध होता है प्रकाश का परिक्षेपण मुख्यतः अल्पमान के कोण पर होता है। रग ज्यों-ज्यों अधिक सपृक्त होते जाते हैं त्यों-त्यों दृश्य का विपर्यास अधिक बढ़ता जाता है। इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि क्यों आँखों पर हाथ की ओट लगाने के हम अभ्यस्त हैं।

१. इस विषय के सम्बन्ध में हाल्डेन द्वारा कुछ प्रेक्षण किये गये हैं जिनका भलीभाँति समाधान नही किया जा सका है (The Philosophy of a Biologist. Oxford 1935 p.52। खोखले बेलन में से देखने पर रंग मे पीलेपन का समावेश हो जाता है, हवा और समुद्र लगभग श्वेत दीखते हैं; यदि आकाश पर कोई बादल गुजरता है तब नीला रंग पुनः प्रगट हो जाता है (क्यों ?)। 2. Diaphragm

अब उसी तरीके से दूर के भू-दृश्य का अवलोकन करिए। आप पायेंगे कि यह प्रकाश के आवरण से आच्छादित दीखता है जो सामान्यतः निलछौंवे रंग का होता है और स्पष्टतः वायु तथा धूल के नन्हे कणों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है। यह दिलचस्प बात है कि जब तक हम समूचे भू-दृश्य का अवलोकन करते हैं तब तक इस आवरण की ओर हमारा ध्यान नहीं जा पाता। पहाड़ों का दूरस्थ ढाल अक्सर भूरे या बादामी रंग का दीखता है जिसपर जहाँ तहाँ हरे वन के खित्ते मौजूद दिखाई देते हैं; किन्तु बेलनाकार नली में से देखने पर हम पाते हैं कि वास्तव में ढाल का समस्त भाग नीला है वैसा ही जैसा कि वन, किन्तु इस दशा में ढाल का रंग अधिक गहरा दीखता है तथा इसका नीला रंग अधिक भूरापन लिये रहता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस दशा में अनजाने ही भू-दृश्य पर से हम उस एक सार वर्ण के आवरण को हटा लेते हैं। इसी प्रकार के प्रेक्षण मैदानों म भी किये जा सकते हैं। कमरे के अन्दर से भी बेलनाकार नली में से जब भू-दृश्य को हम देखते हैं तो हम कह उठते हैं कि खिड़की के काँच गर्द से ढके हैं—इसके पूर्व हमारे ध्यान में यह बात नहीं आ पायी थी।

१७४. नाइग्रोमीटर की सहायता से किये गये प्रयोग[1]

'नाइग्रोमीटर'[2] एक अत्यन्त सीधे-सादे यंत्र को दिया गया विद्वत्तापूर्ण नाम है। कागज की दफ्ती की बनी हुई बेलनाकार खोखली नली लेते हैं जैसी ड्राइङ्ग कागज को डाक से भेजने के लिए काम में लायी जाती है। इसकी लम्बाई २० इंच तथा चौड़ाई लगभग १ इंच होती है तथा दोनों सिरों पर छोटा ढक्कन लगा रहता है। एक ढक्कन में १।४ इंच व्यास का सूराख कटा रहता है, दूसरे में १।८ इंच व्यास का। फिर काले कागज की टोपी बेलन के दोनों सिरों पर चढ़ा दी जाती है, बस उपकरण इस्तेमाल के लिए तैय्यार हो जाता है।

इस उपकरण में से देखते समय दोनों में से छोटे सूराख को आँख के सामने रखना चाहिए, तब दूसरा सूराख करीब-करीब पूर्णतः अन्धेरी पृष्ठभूमि पर प्रकाशित दिखलाई पड़ता है। कुछ फासले पर स्थित खिड़की की ओर नली का मुँह करिए, तब आप खिड़की का खुला हुआ अपेक्षाकृत अधेरा भाग स्पष्ट रूप से नीलापन लिये हुए देखेंगे, जो आपके और खिड़की के दर्मियान की धूप से प्रकाशित हवा द्वारा परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश है। खिड़की के निकट जाइए—जितना ही करीब आप जायेंगे, प्रकाश का नीलापन

1. R. Wood, Phil. Mag. 1920, 39, 423, 1920 2. Nigrometer

उतना ही कम होता जायेगा—परिक्षेपण करनेवाला वायु-स्तम्भ भी छोटा होता जाता है। छोटी दूरियों के लिए यह बेहतर होगा कि नाइग्रोमीटर को एक ऐसे वक्स की ओर
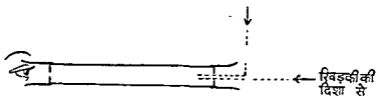
चित्र १३५—नाइग्रोमीटर द्वारा प्रेक्षण; वायुमंडल के परिक्षेपण की नाप।

इङ्गित करें जिसमें एक छोटा सूराख कटा हो और जिसके भीतर काला रंग पुता हो; यह एक लगभग 'कृष्ण वस्तु'[1] सरीखा काम करता है।

अब हम यह ज्ञात करेंगे कि वायु का कितना लम्बा स्तम्भ प्रकाश का उतना ही परिक्षेपण करता है जितना वायुमण्डलकी समस्त गहराई। कांच का एक टुकड़ा लीजिए जिसकी पीठ पर कालिख पुती हो (उदाहरण के लिए फोटोग्राफी की प्लेट, जो खूब काली पड़ गयी हो) और इसे सूराख के आधे भाग के सामने नली के अक्ष के साथ ४५° के कोण पर रखिए। यदि आप ऐसा कर सकें, तो प्रेक्षण की दिशा इस प्रकार चुनिए कि कांच से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश आकाश के उस भाग से आये जो सूर्य से लगभग ९०° की दूरी पर हो। छिद्र के बिना ढके हुए भाग में से हमारी खुली हुई, अपेक्षाकृत अँधेरी खिड़की दीखती रहती है। अब हमें पीछे की ओर कितनी दूर जाना होगा ताकि छिद्र के दोनों अर्द्धभाग समान तीव्रता वाले प्रकाश से प्रकाशित दीखें? मौसम जब स्वच्छ धूप का रहता है, तब अब पायेंगे कि आवश्यक दूरी करीब ३५० गज होगी, जब धूप तो रहती है किन्तु थोड़ी धुन्ध भी रहती है तो आप पायेंगे कि यह दूरी कदाचित् सिर्फ १४० गज ही होगी।

परावर्त्तन द्वारा कांच प्रकाश की प्रारम्भिक तीव्रता को घटाकर ५ प्रतिशत कर देता है। अतः सूर्य से ९०° के फासले पर आकाश द्वारा परिक्षेपण वायु के उस स्तम्भ द्वारा होने वाले परिक्षेपण के बराबर है जिसकी लम्बाई ३५० × २० गज = ४ मील है (मोटे तौर पर)। अब यदि वायुमण्डल को इस तरह दबा सकते कि इसकी समूची ऊँचाई के लिए इसका घनत्व उतना ही हो जाता जितना पृथ्वी की सतह के निकट, तब यह समतुल्य ऊँचाई ५.५ मील प्राप्त होती। क्योंकि प्रति वर्ग सेण्टीमीटर पर

1. Black body

खड़े वायुस्तम्भ का सम्पूर्ण भार १.०३३×१०[1] ग्राम प्राप्त होता है, तथा धरती के निकट की हवा का भार प्रति घन सेण्टीमीटर ०.००१२९३ ग्राम है अतः हमें समतुल्य ऊँचाई निम्नलिखित प्राप्त होती है—

$$\frac{१.०३३\times१०^{६}}{०.००१२९३}=८.८\times१०^{५} \text{ सेन्टीमीटर}=५.५ \text{ मील।}$$

प्रकाशीय[1] रीति से प्राप्त किये गये अङ्क के साथ इसका मिलान कुछ बहुत बुरा नही है। इसे हम इस बात का प्रमाण मान सकते हैं कि परिक्षेपण करनेवाले कण, जिनके कारण वायुजनित परिपेक्षण उत्पन्न होता है, उसी किस्म के हैं जिस किस्म के वे कण हैं जो आकाश को नीला प्रकाश प्रदान करते हैं। और यह बात कि हमारा प्रयोग-फल, ४ मील, गणना से प्राप्त अङ्क ५.५ मील से थोड़ा कम पड़ता है, यह सिद्ध करती है कि धूलिकणो की मात्रा अधिक होने के कारण हवा की निचली तहों में ऊपर की तहों की अपेक्षा अधिक प्रबल परिक्षेपण होता है। इसके अतिरिक्त फल प्राप्त करने की हमारी क्रिया हर दृष्टि से अत्यन्त स्थूल विधि की क्रिया है, अतः इससे तो हम अधिक-से-अधिक यही आशा कर सकते हैं कि बस सही कोटि का फल प्राप्त हो सकेगा।

१७५. साइनोमीटर[2] (आकाश का नीलापन नापने का यंत्र)

जस्ते की सफ़ेदी (जिंक ह्वाइट) तथा बिस्टर[3] को प्रशन-नीला[4] या कोबाल्ट-नीला के साथ विभिन्न अनुपातों मे मिलाइए। इन मिश्रणो का रग फीका नही पड़ने पाता है। कागज की दफ्ती की नन्ही-नन्ही पट्टियों पर इनके लेप चढ़ाकर उनपर अङ्क लिख दीजिए, बस आकाश के वर्ण की नाप के लिए पर्य्याप्त साधन प्राप्त हो गये। यात्रा करते समय अब भी इस तरीके को काम में ले आते है, तथा विभिन्न अङ्कों की पट्टी के प्रकाश की सचरना की जाँच बाद में वर्णविज्ञान की रीतियों द्वारा कर ली जाती है। व्यावहारिक उपयोग के लिए इस ढग के रंग-माप के स्केलों का निर्माण किया जा चुका है और कुछ दिनों पूर्व तक ये बने बनाये खरीदे जा सकते थे। इसके प्रतिरूप आसानी से तैय्यार किये जा सकते हैं।[5]

1. Optical
2. Cyanometer
3. Bistre (पीलापन लिये हुए रक्तिम पीत रंग)
4. Prussion blue (श्यामवर्ण लिये हुए नीला रंग)
5. लिंके के स्केल तथा इसके उपयोग के लिए देखिए Spangenberg, Annalin d. Hydrographic 71, 93 1943

नीलेपन के इन स्केलों का उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारी पीठ सूर्य की ओर हो तथा स्केल पर सूर्य की रोशनी पड़ती रहे।

१७६. आकाश पर प्रकाश का वितरण

सायनोमीटर की सहायता से, यदि यह आपके पास हो या अपने उपयोगी यंत्र नाइग्रोमीटर की सहायता से किसी धूपवाले दिन आकाश मे प्रकाश के वितरण का अध्ययन कीजिए। विशेषतया अपने गिर्द के आकाश का अध्ययन मनोयोगपूर्वक करिए। आकाश के एक भाग की दूसरे भाग से तुलना करने के लिए किसी छोटे दर्पण को काम मे ले आइए (प्लेट XIII) और समान प्रदीप्ति की रेखाएँ (आइसोफोटो[1] रेखाएँ) तथा समान नीलेपन की रेखाएँ चित्र १३६ की भाँति खींचिए; सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयों के लिए इस क्रिया को दुहराइए।

चित्र १३६—आकाश की समान प्रदीप्ति की रेखाएँ तथा समान नीलेपन की रेखाएँ खींचने के लिए मानचित्र।

'कुछ काल उपरान्त अभ्यस्त आँख को आइसोफोटो रेखाओं का मार्ग सहज ही दीख जाता है मानो आकाश की पृष्ठभूमि पर ये रेखाएँ नीले रंग में चित्रित कर दी गयी हों।'— सी० डोर्नो[2]।

सूर्य जब नीचे स्थित होता है तो सबसे कम प्रदीप्ति का विन्दु सूर्य से गुजरनेवाले ऊर्ध्व वृत्त पर सूर्य से लगभग ९५° की दूरी पर पडता है और जब सूर्य ऊँचाई पर स्थित होता है तो यह विन्दु इस वृत्त पर ६५° की दूरी पर पड़ता है। इस विन्दु से ही 'अन्धकार रेखा' गुजरती है जो आकाश को दो भागों में बांटती है, एक प्रदीप्त भाग सूर्य के गिर्द स्थित होता है, दूसरा प्रदीप्त भाग इसके सामने पड़ता है। इन भागों की आकृति तथा आकार सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते हैं। प्रकाश के इस वितरण को निम्नलिखित तीन घटनाओं के मिश्रित प्रभाव से उत्पन्न हुआ मान सकते हैं—

१. प्रकाश की दीप्ति सूर्य के निकट तेजी से बढ़ती है, यहाँ तक कि यह [illegible] करने लग जाती है; इसका रंग उत्तरोत्तर, अधिक उज्ज्वल [illegible] (आप को किसी इमारत के साये में खड़ा होना चाहिए, [illegible])

1. Isophotes 2. C. Dorno

२. सूर्य से ९०° की दूरी पर आकाश का प्रकाश सबसे अधिक मन्द और सबसे अधिक नीला रहता है किन्तु

३. *इसके अतिरिक्त एक और भी प्रभाव मौजूद होता है।* प्रकाश-तीव्रता ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज की ओर बढ़ती है और साथ-ही-साथ इसका रंग भी श्वेत में परिणत होता जाता है। यह प्रभाव अभी ऊपर दिये गये दोनों प्रभावों के साथ मिल जाता है।

प्रथम घटना को नाइग्रोमीटर की सहायता से हम अच्छी तरह नाप सकते हैं। दृष्टिक्षेत्र के आधे भाग को ऐसे काँच से ढक देते हैं जिसके पीछे काला रंग पुता हो; यह काँच सूर्य के निकट वाले आकाश के भाग को प्रतिबिम्बित करता है, और दृष्टिक्षेत्र के शेष अर्द्ध भाग को हम सूर्य से ४०°–५०° पर स्थित आकाश की ओर इङ्गित करते हैं। नाइग्रोमीटर की दिशा इधर या उधर कुछ अंशों तक बदलकर हम आसानी से ऐसी दिशा प्राप्त कर सकते हैं कि दृष्टिक्षेत्र के दोनों अर्द्धभाग समान प्रदीप्ति के दीखें। इस प्रकार दिशा के साथ प्रदीप्ति में परिवर्त्तन, दृष्टिक्षेत्र के उस अर्द्धभाग में विशेष प्रमुख होते हैं जो आकाश के चमकीले भाग के परावर्त्तन से प्रकाशित होता है। इस बात से कि इस तरह का सन्तुलन सम्भव है, यह निष्कर्ष निकलता है कि सूर्य के निकट के इस बिन्दु की प्रदीप्ति सूर्य से ४५° की दूरी पर पड़ने वाले बिन्दु की प्रदीप्ति की कम-से-कम बीस गुनी अवश्य होगी। आपतित प्रकाश की दिशा के साथ अल्पकोण बनाने वाली दिशा में होनेवाले इस प्रबल परिक्षेपण का कारण हवा में उतराते हुए स्थूल आकार के कण हैं जो धूल के जर्रे या नन्हीं बूंदे, दोनों ही हो सकते हैं। यह इस तथ्य के अनुरूप है कि सूर्य के निकट आकाश का रंग कम नीला होता है, *बल्कि यह अधिक श्वेत, स्वयं* सूर्य की तरह कुछ पीलापन लिये हुए होता है, क्योंकि बड़े आकार के कण सभी वर्णों के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा में करते हैं।

द्वितीय प्रभाव स्वयं परिक्षेपण के नियम का ही परिणाम है। प्रति-सूर्य बिन्दु के मुकाबले में सूर्य से ९०° कोण की दिशा में परिक्षेपण कम-से-कम दो गुना अधिक निर्बल अवश्य होता है, फिर बड़े आकार के कण इतने बड़े कोण की दिशा में मुश्किल से ही प्रकाश का परिक्षेपण कर पाते हैं। अतः जो कुछ हमें दिखलाई पड़ता है वह स्वयं वायु के *अणुओं द्वारा परिक्षेपित गहरे नीले रंग का प्रकाश होता है।*

तृतीय प्रभाव मुख्यतः हमारी आँख और क्षितिज के दर्मियान की हवा की तह की अत्यधिक मोटाई के कारण उत्पन्न होता है। यद्यपि हवा का प्रत्येक कण बैंगनी और नीली किरणों का विशेष अधिक परिमाण में परिक्षेपण करता है, किन्तु परिक्षेपण करने

वाले कण से हमारी आँख तक के लम्बे मार्ग में यही रंग सबसे अधिक मात्रा में क्षीण पड जाते हैं। वायु की तह जब बहुत ही अधिक मोटी होती है, तब ये दोनों प्रभाव ठीक एक दूसरे को नष्ट कर देते हैं।

मान लीजिए कि हमारी आँख से x दूरी पर आयतन का एक नन्हा सा परिमाण sdx भाग का परिक्षेपण करता है। हमारी आँख तक पहुँचते-पहुँचते प्रकाश की यह मात्रा e^{-sx} के अनुपात में क्षीण हो जाती है। एक असीमित मोटी तह से प्राप्त होनेवाला प्रकाश इसी तरह के सभी आयतन परिमाणों dx से प्राप्त प्रकाशमात्राओं का योग होगा अर्थात् $\int_0^\infty se^{-sx}\,dx$ जो 1 के बराबर होगा। स्पष्ट है कि यह फल s से मुक्त है, अर्थात् इसमें रंग नहीं है। अतः क्षितिज के निकट का आकाश चमकीला और श्वेत हो जाता है और करीब-करीब सूर्य से प्रकाशित सफ़ेद पर्दे के सदृश हो जाता है।

इस बात की भी बहुत कुछ सम्भावना है कि धरती के निकट के वायुस्तरों मे धूल के कण अधिक संख्या में मौजूद होते हैं जो प्रकाश के परिक्षेपण को और अधिक तीव्र तथा वर्ण को अधिक श्वेत बना देते हैं यद्यपि इस दशा में वायु स्तरों की मोटाई को असीमित नही मान सकते। हाल मे यह पाया गया है कि ऊपर वर्णन किये गये परिक्षेपण प्रभाव आकाश के रंगों का पूर्णतः समाधान नहीं करते। वायुमण्डल में अत्यधिक ऊँचाई पर, अल्प मात्रा में पायी जानेवाली गैस, ओज़ोन (जो आक्सीजन का एक विलक्षण रूप है) के कारण भी आकाश के रंगों पर अतिरिक्त प्रभाव पड़ता है।[1] ओज़ोन का रंग एक दम सच्चा नीला होता है जैसा नीले काँच का, और यह रंग अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है, परिक्षेपण की वजह से नहीं। ओज़ोन के प्रभाव का योग उस वक्त स्पष्ट होता है जब सूर्य क्षितिज के समीप पहुँचता है, यदि आकाश के रंग के निर्माण में केवल परिक्षेपण का ही हाथ होता तब इस दशा मे ऊर्ध्व विन्दु के निकट आकाश के रंग में भूरेपन का पुट नजर आना चाहिए, वल्कि पीलेपन का पुट भी। किन्तु यह अब भी अपना नीला वर्ण धारण किये रहता है—ऐसा ओज़ोन की उपस्थिति के कारण ही होता है।

सदैव, आकाश के सबसे कम प्रदीप्त भाग का ही रंग अधिकतम नीला होता है और यही पर रंग सबसे अधिक संपृक्त भी होता है। इसका अर्थ है कि कोई भी ऐसे बादल नहीं मिलते हैं जिनके अन्दर ०.०००१ मिलीमीटर से छोटे कण मौजूद हों क्योंकि

1. E. O. Hulburt, Journ, Opt. Soc. Amer. 43, 113, 1953

स्थानीय तौर पर ये प्रकाश-तीव्रता में वृद्धि कर देंगे और तिसपर भी नीले वर्ण को बिना किसी तबदीली के छोड़ देंगे।

रस्किन का कहना है कि नीला आकाश रंग के सम उतार-चढ़ाव का सर्वोत्तम दृष्टान्त है।[1] वह हमें परामर्श देता है कि सूर्यास्त के बाद आकाश के एक भाग का हम खिड़की के काँच द्वारा प्रतिविम्बित अवस्था में अध्ययन करें या फिर वृक्षों और मकानों के स्वाभाविक फ्रेम से घिरी हुई अवस्था में उसका अध्ययन करें। इस बात की कल्पना करने का प्रयत्न कीजिए कि आप किसी चित्र का अवलोकन कर रहे हैं और तब रंगों के परिवर्तन के साम्य तथा कोमलता की सराहना आप कर सकते हैं। आकाश के एक भाग से दूसरे भाग की ओर अपनी आँखें तेजी के साथ फिराइए ताकि आप की आँखें समानुयोजित होने के पूर्व, आकाश के वर्ण और दीप्ति की तुलना कर सकें। या वाटिका ग्लोब (§ ११) का उपयोग कीजिए; अथवा ऐसा चश्मा काम में लाइए जिसमें बादामी रंग के शीशे लगे हों या फिर लाल रंग का काँच काम में लाइए; आप अब अन्तर को और स्पष्ट देख पायेंगे और अलका मेघ की संरचना की विपुल बारीकियाँ दीख पड़ेंगी।

१७७. नीले आकाश के रंग की परिवर्तनशीलता

नीले आकाश का रंग प्रतिदिन वायु में मौजूद धूल तथा जलबिन्दुओं की मात्रा के अनुपात में बदलता रहता है; इस प्रकार की तुलना के लिए सायनोमीटर अनिवार्य रूप से आवश्यक है। नीले आकाश पर दीप्ति का वितरण सामान्यतः निम्नाङ्कित किस्मों में से किसी एक के अनुसार होता है[2]—

(क) शुद्ध ध्रुवीय और महाद्वीपीय वायु, ऊँचे दाब का प्रदेश, और वर्ण की बौछारों के दर्मियान अस्थायी रूप से स्वच्छ हुआ आकाश;

गहरा नीला वर्ण लगभग सूर्य के निकट तक पहुँचता है, यद्यपि ज्यों-ज्यों यह सूर्य के निकट पहुँचता है त्यों-त्यों यह शनैः शनैः अधिक चमकीला और श्वेत होता जाता है।

(ख) समुद्री-उष्णकटिबन्धीय गर्दगुबार भरी हवा, पुन्य, स्तार-मेघ, या स्तार-पुञ्ज मेघ के विलुप्त होने पर;

सूर्य के गिर्द हम एक धवल मण्डलक देखते हैं जो करीब १०° तक की दूरी तक लगभग एक समान रूप से चमकीला रहता है, इसके बाहर इसकी

1. Ruskin, Elements of Drawing
2. F. Volz. Ber. d. deutschen Wetter dienstes, 2, No. 13, 1954

चमक घट जाती है, विशेषतया २५° की दूरी पर, और तब इसका रंग सामान्य पृष्ठभूमि की तरह का नीला हो जाता है।

(ग) विलुप्त होता हुआ ठण्डा पाला; देर से मौजूद वायुराशियाँ, शुष्क अवस्था की एक लम्बी अवधि के उपरान्त;

सूर्य के गिर्द एक नीला-श्वेत मण्डलक प्रगट होता है, जो १५°–३०° की दूरी पर एक बादामी या पीतवर्ण का वृत्ताकार हाशिया प्रदर्शित करता है और यह हाशिया आगे जाने पर नीले आकाश के रंग में मिल जाता है। (विशप के छल्ले के लिए देखिए § १९६)।

सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती है, ख और ग में वर्णित मण्डलक उतने ही अधिक बड़े होते हैं। सूर्य्य की ऊँचाई जब ४५° से घटकर १०° पर आती है तो मण्डलक का आकार दो गुना हो जाता है। विशेष दशाओं में, जब विशप का छल्ला दृष्टिगोचर होता है तो असाधारण रूप से बड़े आकार का मण्डलक प्रगट हो सकता है।

छुट्टी के दिनों में इटली के आकाश की तुलना आप यहाँ के आकाश के नीले रंग से कीजिए। इङ्गलैण्ड के नीले आकाश की तुलना उष्ण कटिबंध के आकाश से करिए।

दिन में विभिन्न समयों पर आकाश के नीले रंगों की तुलना करिए। सूर्योदय या सूर्य्यास्त के समय आकाश अधिकतम नीला रहता है[1] और यह बात सहज ही समझ में भी आती है क्योंकि ऊर्ध्व बिन्दु के निकट के बिन्दु इस वक्त सूर्य्य से तथा क्षितिज से ९०° की दूरी पर स्थित होते हैं (देखिए § १७६)।

चित्र १३७—छोटे बड़े आकार की कणिकाओं द्वारा विभिन्न दिशाओं में प्रकाश का परिक्षेपण।
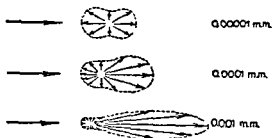
नन्हें कण बैंगनी और नीले प्रकाश का विशेष मात्रा में परिक्षेपण करते हैं और यह परिक्षेपण हर दिशा में समान मात्रा में होता है।

बड़े आकार के कण सभी वर्ण के प्रकाश (श्वेत प्रकाश) का परिक्षेपण समान प्रबलता के साथ करते हैं और यह परिक्षेपण अधिकांश अल्पकोण वाली दिशा में ही होता है (चित्र १३७)।

1. Phys. Rev. 26, 497, 1908

१७८. दूर के आकाश का रंग कब नारङ्गी वर्ण का होता है और कब हरे वर्ण का ?

हम देख चुके हैं कि आकाश जब निरभ्र होता है तो क्षितिज का रंग वैसा ही होता है जैसा किसी सफ़ेद कागज का, जिसपर सूर्य का प्रकाश सीधे ही पड़ रहा हो। अतः स्पष्ट है कि सूर्यास्त के लगभग, जबकि सभी चीजें सूर्य के सुहावने नारङ्गी रग के प्रकाश से आलोकित होती रहती हैं, वही रग समूचे क्षितिज पर भी प्रगट होता है।

किन्तु ऐसे भी अवसर आते हैं जब दूरस्थ क्षितिज, सूर्य के अस्त होने के क्षण से बहुत पहले ही नारङ्गी रंग धारण कर लेता है। घने श्यामवर्ण के बादलों की पेटी सम्पूर्ण भू-दृश्य के एक सिरे से दूसरे सिरे तक छायी रहती है, और बहुत दूर क्षितिज के निकट नीचे ही केवल थोड़ा-सा खुला भाग दीखता है जहाँ से सूर्य का प्रकाश आता रहता है (चित्र १३८)। ऐसे मौकों पर आकाश के इस नन्हें से भाग का रंग आश्चर्यजनक रूपसे सुहावने नारङ्गी वर्ण का होता है जो दूरस्थ फार्म आदि के अन्धकारमय काले सिल्युएत प्रस्तुत करता है और ये सिल्युएत आकृतियाँ, भू-दृश्य के शेष भाग के अन्धकारमय होनेके कारण और भी अधिक प्रभावोत्पादक बन जाती हैं।

चित्र १३८—भू-दृश्य का एक बड़ा भाग जब घने बादलों की पेटी से ढका होता है तब कभी-कभी क्षितिज खुशनुमा नारंगी वर्ण का दिखलाई पड़ता है।

क्रिया इस प्रकार होती है; x स्थिति पर वायु के एक आयतन पर विचार कीजिए जो ऐसी सूर्यरश्मियों द्वारा प्रदीप्त हो रही हैं जो वायुमण्डल में X लम्बाई की दूरी तय करके आती हैं। मान लीजिए कि तय किये गये मार्ग के प्रति किलोमीटर द्वारा प्रकाश का s भिन्नांश परिक्षेपित होता है, तब x स्थिति पर प्रकाश तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती होगी। x स्थिति के अणु हमारी आँख की दिशा में भिन्नांश s के अनुपात में आपाती प्रकाश परिक्षेपित करते हैं, अतः यदि x स्थिति पर प्रदीप्ति-तीव्रता इकाई हो, तो इसका भिन्नांश se^{-sx} हमारी आँख में पहुँचेगा। किन्तु x स्थिति पर प्रकाश-तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती है, अतः आँख में वास्तव में प्रवेश करने वाले प्रकाश की मात्रा $se^{-sX} \times$

e^{-px} या $sc^{-s(X+x)}$ समानुपाती होगी। इस पद का मान s के सामान्य मान के लिए अधिकतम होता है, किन्तु s का मान जब बहुत बड़ा या बहुत छोटा होता है तो इस पद का मान करीब-करीब शून्य हो जाता है। दूसरे शब्दों में, अधिक लम्बे तरंग-दैर्घ्य का प्रकाश जिस वायुस्तर से गुजरता है उसके द्वारा वह अधिक मात्रा में परिक्षेपित नहीं होता, इसके प्रतिकूल लघु तरंग-दैर्घ्य का प्रकाश वायुमण्डल में से होकर लम्बा रास्ता तय करने में अत्यधिक मात्रा में क्षीण हो जाता है। चित्र १३९ की ग्राफ़ रेखाएँ यह प्रदर्शित करती हैं कि ऐसे वायु-प्रदेशों से जिनके लिए $X+x$ क्रमशः ०, ५, १०, १५, २५ और ३० मील है, हमारी आँख तक पहुँचनेवाले प्रकाश की सरचना कैसी होती है। महत्तम मान, अर्थात् हम तक पहुँचने वाले प्रकाश में महत्तम तीव्रता वाला वर्ण, प्रदीप्त होने वाले वायुप्रदेश की दूरी के बढ़ने के अनुसार ही नीले से लाल रंग की ओर खिसकता चला जाता है। जब $X+x$ का मान
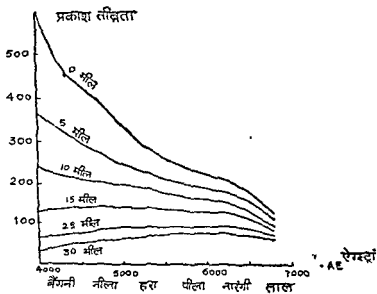
चित्र १३९—आँख से विभिन्न दूरियों पर स्थित वायु के एक छोटे आयतनवाले प्रकाश की संरचना।

२० मील है, तब इस महत्तम तीव्रता वाले प्रकाश का वर्ण करीब-करीब हरा रहता है, किन्तु ३० मील के लिए यह नारङ्गी रंग में परिणत हो गया है।

कुछ अवसरों पर आकाश के वर्ण में दिखाई देने वाले मनोरम हरे रंग की उत्पत्ति का भी इससे समाधान होता है जैसे हिमपात के बाद। ग्राफ़ चित्र १३९ से हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि उस रंग-आभा में हरा वर्ण अन्य वर्णों की तुलना मे थोड़ी ही अधिक प्रमुखता प्राप्त करता है, अतः यह हरा रग केवल अल्पमात्रा में ही संतृप्त होगा; प्रेक्षण में भी ऐसा ही पाया जाता है।

क्षितिज से आने वाले प्रकाश में हरे और पीले वर्ण के अवयव वास्तव में सदैव ही मौजूद होते है, यद्यपि जब वायु बादल विहीन होती है तो निकट के कणों से आने वाले नीले प्रकाश के साथ वे मिलकर श्वेत प्रकाश उत्पन्न करते हैं। ज्योंही प्रकाशपथ के एक हिस्से पर कोई छाया पड़ती है, तो तुरन्त प्रकाशवर्ण के अलौकिक प्रभाव उत्पन्न होते हैं; और आकाश में घिरे बादल जब कभी विभिन्न स्थलों पर फटकर उसके खुले भाग प्रदर्शित करते हैं तो रंग के तरह-तरह के शेडों का निर्माण सम्भव होता है।

१७९. सूर्यग्रहण के अवसर पर आकाश का रंग

सूर्य का आंशिक ग्रहण हमें अवसर प्रदान करता है कि हम देख सकें कि चन्द्र की छाया के कारण आकाश का रंग किस प्रकार बदल जाता है तथा यह कि जिस ओर से छाया आती है उस ओर का रंग, जिधर की ओर छाया बढती है उधर के रंग से किस प्रकार भिन्न होता है।

सूर्य का पूर्णग्रहण, जो दुर्भाग्यवश अत्यन्त ही दुर्लभ अवसरों पर लगता है, कहीं अधिक शानदार किस्म के रंगों का प्रदर्शन करता है।

आकाश के जिस ओर से छाया आती है उधर का रंग गहरा नीललोहित होता है, मानो गरज तरज वाला तूफ़ान उठने वाला हो। सर्वग्रास पर दूरस्थ आकाश गहरे नारङ्गी वर्ण का होता है क्योंकि उस स्थान के वायुमण्डल के भाग पूर्ण ग्रहण के क्षेत्र की सीमा से बाहर होने के कारण सूर्य की किरणों द्वारा अब भी प्रकाशित होते रहते हैं और इस क्षण वायुमण्डल के अप्रकाशित भाग के पार उन्हें हम सीधे ही देखते हैं (देखिए § १७८)।

१८०. नीले आकाश के प्रकाश का ध्रुवण (देखिए § १८२)

नीले आकाश से आने वाला प्रकाश काफ़ी अधिक मात्रा में ध्रुवित होता है। यह प्रभाव विशेषतया उस वक्त स्पष्ट होता है जब कि सूर्य आकाश में कम ऊँचाई पर स्थित होता है। 'निकल' की सहायता से इन प्रभावों का निरीक्षण किया जा सकता है या और भी अधिक सरल तरीका यह होगा कि काँच का टुकड़ा काम में लायें जिसके

पीछे कालिख पुती हो।[1] यदि काँच पर प्रकाश की किरण अभिलम्ब के साथ लगभग ६०° का आयतनकोण (ध्रुवण कोण) बनाती हुई गिरती है, तो परावर्तित प्रकाश लगभग पूर्णरूप से ध्रुवित होता है और परावर्तित होने वाले कम्पनों की दिशा आयतन-तल के समकोण होती है।

अब हम देखेंगे कि ठीक ऊर्ध्व दिशा का आकाश काँच में किस प्रकार प्रतिविम्बित होता है; इस काँच को आँख की सतह से करीब ८ इंच ऊपर रखना चाहिए ताकि यथासम्भव परावर्त्तन ध्रुवणकोण पर ही हो (चित्र १४०, a)। यदि आप दिक्-सूचक की सभी दिशाओं की ओर बारी-बारी से अपना रुख करें और साथ ही साथ काँच को इस प्रकार पकड़े रहें कि आपके सिर के ऊपर के आकाश के **उसी भाग** को यह सदैव प्रतिविम्बित करता रहे तो आप देखेंगे कि परावर्तित प्रतिविम्ब उस वक्त सबसे अधिक **चटकीला** होता है जब आप सूर्य्य की ओर मुँह करते हैं या जब ठीक उसकी विपरीत दिशा में; किन्तु इन दिशाओं की समकोण दिशा में जब आप खड़े होते हैं तो प्रतिविम्ब **मन्द प्रकाश** का दीखता है। इससे सिद्ध होता है कि ऊर्ध्व विन्दु के आकाश से आने वाला प्रकाश उस घरातल के समकोण दिशा में कम्पन करता है जिसमें सूर्य्य, ऊर्ध्व विन्दु तथा आप की आँख स्थित होती है। जब कभी प्रकाश क्षुद्र कणों से परिक्षेपित होता है तो यह नियम व्यापक रूप से लागू होता है।

इसके बाद क्षितिज के निकट वाले आकाश के प्रतिविम्बन की हम जाँच करेंगे, और काँच को इस तरह रखे रहेंगे कि आपतन और परावर्त्तन के कोण ध्रुवण कोण के बराबर हों (चित्र १४०, b)। हम देखते हैं कि सूर्य की ओर तथा उसके प्रतिकूल दिशा में प्रतिविम्ब चटकीला दीखता है और इसकी समकोण दिशा में मन्द प्रकाश का। सूर्य की दिशा में यह चटकीला दीखे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, किन्तु अन्य तीन दिशाओं में आँखों को, परावर्त्तक काँच के बिना, आकाश बहुत कुछ एक-समान प्रदीप्ति का दीखता है, अतः परावर्तित प्रकाश में जो अन्तर हम देखते हैं, वह यथार्थ में ध्रुवण की घटना है। सूर्य की प्रतिकूल दिशा के क्षितिज से हमारे पास आने वाला प्रकाश केवल अल्पमात्रा में ध्रुवित होता है जबकि इसकी समकोण दिशा में ध्रुवण प्रबल मात्रा में होता है और कम्पन ऊर्ध्व दिशा में होते हैं, अर्थात् सूर्य, प्रेक्षित विन्दु, तथा आँख से गुजरने वाले तल की समकोण दिशा में।

1. It is possible to buy polarising film a newly invented device called polaroid

प्रश्न उठता है कि क्या स्वयं प्रकृति कभी हमारे लिए इस प्रकार के परीक्षणों का आयोजन करती है। अवश्य ही शान्त पानी पर होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन में भी हमें मन्द प्रकाश का भाग दीखेगा। पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते हैं कि आपतन कोण ५०° से कुछ अधिक ही हो, और तब चारों दिशाओं में हम घूम जाते हैं; सूर्य जब आकाश में थोड़ी ऊँचाई पर ही स्थित होता है तो उत्तर और दक्षिण
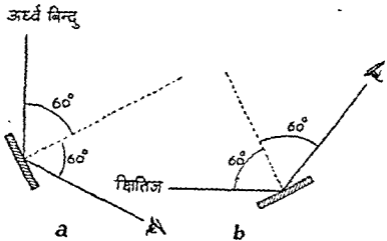
चित्र १४०–आकाश के प्रकाश के ध्रुवण की जांच, (a) ऊर्ध्व बिन्दु के निकट, (b) क्षितिज के निकट।

की ओर का पानी पूरब और पश्चिम की ओर के पानी की अपेक्षा स्पष्ट रूप से कम प्रकाशित दीखता है। मेरा निज का अनुभव यह है कि यह प्रयोग कभी-कभी ही सफल होता है, सदैव नहीं। आम तौर पर या तो समूचे आकाश की प्रदीप्ति पर्याप्त रूप से एक समान नहीं होती या फिर पानी की सतह पर्याप्त रूप से समतल नहीं होती।

और भी अधिक विश्वसनीय तथ्य है कि कभी-कभी छोटे बादल, जो हवा में मुश्किल से ही दृष्टिगोचर हो पाते हैं, पानी के प्रतिबिम्बन में अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ते हैं क्योंकि इनका प्रकाश, ध्रुवित न होने के कारण परावर्त्तन द्वारा आकाश के ध्रुवित प्रकाश की तुलना में कम मात्रा में क्षीण हो पाता है। अवश्य यही प्रभाव और भी अधिक स्पष्ट उस वक्त होता है जब आकाश और बादल को 'निकल' के पार से देखते हैं या कालिख लगे काँच से उनका परावर्त्तन कराते हैं। अच्छा होगा यदि सूर्य जब पूरब या पच्छिम में थोड़ी ही ऊँचाई पर हो, हम ऐसे किसी छोटे बादल को देखें

जो उत्तर या दक्षिण की ओर २०° से लेकर ४०° की ऊँचाई पर स्थित हो, जहाँ कि आकाश में प्रकाश-ध्रुवण अधिकतम होता है। प्रकाश के कम्पन की दिशा आकाश के इस भाग को सूर्य से मिलाने वाली रेखा के समकोण होती है, अर्थात् कम्पन ऊर्ध्व धरातल मे होते है, अत सामने मेज पर पड़े हुए काँच मे आकाश के इस स्थल से आये हुए प्रकाश को अत्यन्त क्षीण अवस्था में हम देखते हैं और तब नन्हा बादल अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

आकाश के ध्रुवण की जांच के निमित्त उपयुक्त उपकरण सवार्त का ध्रुवणदर्शी[1] है जो एक सरल यत्र होने के बावजूद भी अत्यन्त सुग्राही होता है। किन्तु इस ख्याल से ही कि कुछ थोड़े-से ही प्रकृति के पुजारी इतने भाग्यशाली होंगे कि उनके पास यह यत्र मौजूद हो, तथा इस कारण भी कि ये घटनाएँ ऋतुविज्ञान सम्बन्धी प्रकाश के एक पूर्णतया पृथक् क्षेत्र की चीजें हैं, हम यहाँ पर इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले कुछ ग्रन्थ-साहित्य का उल्लेख करने तक ही अपने को सीमित रखेंगे।[2] उन व्यक्तियो के लिए जो क्रमबद्ध प्रेक्षण करने में रुचि रखते है, यह एक अत्यन्त ही स्फूर्तिदायक तथा विविधतापूर्ण विषय है।

किसी 'निकल' को उसके अक्ष के गिर्द केवल घुमाकर, उसकी सहायता से आकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण आसानी से कर सकते है। निम्नलिखित विधि एक अत्यन्त सवेदी विधि है, किन्तु सन्ध्या के धुंधलके में ही इसे व्यवहार में ला सकते है। किसी तारा को चुन लीजिए जो इतनी फीकी रोशनी देता हो कि बस वह मुश्किल से दीखता भर हो और 'निकल' में से देखते हुए यह ज्ञात करने का प्रयत्न कीजिए कि क्या 'निकल' की कुछ विशेष स्थितियों मे तारे की दृश्यता उसकी अन्य स्थितियों की तुलना मे बढ़ जाती है। यह विधि उसी सिद्धान्त पर आधारित हैं जो ऊपर दिये गये नन्हे बादलो के प्रेक्षण के लिए लागू होता है। तारे का प्रकाश ध्रुवित नही होता और पृष्ठभूमि का प्रकाश जितना अधिक मन्द होगा उतना ही अधिक स्पष्ट वह तारा प्रतीत होगा, अतः तारे की दृश्यता में परिवर्तन, पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति के परिवर्तन का सूचक है, फल-

1. Savart's poloriscope
2. Fr. Busch and Chr. Jensen, Tatsachen und Theorien der atmosphorischen polarisation (Hamburg, 1911); Plassmann, Ann. d. Hydr. 40, 478, 1912.
   Jensen in Kleinschmidt, Hardbuck der Meteor. Instrumente p. 666 (Berlin, 1935)

स्वरूप ध्रुवण का सूचक भी। सूर्य की ओर की दिशा की समकोण दिशा में, तारे की दृश्यता में करीब-करीब दीप्ति-माप-श्रेणी के १ अंक की वृद्धि हो जाती है।

यही वजह है कि दिन के समय 'निकल' (nicol) दूरस्थ वस्तुओं के लिए उनकी दृश्यता बढ़ा देता है बशर्ते इसे इस प्रकार घुमाया जाय कि आकाश से परिक्षेपित होने वाले प्रकाश को यह रोक दे।[1] दूर से सफेद रंग के खम्भे, प्रकाश-गृह, समुद्र के उजले रंग के पक्षी आदि मटमैली पृष्ठभूमि की तुलना में अधिक स्पष्ट दीखते हैं—अवश्य ऐसा खुली धूप वाले दिन ही होता है; धुन्ध वाले दिन भूरे आकाश से आने वाले प्रकार का ध्रुवण पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाता। सूर्य से ९०° कोण वाली दिशा में आम तौर से 'निकल' का प्रभाव सर्वाधिक होता है।

कालिख लगे कांच की सहायता से नीचे आकाश के विभिन्न बिन्दुओं के प्रकाश के ध्रुवण की जाँच कीजिए और इस प्रकार उनका एक आम सर्वेक्षण प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए। क्या यह सम्भव होगा कि ठीक सूर्य के ऊपर की, तथा प्रति सूर्य के ऊपर की असाधारण ध्रुवण की दिशाओं में प्रेक्षण प्राप्त कर सकें? और उस दशा में क्या होगा जब कि नीचे आकाश के प्रकाश को वाटिका-ग्लोब द्वारा परावर्तित करा लें और तब ध्रुवण कोण पर कालिख लगे काँच द्वारा इसका प्रेक्षण करें?

१८१. हेडिन्जर ब्रुश[2]

प्रयोगशाला के अनेक भौतिकीज्ञ उस वक्त आश्चर्य करते हैं तथा अविश्वास प्रकट करते हैं जब हम उन्हें बतलाते हैं कि केवल कोरी आँखो से, बिना किसी यंत्र की सहायता लिये, हम देख सकते हैं कि आकाश का प्रकाश ध्रुवित होता है! किन्तु इसमें थोड़े अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए आरम्भ हमें पूर्णतया ध्रुवित प्रकाश से करना चाहिए जो काँच की सतह से ध्रुवण-कोण पर आकाश की रोशनी को परावर्तित कराने पर मिलता है (§ १८०)। समान रूप से नीले रंग के आकाश के प्रतिबिम्ब को मिनट दो मिनट तक देखते रहने पर एक प्रकार का 'संगमर्मर' जैसा प्रभाव प्रकट होने लगता है। उस दिशा में जिधर हमारी आँख देख रही है, थोड़ी ही देर बाद एक अद्भुत आकृति दिखलाई देती है जिसे 'हेडिन्जर

1. H. N. Russell, Science, 63, 616, 1917.
2. Haidinger's, Brush; Busch and Jensen, see note on p. 256. Helmholtz, Physiologische Optik, 3 rd. ed. part 2, p. 256. Th. Mendelssohn, Revue Fac. Sc. Istambul, 3, Fasc. 2, 1938

ब्रुश' का नाम दिया गया है, यह शक्ल चित्र १४१ में दिखायी गयी आकृति से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। यह एक पीत वर्ण का ब्रुश-जैसा होता है जिसके
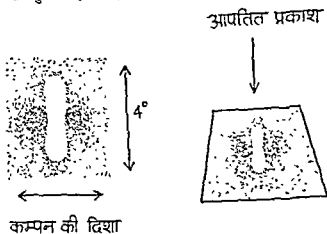
चित्र १४१—हेडिंजर ब्रुश; एक अद्भुत आकृति जो नीले आकाश में देखी जा सकती है और यह ध्रुवण की सूचक है।
(प्रकाश का ब्रुश पीत वर्ण का होता है, इसके बगल के बादल नीले वर्ण के होते हैं।)

दोनों ओर नीला धब्बा मौजूद रहता है। पीत वर्ण का ब्रुश काँच पर परावर्तित होने वाले प्रकाश के आपतन धरातल में स्थित होता है; दूसरे शब्दों में, यह पीला ब्रुश सदैव प्रकाश की कम्पन दिशा के **समकोण** पड़ता है।

यह ब्रुश चन्द सेकण्डों में विलुप्त हो जाता है, किन्तु यदि आप अपनी दृष्टि उसके निकट ही काँच के किसी विन्दु पर गड़ाये रखें तो आपको ब्रुश फिर दिखलाई देगा। यह आकृति आसपास की पृष्ठभूमि पर आसानी से दृष्टिगोचर नहीं हो पाती, और अनुमानतः इसमें मुख्य बात यह दीखती है कि कैसे अनिवार्य रूप से अव्यवस्थित पृष्ठभूमि पर इस धुंधली आकृति को पहचान लें। इसके लिए दिन में कई बार चन्द मिनटों के लिए अभ्यास करना चाहिए। एक या दो दिन उपरान्त नीले आकाश की ओर देखने पर हेडिन्जर ब्रुश को काफी आसानी से पहचाना जा सकता है यद्यपि आकाश का प्रकाश केवल आंशिक रूप से ही ध्रुवित होता है। सन्ध्या के धुँधलके में यदि मैं क्षितिज की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हूँ तो इस ब्रुश को मैं विशेष स्पष्ट देख पाता हूँ; सारा आकाश मानों एक जाली से घिरा जान पड़ता है; जिस ओर दृष्टि डालता हूँ उधर ही यह विशिष्ट आकृति दिखलाई पड़ती है। इस बात से बड़ी प्रसन्नता प्राप्त

होती है कि इस तरीके से, बिना किसी यंत्र की सहायता लिये, ध्रुवण की दिशा मालूम कर सकते हैं, और यही नहीं, बल्कि ध्रुवण की मात्रा का भी अन्दाज लगा सकते हैं। पीत वर्ण के ब्रुश को यदि वृहत् वृत्त के चाप की दिशा में बढ़ाएँ तो आम तौर पर यह सूर्य की ओर इंगित करता है जो यह प्रगट करता है कि परिक्षेपित प्रकाश सामान्यतः उस धरातल की समकोण दिशा में कम्पन करता है जिसमें सूर्य, वायु के अणु तथा आँख स्थित होती हैं।

हेडिंजर ब्रुश का अवलोकन और भी अधिक स्पष्ट रूप से वाटिका-ग्लोब में होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन में किया जा सकता है जबकि सूर्य का प्रतिबिम्ब प्रेक्षक के सिरे की आड़ में आ जाता है (देखिए § ११)।

इस दशा में सूर्य के निकट एक छोटा सा ऐसा प्रदेश भी देखा जा सकता है जिसमें *पीला ब्रुश सूर्य की ओर इङ्गित नहीं करता, बल्कि इसकी समकोण दिशा में वह इङ्गित* करता है। सामान्य प्रभाव तथा अतिक्रम प्रभाव वाले प्रदेशों के दर्मियान की सीमा एक छाया-जैसी दीखती है।

नेत्र-रेटिना के पीतबिन्दु के द्विवर्णिक प्रभाव[1] के कारण हेडिंजर ब्रुश का निर्माण होता है। सभी प्रेक्षकों को यह अद्भुत आकृति एक-सी नहीं दिखलाई पड़ती, यह बात निस्सन्देह इस पीत बिन्दु की शक्ल और संरचना पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए कुछ लोगों को इस आकृति का नीला हिस्सा नहीं दीखता, कुछ को पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक मिला हुआ दिखलाई देता है तो अन्य लोगों को नीला भाग एक दूसरे से मिला दीखता है (चित्र १४२)।

चित्र १४२—हेडिंजर ब्रुश सदैव एक ही तरह का नहीं दीखता है। (a) यहाँ ब्रुश का पीतवर्ण अविरत एक सिरे से दूसरे सिरे तक चला गया है। (b) यहाँ नीला वर्ण अविरत है।

निम्नलिखित दोनों समभिकथन एक दूसरे के विरोधी हैं;

(क) *प्रथम अनुभूति यह होती है कि पीला* भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक अविच्छिन्न है; अधिक देर तक देखते रहने से जब आँख में श्रान्ति आ जाती है तब प्रतिबिम्ब बदल जाता है और नीला भाग अविच्छिन्न दीखता है।[2]

1. Dichroism 2. Hardinger, Ann. d. Phys. 67, 435, 1846

(ख) सदैव उस रंग का प्रदेश अविच्छिन्न दीखता है जो आँखों को मिलाने वाली रेखा के समकोण पड़ता है। अतः यदि नीले आकाश के किसी निश्चित बिन्दु को आप देखें और अपने सिर को ९०° घुमा दे तो पहले आप एक रग को अविच्छिन्न देखेंगे और बाद में दूसरे रग को।[1] आकृति की अस्थायी प्रकृति के कारण, इसके बारे में किसी निश्चित मत का स्थिर करना कठिन होता है।

आँख के सामने यदि हरा या नीला काँच रखे तो हेडिजर ब्रुश बहुत अधिक स्पष्टता से देखा जा सकता है, जबकि लाल या पीले काँच को आँख के सामने रखने पर यह विलुप्त हो जाता है।[2] यह एक दिलचस्प बात है कि क्षितिज पर यह ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति के मुकाबले में दो गुने आकार का दीखता है, उसी प्रकार जिस तरह सूर्य, चन्द्रमा और तारा-समूह क्षितिज पर अपेक्षाकृत बड़े दीखते हैं।

१८२. कुहरे और धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण

तडके सुबह का हलका धुन्ध, जिसमें से होकर सूर्य चमकता हुआ दीखता हो, आह्लाद तथा स्फूर्तिदायक होता है और अत्यन्त नीरस दृश्य को भी काव्यजनित सौंदर्य प्रदान करता है। अधिक घना धुन्ध दूर के दृश्य के लिए रुकावट डालता है, किन्तु निकट के वृक्ष और मकानों पर इस तरह का धुंधलापन डाल देता है जैसा हम केवल दूर की वस्तुओं पर देखने के अभ्यस्त हैं; इसी के साथ निकट की इन वस्तुओं द्वारा सम्मुख होने वाले बड़े आकार के कोण से हम विशेष प्रभावित होते हैं और ये कोण अपने तई इस बात का आभास देते हैं मानो ये वस्तुएँ असाधारण रूप से ऊँची हो। इन अनुभूतियों के (जो प्रायः अवचेतन मन मे ही होती हैं) परस्पर मिलने के फलस्वरूप बड़ी इमारतें महलो-जैसी शानदार प्रतीत होती हैं तथा मीनारो की चोटियाँ बादलों को छूती जान पड़ती हैं।[3]

धुन्ध मे से देखने पर वस्तुओं के रंग मे आम तौर पर कोई परिवर्तन नही दीखता। सूर्य की चमक यद्यपि बहुत अधिक घट जाती है, किन्तु अब भी यह उज्ज्वल रहता है और सड़क पर लगे निकट के लैम्प तथा दूर के लैम्प के रग मे कोई उल्लेखनीय अन्तर

1. Brewster, Ann. d. Phys. 107, 346, 1859. Aphascintly in agreement, A Hoffmann, Weter 34, 133, 1917
2. Stokes, Papers 5
3. Vaughan Cornish, Geogr, Journ. 67, 506, 1926

होती है कि इस तरीके से, विना किसी यंत्र की सहायता लिये, ध्रुवण की दिशा मालूम कर सकते हैं, और यही नहीं, वल्कि ध्रुवण की मात्रा का भी अन्दाज़ लगा सकते हैं। पीत वर्ण के ब्रुश को यदि वृहत् वृत्त के चाप की दिशा में वढ़ाएँ तो आम तौर पर यह सूर्य की ओर इंगित करता है जो यह प्रगट करता है कि परिक्षेपित प्रकाश सामान्यतः उस धरातल की समकोण दिशा में कम्पन करता है जिसमें सूर्य, वायु के अणु तथा आँख स्थित होती है।

हेडिंजर ब्रुश का अवलोकन और भी अधिक स्पष्ट रूप से वाटिका-ग्लोव में होने वाले आकाश के प्रतिविम्बन में किया जा सकता है जवकि सूर्य का प्रतिबिम्ब प्रेक्षक के सिरे की आड़ में आ जाता है (देखिए § ११)।

इस दशा में सूर्य के निकट एक छोटा सा ऐसा प्रदेश भी देखा जा सकता है जिसमें पीला ब्रुश सूर्य की ओर इङ्गित नहीं करता, वल्कि इसकी समकोण दिशा में वह इङ्गित करता है। सामान्य प्रभाव तथा अतिक्रम प्रभाव वाले प्रदेशों के दर्मियान की सीमा एक छाया-जैसी दीखती है।

नेत्र-रेटिना के पीतविन्दु के द्विवर्णिक प्रभाव[1] के कारण हेडिंजर ब्रुश का निर्माण होता है। सभी प्रेक्षकों को यह अद्भुत आकृति एक-सी नहीं दिखलाई पड़ती, यह वात निस्सन्देह इस पीत बिन्दु की शक्ल और संरचना पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए कुछ लोगों को इस आकृति का नीला हिस्सा नहीं दीखता, कुछ को पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक मिला हुआ दिखलाई देता है तो अन्य लोगों को नीला भाग एक दूसरे से मिला दीखता है (चित्र १४२)।

चित्र १४२—हेडिंजर ब्रुश सदैव एक ही तरह का नहीं दीखता है। (a) यहाँ ब्रुश का पीतवर्ण अविरत एक सिरे से दूसरे सिरे तक चला गया है। (b) यहाँ नीला वर्ण अविरत है।

निम्नलिखित दोनों समभिकथन एक दूसरे के विरोधी हैं;

(क) प्रथम अनुभूति यह होती है कि पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक अविच्छिन्न है; अधिक देर तक देखते रहने से जब आँख में श्रान्ति आ जाती है तब प्रतिविम्ब वदल जाता है और नीला भाग अविच्छिन्न दीखता है।[2]

1. Dichroism　　2. Hardinger, Ann. d. Phys. 67, 435, 1846

(ख) सदैव उस रंग का प्रदेश अविच्छिन्न दीखता है जो आंखों को मिलाने वाली रेखा के समकोण पड़ता है। अतः यदि नीले आकाश के किसी निश्चित बिन्दु को आप देखें और अपने सिर को ९०° घुमा दें तो पहले आप एक रंग को अविच्छिन्न देखेंगे और बाद में दूसरे रग को।[1] आकृति की अस्थायी प्रकृति के कारण, इसके बारे में किसी निश्चित मत का स्थिर करना कठिन होता है।

आंख के सामने यदि हरा या नीला कांच रखें तो हेंडिजर ब्रुश बहुत अधिक स्पष्टता से देखा जा सकता है, जबकि लाल या पीले कांच को आंख के सामने रखने पर यह विलुप्त हो जाता है।[2] यह एक दिलचस्प बात है कि क्षितिज पर यह ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति के मुकाबले में दो गुने आकार का दीखता है, उसी प्रकार जिस तरह सूर्य, चन्द्रमा और तारा-समूह क्षितिज पर अपेक्षाकृत बड़े दीखते हैं।

१८२. कुहरे और धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण

तड़के सुबह का हलका धुन्ध, जिसमें से होकर सूर्य चमकता हुआ दीखता हो, आह्लाद तथा स्फूर्तिदायक होता है और अत्यन्त नीरस दृश्य को भी काव्यजनित सौंदर्य प्रदान करता है। अधिक घना धुन्ध दूर के दृश्य के लिए रुकावट डालता है, किन्तु निकट के वृक्ष और मकानों पर इस तरह का धुंधलापन डाल देता है जैसा हम केवल दूर की वस्तुओं पर देखने के अभ्यस्त हैं; इसी के साथ निकट की इन वस्तुओं द्वारा सम्मुख होने वाले बड़े आकार के कोण से हम विशेष प्रभावित होते हैं और ये कोण अपने तई इस बात का आभास देते हैं मानों ये वस्तुएँ असाधारण रूप से ऊँची हों। इन अनुभूतियों के (जो प्रायः अवचेतन मन में ही होती है) परस्पर मिलने के फलस्वरूप बड़ी इमारतें महलों-जैसी शानदार प्रतीत होती हैं तथा मीनारों की चोटियां बादलों को छूती जान पड़ती है।[3]

धुन्ध में से देखने पर वस्तुओं के रंग में आम तौर पर कोई परिवर्तन नहीं दीखता। सूर्य की चमक यद्यपि बहुत अधिक घट जाती है, किन्तु अब भी यह उज्ज्वल रहता है और सड़क पर लगे निकट के लैम्प तथा दूर के लैम्प के रंग में कोई उल्लेखनीय अन्तर

1. Brewster, Ann. d. Phys. 107, 346, 1859. Aphascintly in agreement, A Hoffmann, Weter 34, 133, 1917
2. Stokes, Papers 5
3. Vaughan Cornish, Geogr, Journ. 67, 506, 1926

नहीं दीखता। किन्तु कुछ अन्य उदाहरण भी है जैसे सूर्य जब क्षितिज से काफी ऊँचाई पर होता है तो कुहरे में से वह लाल रंग का दीखता है। अवश्य सब कुछ धुन्ध की बूंदों के आकार पर निर्भर करता है; बूंदें जब लगभग प्रकाश के तरंग-दैर्घ्य के बराबर छोटी होती है, तो प्रकाशस्रोत ललछवे रंग का दीखता है, अतः ये मुख्यतः नीली और बैगनी किरणों का परिक्षेपण करती हैं, जबकि पीली और लाल किरणों का परिक्षेपण अपेक्षाकृत कम मात्रा में होता है (§ १७१)।

ऐसे अवसरों पर स्वयं धुन्ध श्वेत रंग का होता है, निश्चय ही नारङ्गी वर्ण के सूर्य के मुकाबले में तो यह अधिक ही सफ़ेद दीखता है क्योंकि यह पार आनेवाली किरणों तथा परिक्षेपित किरणों, दोनों से ही प्रकाशित होता है। इस प्रकार का घना धुन्ध नीलापन लिये नहीं होता; परिक्षेपित प्रकाश संभवतः आपतित प्रकाश का ९९ प्रतिशत होता है और इस कारण समष्टि रूप से धुन्ध को सफ़ेद ही दीखना चाहिए यद्यपि आयतन का प्रत्येक नन्हा भाग नीले प्रकाश का परिक्षेपण विशेष अधिक मात्रा में भले ही करे।

अपेक्षाकृत बड़ी बूंदें, जिनसे धुन्ध का निर्माण होता है, प्रकाश के अधिकाश को सामने की ओर, प्रारम्भिक आपाती दिशा के साथ अल्प कोण बनाने वाली दिशा मे परिक्षेपित करती हैं (§ १७७)। इससे इस बात का स्पष्टीकरण हो जाता है कि क्यों हलका धुन्ध लगभग सूर्य की दिशा में देखने पर अत्यधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। जंगल के अन्दर धूप में धुन्ध की बढ़िया फोटो रोशनी के खिलाफ रख ली जाती हैं जब कि सूर्य की ओर से तनिक हटी हुई दिशा में कैमरे का मुह रखते हैं।

अपेक्षाकृत घने धुन्ध के बारे में सबसे अधिक आश्चर्यजनक बात है छाया का 'ठोसपन' (चित्र १४३)। किसी वृक्ष की ओर जाने पर जिसके तने पर सूर्य की

चित्र १४३—धुन्ध में वस्तु के पीछे छायाएं कैसे बनती हैं।

रोशनी पड़ रही हो, आप AO तथा BO दिशा में ढेर-सा प्रकाश देखेंगे क्योंकि इन दिशाओं में धुन्ध की अनेक बूंदें पड़ती हैं जो प्रकाश का परिक्षेपण करके वायु को

स्वयं प्रकाशित-सा कर देती है। C O दिशा में आप को बहुत कम रोशनी दीखती है क्योंकि आप ऐसी वायु में से देख रहे हैं जिस पर प्रकाश पड़ नहीं रहा है। अब यदि अपनी आँख थोड़ा एक तरफ हटाए, बिन्दु O' तक, तब धुन्ध के प्रकाशित तथा अ-प्रकाशित भाग एक दूसरे के ऊपर पड़ते हैं और छाया अस्पष्ट हो जाती है, और फिर A O' तथा B O' दिशाओं से मुश्किल से ही प्रकाश आ पाता है क्योंकि इतने बड़े कोण की दिशा में परिक्षेपण नगण्य-सा ही हो पाता है (§ १७७)।

इस प्रकार प्रत्येक शाखा के, प्रत्येक खम्भे के पीछे, उसकी छाया शून्य मे लटकती-सी रहती है, और छाया उस वक्त तक कतई नहीं दीखती, जब तक हम एक दम छाया के निकट उसके अन्दर तक, न पहुँच जायें। इससे भी अधिक अद्भुत दृश्य रात को दीखता है जब कि सड़क का प्रत्येक लैम्प, हरएक मोटरकार का हेडलैम्प, धुन्ध को स्वय-प्रकाशित कर देता है, और प्रत्येक वस्तु के पीछे उसकी छाया बनाता है जो केवल पीछे की ओर से दृष्टिगोचर हो पाती है। धुन्ध के अन्दर टहलना, प्रकाशीय दृष्टि से, वास्तव में आह्लादकारी होता है!

और भी अधिक विलक्षण बात उस वक्त देखने मे आती है जब धुन्ध वाले दिन सूर्य के रुख खड़े होकर हम सामने की किसी मीनार को देखते हैं या किसी खम्भे को देखते हैं जो सडक के लैम्प को ठीक अपने पीछे ढक लेता है। दोनों ही दशाओं मे मीनार या खम्भे के ऊपर छाया हमें दिखलाई देती है। यह विचित्र घटना सहज में ही समझ में आ सकती है यदि इस बात पर विचार करें कि हवा की एक पट्टी ABCDEF, मीनार के पीछे आ जाती है जो सूर्य की किरणों से प्रकाशित नहीं होने पाती। इस पट्टी के केन्द्रीय धरातल में स्थित प्रेक्षक W यदि WV दिशा मे देखे तो उसे VW दिशा से कम रोशनी मिलेगी, किन्तु दिशा V'W से अधिक रोशनी मिलेगी। अत. उसे अँधेरा छाया-मडलक मीनार के ऊपर मौजूद दिखलाई देगा। यदि वह दाहिने या बायें हटता है, तो यह अँधेरी छाया क्रम से बायें या दाहिने को झुक जायगी। यदि वह और भी अधिक दूरी तक हट जाता है तब छाया विलुप्त हो जाती है क्योंकि बड़े कोण की दिशा मे धुन्ध प्रकाश का परिक्षेपण नही कर पाता (चित्र १४३ क)।

कभी-कभी छाया के आरपार देखने पर आप उसकी धारियाँ देख सकते हैं; उदाहरण के लिए जब मकानों की छतों पर सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं और आप लगभग छाया की दिशा में ही देखते हैं जो हवा में हल्की आकृति की तरह दृष्टिगोचर होती है।

धुन्ध द्वारा पीछे की ओर होने वाले परिक्षेपण का प्रेक्षण करना विशेष कठिन होता है। धुन्ध की बूंदें अत्यन्त क्षुद्र आकार की होनी चाहिए, फिर भी धुन्ध को घना
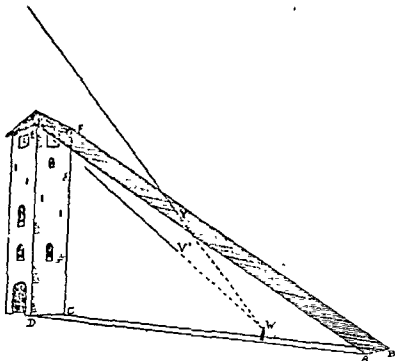
चित्र १४३ क—धुन्ध के समय ऊँची मीनार के सिरे पर छाया मंडलक कैसे बनता है।

होना चाहिए, और हमारे पीछे चकाचौंध उत्पन्न करने वाले तीव्र प्रकाश का स्रोत हो, तथा सामने मटमैले रंग की पृष्ठभूमि। कभी-कभी, धुन्ध वाली रात्रि में यदि खुली खिड़की के सामने हम खड़े हो और हमारे पीछे से तेज प्रकाश आ रहा हो, तो हम अपनी छाया देख सकते हैं जो धुन्ध के पर्दे पर प्रक्षेपित होती है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि छाया जमीन पर नहीं बनती है, क्योंकि यह उस वक्त भी मौजूद रहती है जब लैम्प आपके सिर की ऊँचाई से थोड़ा नीचे स्थित होता है। अपनी आँखों को बाहर के अन्धकार के प्रति अभ्यस्त होने दीजिए तथा अपने हाथों से, बगल की रोशनी को आँख तक पहुँचने से रोकिए (चित्र १४४)। धुन्ध पर आप की बाहों

की छाया बहुत लम्बी प्रतीत होती है तथा आपके शरीर की छाया बृहत्काय और नुकीली दीखती है। छाया की तमाम धारियाँ आपके सिर की छाया की ओर एकत्र होती हैं, जो लैम्प का प्रतिविन्दु भी है। इस विन्दु के गिर्द आभा की चमक मौजूद होती है जो सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त होती है जब आप इधर-उधर थोड़ा हिलते हैं। यह आश्चर्यजनक चित्र 'ब्रोकेन की प्रेतछाया' के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जो धूप में ऊँचे पर्वत शिखर के धुन्ध पर इतनी प्रभावोत्पादक दीखती है।

चित्र १४४—ब्रोकेन की प्रेतछाया, धुन्ध के रूप में।

इस घटना के वृहत् आकार धारण करने का कारण यह है कि छाया एक धरातल में नहीं पड़ती बल्कि दस-बीस गज की गहराई तक यह फैली रहती है।

सायकिल सवार को, जिसके पीछे से मोटरकार के हेडलैम्प की चकाचौंध पैदा करने वाली रोशनी आती है, कभी-कभी कुहासे पर स्वयं अपनी छाया एक वृहत् आकार की दिखलाई पड़ती है। पीछे से आती हुई दूसरी सायकिल के लैम्प की रोशनी यदि पहले सायकिल सवार के सिर पर पड़ती है, तब भी यह घटना उत्पन्न होती है।

प्रकाश की चमक और उस पर बनने वाली छाया की लकीरें इस कारण उत्पन्न होती हैं कि कुहरे की बूँदों द्वारा प्रकाश के अल्पांश का पीछे की दिशा में परिक्षेपण होता है; वे तमाम प्रकाश-रश्मियाँ जो हमारी आँख की छाया की ओर केन्द्रित होती जान पड़ती हैं, वास्तव में समानान्तर होती हैं (या लगभग)। (देखिए §§ १९१, २१७)।

१८३. वर्षा और पानी की बूँदों की दृश्यता

बौछार के समय अच्छा होगा यदि इस बात का प्रेक्षण करें कि वर्षा की गिरती हुई बूँदें किस दिशा में सबसे अधिक आसानी से दिखलाई पड़ती हैं। ये बूँदें न तो चमकीले आकाश के सम्मुख दिखाई देती हैं और न जमीन के सामने, किन्तु मकानों और वृक्षों के सामने दृष्टिगोचर होती हैं। स्पष्ट है कि ये केवल तभी देखी जा सकती

है जब ये प्रकाश रश्मियां को उनके मार्ग से विचलित करके उस क्षेत्र में चमक उत्पन्न करती है जहां पहले अन्धकार था। अवश्य ही प्रकाश की किरणें मुख्यतः अल्प कोण पर विचलित होती हैं (०° से लेकर ४५° तक)। प्रकाश के दिये हुए अल्प विचलन के लिए पृष्ठभूमि का चमकीलापन जितना ही अधिक बढ़ेगा बूंदें उतनी ही अधिक स्पष्ट दीखेंगी। वर्षा के समय यदि धूप निकली हुई है तो सूर्य की दिशा के निकट की बूंदें अत्यधिक चमक के साथ जगमगाती हैं; इसका कारण यह है कि सूर्य *और आकाश की प्रदीप्ति में अन्तर बहुत ही अधिक होता है, अतः वर्तन करने वाली* प्रत्येक बूंद स्पष्ट दीख जाती है।

मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख इन बूंदों को आप लगभग सदैव ही मोतियों की तरह चमकती हुई देख सकते हैं; हलकी रोशनी के आकाश के सम्मुख वे बहुत कम ही मटमैली दीखती हैं। यह इस व्यापक सिद्धान्त के अनुरूप है कि आँख की सुग्राहिता प्रकाश तीव्रताओं के पारस्परिक अनुपात द्वारा निर्धारित होती है न कि उनके अन्तर
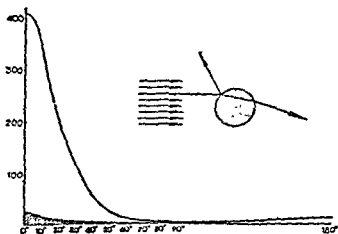
चित्र १४५—वर्षा की बूंदों में जगमगाहट उत्पन्न करनेवाला सूर्य का प्रकाश हर दिशा में परावर्तित तथा वर्तित होता है। चित्र में भिन्न विचलन कोणों के लिए प्रकाश-तीव्रता का वितरण दिखलाया गया है। (शेड वाला स्थल परावर्तित किरणों में जानेवाली प्रकाश मात्रा बतलाता है।)

द्वारा (§ ६४)। यदि तीव्रता मान १०० का प्रकाश बूंद पर गिरता है और परिक्षेपित होने वाले प्रकाश की तीव्रता १० हो तो ऐसे मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख यह

भली-भाँति दीखेगा जिसकी प्रदीप्ति-तीव्रता ५ हो, क्योंकि यहाँ तीव्रता का अनुपात २ : १ है। इसके प्रतिकूल उसके पार गुजरने वाले प्रकाश की तीव्रता १०० से घटकर ९० हो जाती है; इसका अर्थ है कि आकाश की पृष्ठभूमि पर देखे जाने पर बूंद के लिए तीव्रता का अनुपात केवल १० : ९ है, जो मुश्किल से ही दृष्टि की पकड़ मे आ पाती है। किन्तु यदि बूंदें हमारे निकट स्थित हों जैसे छतरी से गिरने वाली बडे आकार की बूंदें, तो गिरते समय ये मटमैले रग की दीखती है। और मूसलाधार वर्षा मे काले बादलों के बीच के खुले आकाश की पृष्ठभूमि के सामने मटमैले रग की समानान्तर धारियाँ हमे दीखती हैं। इसी प्रकार की घटना का प्रेक्षण फौआरों मे तथा पौदो के सींचते समय पानी की फुआर मे भी किया जा सकता है।

प्रकाश के सामान्य नियमो को लागू करके हम आसानी से इस बात का हिसाब लगा सकते हैं कि प्रकाश के प्रतिफलित वितरण में बूंद की सतह से परावर्तित होने वाली किरणें कितना योग देती हैं और कितना योग वे किरणें देती हैं जो वर्तन के उपरान्त बूंदो मे से होकर गुजरती हैं (चित्र १४५)। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तित होने वाली किरणें ही अपेक्षाकृत अधिक योग देती हैं और अवश्य ही प्रकाश को अल्प कोण पर विचलित करती हैं, ठीक जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से हमें निष्कर्ष प्राप्त हुआ था।

१८४. खिडकी के काँच पर प्रकाश का परिक्षेपण जिस पर पानी की संघनि बूँदें पड़ी हों

रेलगाडी की खिडकी मे से जिस पर पानी की बूंद घनीभूत हुई हो, देखने पर बाहर के सड़क के लैम्प चारों ओर से चकाचौंध वाली ज्योति से परिवेष्टित दिखाई देते हैं। ऐसे प्रकाश के घेरे की त्रिज्या का अनुमान आसानी से लगा सकते हैं तथा खिडकी मे आँख की दूरी A को भी मालूम कर सकते है। आप पायेंगे कि परिवेष्टन

उस वक्त करीब-करीब पूर्णतया रुक जाता है जब कोण $\alpha = \frac{r}{A}$ का मान ०.०५-

०.१० रेडिएन अर्थात् ३°--६° तक पहुँच जाता है।

इस दशा मे ये नन्हीं बूंदे पूर्ण गोले की शक्ल की नही होतीं, [illegible] ऊँचाई के गोल खण्ड ही ये होती हैं। ऐसी बूंदों के हाशिये के निकट [illegible] किरणो का विचलन अधिकतम होता है। मानो ये किरणें एक [illegible] दी जाती है जिनके नन्हें शीर्षकोण का मान δ है, अतः इनमें होने [illegible]

का मान $\alpha=(n-1)\delta$ होता है। चूंकि पानी का वर्तनाङ्क n १.३३ है, अतः प्रिज्म के शीर्ष कोण δ का मान १०°–२०° तक हो सकता है (चित्र १४५ क)।
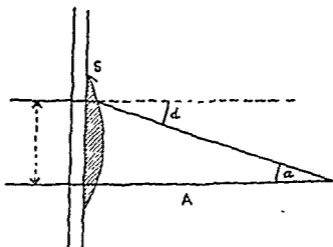
चित्र १४५ क—खिड़की के कांच पर पड़ी हुई पानी के बूंद से प्रकाश का परिक्षेपण। (ऊपर बिन्दुरेखा के नीचे d की जगह अलका α पढ़िए और बायीं ओर बिन्दुरेखा के बगल में r रखिए)

१८५. हवा में तैरते हुए कणों की दृश्यता[1]

जल की बूंदों की दृश्यता का उपर्युक्त विवरण बहुत कुछ अंशों में वायु में तैरती हुई सभी चीजों के लिए लागू किया जा सकता है। धूल के बादल, सूर्य की दिशा में उससे उलटी दिशा की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से देखे जा सकते हैं। धूप वाले दिन क्षितिज के सहारे एक हलका धुंधलापन क्षितिज से करीब ३° की ऊँचाई तक अक्सर देखा जा सकता है जब कि हम सूर्य की ओर देखते हैं; लगभग आध मील से कम की दूरी पर दृश्यों के रंग साफ़ पहचाने नही जा पाते और दूरस्थ गिर्जाघरों की मीनारें दिखलाई नही देती। यदि हम सूर्य की प्रतिकूल दिशा में देखें तो क्षितिज से लगा हुआ धुंधलापन और भी मटमैला हो जाता है। सूर्य के निकट के धुंधलेपन की पेटी और उसके प्रतिकूल दिशा की मटमैली पेटी का अन्तर विशेष रूप से स्पष्ट उस वक्त देखा जा सकता है जब हम गुब्बारे में बैठकर या पहाड़ पर चढ़ते समय इस धुन्ध के

1. Visibility

ऊपरी सिरे तक पहुँच जाते हैं। परिवर्तन की सीमा सूर्य से लगभग ८०° की दिशा पर मिलती है, जहाँ कि धुन्धलके के स्तर की चमक करीब-करीब आकाश की चमक के बराबर होती है।

रात्रि का जब आगमन होता है तो उगता हुआ चन्द्रमा गहरे लाल रंग का रहता है, किन्तु आश्चर्यजनक तेजी के साथ यह पीत-श्वेत रंग में परिणत हो जाता है।

यदि हल्के धुन्ध के समय चिमनी के साये में खड़े हों तो हमें सूर्य प्रकाश के एक आभामण्डल (आरिएल) द्वारा घिरा दीखता है जो कि उस वक्त तक प्रकट नहीं हो पाता जब तक कि हमारी आँख धूप की चमक की चकाचौंध में रहती है। किसी-किसी वक्त इस आभामण्डल का हाशिया लाल रंग का होता है। धूल तथा पानी की नन्ही बूँदों से उत्पन्न होने वाला इसी तरह का प्रकाशीय प्रभाव कुछ हल्के रूप में उस वक्त भी देखा जा सकता है जब कुहरा मौजूद नहीं होता (§ १९७)।

नन्हें कीड़े-पतंगे जब प्रेक्षक के उसी ओर होते हैं जिधर सूर्य, तो वे रोशनी की चिनगारियों की तरह नाचते हुए नजर आते हैं, किन्तु सूर्य की उलटी दिशा में वे मुश्किल से ही दिखलाई देते हैं। राई की बालों के रेशे जो हवा में ऊँचाई पर लहराते हैं, अस्त होते हुए सूर्य की किरणों के सामने से देखने पर चित्ताकर्षक, स्वर्णिम नीललोहित रंग के चमकते हैं। सूखे पत्ते, पत्थर की रोड़ियाँ, टहनियाँ, आदि जब कभी वे सूर्य के सामने से देखी जाती हैं तो सभी चमकती हैं जबकि प्रतिकूल दिशा में वे कठिनाई से या बिलकुल ही नहीं दिखलाई देतीं।

ये प्रेक्षण इस बात की पुष्टि करते हैं कि पर्दे के हाशिये पर प्रकाश की किरणें अल्पमान के कोण पर ही विवर्तित होती हैं। यही बात छोटे आकार के ग्लोब द्वारा होने वाले परावर्त्तन, वर्त्तन या विवर्त्तन के लिए भी लागू होती है बशर्ते वे अत्यन्त छोटे न हों (§§ १७७, १८३)। टेढ़ी-मेढ़ी शक्ल की चीजें लगभग उसी आकार के छोटे पर्दे या ग्लोब-जैसा आचरण करती हैं।

१८६. सर्चलाइट

सर्चलाइट की किरणावलि विभिन्न दिलचस्प प्रेक्षणों के लिए सामग्री प्रदान करती है। सर्व-प्रथम हमें यह स्मरण रखना होगा कि वायु में मौजूद धूल तथा जल की बूँदों के बिना जिन्हें यह प्रकाशित करती है, यह किरणावलि बिलकुल ही नहीं दृष्टिगोचर होगी। अतः किरणपुंज का चमकीलापन वायु की शुद्धता का प्रमाण उपस्थित करता है।

यह कुछ विचित्र जान पड़ता है कि यह किरण-रेखा कुछ फासले पर अचानक ही खतम हो जाती है, और ऐसा उस वक्त भी होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल होता है और कोई भी बादल मौजूद नहीं होता जो रुकावट के लिए पर्दे-जैसा काम करे। व्याख्या इस प्रकार है—बिन्दु O पर खड़े प्रेक्षक के पास AO, BO, CO आदि दिशाओं में किरणपथ के प्रत्येक बिन्दु से प्रकाश पहुँचता है। किन्तु किरण रेखा कितनी ही अधिक लम्बी क्यों न हो, उसे इस पर कोई भी बिन्दु OD दिशा के आगे नहीं दीखेगा, यह OD दिशा LC के समानान्तर है। यह दिशा ही प्रेक्षक के लिए
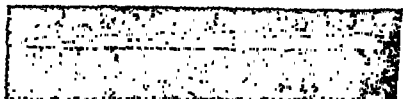
चित्र १४६—सर्च लाइट से जानेवाली प्रकाश-शलाका अत्यन्त निश्चित दिशा में अचानक समाप्त होती जान पड़ती है।

किरण-रेखा का 'अन्त' बतलाती है, अतः किरण-रेखा की दिशा आकाश में सही-सही निर्धारित हो जाती है। किरण-रेखा के दूर के भागों से प्रेक्षक के पास प्रकाश पर्याप्त मात्रा में पहुँचता है, इसका कारण अवश्य ही यह हो सकता है कि उसकी दृष्टि-रेखा दूर के भागों को तिरछी दिशा में काटती है अतः इस सीध में परिक्षेपण करने वाले कणों की तह मोटी होती है; इसके प्रतिकूल, दिशा OA में प्रकाशित वायु के अन्दर दृष्टि-रेखा-पथ की लम्बाई कम ही होती है।

जाकर किरणपुंज के निकट खड़े होइए और ४५° तथा १३५° की दिशाओं में प्रकाश-तीव्रता की तुलना कीजिए। आप पायेंगे कि A'O दिशा में सामने की ओर का परिक्षेपण, दिशा AO के पीछे की ओर के परिक्षेपण की तुलना में बहुत अधिक प्रबल है। फिर भी दोनों ही दशाओं में दृष्टि-रेखा की सीध में उपस्थित परिक्षेपण पदार्थ की मात्राएँ समान हैं, और यह हम मान ही सकते हैं कि A की दिशा में किरण-रेखा का व्यास तथा दिशा A' में प्राप्त व्यास में अन्तर इतना कम है कि इसे हम नगण्य समझ सकते हैं। स्पष्ट है कि इसका कारण धूलिकणों द्वारा होने वाला असंमित परिक्षेपण है, क्योंकि इन कणों का आकार काफी बड़ा होता है, अतः ये सामने की दिशा में सबसे अधिक परिक्षेपण करते हैं (§ १७७)। इस प्रयोग के लिए अधिक

विश्वसनीय तरीका यह होगा कि किसी लाइटहाउस के निकट खडे होकर किरणरेखा की प्रकाश-तीव्रता की तुलना इन दो दशाओ मे करे, पहले किरण जब हमारी ओर तिरछी दिशा में आती है, और फिर जब किरण तिरछी दिशा मे हम से दूर जाती है।

इस ढग के कुछ प्रयोग एक वास्तव में बढ़िया टार्च के किरणपुज के साथ किये जा सकते है बशर्ते रात का अन्धकार काफी गहरा हो। किरण-रेखा का अन्तिम छोर इतना स्पष्ट बनता है कि इसकी सहायता से अन्य लोगों के लिए विशेष तारे की स्थिति इङ्गित की जा सकती है।[1]

१८७. दृश्यता[2]

दृश्यता की नाप भूमिप्रदेश के ऐसे खुले मैदान में की जाती है जिसमे अनेक भूमि-चिह्न ऐसे लिये जा सकें जो प्रेक्षक से क्रमशः बढ़ती हुई दूरियो पर स्थित हों; इस तरह के उपयुक्त भूमिचिह्न फैक्टरी की चिमनियाँ या दूरस्थ गाँवों के चर्च की मीनारे हो सकती हैं जिनकी दूरी किसी अच्छे मानचित्र से मालूम की जा सकती है। अब प्रेक्षक प्रत्येक दिन यह ज्ञात करता है कि कौन-सा चिह्न बस दिखाई भर दे रहा है, इसी चिह्न की दूरी को 'दृश्यता' का नाम दिया गया है। यदि ऐसे चिह्न-बिन्दु पर्याप्त सख्या में उसे लभ्य नहीं है तो वह अपनी सामान्य अनुभूति के अनुसार 'दृश्यता' का तखमीना ०—१० माप स्केल पर प्राप्त कर सकता है। प्रकाश्यतः प्रेक्षणफल कई बातो के अत्यन्त जटिल मिश्रण द्वारा निर्धारित होते हैं, विशेपतया वायु में उपस्थित पानी की बूंदो तथा धूलिकणों द्वारा, जिनके कारण अँधेरे भागों पर एक कृत्रिम आभा फैल जाती है। मान लीजिए कि एक वस्तु प्रकाश-मात्रा A परावर्तित करती है, इसके सामने ही वायु प्रकाश-मात्रा B परावर्तित करती है तथा वस्तु के पीछे की वायु से प्रकाश-मात्रा C परावर्तित होती है। फिर कल्पना कीजिए कि वायु-मण्डल में से गुजरने के उपरान्त प्रकाश मात्राओ A, B, C से क्रमशः मात्राएँ a, b, c हमारी आँख में प्रवेश करती है। तब दूरस्थ वस्तु की दृश्यता $\frac{a+b}{b+c}$ द्वारा निर्धा-

1. Davis, Science, 76, 274, 1933

2. W.E. Knowles Middleton, Visibility in Meteorology (Toronto 1941); Fr, Lohle, Sichtbeobachtungen (Berlin 1941)—Both with numerous references to the extensive literature

रित होती है, और ऊपर बतायी गयी विधि के अनसार नापी जाने वाली दूरी द्वारा निर्देशित दृश्यता भी इसी भिन्नांश पर निर्भर है। इससे यह बात समझ में आती है कि दृश्यता क्यों अकेले वायुमण्डलीय परिस्थितियों पर ही निर्भर नहीं करती, बल्कि कुछ हद तक यह सूर्य की स्थिति पर भी निर्भर है। सूर्य के प्रभाव को न्यूनतम बनाने के उद्देश्य से सर्वसम्मति से यह मान लिया गया है कि भूमिचिह्न या निर्देशन बिन्दु के लिए लगभग १० फुट ऊँची कोई मटमली रंग की वस्तु लेनी चाहिए जो आकाश की पृष्ठभूमि पर स्पष्ट दीखे तथा आँख पर ०.५° और ५° के दर्मियान का कोण बनाये। यह एक दिलचस्प बात है कि जब ये शर्तें पूरी होती हैं तब यह दिखाया जा सकता है कि दृश्यता, *सूर्य की स्थिति या भूमिचिह्न की किस्म के प्रभाव से करीब-करीब पूर्णतया मुक्त होती है।*

रात्रि में किसी लैम्प को हम चुन सकते हैं जिसकी दूरी ज्ञात हो या फिर प्रथम माप श्रेणी के किसी तारे की उस न्यूनतम कोणीय ऊँचाई को डिग्रियों में नाप सकते हैं जिस पर वह दीखने लग जाता है। अवश्य ये प्रयोगफल दिन में प्राप्त किये गये परिणाम से पूर्णतया मेल नहीं खाते, क्योंकि नापी जाने वाली राशि की मात्रा दोनों दशाओं में एकदम समान नहीं होती।

अनगिनत प्रेक्षकों द्वारा प्रेक्षण किये गये हैं और उनके परिणाम आंकिक पद्धति से प्राप्त किये गये हैं। दृश्यता निर्धारित करने में निस्सन्देह मुख्य तत्व है उस धूल की मात्रा जो हवा अपने अन्दर लिये रहती है। नगरों और फैक्टरियों से काफी फासले पर पायी जाने वाली धूल के बड़े कण अधिकतर नमक के क्रिस्टल होते हैं जो समुद्र जल की उन नन्ही बूँदों के वाष्पन से बनते हैं जो लहरों द्वारा वायु में प्रक्षेपित हो जाती हैं। महाद्वीपों के ऊपर की वायु की धूल में सबसे अधिक मात्रा अमोनियम सल्फेट $(NH_4)_2SO_4$ की होती है; उद्योग-व्यवसाय में प्रज्वलन के फलस्वरूप अमोनिया NH_3 तथा सल्फर ट्राई आक्साइड SO_3 की ढेर-सी राशियाँ वायुमण्डल में पहुँचती हैं; ये गैसें परस्पर संयोग करके क्रिस्टलों का निर्माण करती हैं या पानी की नन्ही बूँदों में ये घुल जाती हैं। औद्योगिक प्रान्तों में धुएँ या कालिख के जर्रे ऊपर आते हैं और नमक के घोल की नन्हीं बूँदों पर चिपक जाते हैं। यूरोप में धूप के दिनों में जबकि वायुमण्डल के उच्च दाब के प्रदेश में हम इस तरह अवस्थित होते हैं कि हमारे अगल-बगल अल्प दाब के प्रदेश हों (ऋतुचार्ट पर यह प्रदेश स्फान (वेज)[1] की शक्ल का दीखता

1. Wedge, पच्चड़

है) तब दृश्यता सर्वोत्तम होती है क्योंकि ये अल्प दाब, ताज़ी 'ध्रुवीयवायु, अपने साथ ले आते हैं जिनमें धूल के नाभिकणों की संख्या अत्यन्त ही कम होती है। मौसम की ये विशेष परिस्थितियाँ आम तौर पर थोड़ी ही अवधि के लिए बनी रह पाती हैं। इसके प्रतिकूल दृश्यता उस वक्त दूषित हो जाती है जब एक ही स्थान पर उच्च दाब एक लम्बे काल तक वैसा ही बना रहता है, फलस्वरूप धूल धीरे-धीरे करके वायु के निचले स्तरों में उतर आती है।

समुद्रतट पर रहने वालों के लिए इन दशाओं में दृश्यता की तुलना करना दिलचस्पी की बात होगी कि जब समुद्र से हवा भूमि की ओर बहती है और जब स्थल से समुद्र की ओर बहती है। किन्तु ऐसा सदैव ही आर्द्रता की समान दशाओं में करना चाहिए—अर्थात् जब शुष्क-आर्द्र बल्व थर्मामीटर के निरीक्षण एक-से रहें। बात यह है कि थोड़े फासले पर (१ किलोमीटर से कम दूरी के लिए) दृश्यता के लिए धूल के नाभि-कणों पर उपस्थित जलवाष्प का प्रभाव विशेष अधिक होता है, वायु की आर्द्रता जितनी अधिक होगी, दृश्यता उतनी ही कम होगी। यह पहलू खास तौर से उस दशा में महत्त्वपूर्ण हो जाता है जब आर्द्रता ७० प्रतिशत से अधिक हो जाती है और धूलिकण नमक के क्रिस्टलों से निर्मित होते हैं।

स्काटलैण्ड के एक छोटे से कस्बे में, वायु जब पर्वतों की ओर बहती थी तो उस वक्त दृश्यता छः या नौ गुनी पायी गयी बनिस्बत उस वक्त के, जब कि वायु घनी आबादी के प्रदेश से होकर आती थी। आर्द्रता का प्रभाव इस बात से स्पष्ट है कि वायु-वाष्प-मानलेखी[1] का निरीक्षण अंक जब ८° था तो दृश्यता चार गुनी थी बनिस्बत उस वक्त के जब कि निरीक्षण अङ्क २° था। इस बात का भली-भाँति चित्रण हम कर सकते हैं यदि मानचित्र पर हम उन दिशाओं में रेखाएँ खींचें जिधर से हवा आ रही है और इनकी लम्बाइयाँ दृश्यता की दूरी के अनुपात में रखें।

आर्द्रता के विभिन्न मान के लिए ऐसी ही रेखाएँ खींचनी चाहिए। इस प्रकार वक्र रेखाओं का सेट प्राप्त हो जायगा तो विभिन्न स्रोतों से आनेवाली हवाओं की औसत पारदर्शिता बतलायेगा। हड़ताल के आरम्भ होते ही दृश्यता अचानक ही अत्यधिक बढ़ जाती है।

और फिर आँकड़ों से पता चलता है कि तेज हवाएँ जब चलती हैं तो दृश्यता बढ़ जाती है और गर्मी के मौसम (मार्च से अक्टूबर तक) में जाड़े की अपेक्षा दृश्यता

1. Psychrometer

अधिक अच्छी रहती है। साधारणतया प्रातः की अपेक्षा तीसरे पहर को दृश्यत अच्छी रहती है क्योंकि दिन में वायु की ऊपर जानेवाली धाराएँ नीचे के स्तरों में उतराने वाले धूलिकणों को आकाश में ऊँचाई पर पहुँचा देती हैं। वर्षा या तुषारपात के एक लम्बे काल के उपरान्त समस्त धूल नीचे बैठ जाती है और दृश्यता प्रायः अत्युत्तम हो जाती है।

यह एक मार्के की बात है कि पानी की बौछार में से हम कुहरे की बाढ़ या बादलों की अपेक्षा बहुत अधिक दूर तक देख सकते हैं यद्यपि इन्हीं बादलों से यह पानी गिरता है। इसका कारण निम्नलिखित तर्क से स्पष्ट होगा (यद्यपि यह तर्क प्रत्यक्षतः अत्यन्त ही मोटे हिसाब पर आधारित है)—

मान लीजिए कि हवा के इकाई-आयतन में मौजूद पानी का आयतन V है। अब इस आयतन V को व्यास d आकार की बूंदों में विभाजित कीजिए—प्रत्येक बूंद का आयतन लगभग d^3 होगा। अतः दिये हुए आयतन में बूंदों की संख्या होगी $\frac{V}{d^3}$ और चूंकि प्रत्येक बूंद लगभग d^2 क्षेत्रफल की सतह घेरती है; अतः इन बूंदों से घिरने वाली कुल सतह $\frac{Vd^2}{d^3} = \frac{V}{d}$ होगी। अतः बूंदें जितनी छोटी होंगी उतनी ही कम उनके समूह की पारदर्शिता होगी। घने कुहरे के लिए V लगभग $१०^{-६}$ कोटि का होता है और आश्चर्य की बात है कि मूसलाधार वर्षा के लिए भी V का मान लगभग इतना ही होता है। किन्तु कुहरे की बूंदों का व्यास ०.०१ मिलीमीटर की कोटि का होता है जबकि वर्षा की बूंदों का व्यास ०.५ मिलीमीटर की कोटि का। अब एक ऐसे स्तम्भ पर विचार कीजिए जिसका सिरा एक वर्ग सेण्टीमीटर क्षेत्र का हो, और उसकी आड़ी लम्बाई l हो। प्रकाश की आधी मात्रा रोकने के लिए $\frac{Vl}{d} = $ — ०.५ होना चाहिए, अतः कुहरे के लिए l=५ मीटर=५.५ गज प्राप्त होता है और वर्षा के लिए l=२५० मीटर=२८० गज प्राप्त होता है। ये निष्कर्ष सही कोटि के परिमाण के हैं। इस उदाहरण से यह बात भली-भांति स्पष्ट होती है कि गणनाफल बहुत कुछ अंशों में इस बात पर निर्भर करता है कि वर्षा की बूंदें नन्हें आकार की हैं या बड़े आकार की। कभी-कभी ऐसा होता है कि भारी वर्षा में जबकि जमीन पर गिरने पर बूंदें बिखर कर अत्यधिक नन्हें आकार की बूंदों में परिणत हो जाती हैं और उनमें से होकर हम भूमि के निकट ही देखते हैं तो दृश्यता में भारी ह्रास हो जाता है। यह भी हमारे तर्क के अनुरूप ही बैठता है।

१८८. सूर्य कैसे पानी 'खींचता' है ?

शरत्काल की मनोरम प्रातः की वेला है; चमकती हुई धूप वृक्षों के झुरमुट को पार करके आती है। दूर से हम देख सकते हैं कि धुन्धवाली हवा में किरणों की शलाकाएँ कितने बढ़िया तरीके से एक दूसरे के समानान्तर जाती हुई प्रतीत होती हैं! किन्तु निकट आने पर ऐसा लगता है कि वे अब परस्पर समानान्तर नहीं रहीं, बल्कि अकेले एक ही बिन्दु—सूर्य से विकिरित हो रही हैं।

इसी तरह की एक बड़े पैमाने की घटना से भी हम परिचित हैं। जब घने, किन्तु बिखरे हुए बादलों के पीछे सूर्य छिप जाता है और वायु में बारीक किस्म का कुहरा भरा रहता है तो प्रायः इन सूर्य-रश्मियों के पुञ्ज बादलों के बीच के खुले भागों में सूर्य से विकिरित होते हुए देखे जा सकते हैं जो कुहरे की नन्ही बूंदों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण की बदौलत कुहरे में प्रकाश की पथरेखाओं के रूप में प्रदर्शित होते हैं। ये सभी रश्मि-शलाकाएँ वास्तव मे परस्पर समानान्तर होती हैं (इन्हे बढाने पर ये अवश्य सूर्य से गुजरती हैं, किन्तु सूर्य इतने अधिक फासले पर है कि इन किरणों को 'समानान्तर' कहना उचित ही है)। इनके अनुदर्शन[2] से हमें ऐसी अनुभूति होती है मानो ये किसी एक बिन्दु से प्रसारित होती हैं; इनके लिए विलुप्त होनेवाला बिन्दु सूर्य होता है, ठीक उसी प्रकार जैसे रेल की पटरियाँ फासले पर एक-दूसरे से मिलती हुई जान पड़ती हैं (प्लेट XV, a)।

बादलों के इधर-उधर हटने के अनुसार इनमें से कुछ किरणें प्रबल अथवा क्षीण हो जाती हैं या अपना स्थान-परिवर्तन करती हैं, इत्यादि। कभी-कभी समूचे भू-दृश्य पर ये किरणें छा जाती हैं; या फिर यह कि सूर्य किसी अकेले बादल के टुकड़े के पीछे छिप जाता है तो उसकी काली छाया पड़ती है। पर्वतीय प्रदेशों में इस तरह की छाया-शलाकाएँ अक्सर दिखलाई पड़ती हैं जो निम्न ऊँचाई पर स्थित सूर्य के सामने पर्वत-श्रेणियों या चोटियों के आ जाने के कारण बनती हैं।[3]

प्रकाश-किरण की शलाकाएँ चन्द्रमा से भी उत्पन्न हो सकती हैं किन्तु इनकी प्रकाश-तीव्रता इतनी क्षीण होती है कि वे केवल तभी दिखलाई पड़ती हैं जब वायु-मण्डल द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रबल होता है। यह अत्यन्त दुर्लभ घटना अपशकुन की छाया-जैसी हमारे ऊपर डाल देती है।

1. 'Draws water' 2. Perspective 3. Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge; 1935)

ये किरण-पुञ्ज क्यों सूर्य से अल्प दूरी पर ही दिखलाई पड़ते हैं, उदाहरण के लिए बहुत ही कम अवसरों पर ये ९०° की दूरी पर दीखते हैं ? (देखिए §§ १७७, १८२, १८३)

१८९. सान्ध्य प्रकाश के रंग[1]

एक साधारण व्यक्ति के लिए आदर्श सूर्यास्त का अर्थ होता है कि वह सुनहले नीललोहित रंग के बादलों के आवरण-परिधान से ढका है जिसके अन्दर से गहरे खूनानुमा रंग का प्रकाश दमक रहा हो। बाल-सुलभ उत्कण्ठा के साथ वह इसमें ऊँट या शेर की आकृति प्रदर्शित होती हुई देखने का प्रयत्न करता है या किसी जगमगाते हुए महल या अग्नि की लपटवाले किसी अलौकिक समुद्र को देखने की कल्पना करता है। किन्तु एक भौतिकीज्ञ तो अपने प्रेक्षण का प्रारम्भ सूर्यास्त के सरलतम रूप से करने का प्रयत्न करता है और इसके लिए वह पूर्णतया निरभ्र और चमकीले प्रकाश का आकाश चुनता है। वह अध्ययन करता है रंगों के विस्तार की बारीकियों का और क्षण-क्षण बदलनेवाले रंगों की कोमल आभा का तथा वह इस बात का अध्ययन करता है कि दिन का नीला आकाश रात्रि के घने अन्धकार में किस प्रकार परिणत हो जाता है, और इन सब की अनुभूति कुछ थोड़े अभ्यास के उपरान्त ही हो पाती है। ये सभी परिवर्तन बार-बार लगभग उसी क्रम में घटित होते हैं; इन घटनाओं का विकास प्रकृति की एक महान् नाटयलीला है—विदा होनेवाले सूर्य की नाटयलीला !

इन प्रकाशीय घटनाओं से आविर्भूत होनेवाली अनन्त शान्ति की इस अनुभूति का कारण क्या है ? इन घटनाओं की तुलना इन्द्रधनुष से कीजिए जो प्रफुल्लता और आह्लाद की अनुभूति जगाता है। गोधूलि वेला का यह वातावरण निस्सन्देह मिश्रित रंगों वाले चौड़े वृत्त चापों के कारण है जो आसमान में दूर तक इतनी अधिक आड़ी स्थिति में पड़े रहते हैं कि वे करीब-करीब क्षैतिज ही जान पड़ते हैं। भू-दृश्यों की संरचना में जहाँ कहीं भी क्षैतिज रेखा मौजूद होती है, वह शान्ति और विश्रान्ति का आभास कराती है।

सूर्यास्त के रंगों का गम्भीर अध्ययन हमें वायुमण्डल के इन उच्चतम स्तरों की दशाओं के बारे में सूचना देता है जो आकाश के उन प्रदेशों के मुकाबले में जहाँ बादलों का निर्माण होता है, काफी अधिक ऊँचाई पर होते हैं; इन स्तरों के बारे में हमारा

1. The extensive literature is condensed in P. Gruner & H. Kleinert Die Dammerungserscheinungen (Hamburg, 1917)

ज्ञान नगण्य-सा ही है, सिवाय उस जानकारी के जो उनके द्वारा होनेवाले प्रकाश के परिक्षेपण से हमें प्राप्त होती है। इस अध्ययन का प्रारम्भ करने के लिए सर्वोत्तम अवसर अक्टूबर और नवम्बर के महीने हैं। इस घटना की स्पष्टता दिन प्रतिदिन बदलती रहती है, प्रायः उनके रंगों के वैभव को धूल और धुन्ध हर लेते हैं, और शहरों में तो खासकर धुएँ द्वारा ऐसा होता है। इस कारण इन घटनाओं के अध्ययन की बार-बार पुनरावृत्ति की जानी चाहिए।

सन्ध्याकालीन सुन्दर रंगों का ठीक तौर से अवलोकन करने के लिए आँखों को पूर्ण विश्राम दे लेना चाहिए। अस्त होने के पहले सूर्य पर हम चाहे कितने ही अल्प काल के लिए दृष्टि क्यों न डालें, हमारी आँखें कुछ समय के लिए इतनी अधिक चका-चौंध खा जायँगी कि हम सन्तोषजनक रूप से अपना प्रेक्षण जारी नहीं रख सकते। यदि हम पूर्वीय आकाश का प्रेक्षण करने का इरादा रखते हों तो हमें पश्चिम के अत्यन्त चमकीले आकाश की ओर अधिक देर तक नहीं देखना चाहिए। हर बार यदि घर के अन्दर जाकर या पुस्तक की ओर देख लेने पर, हमारी आँखों को एक क्षण के लिए विश्राम मिल जाता है, तब हम अनुभव कर पाते हैं कि सूर्यास्त की घटना के रंग कितने अधिक समृद्ध हैं तथा पहले-जैसे प्रतीत हुए थे इसकी अपेक्षा कितने अधिक विस्तार तक वे फैले हुए हैं। अतः मैं परामर्श दूँगा कि प्रेक्षण का आरम्भ इस बात से कीजिए कि पहले समष्टिरूप से सूर्यास्त की घटना के विकास का अवलोकन कीजिए और तब, इसके उपरान्त, आकाश के प्रत्येक भाग के विशिष्ट सौन्दर्य का अध्ययन कीजिए।

आकाश के विभिन्न भागों की परस्पर तुलना एक छोटे दर्पण की सहायता से बार-बार कीजिए जो आप की भुजा की लम्बाई की दूरी पर रखा गया हो। इस प्रकार आकाश के जिस भाग का अप अवलोकन कर रहे हैं उस पर बिलकुल ही भिन्न दिशा के आकाशीय भाग का प्रतिबिम्ब आप प्रक्षेपित कर सकते हैं।

विविध रंगोंवाली इस घटना में ये रंग एक दूसरे के साथ इतने पूर्णरूप से मिल जाते हैं कि कदाचित् इनमें किसी भी आकृति को देख पाने में आप कठिनाई महसूस करेंगे। फिर भी इसका गुर बिलकुल ही सीधा-सादा है। आकाश पर आप समान **प्रदीप्ति या समान रंग-आभा** की कल्पित रेखाएँ खींचिए; इनके विवरण में इन्हीं रेखाओं का बार-बार उल्लेख आया है, जैसे उदाहरण के लिए, जब हम यह कहते हैं कि सूर्यास्त की घटना का निर्माण सामान्यतः रंगीन वृत्तचापों की शक्ल में होता है।

संसार के इस भाग (हालैण्ड) के आकाश के लिए एक खुली स्वच्छ शाम के आदर्श सूर्यास्त का विवरण नीचे दिया जा रहा है (चित्र १४७)। सूर्य की ऊँचाई के लिए

दी गयी ऋणात्मक संख्या यह प्रकट करती है कि सूर्य क्षितिज से उतना ही नीचे है।

सूर्य की ऊँचाई ५°; सूर्यास्त से आध घण्टे पूर्व।
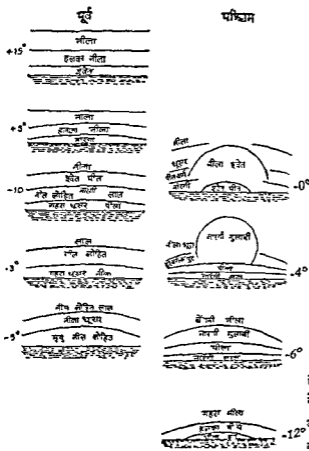
क्षितिज के निकट आकाश का रंग खुशनुमा पीला या पीला-लाल रंग धारण कर लेता है जो दिन में सामान्यतः दीखने वाले श्वेत-नीले रंग से पूर्णतया भिन्न होता है। सूर्य के नीचे की क्षैतिज पट्टियाँ पीत वर्ण की रंगीन धारियों के रूप में हलकी-हलकी दृष्टिगोचर होती हैं। (*'पट्टियों' से हमारा अभिप्राय केवल इतना ही है कि समान रंग-आभा की रेखाएँ क्षैतिज तल में अवस्थित होती हैं, न कि यह कि विभिन्न रंगों के लिए सुस्पष्ट सीमाएँ मौजूद होती हैं।*) इनके ऊपर सूर्य के समकेन्द्रीय एक बृहत्काय अत्यन्त चमकीला श्वेत रंग का प्रकाश का धब्बा दीखता है जिसे *चमकीली ज्योति* का नाम दिया गया है; प्रायः यह हलके तौर पर दीखने-वाले भूरे छल्ले से घिरा रहता है।

चित्र १४७—सूर्यास्त के दौरान में आकाश का रंग जब कि आसमान साफ हो। (हाशिये के अंक क्षितिज से ऊपर या नीचे सूर्य की स्थिति बतलाते हैं।)

पूर्वीय क्षितिज के निकट यदि सफेद बादल मौजूद हुए तो ये कोमल रक्तिम वर्ण धारण कर लेते हैं और ऊपर की दिशा के आकाश में प्रति-सान्ध्य प्रकाश का ऊपरी भाग प्रकट होता है, जो ६° से लेकर १२° तक की ऊँचाई का एक रंगीन हाशिया होता है—यह नारंगी, पीले, हरे तथा नीले वर्णों में रंग-परिवर्तन करता है।

सूर्य की ऊँचाई ०°; सूर्यास्त—किन्तु यह न सोच लीजिए कि सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ अब समाप्त हो गयी ! इसका रोचक पहलू तो अब आरम्भ हो रहा है। **पश्चिम में**—क्षितिज के सहारे रंग समुदाय की क्षैतिज पट्टियाँ दीखती है, नीचे से ऊपर की ओर इनका रंग श्वेत-पीला, पीला तथा हरा होता है। इसके ऊपर मिलती है देदीप्यमान् उज्ज्वल चमक, श्वेत और पारदर्शी; तथा यह भूरे वृत्त से घिरी रहती है जिसकी ऊँचाई ५०° तक पहुँचती है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया ऊपर लगभग उसी क्षण उठने लगती है जिस क्षण सूर्य अस्त होने लगता है। यह एक अत्यन्त चित्ताकर्षक नीले-भूरे रंग का वृत्तखण्ड होता है जो नील-लोहित वर्ण के स्तर के ऊपर से धीरे-धीरे खिसकता है। आम तौर पर क्षितिज के ऊपर ६०° से आगे उसे नहीं देखा जा सकता। कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि सूर्य के अस्त होने से बहुत पहले से ही पृथ्वी की छाया की झलक देखने लग जाती है, किन्तु यह तो केवल धूल या कुहरे की तह होती है। पृथ्वी की छाया के ऊपर होता है अपनी पूर्ण आभा सहित प्रति-सान्ध्य प्रकाश। और भी ऊपर मिलता है पश्चिम के आकाश के प्रकाश का **दीप्तिमान् प्रतिबिम्बन** जो कि दूर तक फैली हुई विस्तृत प्रदीप्ति का प्रकाश होता है।

सूर्य की ऊँचाई –१° से –२° तक; सूर्यास्त के १० मिनट उपरान्त; पश्चिम में—क्षैतिज धारियाँ, नीचे से ऊपर की ओर अब क्रमशः भूरी, नारङ्गी रंग की तथा पीली हो जाती हैं। तेज प्रकाश की चमक जिसके चारों ओर भूरे रंग का घेरा रहता है अभी भी ४०° की ऊँचाई तक पहुँचता है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया ऊपर की ओर और भी ऊँचाई तक खिसकती जाती है और इसके अन्दर की सभी चीजें अब मटमैले, एक समान रंग की दीखती हैं जो बहुत कुछ हरे-नीले वर्ण का होता है (एक आत्म-निष्ठ विपर्यास[1] का रंग ! देखिए § ९५)। प्रति-सान्ध्य प्रकाश[2] के गिर्द रंगीन हाशिया बनने लग जाता है जिसमें नीचे से ऊपर बैंगनी, गहरा लाल, नारङ्गी, पीला, हरा, नीला रंग मौजूद होता है और इनके ऊपर होता है तेज प्रकाशवाला प्रति-बिम्बन।

सूर्य की ऊँचाई –२° से –३° तक; सूर्यास्त के १५ से २० मिनट बाद तक; पश्चिम में—अब सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं का सबसे अधिक रोचक दृश्य आरम्भ होता है। तेज प्रकाश की चमक के सिरे पर क्षितिज से करीब २५° की ऊँचाई पर

1. Subjective contrast 2. Counter-twilight

एक गुलाबी रंग का धब्बा प्रकट होता है। तेजी के साथ यह बढ़ता जाता है, किन्तु साथ ही साथ इसका काल्पनिक केन्द्र नीचे की ओर खिसकता है। अतः इसकी शक्ल एक वृत्तखण्ड की तरह हो जाती है जो उत्तरोत्तर अधिक चिपटा होता जाता है। यह नील-लोहित प्रकाश आश्चर्यजनक रूप से मृदु पारदर्शिता के रंगों को विकिरित करता है जिसमें पूर्ण नीललोहित की अपेक्षा गुलाबी और नारङ्गी वर्ण का पुट अधिक होता है। क्षैतिज धारियां का रंग और भी धुंधला हो जाता है। पूर्व में—पृथ्वी की छाया अब और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित होती है। ऊपर वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश पूर्णरूप से विकसित हो चुका होता है, और इसके भी ऊपर होता है चमकदार प्रतिबिम्बन।

सूर्य की ऊँचाई,–३° से –४° तक; सूर्यास्त के २० से ३० मिनट उपरान्त; पश्चिम में—तेज प्रकाश की चमक अब भी ५° से लेकर १०° तक की ऊँचाई पर है। नीललोहित प्रकाश का उभार और भी अधिक हो गया है। प्रकाश की अधिकतम तीव्रता क्षितिज से १५° और २०° के दर्मियान की ऊँचाई पर है, सिरे का हाशिया लगभग ४०° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –४° से –५° तक; सूर्यास्त के ३० से लेकर ३५ मिनट उपरान्त तक; पश्चिम में—नीललोहित प्रकाश का उभार महत्तम। पश्चिम के रुख की इमारतों पर नीललोहित प्रकाश की चमक आरोपित हो जाती है; भूमि की मिट्टी संपृक्त वर्ण की दीखती है और उसी प्रकार वृक्षों के तने भी (विशेषतया भोजपत्र के वृक्षों के तने)। शहर के बीच तंग गलियों में जहाँ से पश्चिम का क्षितिज दृष्टिगोचर नहीं हो सकता, इमारतों पर पड़ने वाले सामान्य प्रकाश से स्पष्ट पता चलता है कि नीललोहित रंग का प्रकाश आसमान में चमक रहा है। इस बात की सावधानी रखिए कि पश्चिम के आकाश पर देर तक दृष्टि न जमाये रखें और यथासम्भव अधिक से अधिक समय तक घर के भीतर रहिए, केवल प्रेक्षण के लिए ही समय-समय पर बाहर निकलिए। पूर्व में—पृथ्वी की छाया में कभी-कभी भास के रंग का हलके लाल वर्ण का हाशिया प्रकट होता है, यह निम्नतम ऊँचाई वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश है। इसके प्रकट होने का कारण यह है कि पूर्व दिशा, स्वय सूर्य के बजाय नील-लोहित रंग के प्रकाश द्वारा प्रकाशित हो रही है। हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु में यह बहुत ही कम अवसरों पर दिखाई देता है।[1]

1. Photographs in Ch. Combier La Meteorologie 16. 117. *1940*

प्रथम दीप्ति-श्रेणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

सूर्य की ऊँचाई –५° से लेकर –६° तक, सूर्यास्त के ३५ से लेकर ४० मिनट बाद तक; पश्चिम में—तेज प्रकाश की चमक अब गायब हो चुकी होती है। नीललोहित प्रकाश हलका पड़ने लगता है, प्रकाशस्वरूप से यह क्षैतिज धारियों मे समा जाता है क्योंकि ये धारियाँ अब अधिक चमकीली और नारङ्गी वर्ण की दीखती हैं। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया की सीमा-रेखा पूर्णतया विलुप्त हो चुकी होती है। यदि नीचे का प्रति-सान्ध्य प्रकाश मौजूद है तो पृथ्वी की द्वितीय हलकी छाया उस वक्त देखी जा सकती है जिस क्षण नीललोहित प्रकाश विलुप्त होता है।

सूर्य की ऊँचाई –६° से लेकर –७° तक; सूर्यास्त के ४५ से लेकर ६० मिनट बाद तक; पश्चिम में—नीललोहित प्रकाश गायब हो जाता है और नीले-श्वेत रग की चमक बची रह जाती है जो सान्ध्य प्रकाश की चमक है, इसकी उँचाई १५° से लेकर २०° तक पहुँचती है। क्षैतिज धारियाँ क्रमशः नारङ्गी वर्ण की, पीली तथा कुछ-कुछ हरे रग की हो जाती हैं। नीललोहित प्रकाश के लोप होने पर ऐसा अनुभव होता है मानो भू-दृश्य का प्रकाश तेजी के साथ घट रहा है; अक्षरों का पढ़ना मुश्किल हो जाता है, नगरों के लिए सान्ध्य-प्रकाश की वेला खत्म हो गयी।

सूर्य की ऊँचाई, –९°; पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ७° से लेकर १०° की ऊँचाई तक पहुँचती है। **पूर्व में**—नीचे वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश विलुप्त हो चुका है, अकेला एक अन्तिम प्रतिबिम्बन बचा रह जाता है।

आकाश का सबसे अधिक अन्धकार वाला भाग ऊर्ध्व बिन्दु पर थोड़ा पश्चिम की ओर हटकर स्थित होता है।

सूर्य की ऊँचाई –१२°; पश्चिम में—क्षैतिज धारियाँ बहुत अधिक फीकी पड़ गयी हैं और अब वे हलके हरे रग की दीखती हैं। हरे-नीले वर्ण की सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ६° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई–१५°; पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ३° से लेकर ४° तक की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –१७°; पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक गायब हो गयी है। पाँचवीं दीप्ति श्रेणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लग गये हैं। काफी यथार्थता के साथ इस क्षण को निर्धारित किया जा सकता है और मौसम के लिहाज से तथा विभिन्न दिनों के लिए यह क्षण बदलता रहता है। आकाशीय सान्ध्य प्रकाश की वेला समाप्त हो गयी।

नील-लोहित प्रकाश पर टिप्पणी—नील-लोहित प्रकाश की तीव्रता में विभिन्न दिनों के लिए बहुत अधिक परिवर्तन होता है। ऊँचाई पर हवा में उतराते हुए बादलों की अत्यन्त झीनी परतों की उपस्थिति इस प्रकाश की तीव्रता में बहुत अधिक वृद्धि कर सकती है, और वारिश के कई दिनों के उपरान्त मौसम के साफ होने पर इस प्रकाश का निर्माण अद्भुत रूप से सुन्दर होता है। औसत तौर पर ग्रीष्म ऋतु के आखीर में या शरद् ऋतु में यह प्रकाश वसन्त ऋतु या ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक तेज होता है। यह केवल थोड़ी ही मात्रा में ध्रुवित होता है जबकि इर्द-गिर्द के आकाश में प्रकाश का ध्रुवण विशेष रूप से प्रबल होता है। हेडिन्जर ब्रुश का प्रयोग इस अन्तर को प्रदर्शित करने के लिए काफी होता है (§ १८१)।

सान्ध्य प्रकाश के दौरान में इसका निर्माण सदैव ही उसी तरीके का नहीं होता है, जिस तरह की रूपरेखा का हमने वर्णन किया है। निम्नलिखित में से किसी भी एक तरीके से इसकी उत्पत्ति हो सकती है—

(१) चमकीली ज्योति के गिर्द उसे घेरने वाले भूरे वृत्त से। (२) स्वयं चमकीली ज्योति से जो पीले वर्ण से गुलाबी और लोहित वर्ण की हो जाती है। (३) प्रति-सान्ध्य प्रकाश से जो करीब-करीब अदृश्य रूप से ऊर्ध्व विन्दु पर फैल जाता है और पश्चिम में पहुँच कर पुनः दृष्टिगोचर हो जाता है। (४) कोमल अलका बादलों से जो सूर्य के अस्त हो जाने के बाद उसके प्रकाश से प्रकाशित होते रहते हैं। (५) चमकीली ज्योति के सिरे पर बननेवाले नील-लोहित वर्ण के धब्बे से, जहाँ से ये विस्तारित होते हैं। इसी किस्म का वर्णन पुस्तकों में दिया गया है, किन्तु बहुत अधिक बार यह नहीं दिखलाई देता।

यदि हो सके. तो कभी भी सूर्योदय और सूर्यास्त का अवलोकन करना न भूलिए।

रस्किन—माडर्न पेन्टर्स।

१९०. प्रकाश की घटनाओं की माप

पृथ्वी की छाया की माप करना अत्यन्त सरल है (देखिए विधि § २३५)। एक ग्राफ तैयार कीजिए जिसमें इसकी ऊँचाई को समय के साथ प्लॉट किया गया हो। शुरू में पृथ्वी की छाया करीब उसी दर से ऊपर चढ़ती है जिस दर से सूर्य नीचे डूबता है, बाद में छाया की रफ्तार दो गुनी या तीन गुनी भी हो जाती है।[1] क्षितिज से

1. For a theoretical explanation of the velocity at which the earth's shadow rises, see Pernter—Exner. Moreover Fessenkov Russ. Astron. Journ. 23, 171. 1946 and 26, 233. 1949

ऊपर जिस ऊँचाई पर पृथ्वी की छाया विलुप्त हो जाती है, उससे हम वायु की शुद्धता का अन्दाज लगा सकते हैं। वायु के लेशमात्र के धुँधलेपन के प्रति यह अत्यन्त संवेदनशील होती है; वायुमण्डल में धूल के कण जितने ही अधिक होंगे उतनी ही जल्दी छाया अदृश्य हो जायगी।
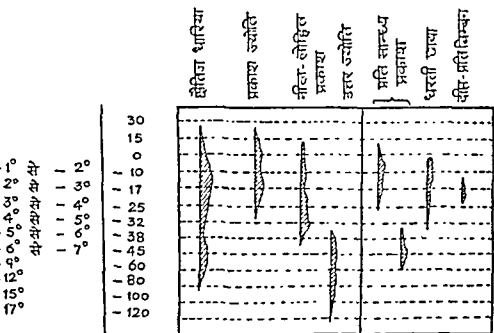
चित्र १४८—संक्षिप्त सारिणी जो सान्ध्य प्रकाश की विभिन्न घटनाओं के विकासक्रम को प्रदर्शित करती है।

चमकीली ज्योति और नीललोहित प्रकाश की माप करना अधिक कठिन है। यह तो वांछित है ही कि समय-समय पर आँख को विश्राम दिया जाय, इसके अतिरिक्त यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि आकाश की पृष्ठभूमि के सामने की प्रत्येक सिल्युएत निश्चय ही विपर्यास का प्रभाव उत्पन्न करती है और इस कारण इससे बचना उचित है। कितने आश्चर्य की बात है कि जिसे हम नील-लोहित प्रकाश की सीमा-रेखा समझते हैं, वह आँख के सामने रखी गयी पेन्सिल या लकड़ी के चिपटे टुकड़े के कारण अपनी स्थिति बदल देती है। सर्वोत्तम तरीका यह होगा कि उसकी ऊँचाई की तुलना भू-दृश्य के वृक्षों या मीनारों आदि से करें।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना वाञ्छनीय होगा कि आकाश की प्रदीप्ति की नाप से पता चलता है कि नील-लोहित प्रकाश की चमक इस कारण नहीं उत्पन्न होती है कि यहाँ प्रदीप्ति में वृद्धि हो गयी है, बल्कि इसलिए कि आकाश के उस भाग में प्रदीप्ति के ह्रास की दर इर्द-गिर्द के भागों की तुलना में धीमी हो जाती है। इस प्रकार उस भाग में आपेक्षिक प्रदीप्ति महत्तम हो जाती है और इस कारण आँखों को ऐसी अनुभूति होती है मानों नया प्रकाश वहाँ से विकीर्ण हो रहा है। इसी प्रकार रंग में परिवर्तन होने का कारण यह है कि अन्य तरंग-दैर्घ्यों की अपेक्षा कुछ विशेष तरंग-दैर्घ्यों की प्रकाश-तीव्रता में ह्रास की दर धीमी होती है।

नील-लोहित प्रकाश के विलुप्त हो जाने के उपरान्त उत्तर-प्रकाश ज्योति की गति दिलचस्प हो जाती है। इसका सबसे ऊपर वाला हाशिया वास्तव में पृथ्वी की छाया का अन्तिम चरण है, जो ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति को पार करके अब पश्चिम की ओर आ गयी है। यह प्रकाश पहले तो तेजी के साथ नीचे उतरता है, फिर इसकी रफ्तार उत्तरोत्तर धीमी होती जाती है।

१९१. सान्ध्य किरणें[1]

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ उस वक्त अलौकिक रूप से सुन्दर दीखती हैं जब पश्चिमी क्षितिज की आड़ में स्थित बादल अपनी छाया की धारियाँ आकाश पर एक विशाल पंखे की शक्ल में फैलाते हैं। क्षितिज के बीच उस काल्पनिक बिन्दु से जहाँ सूर्य स्थित होता है, ये धारियाँ विस्तारित होती हैं, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार 'पानी खींचती हुई' सूर्य-रश्मियाँ दीखती हैं; केवल इस बार आकाश अत्यन्त स्वच्छ होता है और अब हम देख सकते हैं कि विशेषतया नील-लोहित प्रकाश में ये काली धारियाँ कैसी छाया-आकृति बनाती हैं, इनका नीला-हरा वर्ण विशेष उत्तम विपर्यास उपस्थित करता है तथा यह विपर्यास और भी अधिक निखार इसलिए पाता है कि नेत्रों द्वारा उत्पन्न होनेवाला आत्मनिष्ठ वर्ण-विपर्यास[2] भी इस दशा में मौजूद रहता है। सान्ध्य किरणों से इस बात का पता चलता है कि नील-लोहित परिक्षेपण की अनुपस्थिति में आकाश कैसा दीखेगा, और अब पहली बार हम इस बात पर ध्यान दे पाते हैं कि नील-लोहित प्रकाश का विस्तार ठीक कितनी दूर तक है। इन्हें न केवल पश्चिम में जिधर सूर्य अस्त हो रहा है, देखा जा सकता है, बल्कि कभी-कभी पूर्वीय आकाश में भी प्रति-सान्ध्य

1. Crepuscular rays
2. Subjective colour contrast

प्रकाश की नील-लोहित पृष्ठभूमि पर ये दिखाई देती है जहाँ ये प्रति-सूर्य विन्दु पर जाकर एक दूसरे से मिलती है।

अतः जब कभी सान्ध्य किरणों का प्रेक्षण करे तो पूर्वीय आकाश को भी प्रेक्षण मे शामिल कर लेना चाहिए। परिशुद्ध प्रेक्षण से पता चलता है कि पूर्व तथा पश्चिम की किरणे बिलकुल ठीक जोड़े-जोड़े में बैठती है और प्रकाश्यतः दोनों ओर की किरणें एक ही है जो दरअसल समूचे नभोमण्डल के गिर्द जाती है, किन्तु उनके सिरे ही हम भली-भाँति देख पाते हैं। कभी-कभी तो इन धारियो को एक सिरे से दूसरे सिरे तक, एक बड़े वृत्तचाप की शक्ल में देखना भी सम्भव होता है जिनके सिरे एक दूसरे की ओर झुके होते है, किन्तु हम जानते है कि ये सुपरिचित धारियाँ वास्तव मे परस्पर समानान्तर होती हैं, इनकी शक्ल प्रकाशीय दृष्टिभ्रम के कारण ही धनुपाकार दीखती है (§ १०८)।

ये सान्ध्य किरणें केवल वहाँ पर दिखलाई पडती है जहाँ वायु मे परिक्षेपण करने वाले कण उतराते रहते हैं। 'पानी खीचनेवाली' सूर्य-रश्मियाँ हलके धुन्ध की पृष्ठभूमि पर दृष्टिगोचर होती है; नील-लोहित प्रकाश की सान्ध्य किरणे सान्ध्य आलोक उत्पन्न करनेवाले अपेक्षाकृत अत्यन्त नन्हें धूलकणों की पृष्ठभूमि पर प्रकट होती हैं। नील-लोहित प्रकाश-विहीन सान्ध्य आलोक में सान्ध्य किरणें अनुपस्थित रहती है और ये हरे वर्ण के आकार की पृष्ठभूमि पर तो कभी भी प्रकट नही होती। इसके प्रतिकूल, नील-लोहित प्रकाश जब विलुप्त होकर क्षैतिज धारियों की शक्ल अख्तियार कर लेता है तो इसके बहुत देर बाद तक ये सान्ध्य किरणें दृष्टिगोचर होती रहती है; यह वास्तव में इस बात का प्रमाण है कि प्रकाश की इन घटनाओ मे से प्रथम घटना सदैव ही उपस्थित रहती है जो पश्चिमीय आकाश की ज्योति में विशेष योग देती है।

सान्ध्य किरणें अपने अन्त होनेवाले छोरो पर अधिक आसानी से देखी जा सकती है बनिस्बत इससे समकोण हटी हुई दिशा में, उसी प्रकार जिस तरह आम तौर पर सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ पश्चिमीय तथा पूर्वीय आकाश में बीच की दिशाओं की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट दीखती हैं। और यह भी परिक्षेपण के नियमों का ही परिणाम है (देखिए § १८२)।

हम इस बात का भी अन्दाज लगा सकते है कि छाया डालनेवाला बादल हमसे कितनी दूर है। यदि बादल पृथ्वी पर होता तो वह ठीक उसी क्षण सान्ध्य किरणे उत्पन्न करता जब सूर्य पृथ्वी के साथ स्पर्शकोय स्थिति में आता। अब यदि सान्ध्य किरणें ठीक उस क्षण दृष्टिगोचर होती है जब कि सूर्य क्षितिज से कोण α नीचे होता

है, तब हम जानते हैं कि बादल हमारी आँख से αR दूरी पर होगा (R=पृथ्वी की त्रिज्या)। किन्तु बादल यदि स्थिति W में (चित्र १४९) ऊँचाई h पर हो, तब प्रेक्षक से उसकी दूरी का मान $R(\alpha-\beta)$ तथा $R(\alpha+\beta)$ के बीच पड़ेगा जो इस बात पर निर्भर करेगा कि सूर्य S_1 और S_2 दिशाओं के बीच किस बिन्दु पर स्थित है। यहाँ $\cos\beta = \frac{R}{R+h}$ या $\beta = \sqrt{\frac{2h}{R}}$ (सन्निकटतः)।
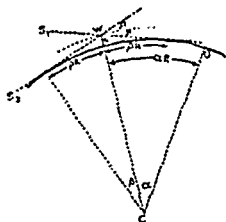
चित्र १४९—उन बादलों की दूरी का अनुमान लगाना जिनकी वजह से सांध्य किरणें उत्पन्न होती हैं।

अब मान लीजिए सूर्यास्त के आध घण्टे बाद एक सान्ध्य किरण देखी गयी तो इस वक्त सूर्य की स्थिति क्षितिज से $\alpha=4°$ नीचे होगी। अतः इस घटना को उत्पन्न करने वाले बादल की ऊँचाई तीन मील से अधिक नहीं हो सकती, अर्थात् कोण β का अधिकतम मान होगा $\sqrt{\frac{२+३}{४०००}} = \frac{१}{२८}$ रेडियन या २·३° (सन्निकटतः)। और β के इस मान के लिए हमें $\alpha-\beta$ तथा $\alpha+\beta$ के लिए क्रमशः मान १.७°=०.०३ रेडियन तथा ६.३°=०.११ रेडियन मिलेंगे और बादल की दूरी का मान १२० और ४५० मील के दर्मियान कुछ भी हो सकता है। इस परिणाम से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि *क्यों कभी-कभी जब आकाश पूर्णतः स्वच्छ और निरभ्र प्रतीत होता है*, तो भी सान्ध्य किरणें दिखलाई देती हैं।

१९२. सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं की व्याख्या (चित्र १५०)

कल्पना कीजिए कि सूर्य जब क्षितिज के निकट है, तो उसकी किरणों के पथ का आप अनुसरण कर रहे हैं। वायुमण्डल में वे एक लम्बी दूरी तय करती हैं; वायु के अणु ज्यों-ज्यों बैंगनी, नीली तथा हरी किरणों का परिक्षेपण करते हैं त्यों-त्यो किरणों का रंग उत्तरोत्तर और भी अधिक लाल होता जाता है। इस प्रकार अस्त होता हुआ

सूर्य अपना ताम्रवर्ण धारण कर लेता है। क्षितिज के नीचे छिप जाने के उपरान्त भी सूर्य की किरणे हमारे सिर के ऊपर के वायुस्तरो को प्रकाशित करती रहती है। नीचे के वायुस्तर अधिक घने होते है, अतः वे अधिकतम मात्रा में परिक्षेपण करते है जबकि ऊपर के स्तर उत्तरोत्तर अधिक विरल होते जाते है और इस कारण परिक्षेपण भी कम
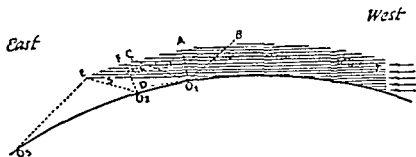
चित्र १५०—सांध्य प्रकाश के रंगों की व्याख्या।

होता जाता है। यदि हम O_1 पर खड़े होकर ऊपर की दिशा O_1A में देखें तो यहाँ हवा की तहों की गहराई अधिक न होगी और फिर अणुओं द्वारा ९०° के कोण पर परिक्षेपण भी अधिक नही होता है। अतः ऊर्ध्व बिन्दु के निकट आकाश अँधेरा दीखेगा। इसके प्रतिकूल O_1B तथा O_1C दिशाओं में देखने पर आँख में परिक्षेपित प्रकाश अत्यधिक मात्रा में पहुँचेगा क्योंकि हमारी दृष्टि अब प्रकाशित वायुस्तरो में लम्बी दूरी तक जाती है। B की ओर से पहुँचने वाला प्रकाश अधिक प्रबल होगा क्योकि इस दशा में वायु के अणुओं से परिक्षेपित होनेवाले प्रकाश के अतिरिक्त वे किरणे भी आँख में पहुँचती है जो नन्ही बूँदो, तथा धूल के अपेक्षाकृत बड़े आकार के जर्रो द्वारा अल्प कोण पर परिक्षेपित होती हैं। यहाँ पर हमें **क्षैतिज धारियों** की उत्पत्ति का समाधान मिलता है जिनकी दिशा वही होती है जो बड़े आकार वाले जर्रो की तहों की। साथ ही साथ इससे इस बात का भी समाधान मिलता है कि O_1C दिशा में क्यों **प्रति-सान्ध्य प्रकाश** उत्पन्न होता है और क्यों इसका रग नीले से हरा तथा पीला होकर लाल रंग में परिवर्तित हो जाता है। क्योकि जब हम अपनी दृष्टि थोड़ा नीचे की ओर करते है तो यह घने स्तरों में से होकर गुजरती है जो दूर तक फैली होती है, अतः परिक्षेपण के कारण अन्त में केवल लाल रग का प्रकाश ही आँख तक पहुँच पाता है। और भी नीचे, O_1D दिशा में हमारी दृष्टि के सामने **पृथ्वी की छाया** पड़ती है, अतः

D की दिशा से कुछ भी प्रकाश हमारे पास नहीं पहुँचता सिवाय इसके कि इस दिशा में पड़नेवाली वस्तुएँ आकाश के सभी भागों से पहुँचनेवाले विसृत मन्द प्रकाश से प्रकाशित होती है, अतः हर किस्म के विपर्यास गायब हो जाते हैं। कुछ समय उपरान्त हमारी स्थिति O_2 पर होगी जहाँ से अब प्रति-सान्ध्य प्रकाश का लाल हाशिया हमें दिखलाई न पड़ेगा क्योंकि अब ऐसी दिशा में हम देख रहे हैं जो सूर्य-रश्मियों के साथ अधिक बड़ा कोण बनाती है, तथा अब हमारी दृष्टिरेखा वायु के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भागों के विभाजक धरातल को छूती हुई नहीं जाती है। बिन्दु E से आने वाली किरणों द्वारा पहुँचनेवाला प्रकाश अपर्याप्त होता है जब कि F से आने वाली अधिक प्रावण्य वाली किरण नीले, पीले तथा लाल प्रकाश की समान मात्राएँ अपने साथ लाती है। इस प्रकार वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमारेखा और भी अस्पष्ट तथा धुँधली हो जाती है।

और भी देर बाद सान्ध्यकालीन प्रकाशित स्तरों का प्रावण्य (ढलान) इतना अधिक हो जाता है कि अब पश्चिमी आकाश में लाल रंग का लेशमात्र भी नहीं दीखता। इस क्षण हमें समझना चाहिए कि प्रेक्षक बिन्दु O_3 पर स्थित है। वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमा E जो पृथ्वी की छाया के हाशिये के रूप में ऊँची चढ़ती हुई ऊर्ध्व बिन्दुओं को पार कर गयी थी (ऐसा करते हुए उसे हम देख नहीं पाते), पुनः पश्चिम के आकाश में प्रगट होने लगती है क्योंकि हमारी दृष्टिरेखा एक बार फिर वायुमण्डल के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भाग के विभाजक धरातल के साथ अल्प मान का कोण बनाती है। इसके अतिरिक्त अपेक्षाकृत बड़े आकार के जर्रों द्वारा अल्पकोण का परिक्षेपण पुनः क्रियाशील हो जाता है और दृश्य का सामान्य प्रकाश अब इतना मन्द हो चुका होता है कि इस क्षीण चमक पर भी हमारा ध्यान आकृष्ट हो जाता है। इसी कारण E, सान्ध्य प्रकाश की चमक की ऊपरी सीमा बतलाता है।

यद्यपि सान्ध्य प्रकाश की अधिकांश घटनाओं का समाधान परिक्षेपण के आधार पर किया जा सकता है, फिर भी आधुनिक अनुसन्धानों से पता चलता है कि अन्य बातें भी इन घटनाओं पर प्रभाव डालती हैं। हाल में यह दिखलाया गया है[1] कि पृथ्वी-छाया का नीला-बैंगनी रंग मुख्यत. ओज़ोन द्वारा होने वाले अवशोषण के कारण है; यह गैस स्पेक्ट्रम के पीले तथा नारङ्गी वर्ण वाले भाग का हलका अवशोषण करती है;

1. J. Dubois, Comptes—Rendus Acad. Paris, 222, 671, 1946, and 226, 1180, 1948

सान्ध्य प्रकाश की परिस्थितियों मे किरणों का वारम्वार परिक्षेपण होता है, अत. इनकी मार्ग-रेखा की लम्वाई इतनी अधिक वढ़ जाती है कि इस अवशोपण का प्रभाव प्रगट देखाई पड़ने लग जाता है।

अन्त में नील-लोहित प्रकाश का समाधान करना वाकी रहता है। ऐमा प्रतीत होता है कि यह उन नन्हे धूलिकणों द्वारा होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, जो १५–२५ किलोमीटर की ऊँचाई पर, जहाँ से स्ट्रटोस्फियर का प्रारम्भ होता है, उतराते रहते हैं। जिस किरण-शलाका से इस स्तर को प्रकाशित होते हुए हम देखते हैं, वह इस पर उस वक्त गिरती है, जव सूर्य क्षितिज से नीचे जा चुका होता है। इम किरण-शलाका का निचला भाग गाढ़ा लाल होगा क्योंकि इस भाग की किरणे घने वायु-स्तरों मे से होकर लम्वी दूरी तय करती हैं। अत. स्तर के भाग SR से ही नील-लोहित प्रकाश का अधिकांश प्राप्त होगा। यहाँ आश्चर्यजनक वात यह है कि SR द्वारा होने वाला परिक्षेपण केवल O_2 पर ही दीखता है, O_1 पर नही (जहाँ से उसे पूर्वीय आकाश में दृप्टिगोचर होना चाहिये था)। इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि परिक्षेपण करने वाले कण वायु के अणुओं की तुलना मे वहुत बड़े हैं, अत. वे मुख्यतः सामने की दिशा में परिक्षेपण करते हैं (देखिए §१८२)। जव कभी सन्ध्या को नील-लोहित प्रकाश को प्रगट होते हुए हम देखें तो हमें समझ लेना चाहिए कि यह इस वात का सूचक है कि धूलकणों द्वारा सामने की दिशा में होने वाले परिक्षेपण के शकु मे हम अव प्रवेश कर गये हैं।

१९३. उपा तथा सन्ध्याकाल में क्या कोई अन्तर है ?

यदि कोई अन्तर है भी तो इतना सूक्ष्म कि वास्तव में किसी लाक्षणिक अन्तर का विवरण देना सम्भव नही है। फिर भी एक महत्त्वपूर्ण वात यह है प्रातः आँख को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है और वह प्रकाश-तीव्रता को अविरत रूप से वढती हुई देखती है, अतः प्रात. की आलोक-घटनाओं के प्रति यह सन्ध्या की घटनाओं की अपेक्षा अधिक सुग्राही होती है।

वायु की आर्द्रता की मात्रा अधिक होने के कारण सान्ध्य आलोक में रंगों की सम्पन्नता अधिक होती है तथा इस कारण भी कि वायु अपेक्षाकृत अधिक विक्षुब्ध होती है, तथा प्रातः की अपेक्षा सन्ध्या को हवा में धूल के कण भी अधिक मात्रा में मौजूद होते हैं।

१९४. 'प्रभात के पूर्व अन्धकार सबसे अधिक घना होता है।'

उल्काओं के सुविख्यात प्रेक्षक डेनिंग अंग्रेजी भाषा की उस लोकोक्ति में अक्षरशः विश्वास करते हैं। दिन निकलने के ठीक पहले वह कुछ घबराहट-सा महसूस करते हैं और वे चीजें जिन्हें वे अभी तक निश्चित रूप से भलीभाँति देख पा रहे थे, अब दृष्टि से गायब होती जान पड़ती हैं।

प्रकाश-ज्योति की माप से अवश्य पता चलता है कि कभी-कभी प्रदीप्ति अनियमित तौर पर घटती-बढ़ती रहती है, किन्तु यह घट-बढ़ इतनी कम मात्रा में होती है तथा इतनी अधिक परिवर्तनशील होती है कि इसका कोई वास्तविक अर्थ नहीं लगाया जा सकता। संभवतः उषा की प्रथम ज्योति नेत्र की समानुयोजन[1]-क्षमता को उद्वेलित कर देती है यद्यपि यह ज्योति अभी तक इतनी क्षीण तथा विस्तार में इतनी संकुचित रहती है कि आसपास की वस्तुएँ इस कद्र प्रकाशित नहीं हो पातीं कि वे दिखलाई पड़ सकें।

१९५. उषा तथा सान्ध्यकालीन लालिमा, मौसम की पूर्वसूचना के रूप में

सन्ध्या के समय आप कहते हैं कि मौसम अच्छा होगा क्योंकि आकाश लाल रंग का है।

और सुबह को आप कहते हैं कि आज खराब मौसम होगा क्योंकि आकाश में लालिमा है। अरे पाखण्डी लोगों, आप आसमान का चेहरा तो पढ़ लेते हैं, किन्तु युग का संकेत क्या आप नहीं पहचान सकते ? मैथ्यू (XVI.,2–3)

यह प्राचीन तथा व्यापक नियम, जैसा कि आधुनिक आँकड़ों द्वारा प्रमाणित हो चुका है, अधिकांश दशाओं में वास्तव में सही उतरता है। प्रत्येक दशा का समाधान उसके निज के तरीके पर किया जा सकता है।

यदि सन्ध्या काल में हम लालिमा देखते हैं तो इसका अर्थ है कि पश्चिम का आकाश स्वच्छ है। चूंकि ऋतु की दशाएँ आम तौर पर पश्चिम से पूरब को हटती हैं, अतः हम यह आशा कर सकते हैं कि मौसम सुहावना रहेगा। किन्तु यदि अल्पदाब का प्रवेश आने को होता है तो इसके घने बादल अपनी छाया दूर-दूर तक फेंकते हैं और सन्ध्याकालीन समूचा आकाश फीके पीले रंग का धूमिल तथा हलकी फुआर की सूक्ष्म बूंदों से भरा दीखता है; ऐसे आकाश को तूफान और वर्षा का पूर्व-सूचक समझा जा सकता है।

1. Adaptation

क्षैतिज धारियाँ सुर्ख केवल तभी होती हैं जब हवा में धूल या पानी की नन्हीं बूँदें मौजूद होती हैं; सुबह के वक्त अधिक धूल तो होती नहीं है, अतः सुर्ख रग अवश्य पानी के कारण होगा।

१९६. सान्ध्य प्रकाश के सामान्य क्रम में व्यवधान

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ, ऊँचाई पर स्थित वायुस्तरों की शुद्धता आँकने के लिए अत्यन्त सूक्ष्म किस्म के साधन हैं। सन् १८८३ से १८८६ तक के असामान्यतः विविध रगो से परिपूर्ण सूर्योदय तथा सूर्यास्त इस बात के प्रत्यक्ष परिणाम थे कि डच द्वीपसमूह के ज्वालामुखी 'क्राकातोआ' के उद्गार के दौरान ज्वालामुखी की बारीक राख कुछ ही महीनो में समस्त संसार के वायुमण्डल में फैल गयी थी। किन्तु इसके पूर्व और इसके बाद भी छोटे पैमाने पर प्रकाशीय व्यवधान बारम्बार घटित हुए हैं जो आम तौर पर ज्वालामुखी के उद्गार से सम्बन्धित थे। उदाहरणत. १८३१ मे सिसली-के निकट पैन्टीलेरिया ज्वालामुखी, १९०२–०४ में मोण्ट पेली, १९०७–०९ कामचट्का में जादुत्का तथा १९१२–१४ में अलास्का मे काटमाई। विसूवियस या एटना के प्रत्येक प्रचण्ड उद्गार के पश्चात् असामान्य सान्ध्य प्रकाश की आशा की जा सकती है, यद्यपि यहाँ (हालैण्ड) तक ज्वालामुखी की बारीक राख को पहुँचने मे एक हफ्ते से भी अधिक समय आम तौर पर लग जाता है।

इस बात की सम्भावना अधिक जान पडती है कि सूर्य पर धब्बों तथा तेज-शृंगों[1] का बाहुल्य सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं मे व्यवधान उपस्थित करता है क्योंकि सूर्य से विसर्जित इलेक्ट्रान, आयन तथा परमाणु हमारे वायुमण्डल में आयनीकरण का कारण बन सकते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार महत्तम प्रभाव १९३८ तथा १९४९ में होने चाहिए।

सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान के एक तृतीय कारण का पता उस वक्त चला जब १८, १९ मई १९१० को पृथ्वी हेली धूमकेतु की पूँछ मे से होकर गुजरी। सान्ध्य प्रकाश की यह शानदार घटना इस बात की द्योतक जान पडी कि धूमकेतु के धूलकण वायुमण्डल में प्रवेश कर गये थे (§ १६७)। ठीक इसी प्रकार की प्रभावोत्पादक घटना सन् १९०८ में देखी गयी जब उत्तर साइबीरिया के मरुस्थल प्रदेश में विशालकाय उल्का-प्रस्तर आ गिरा था।

1. Prominences

मुख्य प्रकाशीय घटनाएँ, जो सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान की सूचक हैं, निम्नलिखित हैं—

(क) 'बिशप का छल्ला'[1]। दिन भर सूर्य एक चमकीले, नीले-श्वेत मंडलक के केन्द्र पर रहता है जिसके गिर्द लाल-भूरे रंग का छल्ला मौजूद रहता है। मंडलक के सबसे अधिक चमकीले भाग की त्रिज्या लगभग १५° के कोटि की होती है। सूर्य जब बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है तब यह बिशप का छल्ला एक तरह का त्रिभुज बन जाता है जिसका आधार क्षैतिज रहता है। चूंकि छल्ले के सामने से अलका बादल गुजरते हुए देखे जा सकते हैं, अतः सिद्ध होता है कि यह छल्ला वायुमण्डल में बहुत अधिक ऊँचाई पर बनता है।

(ख) इसी प्रकार का ताम्रवर्ण का लाल छल्ला कभी-कभी प्रति-सूर्य बिन्दु पर भी देखा जा सकता है; इसकी त्रिज्या लगभग २५° होती है।

(ग) आकाश का नीला रंग गँदला और सफेदी लिए हुए होता है; सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है तो यह मटमैले लाल रंग का दीखता है क्योंकि धुन्ध की तह में से होकर यह चमकता है। छठीं दीप्ति-श्रेणी के तारे और पाँचवीं श्रेणी के तारे भी अब दृष्टिगोचर नहीं हो पाते हैं।

(घ) असामान्य रूप से कम सख्या में प्रभामण्डलों की उपस्थिति।

(ङ) असामान्य रूप से स्वच्छ रात्रि।

(च) असामान्य रूप से तेज, आग की लपट-जैसी नील-लोहित रोशनी।

(छ) द्वितीय नील-लोहित ज्योति। यह सान्ध्य प्रकाश के दौरान में होनेवाला परिवर्तन है। नील-लोहित प्रकाश-ज्योति जब मन्द पड़ जाती है और सूर्य क्षितिज से ७° या ८° नीचे पहुँच जाता है, तब एक क्षीण लाल-बैंगनी ज्योति उस स्थल पर प्रगट होती है जहाँ नील-लोहित प्रकाश प्रगट हुआ था और उसी भाँति इस लाल-बैंगनी ज्योति का भी विकास होता है। सूर्य जब १०° या ११° क्षितिज से नीचे पहुँचता है तो इसका अवसान हो जाता है।

(ज) परा-अलका[2] बादल (देखिए § १९८)।

(झ) रात्रि के देदीप्यमान बादल (देखिए § १९९)।

(ञ) चन्द्रमा में हरे रंग का पुट दीखता है।

साधारण कोटि के लोग भी इनमें से विशेष प्रमुख घटनाओं द्वारा प्रभावित हो जाते हैं। किन्तु सूक्ष्म बारीकियों का प्रेक्षण कर सकने के लिए विशेष अभ्यास की

1. Bishop's Ring 2. Ultra-cirrus

आवश्यकता होती है, तभी इस बात का पता लगा सकते हैं कि दो सूर्यास्तों का एक समान होना कभी भी सम्भव नही है और ये सूक्ष्म अन्तर प्रकाशीय घटनाओं के न्यूनतम व्यवधानो को पहचानने के लिए अत्यन्त सूक्ष्मग्राही साधन साबित होते हैं।

१९७. सूर्य के गिर्द प्रकाश की चमक[1]

यदि हम सूर्य की ओर मुँह करके इस तरह खड़े हों कि स्वयं सूर्य एक छत के हाशिये की आड़ में पडे तो हम देखेंगे कि सूर्य के चारो ओर एक प्रकाश-ज्योति विकिरित हो रही है और ज्यो-ज्यों सूर्य से फासला बढता जाता है त्यो-त्यो यह ज्योति भी क्षीण होती जाती है। कुछ गजों के फासले पर रखे हुए वाटिका-ग्लोब में भी इसे स्पष्ट देखा जा सकता है बशर्ते सूर्य के प्रतिबिम्ब को आप अपने सिर की ओट में ले ले। कुछ प्रेक्षकों का दावा है कि इसके दो भाग होते हैं—(क) एक रजतश्वेत मडलक जिसकी त्रिज्या २° से लेकर ५° तक होती है—(यह परिवर्तनशील होती है) और जो सामान्यत. तीसरे पहर को प्रगट होता है; (ख) एक बहुत बड़े आकार का प्रकाश-वृत्त जिसकी त्रिज्या निश्चय ही ३०° से लेकर ४०° तक होती है, जो शायद ही कभी अनुपस्थित रहता हो, और सन्धि बेला पर यह 'तेज चमक' मे परिवर्त्तित हो जाता है। अन्य प्रेक्षको के अनुसार इस चमक में पाये जाते हैं ०.२५° से लेकर २° तक की त्रिज्या का एक पीत वर्ण का श्वेत आभामण्डल, २° से लेकर ५° तक की त्रिज्या का नीला-श्वेत कान्तिचक्र, १५° से लेकर २३° तक की त्रिज्या का केन्द्रीय मडलक, १०° से लेकर ४०° तक के त्रिज्या का भीतरी मंडलक तथा २५° से लेकर ७०° तक का एक बाहरी मडलक। इनके आकार अधिकतर सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते हैं और ये दिन प्रति दिन बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिए, ऐसा प्रतीत होता है कि जब सूर्य बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है—क्षितिज से २° ऊपर—तो यह एक ऐसे आभामण्डल (आरिएल) से घिरा होता है जिससे मटमैले पीले रंग की किरणें निकलती हैं और जब क्षितिज से १° की ऊँचाई पर सूर्य पहुँचता है तो यह आभामण्डल विलुप्त हो जाता है।

सूर्य के गिर्द के प्रकाश के ज्योतिमापन के सम्बन्ध मे सूक्ष्म अनुसन्धान बहुत कम ही किये गये हैं। अधिक सम्भावना इस बात की है कि जो हमें छल्ला-सा मालूम पड़ता है वह केवल प्रकाशतीव्रता के ह्रास की दर में कमी होने के कारण उत्पन्न होता है, जो अन्यथा सूर्य से दूरी के बढ़ने के साथ शनैः-शनैः घटती जाती है। यह परिक्षेपित प्रकाश निस्सन्देह

1. J. Maurer, Met. Zs. 32 and 33, 1915-16

धूल कणों, पानी की बूंदों, या वर्फ के जरों द्वारा सूर्य-प्रकाश के विवर्त्तन से उत्पन्न होता है—ये सभी अल्प कोण पर परिक्षेपण करते हैं (§ १८२)। छोटे, बड़े सभी आकार के कण होते हैं, अतः ये आभामण्डल तथा कान्तिचक्र एक दूसरे के ऊपर अध्यारोपित होते हैं, फलस्वरूप रंगों का मुश्किल से ही भान हो पाता है। इस प्रकाश-ज्योति की चमक में अन्तर तथा प्रकाशमात्रा के वितरण वायु की शुद्धता के परिचायक हैं, अतः यह उचित ही है कि इनका प्रेक्षण हम जारी रखें। ये तुरन्त वायुमण्डल में होनेवाले प्रकाशीय विक्षोभ का पता देते हैं और सान्ध्य आलोक की घटनाओं से ये निकट सम्बन्ध रखते हैं।

जब कभी ज्वालामुखी की राख वायु में उतराती होती है तो इस प्रकाशज्योति की परिधि के रूप में एक अस्पष्ट भूरे-लाल रंग का छल्ला, बिशप का छल्ला, प्रगट होता है (§ १९६)।

१९८. सान्ध्य प्रकाश के अलका या परा-अलका मेघ[1]

दुर्लभ परिस्थितियों में सूर्यास्त के ठीक पहले आकाश निरभ्र प्रतीत हो सकता है और तब थोड़ी देर उपरान्त हलके बादलों की परत प्रगट होती है जो पश्चिमी आकाश में कम ऊँचाई पर नीले-भूरे रंग की दीखती है। एक अत्यन्त मार्के की बात यह है कि केवल सूर्य के अस्त होने के समय ही ये बादल दृष्टिगोचर होते हैं और सो भी जबकि इनकी ऊँचाई–३° तथा–७° हो। इससे यह सिद्ध होता है कि ये कुछ निश्चित दिशाओं से ही प्रकाशित हो पाते हैं। किन्तु यह प्रेक्षण इतनी कम बार किया जा सका है कि इसे हम कोई व्यापक महत्त्व नही दे सकते। परा-अलका बादल के प्रगट होने के साथ आम-तौर पर विशेष रूप से विविध रंगों वाले सूर्यास्त, तथा प्रकाशीय विक्षोभ मिलते हैं (§ १९६), अतः हम बेखटके इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ये ज्वालामुखी की राख से निर्मित होते हैं। ये इतने झीने होते हैं कि दिन में ये दिखलाई नही पड़ते, बल्कि सन्ध्या के धुंधलके में ये प्रगट होते हैं, प्रत्यक्षतः इस कारण कि अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ये तेज रोशनी से प्रकाशित होते हैं। इस बात का यदि विचार करें कि सूर्य की ऊँचाई जब-७° थी तो क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर ये दृष्टिगोचर थे, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि इनकी ऊँचाई सात मील से विशेष अधिक नहीं हो सकती; इससे सिद्ध होता है कि ये स्ट्रैटोस्फियर[2] के सबसे नीचे के स्तर में उतराते रहते हैं।

1. M. Wolf, Meteorol. Zeitschr, 33, 517, 1916 2. Stratosphere

१९९. रात्रि के देदीप्यमान् बादल[1] (प्लेट XII)

ये अत्यन्त पतले बादल होते हैं जो अन्य सभी किस्म के बादलों के मुकाबले बहुत अधिक ऊँचाई पर स्थित होते हैं, किन्तु ये वायुमण्डल की सामान्य-परिस्थितियों में भी देखे गये है। आश्चर्य की बात है कि ये केवल उत्तर अक्षांश ४५° तथा ६०° के दर्मियान तथा दक्षिण में भी इन्हीं अक्षांशों के दर्मियान देखे गये हैं, विशेषतया मई के मध्य से लेकर अगस्त के मध्य तक। हमारे यहाँ (हालैण्ड) के अक्षांशों के लिए खास तौर पर जून के अन्त में इन्हें देखने का प्रयत्न कीजिए।

सूर्य जब तक अस्त नहीं हो चुका होता है तब तक तो आकाश पूर्णत: निर्मल रहता है। सूर्यास्त के लगभग चौथाई घण्टे बाद देदीप्यमान् बादल नन्हें डैनों के रूप में, या पसलियों की तरतीब में, या धारियों की शक्ल में, प्रगट होना शुरू करते हैं; सूर्यास्त के एक घण्टे या कुछ और अधिक देर बाद ये सबसे अधिक स्पष्ट दिखलाई देते हैं। उत्तर-ज्योति (§१८९) की पृष्ठभूमि पर ये प्रकाशित दीख पडते है, जबकि सामान्य अलका बादल मटमैले रग के होते है। अत: स्पष्ट है कि अभी भी सूर्य का प्रकाश इन पर प्रचुरता से पड़ रहा है, सो निश्चय ही ये स्ट्रैटोस्फियर में काफी ऊँचाई पर होंगे। सही बात तो यह है कि ये स्वय प्रकाश उत्सर्जित नहीं करते। इनके नीले-श्वेत प्रकाश का अवलोकन घण्टों तक किया जा सकता है, समय ज्यों-ज्यों बीतता जाता है त्यों-त्यों इनके स्तरों की प्रकाशित सतह का क्षेत्रफल कम होता जाता है और क्षितिज से इनकी ऊँचाई भी घटती जाती है; अर्द्धरात्रि को इसकी ऊँचाई न्यूनतम होती है, और इसके बाद प्रकाश्यत: यह पहले की अपेक्षा अधिक चमकीला हो जाता है। क्षितिज पर १०° से अधिक ऊँचाई पर ये बादल विरले ही अवसरों पर दिखलाई देते हैं; इन दशाओं में सूर्य की ऊँचाई –१०° से –१६° तक बदलती हुई पायी गयी है। इनकी रहस्यमय रजत-श्वेत आभा, जो क्षितिज के निकट सुनहले पीत वर्ण मे परिणत हो जाती है, अत्यन्त प्रभावोत्पादक होती है। धूल के कण जिनसे ये बादल बने है स्पष्टत. अत्यन्त बारीक होने चाहिए क्योंकि ये मुख्यत: नीला प्रकाश परिक्षेपित करते है, यह इस बात से प्रगट है कि नीले काँच मे से देखने पर यह प्रकाश दृष्टिगोचर होता है, किन्तु लाल रंग के काँच में से देखने पर नहीं। इससे यह बात समझ में आ जाती है कि क्यों ये बादल

1. R. Suring, Naturwiss, 23, 555, 1935, Die Wolken (Leipzig, 1936) p, 30 C. Storner, Univ. Observ. Oslo. Public. No. 6. 1933 and Astrophysica Norvegica I, 87, 1935

सान्ध्य आलोक की लालिमा का रंग नही धारण करते, क्योंकि वे ही किरणें आकाश मे ऊँची चढ़कर रात्रि के इन बादलों द्वारा परिक्षेपित होती हैं जो वायुमण्डल में से गुजरने पर लाल रंग धारण नहीं करने पाती। कुछ प्रेक्षकों का कहना है कि इन बादलो से आनेवाला प्रकाश ध्रुवित नही होता, जबकि अन्य प्रेक्षकों के अनुसार इस प्रकाश में प्रबल ध्रुवण मौजूद रहता है (इस ध्रुवित प्रकाश के कम्पन, सूर्य, बादल तथा पृथ्वी से गुजरने वाले धरातल की लम्ब-दिशा में होते हैं, अर्थात् उसी दिशा में जिस दिशा में नीले आकाश के तथा अन्य परिक्षेपण क्रियाओं के ध्रुवित प्रकाश का कम्पन होता है।) क्या यह सम्भव है कि देदीप्यमान् रात्रि-बादल कभी बड़े आकार के, कभी छोटे आकार के कणों से बने होते है ?

प्रकाशित भाग की ऊपरी सीमा का प्रेक्षण करके इनकी ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है; बेहतर होगा कि क्षितिज से नीचे सूर्य की विभिन्न स्थितियों के लिए ये प्रेक्षण किये जायें। एक उदाहरण में पाया गया कि जब क्षितिज से सूर्य की गहराई $\beta = १२°$, १३° और १४° थी तो ऊपरी सीमा की क्षितिज से ऊँचाई α क्रमशः १०°,५° तथा२° के बराबर थी। रात्रि के इन बादलों की ऊँचाई h के लिए आसानी से हम यह सूत्र प्राप्त कर सकते हैं कि $h = \frac{R}{4}\beta^2\left(\frac{2\alpha+\beta}{\alpha+\beta}\right)^2$ जिसमें R पृथ्वी की त्रिज्या है, तथा कोण α और β रेडिएन में नापे गये हैं।

इस प्रकार प्राप्त की गयी ऊँचाई को थोड़ा बढ़ा देना चाहिए क्योंकि वे किरणें, जो पृथ्वी की लगभग स्पर्शी होती हैं, परिक्षेपित नही होती हैं। अधिक सही तरीका यह है कि उसका फोटो दो स्थानों से लिया जाय। आम तौर पर जो फल प्राप्त होता है उसके अनुसार अधिकतर दशाओं में इनकी ऊँचाइयाँ पचास से लेकर साठ मील तक मिलती है। एक बार इनकी ऊँचाई ज्ञात कर लेने पर हम इन बादलो में लकीरो के रूप में पड़ी धारियों का सही आकार भी मालूम कर सकते हैं। औसत तौर पर एक धारी से अगली धारी तक की दूरी चार से ६ मील तक होती है।

रात्रि के इन बादलों का महत्त्व इस बात के कारण बढ़ जाता है कि हमारे वायु-मण्डल के उच्च स्तरों की वायुधाराओं के बारे में ये सूचना दे सकते हैं। यदि फोटोग्राफ़ नहीं लिये जा सकें तो बादल-दर्पण[1] की मदद से बादलों का वेग मालूम कर सकते है; अधिकतर ये उत्तर-पूर्व दिशा से ४० से लेकर ८० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से आते

1. Cloud-mirror

है; अक्सर पश्चिम-उत्तर-पश्चिम से ३० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से और कुछ अवसरो पर अत्यधिक रफ्तार, ३०० गज प्रति सेकण्ड की, भी नापी गयी है।

पहले सामान्यतः यह सिद्धान्त मान लिया जाता था कि देदीप्यमान् रात्रि-बादलों की रहस्यमय प्रकाशीय घटना ज्वालामुखी के प्रचण्ड उद्‌गार द्वारा वायुमण्डल में बहुत ऊँचाई पर फेंकी गयी राख के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु अब यह घटना इतनी अधिक बार देखी जा चुकी है कि बरबस हमें एक और कारण की भी कल्पना इसके लिए करनी पड़ती है—यह है हमारे गिर्द ब्रह्माण्ड में मौजूद अत्यन्त बारीक धूल, जो हमारे वायुमण्डल में उल्काओं तथा उल्का-प्रस्तरों द्वारा लायी जाती है तथा कदाचित् उन धूमकेतुओं द्वारा भी जो पृथ्वी के निकट से गुजरने पर अपने मार्ग मे काफी अधिक मात्रा मे ब्रह्माण्डीय धूल छोड जाते हैं। १९०८ में साइबीरिया में जो वृहत्काय उल्का-प्रस्तर गिरा था, उसके ठीक बाद ही अत्यन्त विलक्षण रात्रि-बादल दीख पड़े थे। अन्य दशाओं के लिए अधिक सम्भव यही है कि धूल की उत्पत्ति ज्वालामुखी द्वारा होती है।'

इन बादलों का फोटो लेने के लिए चौडे मुँह के लेन्सवाले केमरे का उपयोग करना उपयुक्त होगा। ३ लेन्स वाले केमरे के लिए सूर्य जब क्षितिज से ९°, १२°, १४° तथा १५° नीचे था तो क्रमश· प्रकाशदर्शन १६ सेकण्ड, ३५ सेकण्ड, ७२ सेकण्ड तथा १२२ सेकण्ड का दिया गया था।

२००. रात्रि में सान्ध्य प्रकाश तथा रात्रि की प्रकाशीय घटनाएँ

यदि हम सान्ध्य प्रकाश की घटना के एक दम हलके रूप का अध्ययन करना चाहते है तो हमे इसका प्रारम्भ रात मे ही कर देना चाहिए जबकि हमारी आँखों को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है,और तब हमे उषा के प्रथम चरणों का प्रेक्षण करना चाहिए। मई में, या अगस्त-सितम्बर के महीने मे ऐसी रात चुननी चाहिए कि आसमान मे चन्द्रमा न हो तथा आकाश पूर्णतया निरभ्र हो और स्थान ऐसा चुनना चाहिए जो मनुष्य की बस्ती से यथासम्भव अधिकतम दूरी पर हो। यह आसान तो नही होगा कि सामान्य दैनिक क्रम में व्यवधान डालें और अर्द्धरात्रि में आरम्भ करके बाहर मैदान मे कुछ घण्टों तक प्रेक्षण करें। किन्तु एक बार इस कठिनाई पर हावी हो जाने के बाद हमे प्रचुर प्रतिदान इस रूप में मिलता है कि हमारे सामने एक शानदार दृश्य का प्रादुर्भाव होता है। नक्षत्रों से जगमगाते आकाश की शोभा की तो कल्पना भी नगर का साधारण निवासी नही कर सकता। बड़े आश्चर्य की बात है कि हमारी आँखे अँधेरे में देख सकने

1. R. Suring, Die Wolken (Leipzig, 1936) pp. 30-36

की क्षमता को कितनी अधिक सीमा तक बढ़ा लेती हैं और यह भी उल्लेखनीय बात है कि बाहर निकलते ही जितने तारे हम देख पाते हैं, उससे कितने अधिक तारे एक घण्टे बाद हमें दिखाई देने लगते हैं। ऐसा लगता है मानों समस्त आकाश दीप्तिमान् हो उठा है। यह वह उपयुक्त क्षण है जब कि अत्यन्त मन्द प्रकाशीय घटनाओं का प्रेक्षण किया जा सकता है जिनमें से कुछ तो स्पष्ट देखी जा सकती हैं और कुछ बहुधा अदृश्य ही रहती हैं।

सर्वप्रथम हम संभवतः नीचे ही क्षितिज पर इक्के-दुक्के, प्रकाश की फीकी चमक देखेंगे। यह दूरस्थ नगरों और गाँवों की रोशनियों का प्रतिबिम्बन है। आकाश की बदली, धुन्ध या स्वच्छता के अनुसार कुछ रातों को, अन्य रातों की अपेक्षा, यह प्रकाश अधिक चटकीला दीखता है। इन कारणों का लेखा-जोखा आसानी से किया जा सकता है बशर्ते सदैव एक ही स्थान से प्रेक्षण करें।

आकाश के ठीक बीचोबीच एक फीते की भाँति आकाशगंगा फैली हुई दीखती है जो *प्रकाश के छोट-बड़े धब्बों से बनी होती है जिसके बीच-बीच में अन्धकार के प्रदेश* मौजूद होते हैं। जिन्होंने पहले कभी तारों से जगमगाते आकाश का अवलोकन नहीं किया है वे इसके कतिपय भागों की चमक से आश्चर्यचकित रह जायेंगे।

पृष्ठभाग का आकाश क्षितिज के निकट अधिक स्पष्ट दिखाई देता है; क्षितिज के सहारे चारों ओर हाशिये पर '*धरती-आलोक*' से *यह मण्डित रहता है जिसकी* चमक लगभग १५° की ऊँचाई पर अधिकतम होती है। *यह हमारे वायुमण्डल का एक* तरह का संतत फीका 'अरोरा'[1] प्रकाश है। हमारी दृष्टि की रेखा जितनी अधिक तिरछी दिशा में होगी उतनी अधिक दूरी तक दीप्त स्तर में से निगाह गुजरती है, अतः 'धरती-आलोक' उतना ही अधिक चमकीला दीखता है। क्षितिज के निकट इसकी दीप्ति घट जाती है; इसकी वजह है वायु के कारण प्रकाश का मन्द पड़ जाना।

कभी-कभी चौड़ी चमकीली धारियाँ दिखलाई देती हैं।[2] वर्ष में दो बार अगस्त-सितम्बर और नवम्बर-दिसम्बर में प्रकाश्यतः इनका विशेष तौर पर बाहुल्य होता है। ये वृहत् उल्का-झाड़ियों की घटनाओं से सम्बन्धित जान पड़ती है, १५-१६ नवम्बर के करीब चमकीली धारियो के दृष्टिगोचर होने की अच्छी सम्भावना रहती है। ख्याल किया जाता है कि हमारे वायुमण्डल में ब्रह्माण्डीय धूल के प्रविष्ट कर जान पर ये उत्पन्न

1. Aurora
2. C. *Hoffmeister, Die Sterne, 11, 257, 1931 Die Meteore* (Leipzig 1937), p. 118

होती है। ये धारियाँ अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित होती होंगी, क्योंकि ये अत्यन्त धीमी रफ्तार से सरकती दिखाई पड़ती है। ऊर्ध्व बिन्दु के आसपास इनकी गति अधिक-से-अधिक १° प्रति मिनट हो पाती है। वर्ष में एकाध बार हमारे देश (हालैंड) में 'उत्तरीय प्रकाश' दिखलाई पड़ता है। कम से कम उन वर्षों में तो अवश्य ही, जब सूर्य के धब्बों की क्रियाशीलता महत्तम होती है, उदाहरणत. सन् १९३८ में और कदाचित् १९४९ में। आकाश में उत्तर की ओर ये वृत्तचाप, किरण-पुंज आदि की शक्ल में प्रगट होते हैं; प्रायः ये किरणें तेजी के साथ हरकत करती हैं, और उनकी लम्बाई घटती-बढ़ती रहती है। सावधान रहिए कि कहीं फासले पर हिलती-डुलती 'सर्चलाइट' से आप धोखा न खा जायँ!

आकाश में पूरे राशिचक्र[1] पर राशिचक्रीय प्रकाश के कारण चमक बढ़ी हुई दीखती है, जो सूर्य के निकट विशेषरूप से अधिक प्रबल होती है और प्रति-सूर्य बिन्दु की दिशा में यह चमक तेजी से घटती जाती है। इसकी शक्ल एक तिर्यक् सूची स्तम्भ के मानिन्द होती है जो वसन्तऋतु में सूर्यास्त के उपरान्त पश्चिम के क्षितिज से ऊपर उठता है और शरद ऋतु में सूर्योदय से पहले पूर्व दिशा के क्षितिज से (देखिए § २०१)।

इन सब घटनाओं से पृथक्, स्वयं आकाश की एक पृष्ठभूमि के रूप में निश्चित चमक होती है। आपके फैले हुए हाथ, वृक्षों और इमारतों की सिल्युएत इसके सामने काले रंग में स्पष्ट उभरती है। इस चमक का ५० प्रतिशत तो मन्द रोशनी के लाखों-करोड़ों अदृश्य नक्षत्रों के कारण उत्पन्न होता है, ५ प्रतिशत पृथ्वी के वायुमण्डल द्वारा होनेवाले नक्षत्रों के प्रकाश के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है और शेष 'वायु-ज्योति' के कारण। रात्रि-आकाश की ज्योति क्षितिज की ओर बढ़ती है और १५° की ऊँचाई पर अधिकतम हो जाती है। ऐसा उच्चतम वायुमण्डलीय स्तरों (आयनस्फियर) के हलके दीप्तिकरण के कारण होता है, जिनका दिन के समय प्रकाशित होने के कारण आयनीकरण हो गया रहता है, और अब रात्रि में अपनी अवशोषित ऊर्जा को वे विकिरित करते हैं। इसके स्पेक्ट्रम में अत्यन्त रोचक उत्सर्जन रेखाएँ मिलती हैं जिनमें से अधिकांश अरोरा की उत्सर्जन रेखाओं के समान होती हैं। कुछ प्रेक्षकों के अनुसार यह ज्योति एक-सम नहीं होती है, बल्कि जगह-जगह पर इसकी चमक न्यूनाधिक होती है; देदीप्यमान् स्तरों में से अधिक लम्बी दूरी तक हमारी निगाह जाती है तो चमक भी उसी

1. Zodiac

हिसाब से अधिक दिखलाई पड़ती है; तदुपरान्त क्षितिज के और निकट की दिशा में चमक की कमी वायुमण्डल द्वारा होनेवाले दीप्ति-ह्रास के कारण है।

फोटो एलेक्ट्रिक सेल से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस चमक के प्रकाश का रंग स्पष्टतः लाल होना चाहिए। किन्तु हमारे नेत्र के दण्ड स्पेक्ट्रल के इस भाग की किरणों के प्रति सुग्राही नही होते और रात्रि-आकाश अभी भी निलछौवे रंग का प्रतीत होता है।

रात्रि-आकाश की दीप्ति में सामान्यतः अधिक घट-बढ़ नहीं होती। तथापि कुछ राते असाधारण रूप से अधिक दीप्तिमान् होती है जबकि इनकी दीप्ति सामान्य की चौगुनी हो जाती है। चाँदनी की अनुपस्थिति में भी ऐसी रात्रि को घड़ी के अङ्क पढ़े जा सकते हैं तथा बड़े आकार की वस्तुएँ पहचानी जा सकती है। ऐसी घटनाओं का समाधान इस प्रकार कर सकते है कि सूर्य से उत्सर्जित आयनीकृत गैसों की धाराएँ हमारे वायुमण्डल में पहुँचती हैं जो इस असाधारण चमक के प्रकाश के लिए उत्तरदायी है।

अन्त में हम **'रात्रि के सान्ध्य प्रकाश'** की घटना के प्रेक्षण पर आते हैं। आकाश के उत्तरीय पार्श्व पर धरती-आलोक के हाशिये का निरीक्षण कीजिए। इस ओर हाशिये की ऊँचाई धीरे-धीरे लगभग १०° बढ़ जाती है, अधिकतम ऊँचाई उस बिन्दु के ऊपर होती है जहाँ सूर्य (अवश्य जो अब विलुप्त हो चुका है) क्षितिज के नीचे अवस्थित होता है। यही **'रात्रि का सान्ध्य प्रकाश'** है। इसे सदैव ही इस बात से पहचाना जा सकता है कि ज्यों-ज्यों रात बीतती है त्यों-त्यों यह अनिवार्य रूप से सूर्य के साथ-साथ पूर्व को खिसकता जाता है। सूर्य से ऊपर इसकी ऊँचाई ४०° की कोटि की होती है; सर्वाधिक उपयुक्त परिस्थितियों में (ग्रीनलैण्ड में) यह सूर्य के ऊपर ५५° की ऊँचाई तक प्रेक्षणगम्य रहता है। अतः स्पष्ट है हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु में ग्रीष्म-ऋतु में रात्रि कभी भी पूर्णतया अन्धकारमय नही होती, दरअसल सान्ध्य प्रकाश सारी रात मौजूद रहता है। केवल जाड़े में हमारा रात्रि का आकाश पूर्ण रूप से अन्धकारमय होता है। उससे यह बात भी समझ में आती है कि क्यों उष्ण कटिबन्ध का तारों भरा आकाश गहन अन्धकार लिए हुए होता है; कारण यह है कि पृथ्वी के इन भागो में सूर्य इतनी तेज ढाल पर नीचे उतरता है और क्षितिज के बहुत नीचे तक पहुँच जाता है। कुछ ऐसे भी दृष्टान्त मौजूद है जबकि रात्रि का सान्ध्य प्रकाश असामान्य रूप से तेज होता है।

सूर्योदय से ढाई-तीन घण्टे पूर्व सान्ध्य प्रकाश की चमक असंमित हो जाती है, पूर्व की ओर ऊँची उठकर वहाँ से फिर तेज ढाल पर नीचे को आ जाती है और इस तरह कुछ देर उपरान्त प्रकाश के शंकु का आकार धारण कर लेती है जो ऊपर की ओर ढालआँ

होती है—यह 'राशिचक्रीय प्रकाश' है—इसके अक्ष का झुकाव वस्तुतः वही होता है जो क्रान्तिवलय[1] का (§२०१)।

सूर्योदय से लगभग ढाई घण्टे पहले जबकि सूर्य क्षितिज से अभी २०° नीचे रहता है, राशिचक्रीय प्रकाश के पेंदे पर सूर्य से थोड़ा दाहिने हटकर, एक अत्यन्त फीका नीले वर्ण का प्रकाश प्रगट होता है; कठिनाई से ही यह प्रेक्षणीय हो पाता है और धीरे-धीरे यह ऊपर को उठता है तथा साथ ही बायीं ओर, सूर्य की तरफ फैलता भी जाता है (चित्र १५१)। यह तड़के की उषा-प्रकाशज्योति है जो आध घण्टे में ऊर्ध्व बिन्दु

चित्र १५१—रात्रिकालीन सांध्य प्रकाश।

तक पहुँचती है। तड़के की उषा-प्रकाश ज्योति के वृत्तचाप आम तौर पर सूर्य के ठीक ऊपर स्थित होते हैं। यदि तड़के की उषा-प्रकाश-ज्योति दाहिनी ओर हटी हुई प्रतीत होती है तो इसका कारण यह है कि इसकी चमक दाहिनी ओर के राशिचक्रीय प्रकाश की चमक के साथ मिल गयी होती है। किन्तु उषा-प्रकाश की चमक ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है त्यों-त्यों यह प्रमुखता प्राप्त करती जाती है और शीघ्र ही यह पुनः सूर्य के ऊपर अपनी सामान्य स्थिति हासिल कर लेती है। फिर तो यह सूर्य की दैनिक गति में उसके साथ-साथ ही रहती है और धीरे-धीरे यह उत्तरोत्तर दाहिनी ओर सरकती जाती है।

अब मन्द प्रकाश के तारे (पाँचवी दीप्ति-श्रेणी के) लुप्त हो चुके होते हैं किन्तु अधिक तेज प्रकाश वाले तारे अभी तक पहचाने जा सकते हैं; तथा भूमिखण्ड के प्रमुख चिह्न भी अब पहचान में आने लग गये हैं। पश्चिमी आकाश में प्रति-ज्योति[2] काफी

1. Ecliptic 2. Counter-glow

प्रमुखता प्राप्त कर चुकी है। उषा की पीत वर्ण की ज्योति प्रगट होना शुरू करती है जो सिरे पर हलकी पड़कर हरे-नीले रंग में परिणत हो जाती है। यथार्थ उषा का आरम्भ हो चुका है; सूर्य की ऊँचाई इस समय –१७° से लेकर –१६° होती है (और भी देखिए § १८६)।

वर्ष की अन्य ऋतुओं में घटना का क्रम इसी प्रकार का होता है, किन्तु सूर्य की ऊँचाई भिन्न होती है। उदाहरण के लिए जून में सूर्य क्षितिज से १०° या १५° से अधिक नीचे नहीं जा पाता है, अतः वे सभी घटनाएँ जो उस वक्त घटती हैं जब कि सूर्य और अधिक नीचे होता है, इस वक्त दिखलाई नहीं पड़तीं।

२०१. राशिचक्रीय प्रकाश[1]

जब सूर्यास्त का सान्ध्य प्रकाश समाप्त हो चुकता है या प्रातःकालीन धुँधलका आरम्भ होने को होता है, तो वर्ष के कुछ महीनों में हम मृदु विकिरण का राशिचक्रीय प्रकाश एक चिपटे शीर्षवाले सूचीस्तम्भ के रूप में तिरछी दिशा में उठते हुए देख सकते हैं। इसका उठाव जितना अधिक सीधा ऊपर की ओर होता है उतनी ही अच्छी प्रकार हम इसका प्रेक्षण कर पाते हैं। सर्वाधिक उपयुक्त अवसर होते हैं जनवरी, फरवरी और मार्च के महीनों में, सन्ध्याकालीन पश्चिमी आकाश में; तथा अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर में तड़के सुबह को, पूर्व के आकाश में (उतना उपयुक्त नहीं, जितना पश्चिम के आकाश में)।

जून-जुलाई में हमारे देश (हालैण्ड) के अक्षांशों में इसका कुछ भी भाग नहीं दीख पड़ता है क्योंकि तब सूर्य क्षितिज से काफ़ी नीचे नहीं उतर पाता है और इसलिए देर तक बनी रहनेवाली सान्ध्य प्रकाश की घटना के कारण राशिचक्रीय प्रकाश को उससे पृथक् पहचाना नहीं जा सकता।

इसकी स्थिति निर्धारित करने के लिए हमें प्रेक्षण का प्रारम्भ स्वयं राशिचक्र की खोज से करना चाहिए–अर्थात् उस वृहद् वृत्त को ढूँढ़ना चाहिए जो मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ तथा मीन तारा-राशियों से गुजरता है।

यह वह मार्ग है जिसे सूर्य वर्ष भर में तय करता हुआ हमें 'दिखाई' देता है। अवश्य ठीक जिस क्षण सूर्य किसी राशि में अवस्थित है उस क्षण उस राशि को हम देख

1. Fr. Schmid. Das Zodiakallicht (Hamburg, 1928). W. Brunner, Publication Sternw. Zurich, 1935

नहीं सकते, किन्तु ज्यों ही यह अस्त होता है और अन्धकार का पदार्पण हो जाता है, तब उस तारा-राशि का शेष भाग दृष्टिगोचर हो जाता है। एक प्रकार का ज्योतिर्मय धुन्ध-सा समूचे वृहद्-वृत्त पर फैला रहता है जो सूर्य के निकट सबसे अधिक चमकीला और चौड़ा होता है और वहाँ से दोनों दिशाओं की ओर यह सँकरा होता जाता है। सूर्य के एक ओर तो राशिचक्रीय ज्योति का वह भाग होता है जिसे हम तड़के प्रात काल देखते हैं; और दूसरी ओर वह राशिचक्रीय ज्योति होती है जो सन्ध्या को देखी जाती है। जाड़े की ऋतु में एक अनुभवी प्रेक्षक **राशिचक्रीय प्रकाश** को लगातार ६ महीने तक सुबह और शाम दोनों वक्त देख सकता है।

यह ज्योति स्वय हलकी होती है; लगभग उसी कोटि की जिस कोटि की आकाश-गगा की ज्योति, किन्तु यह उस कद्र दानेदार, असंतत, नहीं होती है तथा यह अधिक दूधिया रग की होती है। इसे देख सकने के लिए अभ्यास की जरूरत होती है। अवश्य चन्द्रमा मौजूद नहीं होना चाहिए और प्रत्येक लैम्प, चाहे वह फासले पर ही क्यों न हो, बाधा डालता है, जबकि शुक्र तथा वृहस्पति सरीखे चमकीले ग्रह भी कष्टदायक साबित हो सकते हैं। बड़े नगरों के सामीप्य से भी बचना चाहिए; प्रेक्षण करने के लिए सबसे बढ़िया जगह एक ऊँचा स्थल होगा जिसके चारों ओर खुला दृश्य प्राप्त हो।

नक्षत्रों के चार्ट पर आसानी से पहचाने जानेवाले तारों के लिहाज से राशिचक्रीय प्रकाश की सीमारेखा खींचकर प्रेक्षण का आरम्भ करना चाहिए और बाद में समान दीप्ति की रेखाएँ खींच लेनी चाहिए। बीच का भाग सबसे अधिक चमकीला होता है और चमक सिरे और हाशिये की ओर धीरे-धीरे घटती है, किंतु उत्तर की अपेक्षा दक्षिण की ओर अधिक तेजी से घटती है। अतः सबसे अधिक चमकीला भाग, कम प्रदीप्ति वाले भागों के संमिति-अक्ष के लिहाज से दक्षिण की ओर हटा हुआ प्रतीत होता है। इस किस्म के स्थूल रेखाचित्र द्वारा हम इस प्रकाशीय घटना की चौड़ाई का अन्दाज लगा सकते हैं जो अक्ष के समकोण नापी जाने पर सूर्य से ३०°, ९०° तथा १५०° की दूरियों पर क्रम से ४०°, २०° तथा १०° मिलती है।

राशिचक्रीय ज्योति के प्रेक्षण के लिए यदि समूची रात व्यतीत करने का कष्ट उठाएँ, और इस बदलते हुए दृश्य के सुन्दर परिवर्तनों का गुणाङ्कन करें तो हमारी मिहनत भलीभाँति सार्थक होगी। सूर्यास्त के लगभग दो घण्टे बाद, जब सूर्य की स्थिति $-१७°$ पर होती है, एक बहुत ही फीकी ज्योति का शंकु, स्फान[1] की शक्ल का, दक्षिण-

1. Wedge, पच्चड़

पश्चिम दिशा में तिरछा उठता हुआ दृष्टिगोचर होता है। सूर्य की स्थिति जब −२०° पर पहुँचती है तो आकाश इतना अधिक अन्धकारमय हो चुकता है कि अब प्रकाश का एक विशालकाय सूची-स्तम्भ देखा जा सकता है। पश्चिम की यह राशिचक्रीय प्रकाश-ज्योति, रात के दौरान में अधिक सीधी हो जाती है और उत्तरोत्तर अधिक दूर तक फैलती जाती है; तारों के लिहाज से इसकी स्थिति मोटे तौर पर पहले-जैसी ही बनी रहती है। थोड़ा-सा स्थानान्तर पहचाना भर जा सकता है—तारे जो राशिचक्रीय ज्योति के कुछ दक्षिण स्थित थे, बाद में हटकर राशिचक्रीय प्रकाश के उत्तर में पहुँच जाते हैं। इस अद्‌भुत घटना के प्रेक्षण के लिए अत्युत्तम समय जाड़े की ऋतु का पूर्वार्द्ध होता है।

शनैः-शनैः पश्चिम की राशिचक्रीय ज्योति मन्द पड़ने लगती है और पूर्वीय राशिचक्रीय ज्योति पूर्व दिशा में प्रकट होती है। करीब-करीब यह अर्द्धरात्रि का वक्त होता है, जो कि सुविख्यात 'प्रति-ज्योति'[1] (गेगेन्शीन) देखने के लिए उपयुक्त समय होता है—यह उन घटनाओं में है जिनका प्रेक्षण अत्यधिक कठिन होता है; इसे हम केवल जाड़े की स्वच्छ रात्रि में ही देखने की आशा कर सकते हैं जबकि आकाश अत्यन्त अन्धकार-पूर्ण होता है। प्रति-सूर्य बिन्दु पर (§१२०), अर्थात् वस्तुतः दक्षिण में अत्यन्त मन्द प्रकाश का एक सेतु दिखाई पड़ता है जो पूर्वीय और पश्चिमीय राशिचक्रीय ज्योतियों के सिरों को मिलाता है। तदनन्तर रात के दौरान में पूर्वीय राशिचक्रीय ज्योति नक्षत्रों के साथ गति करती हुई देखी जा सकती है और साथ ही साथ स्थानान्तरित होते हुए भी; तारे ज्योति के सूचीस्तम्भ के उत्तर से दक्षिण की ओर हरकत करते जान पड़ते हैं। एक बार पुनः ऐसा जान पड़ता है मानो राशिचक्रीय प्रकाश आकाश की दैनिक गति का तो साथ देता है, किन्तु तारों के लिहाज से रंच मात्र पिछड़ जाता है।

दिन निकलने वाला है; सूर्य की स्थिति जब −२०° या −१९° होती है, तो ऐसा प्रतीत होता है मानो पूर्वीय राशिचक्रीय प्रकाश के सूची-स्तम्भ का पेंदा चौड़ा होकर अधिक दीप्तिमान् हो गया है। जब सूर्य −१९° से लेकर −१७° तक पहुँचता है तब प्रभात का उषा-आलोक प्रकट होता है।

राशि चक्रीय प्रकाश, सूर्य के गिर्द मौजूद ब्रह्माण्डीय धूल के एक वृहत्काय मंडलक द्वारा सूर्य के प्रकाश के परिक्षेपित होने से उत्पन्न होता है—यह मंडलक क्रान्तिवलय-तल के दोनों ओर बाहर की ओर तक पहुँचता है। धूलि-कणों के दर्मियान अन्तर्ग्रहीय विरल गैस भी मौजूद होती है जो आंशिक रूप से आयनित होती है, अतः इसके मुक्त

1. Gegenschein

इलेक्ट्रान भी परिक्षेपण में योग देते हैं। धरती से धूलिकणों के इस बादल को हम सूर्य की रोशनी से प्रकाशित देखते हैं और हमारी निगाह ज्यों-ज्यों सूर्य के निकट आती है त्यों-त्यों इस बादल की चमक बढ़ती जाती है।

किन्तु प्रातः या सन्ध्याकालीन आकाश मे प्रकाशदीप्ति के प्रत्याशित वितरण में कुछ व्यवधान उपस्थित हो जाता है, क्योंकि आकाश के वे ही भाग रात्रि के सान्ध्य प्रकाश से भी आलोकित होते है (§२००); यह सान्ध्य प्रकाश के अन्तिम क्षणों की अत्यन्त क्षीण ज्योति होती है जो वायुमण्डल के उच्चतम स्तरों द्वारा परिक्षेपित होने पर हमारी ओर आती है। इस प्रकाश की चमक भी सूर्य के निकट की ओर बढती है, किन्तु चमक की यह वृद्धि वास्तविक राशिचक्रीय प्रकाश की वृद्धि की तुलना में अधिक तीव्र होती है; इस प्रकाश की समज्योति रेखाएँ वृत्तचाप की शक्ल में, सूर्य को मिहराब की तरह परिवेष्टित करती हैं, जैसा कि सभी सान्ध्यकालीन घटनाएँ करती हैं; राशिचक्र का इन पर कोई असर नही पड़ता है (चित्र १५१)। राशिचक्रीय प्रकाश तथा सान्ध्य प्रकाश के सम्मिश्रण से उस लाक्षणिक प्रकाश-सूचीस्तम्भ का निर्माण होता है जिसका हम प्रेक्षण करते हैं। क्षितिज तथा राशिचक्र के स्थिति-परिवर्त्तन से हम समझ सकते हैं कि क्यों रात के दौरान में तथा वर्ष के दौरान में इस प्रकाशीय घटना का कुछ हद तक स्थानान्तर होता है—यह स्थानान्तर प्रेक्षणस्थल की भौगोलिक स्थिति पर भी आश्रित होता है। अतः इसमें वायु-ज्योति को भी जोड़ना चाहिए जो क्षितिज से १५° की ऊँचाई पर महत्तम प्रकाशतीव्रता प्रदर्शित करती है, क्योंकि इससे नीचे वायुमण्डल द्वारा अवशोषण के कारण यह उत्तरोत्तर मन्द होती जाती है।

फोटोइलेक्ट्रिक नाप द्वारा हाल में, राशिचक्रीय प्रकाश के बारे में हमारी जानकारी मे विशेष वृद्धि हुई है। इससे मालूम किया गया है कि यह प्रकाश ध्रुवित होता है, और किसी-किसी स्थल पर तो ध्रुवण की मात्रा ३० प्रतिशत तक पहुँच जाती है। सूर्य की ओर दिशा EZ में चमक की वृद्धि परिक्षेपण के कोण के कारण तो है ही, साथ में इस कारण भी कि इस ओर धूलि के बादल की घनता बढ़ जाती है। 'प्रति-ज्योति' उस प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है जो मंडलक के बाहरी भागों से परिक्षेपित होता है, अर्थात् दिशा CE से; सूर्य के उलटे रुख की ओर दीखनेवाली हलकी ज्योति का सन्तोषजनक रूप से समाधान नही किया जा सका है (चित्र १५२)।

यह प्रतिपादित किया गया है कि क्रान्तिचक्रीय प्रकाश की चमक नियमित तौर पर हर दो या तीन मिनट पर बढ़ती और घटती है तथा ये परिवर्त्तन चुम्बकीय सूई के विक्षोभ के साथ घटते हैं। यह भी कहा जाता है कि यह प्रकाश चुम्बकीय तूफ़ान के

दौरान विशेष रूप से तीव्र हो जाता है। इन प्रेक्षणों को स्वीकार करने के पूर्व बेहतर होगा कि इनकी वास्तविकता की जांच इस तरह कर लें कि कम-से-कम दो व्यक्तियों को एक ही समय अलग-अलग स्वतंत्र रूप से प्रेक्षण करने दें और इस बात का पूरा इतमीनान भी कर लें कि ये परिवर्त्तन बादलों के आवरण या उनकी छाया के कारण तो नहीं उत्पन्न होते हैं।
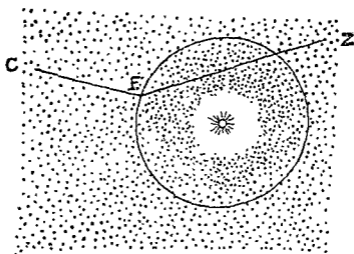
चित्र १५२—राशिचक्रीय प्रकाश सूर्य के निकट क्यों अधिक तीव्र होता है।

सर्वग्रास सूर्यग्रहण के दौरान एक अत्यन्त रोचक प्रेक्षण किया जा सकता है जबकि इस बात की सम्भावना मौजूद रहती है कि चन्द्रमा का छायाशंकु, कान्तिचक्रीय प्रकाश का परिक्षेपण करनेवाली धूल के स्तरों में से गुजरता हुआ देखा जा सके। सूर्य के अस्त होने के उपरान्त ही ये प्रेक्षण किये जाने चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि चान्द्र कान्तिचक्रीय प्रकाश का भी अस्तित्व होता है जो चन्द्रमा के उदय होने के ठीक पहले और इसके अस्त होने के बाद प्रकट होता है, किन्तु इस ज्योति का प्रेक्षण कम-से-कम उतना ही कठिन है जितना 'गेगेन्शीन' का।

२०२. चन्द्रग्रहण

पृथ्वी की छाया जब चन्द्रमा पर पड़ती है तो चन्द्रग्रहण लगते हैं। क्या यह उचित न होगा कि यह देखा जाय कि यह छाया दीखती कैसी है? इस दृष्टिकोण से

विचार करें तो चन्द्रग्रहण वास्तव में स्वयं हमारी धरती के बारे में जानकारी हासिल करने का एक साधन साबित होता है।

कोई भी दो चन्द्रग्रहण एक-से नहीं दीखते। बहुत कम ही ऐसा होता है कि चन्द्रमा इस पूरी तरह छिप जाय कि रात्रि के आकाश में वह बिल्कुल ही न दीखे। सामान्यतः छाया के केन्द्र भाग का रंग फीके ताम्रवर्ण सरीखा लाल होता है जो ऐसे रंगों से परिवेष्टित होता है जिनकी चमक बाहर की ओर बढ़ती जाती है। एक कुशल प्रेक्षक निम्नलिखित कटिबंधों का विवरण देता है—

०–३०', सुर्खी लिए हुए काला; बाहरी हाशिये की ओर अधिक चटकीला बादामी मिश्रित नारङ्गी रंग।

३०'–४१' भूरे रंग का हाशिया, जिसकी चमक सर्वत्र बहुत कुछ एक समान।

४१'–४२' संक्रमण हाशिया

इससे और बाहर की ओर हरे, नारङ्गी और गुलाबी रंग के वृत्त मिलते हैं। अवश्य ही विपर्यास प्रभाव इनके निर्माण में योग देते हैं।

इनके रंग तथा जिस ढंग से ये बदलते रहते हैं, दोनों से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि हम यहाँ सामान्य किस्म की छाया का अध्ययन नहीं कर रहे हैं। वस्तुतः बारीकी से अन्वेषण करने पर हम देखते हैं कि धरती के गोले की छाया के लिए यह नितान्त असम्भव है कि यह चन्द्रग्रहण उत्पन्न करे क्योंकि हमारे वायुमण्डल के कारण उत्पन्न होनेवाली, किरणों की वक्रता इन्हें थोड़ा-बहुत पृथ्वी के गिर्द मोड़ देती है! इस दशा में 'पृथ्वी की छाया' और कुछ नहीं होती सिवाय उस किरण-शलाका के, जो हमारे वायुमण्डल की निचली तहों को लगभग पाँच मील की ऊँचाई तक पार कर चुकी है और अपनी इस यात्रा के फलस्वरूप गहरे लाल रंग की हो गयी है। ऐसा उसी प्रकार होता है जिस प्रकार सान्ध्य वेला में वायुमण्डल के घने स्तरों में से होकर हम तक पहुँचने वाली सूर्यरश्मियों का रंग बदल जाता है; केवल इस दशा में किरणों द्वारा तय की गयी दूरी के दो गुनी होने के कारण रंग और भी धूमिल हो जाता है। अतः छाया के केन्द्रीय भाग का रंग हमारे वायुमण्डल की पारदर्शिता की मात्रा का सूचक है। यह निरे संयोग की बात नहीं है कि ऐसे अवसरों पर जबकि हमारे वायुमण्डल में ज्वालामुखी के उद्गार की धूल की प्रचुर मात्रा मौजूद रहती है, तो ग्रहण के अवसर पर चन्द्रमा अत्यन्त ही अन्धकारमय दीखता है। औसत रूप से चन्द्रमा जब पृथ्वी की छाया के उत्तरी भाग में स्थित होता है तो औसत रूप से चन्द्रग्रहण अधिक अन्धकारमय दीखते हैं बनिस्बत उस वक्त के जबकि चन्द्रमा छाया के दक्षिणी भाग में होता है, अतः प्रत्यक्षतः

हमारे उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा, ज्वालामुखी तथा मरुस्थल वाली धूल की मात्रा अधिक है।

चन्द्रग्रहण के प्रकाश को आँकने का एक सरल तरीका इस विलक्षण बात के उपयोग में है कि प्रकाश की तीव्रता जब कम होती है तो हमारी आँख अब चीजों का सूक्ष्म विवरण नहीं देख पाती है; उदाहरण के लिए सान्घ्य प्रकाश में समाचारपत्र के बड़े शीर्षक तो अभी भी पढ़े जा सकते हैं, किन्तु सामान्य छापे के अक्षर अब हम नहीं पढ़ पाते। इसी प्रकार अब हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि चन्द्रमा के धरातल के बड़े मैदान (तथाकथित 'समुद्र') जो साधारणत: भूरे धब्बों के रूप में दिखलाई देते हैं, चन्द्रग्रहण के समय (क) कोरी आँखों से दिखलाई देते हैं या (ख) ३ से १० इंच वाले उपदृश्य लेन्सवाली दूरबीन से दिखलाई देते हैं या (ग) कि और भी बड़ी दूरबीन से।

प्रेक्षण के ये तीन तरीके इस बात में हमें सहायता देने के लिए काफ़ी होंगे कि चन्द्र-ग्रहणों का हम हलके, औसत तथा अन्धकारमय श्रेणियों में मोटे तौर पर वर्गीकरण कर सकें। इन तरीकों पर कई बरसों के दौरान में प्राप्त किये गये संक्षिप्त विवरणों की विधिवत् तुलना से अवश्य अनेक महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों के लिए सामग्री प्राप्त हो सकेगी। (ध्यान रखिए कि दूरबीन किसी प्रकाशित धरातल के प्रतिबिम्ब को अधिक चमकीला नहीं बनाती, बल्कि केवल प्रकाशीय आवर्द्धन के कारण ही दृश्यता में वृद्धि हो जाती है!)

२०३. भस्म सरीखे धूसर[1] रंग का प्रकाश

दूज का चाँद जब प्रगट होता है तो उसके नाखूनी हाशिये की ओर उसके धरातल के शेष भाग को हम हलकी रोशनी से प्रकाशित देख सकते हैं (चित्र ८०)। यह धूसर रंग का प्रकाश पृथ्वी से आता है, जो चन्द्रमा पर से देखने पर, एक तेज रोशनीवाले वृहत्काय प्रकाश-स्रोत की भाँति चमकता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि धूसर रंग का यह प्रकाश सदैव एक-सी ही प्रबलता का नहीं रहता। कुछ मौकों पर यह लगभग अदृश्य रहता है, अन्य अवसरों पर यह दूधिया श्वेत रंग का होता है और इतना तेज कि चन्द्रमा की सतह पर आम तौर पर दिखाई देनेवाले काले धब्बे स्पष्ट पहचाने जा सकते हैं। इस धूसर रंग के प्रकाश की प्रबलता की तब्दीलियों का कारण यह है कि चन्द्रमा के रुख के पृथ्वी के अर्द्धभाग में कुछ अवसरों पर बहुत-से महासागर होते हैं,

1. Ashgrey

तो अन्य अवसरों पर बहुत-से महाद्वीप, और कुछ मौकों पर उसके ऊपर बादल छाये होते हैं तो अन्य समय आसमान अधिक साफ रहता है। इस प्रकार इस घूसर रग के प्रकाश पर एक नजर डालकर हम पृथ्वी के अर्द्ध भाग की हालतों की विस्तृत जानकारी का अन्दाज लगा सकते हैं! इस दृष्टि से इस घूसर रंग के प्रकाश का अध्ययन सच पूछिए तो, भूमण्डल सम्बन्धी भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत आता है।

भस्म-घूसर रग के प्रकाश की प्रबलता को कई दिनों तक माप अंक १ से १० द्वारा आँकिए (१ =अदृश्य, ५ =दृश्यता पर्य्याप्त हो, १० =जब प्रकाश अत्यधिक चमकीला हो)। आप शीघ्र ही देखेंगे कि दृश्यता चन्द्रमा की कला पर बहुत अधिक मात्रा में आश्रित है, क्योंकि इसका प्रकाशित नव चन्द्र-भाग अधिक चौड़ा हो जाने पर आँखों पर चकाचौंध उत्पन्न कर देता है। अतः विभिन्न दिनों के लिए इस भस्म घूसर-प्रकाश की दृश्यता की तुलना का केवल तभी कुछ अर्थ हो सकता है, जब यह तुलना चन्द्रमा की एक-सी कला के लिए की जाय। इसके प्रतिकूल क्षितिज से ऊपर चन्द्रमा की ऊँचाई इस प्रकाश की दृश्यता को बहुत ही कम मात्रा में प्रभावित करती प्रतीत होती है।

२०३ (क). उड़न तश्तरियाँ[1]

रॉकी पर्वतमाला के ऊपर उड़ान करते समय एक अमेरिकन यात्री ने अजीब किस्म के वायुयानों की कतार देखी जो आश्चर्यजनक वेग से हरकत करते जान पड़ते थे, और इनकी तुलना उसने 'उड़न तश्तरियों' से की[2]। इस विवरण से जन-साधारण अत्यन्त प्रभावित हुए। तब से प्रति वर्ष इसी प्रकार की वस्तुओं के बारे में सैकड़ों रिपोर्टें प्राप्त होती रही हैं—पहले तो युनाइटेड स्टेट्स से, फिर बाद में यूरोप से भी।

सामान्यतः ये विवरण बतलाते हैं कि प्रकाश के धब्बे दिखलाई पड़ते हैं जो अनियमित कक्षाओं में हरकत करते हैं—कुछ देर के लिए वे स्थिर हो जाते हैं और तब फिर तेज रफ्तार से गति करते हैं। कुछ प्रेक्षण तो दिन के समय भी प्राप्त किये गये हैं। कुछ लोगों ने तो यह आशंका प्रगट की कि ये उड़न तश्तरियाँ कोई रूसी गुप्त युद्धास्त्र हैं तथा कुछ का ख्याल था कि ये अन्तरिक्ष यान हैं और कुछ लोगों ने बतलाया कि ये मङ्गल-निवासियों के यान हैं और उनका दावा है कि उन्होंने इनसे सम्पर्क भी स्थापित किया था!

१९४७ से पहले भी इस तरह के किस्से सुनने में आये थे; सन् १८८२ तथा १८९७ में ये उड़न तश्तरियाँ अधिकतम संख्या में देखी गयीं, फिर १८९३, १८९४, १८९६

1. Flying saucers 2. D. H. Menzel, *Flying saucers* (Cambridge, 1953)

तथा १९०८ में भी एक प्रकार की उड़न तश्तरियाँ देखी गयी थीं। मध्यकालीन युग में प्राचीन काल में तथा बायबिल के युग में भी इनका जिक्र आया है।

हाल के प्रेक्षणों के सूक्ष्म विवेचन से पता चलता है कि इन विवरणों में से अधिकाश की व्याख्या आसानी से की जा सकती है।

१. शुक्र ग्रह महत्तम दीप्ति की अवस्था में; प्रतीत होनेवाली हरकत उस दृष्टिभ्रम के कारण उत्पन्न होती है जिसका विवरण "गतिशील तारे" के शीर्षक में किया गया है (§ १०१)।
२. एक दीप्तिमान् उल्का-प्रस्तर या अग्नि का गोला; उसकी पथरेखा पर्याप्त समय तक दिखलाई देती रह सकती है और इसमें अनियमित वक्रता भी दृष्टिगोचर हो सकती है।
३. परीक्षण गुब्बारा, जैसा कि ऋतु-वैज्ञानिक प्रायः रोज ही आकाश में हजारों की सख्या में उड़ाते हैं।
४. साधारण वायुयान, जिसे प्रकाश की विशेष परिस्थितियों में देख रहे हों।

अधिक जटिल व्याख्यावाले प्रेक्षणों के लिए निम्नलिखित सम्भावनाओं पर विचार किया जा सकता है।

५. प्रभामण्डल की घटनाएँ, विशेषतया कृत्रिम सूर्य[1] तथा अनु-सूर्य।[2]
६. वर्त्तन की घटनाएँ।
७ धुन्ध के स्तर तथा प्रकाश की असाधारण परिस्थितियों मे बादलों का निर्माण।
८. विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ, उदाहरण के लिए गुब्बारे, बच्चो द्वारा उड़ायी जानेवाली पतगें, नेत्र में बननेवाले उत्तर-प्रतिबिम्ब, बादलों पर रोशनी फेंकती हुई सर्चलाइट तथा अरोरा-प्रकाश।
९. जानबूझकर भ्रम उत्पन्न करने के उद्देश्य से आयोजित वञ्चना के प्रयोग या प्रैक्टिकल मजाक।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस तरह के विवरण किसी वेधशाला से विरले ही प्राप्त हुए हैं। युट्रेख्ट वेधशाला में गत वर्ष ३५०० पत्र उल्काओं तथा प्रकाश की असाधारण घटनाओं के बारे में प्राप्त हुए थे, किन्तु इनमें एक भी पत्र ऐसा न था जो 'उड़न तश्तरियों' के अस्तित्व को विश्वसनीय तरीके पर प्रतिपादित करता; प्रेक्षण यत्र की फोकस की खराबी, दृष्टिक्षेत्र मे कुहरे आदि के आवरण या रिफ्लेक्स प्रक्रिया

1. Mock suns 2. Sub-sun

के कारण अत्यधिक आश्चर्यजनक प्रभाव उत्पन्न हो सकते हैं। यहां तक कि रेडार द्वारा प्राप्त किये गये प्रेक्षण भी निर्णयात्मक नहीं हो पाते।

अतः हमें भय की अन्धभावना, युद्ध-विभीषिका या रहस्यवाद के वशीभूत नहीं होना चाहिए; बल्कि हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि इस पुस्तक में कितनी सारी प्रकाशीय घटनाओं का विवरण दिया जा चुका है जिन सबकी ही व्याख्या सामान्य भौतिकी द्वारा की जा सकती है यद्यपि ये अनेक व्यक्तियों के मन में अत्यधिक आश्चर्य उत्पन्न करती हैं।

यदि आप ऐसी घटना देखें जिसे आप 'उड़न तश्तरी' समझते हों तो ऐसी दशा में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना लाभदायक होगा।

किसी व्यक्ति से कहिए कि वह आपके प्रेक्षण की जांच करे। खिड़की के कांच या पर्दे में से जहां तक हो सके प्रेक्षण मत कीजिए। सूर्य या चन्द्रमा से घटनास्थल की दूरी का अन्दाज लगाइए। यदि कोणीय दूरी २२° हो तो समझ लीजिए कि यह प्रभा-मण्डल की घटना है।

प्रेक्षण का ठीक समय अंकित कीजिए, तथा इर्द-गिर्द के तेज रोशनी के तमाम प्रकाशस्रोतों का भी विवरण लिख लीजिए।

अध्याय १२

भू-दृश्य में प्रकाश और रंग

२०४. सूर्य, चन्द्रमा और तारों के रंग

सूर्य की चकाचौंध वाली चमक के कारण इसके रंग की पहचान करना कठिन होता है। किन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं कहूँगा कि यह निश्चित रूप से पीतवर्ण का है, और नीले आकाश के प्रकाश के साथ मिलकर यह एक मिश्रण बनाता है जिसे हम 'श्वेत' कहते हैं—यही रंग कागज के तख्ते का होता है जबकि आसमान साफ हो और धूप निकली हुई हो। इस प्रकार के तखमीने से कठिनाई उत्पन्न होती है क्योंकि 'श्वेत' की धारणा में अनिश्चितता की किञ्चित् मात्रा मौजूद होती है। सामान्यतः हमारी प्रवृत्ति यह होती है कि आसपास के वातावरण में प्राधान्य प्राप्त करनेवाले रंग को हम श्वेत या करीब-करीब श्वेत मानते हैं (देखिए § ९५)।

बदली वाले या धुन्ध के दिन, सूर्य और आकाश से आनेवाली किरणें, पानी की बूंदों द्वारा होनेवाले अनगिनत परावर्तनों और वर्तनों के कारण आपस में मिल-जुल जाती हैं, और इसलिए आकाश का रंग संश्लिष्ट श्वेत होता है। यदि हम इस बात का विचार करें कि आकाश का नीला प्रकाश वस्तुतः परिक्षेपित प्रकाश है जो पहले सूर्य से आनेवाले प्रकाश में मौजूद था, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वायु-मण्डल के बाहर से देखने पर सूर्य भी करीब-करीब श्वेत दीखेगा।

हमें ज्ञात है ही कि अस्त होते हुए सूर्य के नारङ्गी या लाल वर्ण की उत्पत्ति का कारण यह है कि इसकी किरणें जिस मार्ग को तय करके हमारी आँख तक पहुँचती हैं उसकी लम्बाई तेजी के साथ बढ़ती जाती है; शनैः-शनैः अधिकवर्त्तनीय किरणें लगभग पूर्णतः परिक्षेपित हो जाती है, और केवल गहरे लाल रंग की किरणें शेष रह जाती हैं (§ १७२)।

कतिपय असाधारण दशाओं में ऊँचाई पर स्थित सूर्य धुन्ध में से होकर ताम्रवर्ण के लाल वर्ण का चमकता है, अर्थात् कुहरे की बूंदें अब अत्यन्त क्षुद्र आकार की होती

है, और इसी कारण लघु तरंग-दैर्घ्यवाले प्रकाश का ये विशेष रूप से परिक्षेपण करती है (§ १८२)।

अन्य दशाओं में यह नीलापन लिये हुए होता है, और कहा जाता है कि ऐसा अधिकतर उस वक्त होता है जब बादलों का हाशिया नारङ्गी वर्ण का दीखता है। सम्भव है कि रंग-विपर्यास का यह प्रभाव हो या कि नवसिखुए प्रेक्षक सूर्य के एकदम निकट के बादलों के रंग और स्वयं सूर्य के गोले के रंग के बीच धोखा खा जाते हों। इससे नितान्त पृथक्, नीले सूर्य की घटना है जब कि सूर्य ऐसे घने बादल में से देखा जाता है जो अत्यन्त सम आकार की बूँदों से बना होता है (§ १६४)।

दिन में चन्द्रमा प्रभावशाली विशुद्ध श्वेत रंग का दीखता है क्योंकि आकाश से परिक्षेपित गाढ़ा नीला प्रकाश, चन्द्रमा के स्वयं अपने पीत वर्ण के प्रकाश के साथ जुड़ जाता है। और भी, जब यह दिन के वक्त उदय या अस्त होता है तो यह करीब-करीब रंगविहीन, धूमिल और केवल रञ्चमात्र पीलापन लिये हुए होता है। जैसे-जैसे सूर्य अस्त होता है, और आकाश का नीला प्रकाश विलुप्त होता जाता है, वैसे-वैसे चन्द्रमा धीरे-धीरे अधिक पीला होता जाता है; एक निश्चित क्षण पर इसका रंग मनमोहक शुद्ध पीत वर्ण हो जाता है, यद्यपि यह रंग सम्भवतः अभी भी मौजूद हलकी नीली पृष्ठ-भूमि के सम्मुख, मानसिक विपर्यास के कारण अधिक चटकीला प्रतीत होता है। सान्ध्य प्रकाश जब खत्म होने को आता है तो चन्द्रमा का रंग पुन. पीत-श्वेत वर्ण का हो जाता है, बहुत सम्भव है कि ऐसा इस कारण होता हो कि आसपास का वातावरण अब अधिक अन्धकारमय हो जाता है, अत. चन्द्रमा का प्रकाश हमें अधिक तेज मालूम पड़ता है, फलस्वरूप आँख की एक विचित्र विलक्षणता के कारण अन्य सभी अत्यन्त तेज प्रकाश-स्रोतों की तरह यह श्वेत रंग का जान पड़ता है (§ ७७)।

रात्रि के शेष भाग के लिए चन्द्रमा हलका पीलापन लिये हुए रहता है, ठीक वैसा ही जैसा दिन का सूर्य दीखता है। जाड़े की अत्यन्त स्वच्छ रात्रियों में इसका रंग, जब चन्द्रमा बहुत ऊँचाई पर होता है, करीब-करीब पूर्णरूप से श्वेत हो जाता है; किन्तु क्षितिज के निकट यह उसी प्रकार के नारङ्गी तथा लाल रंग का प्रदर्शन करता है जिस प्रकार अस्त होता हुआ सूर्य। चन्द्रमा के रंग द्वारा, हमारी आँखों पर पड़नेवाला, प्रभाव तनिक भिन्न इसलिए होता है कि इसके प्रकाश की तीव्रता अपेक्षाकृत बहुत कम होती है।

पृथ्वी की नीली छाया के मध्य में पूर्णिमा का चाँद मनोहर कांस्य-पीत रंग का होता है, निस्सदेह वातावरण के अनुपूरक विपर्यास के कारण ऐसा होता है। तेज

चमक के नीललोहित लाल वर्ण के छोटे-छोटे बादलों से घिरे होने पर इसके रंग का शेड लगभग हरा-पीला हो जाता है; यदि ये बादल नारङ्गी-गुलाबी रंग धारण कर लें तो चन्द्रमा का शेड करीब-करीब नीले-हरे में तब्दील हो जाता है। ये विपर्यास-रंग पूर्ण चन्द्र की अपेक्षा नवचन्द्र में और अधिक स्पष्ट उभरते हैं।

चन्द्रमा के रंग से बिलकुल अलग-थलग, चाँदनी रात में भू-दृश्य का रंग होता है जिसे आम तौर पर नीला या हरा-नीला समझा जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि बहुत कुछ हद तक यह हमारे नारङ्गी रंग के कृत्रिम प्रकाश के विपर्यास के कारण उत्पन्न होता है, जो चन्द्रमा से प्रकाशित हमारे नीले आकाश को और भी प्रभावोत्पादक बना देता है।[1]

तारों द्वारा प्रदर्शित रंगों के अन्तर की प्रारम्भिक जानकारी हासिल करने के लिए आइए, मृग-व्याध तारा-समूह की वृहत् वर्गाकृति का ध्यानपूर्वक अवलोकन करें। हम देखते हैं कि बायीं ओर के सिरे पर स्थित चमकीले सितारे, आर्द्रा नक्षत्र, का रंग अद्भुत प्रकार का पीला है या अन्य तीनों नक्षत्रों की तुलना में इसे नारङ्गी वर्ण का भी मान सकते हैं (चित्र ६२)। इस तारा-समूह के निकट ही वृष राशि में हम नारङ्गी वर्ण का एक और तारा 'रोहिणी' नक्षत्र देख सकते हैं।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस प्राथमिक तथा अत्यन्त सरल रंग-विभेद से ही हमें सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि हमें उनके शेड के सूक्ष्म अन्तर को पहचानने का प्रयत्न करना चाहिए। यह हमारी रंग-अनुभूति के लिए एक दुस्तर कार्य है, किन्तु अभ्यास से इस दिशा में बहुत कुछ किया जा सकता है। चूँकि नक्षत्रों के रंग के अन्तर उनके विभिन्न ताप (टेम्परेचर) के कारण उत्पन्न होते हैं, अतः हम समझ सकते हैं कि वे उसी क्रम से रंगों का प्रदर्शन करते हैं जिस क्रम से एक तापोज्ज्वल पिण्ड करता है जो धीरे-धीरे ठण्डा हो रहा है, अर्थात् श्वेत से पीला और नारङ्गी रंग धारण करते हुए लाल रंग अख्तियार करता। अभी तक इस बात का निर्णय नहीं हो पाया है कि सबसे अधिक तप्त नक्षत्रों को श्वेत रंग का माना जाय या नीले रंग का, क्योंकि विभिन्न प्रेक्षक इस बात पर एकमत नहीं हैं कि वस्तुतः 'श्वेत' रंग क्या है। कतिपय प्रेक्षक, अन्य लोगों की तुलना में, आकाश के क्षीण प्रकाशवाली पृष्ठभूमि से अधिक प्रभावित होते हैं जो हमें नीलापन लिये हुए प्रतीत होता है और जिसे हम रंगविहीन समझने के अभ्यस्त हो गये हैं, क्योंकि यह रात्रि के दृश्य का औसत रंग होता है।

1. See the discussion in Met. Mag. 67-69, 1932-34

निम्नलिखित माप-तालिका नक्षत्रों के विभिन्न रंगों का आभास कराती है जिसमें उन्हें आम तौर पर व्यक्त करनेवाले अंक दिये गये है तथा कुछ उदाहरण भी। कुशल प्रेक्षकों द्वारा इन रंगो के बारे में स्वतन्त्र रूप से प्राप्त किये गये तखमीने अकसर औसत रंग से पूरे एक वर्ग ऊपर या नीचे पडते हैं। यहाँ दिये गये उदाहरणों के तखमीने ऐसे प्रेक्षकों द्वारा प्राप्त किये गये थे जिन्होंने नीले को नीले वर्ण के रूप में नहीं देखा, अतः इस कारण, ऋणात्मक मान का समावेश करने की आवश्यकता नही समझी गयी।

रंगों का मापक्रम

−२ नीला	४ विशुद्ध पीला
−१ नीला लिये हुए श्वेत	५ गहरा पीला
० श्वेत	६ नारङ्गी लिये हुए पीला
१ पीलापन लिये हुए श्वेत	७ नारङ्गी
२ श्वेत-पीला	८ पीलापन लिये हुए लाल
३ हलका पीला	९ लाल

उदाहरण

α वृहत् श्वान मे,	(लुब्धक)	०.८	α लघु सप्तर्षि मे,		३.८
α अभिजित् तारा समूह मे, (अभिजित्)		०.८	μ लघु सप्तर्षि मे,		५.८
			α स्वाती मे,	(स्वाती)	४.५
α सिंह में,	(मघा)	२.१	α वृश्चिक में	(ज्येष्ठा)	७.५
α लघुश्वान मे,	(प्रकाश)	२.४	शुक्र ग्रह		३.५
α श्रवण तारासमूह मे,	(श्रवण)	२.६	मंगल ग्रह		७.६
α सप्तर्षि मे,		४.९	बृहस्पति ग्रह		३.६
μ सप्तर्षि मे		२.३	शनि ग्रह		४.८

स्वभावतः तारे भी क्षितिज के ज्यों-ज्यों निकट आते हैं त्यों-त्यो वे रक्तिम वर्ण के होते जाते है, किन्तु तब उनकी टिमटिमाहट उनके रंग का सही अन्दाज लगाने में आम तौर पर रुकावट पैदा करती है। यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि पृथ्वी पर २५००° सेण्टीग्रेड ताप के दहकते हुए पिण्ड को हम 'तापोज्ज्वल' मानते हैं जबकि इसी ताप का नक्षत्र हमें नारङ्गी-लाल रंग का दीख पड़ता है। सम्भवतः इस शारीरिक क्रिया सम्बन्धी घटना का कारण यह है कि नक्षत्र अपेक्षाकृत इतने कम चमकीले होते हैं कि इनके प्रकाश के, आँख पर पड़ने वाले प्रभाव के लाल वर्ण का अवयव तो बोध-

गम्य हो जाता है, जबकि हरे तथा नीले वर्ण के अवयव बोधगम्य होनेवाले देहली-मान[1] से कम ही रह जाते हैं।

एक और व्याख्या § ७७ में दी गयी है। एक कुशल प्रेक्षक बतलाता है कि तारों के रंग का अनुमान वह चाँदनी रात में अधिक आसानी से लगा सकता है। क्या ऐसा इस कारण है कि हमारे रेटिना के शंकु उस वक्त अधिक महत्वपूर्ण भाग लेते हैं जब पृष्ठभूमि में सामान्य रूप से व्यापक दीप्ति मौजूद होती है ?

२०४. बादलों का रंग

सुन्दर पुञ्ज-बादलों के झुण्ड को आकाश पर धीरे-धीरे सामने से गुजरते हुए देखने में, तथा इस बात पर विचार करने में कि क्यों कुछ भाग हलके रंग के और कुछ काले रंग के होते हैं, आनन्द-सा आता है। जिन स्थलों पर ये सूर्य से प्रकाशित होते हैं, वहाँ ये चकाचौंध पैदा करनेवाले उज्ज्वल रंग के होते हैं, किन्तु हमारे ऊपर से जब ये गुजरते हैं तो इनके निचले भाग भूरे या काले-भूरे रंग के हो जाते हैं। पानी की बूँदें परस्पर इतनी घनी ठंडी रहती हैं कि बादल में रोशनी मुश्किल से ही प्रवेश कर पाती है, बल्कि अनगिनत बूँदों के अधिकांश से यह वापस परावर्तित हो जाती है; यह बादल करीब-करीब एक अपादरदर्शी सफेद पिण्ड के मानिन्द होता है। यदि सूर्य पुञ्ज-बादलों से ढका हो तो *ये काले रंग के दीखते हैं किन्तु इनके हाशिये चमकीले होते हैं—'प्रत्येक बादल का किनारा रजतश्वेत होता है!'*[2] इस प्रकार प्रकाश और छाया का वितरण हमें बादलों के विभिन्न भागों के बारे में दिलचस्प जानकारी प्रदान करता है—ऊपर के भाग, नीचे के भाग, सामन के, पीछे के, तथा आकाश में इन वृहत्काय द्रव्यमात्राओं की वास्तविक शक्ल के बारे में। इन अनुपातों का सही अन्दाज लगाना, या सूर्य के लिहाज से बादल की स्थिति निर्धारित करना सदैव ही आसान नहीं होता। उदाहरण के लिए यदि बादल मेरे सामने हैं और सूर्य उनसे कुछ फासले पर, ऊपर है, तो करीब-करीब केवल छाया ही देख पाकर मैं चकित रह जाता हूँ (चित्र १५३, a)। मैं सूर्य की विशाल दूरी का पर्याप्त रूप से अनुभव नहीं कर पाता, और अनजाने ही मैं कल्पना कर लेता हूँ कि यह काफी नजदीक है और तब इस बात को स्मरण रखने के बजाय कि बादल को प्रकाशित करने वाली किरणें सूर्य से मेरी आँख तक आनेवाली रेखा के समानान्तर चलती हैं (चित्र १५३ c) मैं अपेक्षा करने लग जाता हूँ कि बादल AB पर किरणें चित्र १५३, b की भाँति पड़ रही हैं।

1. Threshold value 2. 'Every cloud has a silver lining'

इन काले बादलों पर प्रकाश और छाया की क्रीड़ा कितनी ही मायावी क्यों न हो, तथा एक दूसरे पर जो छाया ये डालते है, वे कितनी ही जटिल क्यो न हों, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि अकेले इन्ही से पुन्ज बादलो के रग के सभी प्रभेदों का समाधान करना असम्भव है। तूफान के बाद जब आसमान साफ हो रहा हो तब यदि केवल
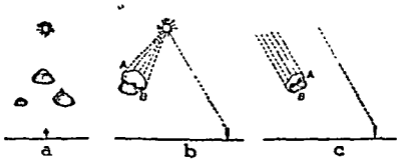
चित्र १५३—पुज बादलों पर प्रकाश और छाया।
(a) उत्तर से दक्षिण की तरफ देखने पर भू-दृश्य और प्रेक्षक।
(b) भ्रमपूर्ण आत्मनिष्ठ धारणाएँ तथा प्रत्याशाएँ।
(c) यथार्थ स्थितियाँ।
(b और c में प्रेक्षक पूर्व से पश्चिम की ओर देख रहा है।)

कुछ थोड़े से छोटे-छोटे पुन्ज-मेघ बच गये हों, जो तेज प्रकाश से आलोकित हों और जिनके लिए इस बात की कोई सम्भावना न हो कि वे एक दूसरे पर अपनी छाया डाल सकें, तो वे उत्तरोत्तर अधिक काले होते जाते है और अन्त में जब वे विलुप्त होने को होते है, तो वे नीले-काले रग के हो जाते हैं। आम तौर पर ऐसा जान पड़ता है कि नीले आकाश के सम्मुख दीखनेवाले पुन्ज-बादलों के झीने भाग नीला+श्वेत रंग (जैसी कि आशा की जा सकती है) प्रदर्शित नही करते बल्कि नीला+काला रंग।[1]

अन्य अवसरों पर जब किसी पुन्ज-बादल को एक अन्य बड़े बादल की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखते हैं जो कि एकदम श्वेत हो, तो यह भूरा दीख पड़ता है—इस दशा में यह प्रश्न ही नही उठ सकता कि केवल तहों की सम्पूर्ण मोटाई के बढ़ने से चमक में वृद्धि हो जाती होगी। यद्यपि इन घटनाओं को हम दिन प्रतिदिन देखते है, किन्तु अभीतक इनके प्रकाशीय सिद्धान्त का पर्याप्त रूप से अन्वेषण नहीं किया गया है। अवश्य ही इस धारणा को कि बादल वास्तव में प्रकाश का अवशोषण कर सकते हैं,

1. C. R., 177, 515, 1923

स्वीकार करने के पूर्व हमें बहुत अधिक सावधानी बरतनी चाहिए; सभी घटनाओं का पहले तो यह मानकर समाधान करने का प्रयत्न करना चाहिए कि ये बादल ठोस श्वेत वस्तु हैं, और तब हमें इस बात का विचार करना चाहिए कि ये वस्तुतः परिक्षेपण करनेवाले धुन्ध हैं और अन्त में इस बात की सम्भावना पर विचार करना चाहिए कि उनके अन्दर मटमैले रंग के धूल के जर्रे भी मौजूद हो सकते हैं।

यह दिलचस्पी की बात होगी कि उनकी तुलना रेल के इंजिन की सफ़ेद भाप से (धुएँ से नहीं!) करें! कुछ परिस्थितियों में, आपतित प्रकाश के साथ बड़े कोण बनाने वाली दिशा से देखने पर यह भाप अधिक सफेद दिखलाई देती थी, और सूर्य की दिशा से देखने पर, जबकि आँख में लगभग आपतन की दिशा में परावर्तित होने वाला प्रकाश ही पहुँचता था यह कम चमकीला दीखता था। कुछ अन्य अवसरों पर सभी दिशाओं से देखने पर भाप पुञ्ज-बादल के सबसे अधिक चमकीले भाग से भी अधिक दीप्तिवाली दिखलाई पडी थी, कदाचित् इसका कारण यह था कि पुञ्ज-मेघ की दूरी अत्यधिक होती है, और उससे आने वाला प्रकाश, वायु में होने वाले परिक्षेपण की वजह से क्षीण हो जाता है।

लम्बे फासले से देखने पर श्याम वर्ण के पुञ्ज-मेघ प्रायः निलछौंवे रंग के प्रतीत होते हैं। यह स्वयं बादल का रंग नहीं है, बल्कि यह हमारी आँख और बादल के दर्मियान के वायुमण्डल से परिक्षेपित होकर आने वाले प्रकाश का रंग है। इस तरह का श्याम वर्ण का बादल हम से जितनी ही अधिक दूरी पर होगा उतना ही अधिक, उसका रंग, पृष्ठभूमि के आकाश के रंग से मिलता-जुलता होगा। इसके प्रतिकूल, क्षितिज के निकट के चमकीले बादल पीत वर्ण लिये हुए दीखते हैं (§ १७२)।

अन्य जाति के बादलों के लिए भी हमें प्रेक्षण प्राप्त करना चाहिए और इन प्रश्नों का समाधान करने का प्रयास करना चाहिए, जैसे कि पानी बरसाने वाले बादल इतने भूरे क्यों होते हैं; विद्युत कौंध वाले बादलों में हलके नारङ्गी वर्ण के साथ-साथ एक अजीब-सा सुरमई रंग क्यों दिखलाई पड़ता है। क्या ऐसा धूल के कारण है? किन्तु इन सब चीजों के बारे में हमारा ज्ञान इतना अपूर्ण है कि हम पाठको को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना ही अच्छा समझते हैं कि वे स्वयं इस सम्बन्ध मे अपने अनुसन्धान आरम्भ करें।

सम्पूर्ण आकाश जब सम रूप से बादलों से ढका होता है, तो उस समय आकाश में प्रकाश का वितरण-क्रम एक अत्यन्त विशिष्ट प्रकार का होता है, जो दीप्तिमान् नीले आकाश के प्रकाश-वितरण का पूरक रूप समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए

एक छोटे दर्पण की सहायता से ऊर्ध्व विन्दु के निकट के और क्षितिज के निकट के आकाश की तुलना कीजिए; इन दोनों मे क्षितिज के निकट का आकाश सदैव ही अधिक दीप्तिमान् दीखता है, अनुपात ३ से लेकर ५ तक प्राप्त होता है। (प्लेट XIII)।

२०६ क. सूर्योदय और सूर्यास्त के समय बादलों का रंग

सूर्यास्त के अपने वर्णन में हमने वादलो का ख्याल नही किया था। किन्तु अब थोडी देर के लिए हम वादलो के इन चमत्कारपूर्ण दृश्यो की उत्पत्ति पर विचार करेंगे जो अनन्त किस्म के रंगों और शक्लों से विभूषित दीखते है, और प्रकाश्य रूप से इनमे किसी प्रकार का क्रम नजर नहीं आता।

प्रारम्भ मे मै वता देना चाहूँगा कि निम्नलिखित विवरण मुख्यत उस दृश्य मे सम्बन्ध रखता है जो सूर्य के अस्त होने के पूर्व हमे दिखाई पडता है जबकि स्वय वास्तविक 'सान्ध्यप्रकाश की घटनाओं' पर विचार-विमर्श § १८९ मे किया जा चुका है। सूर्य ज्योंही क्षितिज के नीचे पहुँचता है, त्योंही वादलो की शोभा भी विलुप्त हो जाती है!

सूर्यास्त के कुछ देर पहले बादल निम्नलिखित से प्रकाश पाते है—

१. सीधे, सूर्य का प्रकाश; सूर्य ज्यों-ज्यों नीचे आता है त्यों-त्यो बादल क्रम से पीले, नारङ्गी और लाल रंग मे शनैः-शनैः परिणत होता जाता है।
२. आकाश का प्रकाश, जो सूर्य के रुख नारङ्गी लाल वर्ण का, और अन्यत्र सब ओर नीले वर्ण का होता है। नारङ्गी-लाल वर्ण का यह प्रकाश, घूल के बड़े आकार के जर्रों तथा पानी की बूंदो द्वारा होने वाले प्रबल परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, ये किरणो में अत्यल्प मात्रा का विचलन पैदा करते है (§§, १८८, १९२); नीला प्रकाश, वायु-अणुओं द्वारा पीछे की दिशा में होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है।

अब कल्पना कीजिए कि सूर्य के आसपास कोई वादल है जो आरम्भ मे अत्यन्त झीना था, किन्तु शनैः-शनैः अब घना होता जा रहा है। इसकी बूंदे प्रकाश को अल्प मान के कोण पर परिक्षेपित करती है, अतः पतले स्तर के वादल, अवश्य ही पीछे की तिरछी दिशा में स्थित सूर्य से ढेर-सा प्रकाश हमारी ओर भेजेगे—परिक्षेपण करने वाले कणो की संख्या जितनी ही अधिक होगी, नारङ्गी-गुलाबी वर्ण का प्रकाश भी उतना ही अधिक प्रबल होगा। किन्तु फिर एक अनुकूलतम[1] अवस्था प्राप्त होती है जिस के आगे बादल

1. Optimum

के स्तर या तो इतने मोटे, या इतने घने हो जाते हैं कि उन्हें रोशनी आसानी से पार नहीं कर पाती। अत्यन्त घने बादल अपने में से प्रकाश को करीब-करीब बिलकुल ही नहीं गुजरने देते, और आकाश के उस भाग की रोशनी को हमारी ओर परावर्तित करते हैं जो अभीतक नीला ही बना रहता है और जो हमारे रुख के बादलों को अपनी रोशनी से प्रकाशित करता है (चित्र १५४), अतः हम देखते हैं कि सबसे अधिक मनोरम सूर्यास्त की आशा उस वक्त की जा सकती है जब बादल झीनी परतों के हों या आकाश में बादल यत्र-तत्र बिखरे हों।

सूर्य के अस्त होने वाली दिशा में हम झीने बादल को पीछे से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए देखते हैं और घने या अधिक मोटे बादल को सामने से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए हम देखते हैं—प्रथम किस्म के बादल चटकीले नारङ्गी-लाल वर्ण के होते हैं और द्वितीय क़िस्म के मटमैले भूरे-नीले रंग के। रंगों की इस विभिन्नता की, जिसके साथ-साथ सरचना और आकृतियों में भी अन्तर मौजूद पाया जाता है, बादलों द्वारा प्रस्तुत दृश्यों की सर्वाधिक मनोरम विशिष्टताओं में गणना की जाती है।

नीले-भूरे वर्ण के घने बादलों के हाशिये प्रायः चित्ताकर्षक सुनहले रंग के होते हैं। ध्यान दीजिए कि हाशिया A जो प्रकाश्यतः सूर्य के निकटतम है, हाशिया B की अपेक्षा अधिक प्रबल प्रकाश देता है, क्योंकि (क) उस स्थल पर प्रकाश-किरण का विचलन अपेक्षाकृत कम है; (ख) और यदि कल्पना करें कि बादल पूर्णतया गोले की शक्ल का ठोस पिण्ड है, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि सूर्य के निकटतम पड़ने वाले पार्श्व की ओर एक नन्ही-सी पट्टी भी हम अवश्य देख सकेंगे जिस पर सूर्य से रोशनी सीधे ही आकर गिरती है (चित्र १५४)।
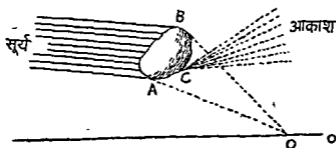
चित्र १५४—सूर्यास्त के पूर्व बादल पर गिरनेवाले प्रकाश की व्यवस्था।

यह अनूठा परिक्षेपण उन बादलों के हाशिये पर नहीं देखा जाता जो सूर्य से बहुत अधिक दूरी पर स्थित होते हैं; एक ओर सूर्य की रोशनी से सीधे ही प्रकाशित होते हैं और दूसरी ओर आकाश के नीले प्रकाश से, अतः इस दशा में भी नारङ्गी तथा नीले वर्ण की छटा देखने को मिलती है। सूर्य क्षितिज के नीचे ज्यों-ज्यों डूबता है त्यों-त्यों रंग और भी अधिक सुगनुमा होते जाते हैं, यहां तक कि अब सामने, पूरब दिशा के बादलों में नील-लोहित रंग की प्रति-चमक दिखाई देने लगती है।

सूर्य जब पूर्णरूप से अस्त हो जाता है तो इसका प्रकाश आकाश के विभिन्न भागों से शनैः-शनैः सिमटता जाता है और ऊँचाई पर स्थित बादल सबसे अधिक देर तक प्रकाशित रहते हैं। इससे एक और मनोरम विपर्यास दृश्य का प्रादुर्भाव होता है; पीछे की ओर के बादल अब भी सूर्य से प्रकाशित होते रहते हैं और उनके सामने के बादल केवल आकाश की रोशनी से आलोकित होते हैं।

२०६ ख. पृथ्वी के प्रकाश-स्रोतों से बादलों का प्रकाशित होना

सन्ध्या को देहाती प्रदेशों में जब हम टहलते रहते हैं और आकाश पर बादल समानरूप से छाये रहते हैं, तो यत्र-तत्र आकाश में, नीचे ही फासले पर एक हलकी-सी चमक हम देखते हैं। यह चमक किसी शहर या बड़े क़स्बे से आती है जिसे हम उस की दिशा से पहचान सकते हैं। क्षितिज से इस चमक की कोणीय-ऊँचाई α का तखमीना 'रेडिएन' में प्राप्त करिए, और मानचित्र की सहायता से उस नगर या कस्बे की दूरी A ज्ञात करिए; तब उस बादल की ऊँचाई $h = A\alpha$ होगी। उदाहरण के लिए बिल्थोवेन[1] से उत्रेख्त[2] के ऊपर कोण $\alpha = \cdot$ ८.५ ऊँचाई पर चमक का मैंने प्रेक्षण किया तो h=७९० मीटर (लगभग ८८० गज़) प्राप्त हुआ, जीस्ट[3] के ऊपर α=६° था, अतः ऊँचाई h= ७८० मीटर (लगभग ८७० गज)। सन् १८८४ में लन्दन के ऊपर की चमक चालीस मील की दूरी तक दिखलाई पड़ती थी। इन दिनों कितनी दूरी तक यह दृष्टिगोचर होगी?

एक बड़े नगर के ऊपर की इस चमक का बारीकी से अध्ययन करें तो आप का परिश्रम फलप्रद साबित होगा। जल्दी ही आप को पता चल जायगा कि दिन प्रति दिन यह चमक बदलती रहती है—इसका परिवर्त्तन लगभग उतनी ही प्रचुर मात्रा में होता है जितनी उत्तरीय प्रकाश[4] का। इस प्रकाशीय घटना में आप दो अवयव मौजूद पायेंगे—(i) एक धुन्ध-सा प्रकाश जो पानी की बूंदों तथा धूल-कणों वाली वायु के

1. Bilthoven 2. Utrecht 3. Zeist 4. Northern lights

सामान्य तौर पर प्रकाशित होने से उत्पन्न होता है, और क्षितिज के निकट यह प्रकाश सबसे अधिक तेज होता है; (ii) बादल की तह पर प्रकाश का धब्बा, जिसकी परिधि करीब-करीब उस नगर का बिलकुल ठीक प्रतिरूप होती है (अर्थात् बहुत कुछ वृत्त की शक्ल की); किन्तु दूर से देखने पर यह सामने की ओर से पिचका हुआ एक दीर्घवृत्त सरीखा दीखता है जिसके हाशिये पर्य्याप्त रूप से स्पष्ट उभरते हैं, विशेषतया उस वक्त जबकि बादल की तह हमवार, चिकनी होती है। यदि आकाश स्वच्छ और निरभ्र हो या फिर बहुत ही अधिक कुहरा लिये हुए हो, तब नगर की रोशनी की कोई भी चमक ऊपर दिखलाई नही देती। यदि आकाश में धुन्ध हो तब धुंधली चमक का प्रादुर्भाव होता है, किन्तु इसकी सीमा स्पष्ट नही बन पाती। यदि आकाश पर बादल की तह छायी हो तब प्रकाश का धब्बा स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो जाता है। हर प्रकार की दशाओ का सम्मिश्रण सम्भव है, और कभी-कभी कम ऊँचाई पर स्थित इक्के-दुक्के बादलों की छाया भी पड़ती है या प्रमुख प्रकाश की राशि से अलग-अलग, अनियमित शक्ल के, प्रकाश के धब्बे प्रगट होते हैं। अवश्य रोशनी के धब्बे की नाप-जोख करके बादल की ऊँचाई प्राप्त की जा सकती है, सर्वाधिक यथार्थ मान धब्बे की सीमा-रेखाओं की ऊचाई से प्राप्त होते हैं। निपुण प्रेक्षक के हाथों में यह विधि इतनी यथार्थ उतरती है कि इसकी सहायता से यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि बादल की तह नीचे की भूमि के चढ़ाव-उतार के अनुरूप अवस्थित होती है या नहीं।

लाकूर[1] दिन के वक्त भी इस किस्म के प्रेक्षण को पूरा करने में सफल हुआ था। एक बार हिमपात के बाद उसने देखा कि समद्र के ऊपर बादल की तह मटमैले रंग की थी जबकि बर्फ से ढके भूमि-प्रदेश के ऊपर यह अधिक चमकीली थी; प्रेक्षक जब इतनी दूर चला गया कि वहाँ से देखने पर इसकी ऊँचाई २०° से अधिक न थी, तब दोनों के बीच की विभाजक रेखा आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी। बाद में *उसने पाया कि वनों के ऊपर भी, बादल पर दिखाई देने वाला मटमैला धब्बा स्पष्ट* परिलक्षित हो जाता है; यहाँ तक कि कोपेनहेगन नगर भी, जहाँ छतों की बर्फ इस वक्त तक पिघल चुकी थी, इसी किस्म के 'कम प्रकाशित प्रदेश' सरीखा प्रभाव उत्पन्न कर रहा था। प्रकाश-दीप्ति के इन तमाम चढ़ाव-उतार से बादल-स्तरों की ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है, और इस प्रकार उनके लिए सदैव परस्पर संगत मान प्राप्त होते हैं।

इन सभी घटनाओ में प्रेक्षण के लिए सबसे अधिक आसान, हिमाच्छादित भूप्रदेश और समुद्र का अन्तर है, अतः इन्ही से प्रेक्षण का आरम्भ करना सर्वोत्तम होता है।

1. La Cour, Overs. Dansk Vidensk. Selsk. Forh. 75, 1871

यह आर्कटिक-अन्वेपकों के 'वर्फ-निमीलन'[1] तथा 'जल-आकाश'[2] के अतिरिक्त और कुछ नही है जिसके द्वारा बर्फ-शिलाओं के आगमन की सूचना पाकर वे सतर्क हो जाते हैं।

'और सन्ध्या को मैंने उत्तर दिशा के आकाश पर एक अद्भुत् चमक देखी जो क्षितिज पर सबसे अधिक तेज थी यद्यपि यह समूचे आकाश मे ठीक ऊर्ध्व विन्दु तक देखी जा सकती थी—एक आश्चर्यजनक, रहस्यमय मन्दज्योति, दूरस्थित एक विशाल अग्निराशि के प्रतिविम्व के मानिन्द, किन्तु पिशाचलोक की ज्योति सरीखी, क्योंकि रोशनी प्रेतच्छाया की तरह सफेद थी।'

—फ्रैन्क, नान्सेन, वोकेन ऑम नोर्ज, क्रिस्टियाना,[3] १९१४.

अधिकांश लोगों को यह मालूम नही है कि मिस्र के रेगिस्तानो की रेत भी वादलों पर रंगीन ज्योति फेंकती है जो दूर से स्पष्ट पहचानी जा सकती है। हिन्द महासागर के एक छिछले भाग से, जहाँ समुद्र का हरा रंग विशेष रूप से स्पष्ट निखरा था, क़रीव ३५० या ४५० गज़ की ऊँचाई पर स्थित वादलों पर हलकी हरी रोशनी पड़ रही थी। यहाँ तक कि हीदर[4] झाड़ियों वाले प्रदेश में भी, जबकि उनपर सुर्ख रग के फूल खिले हो, और उनपर धूप की रोशनी पड़ रही हो, हलके-फुलके उतराते हुए वादलों की निचली सतह मनोरम नील-लोहित रग धारण कर लेती है।

कुछ दशाओं में प्रकाश का एक स्थिर धब्बा वादलो की हमवार सतह पर देखा गया है और यह सिद्ध किया जा सका है कि यह दूर की एक झील का केवल प्रतिविम्वन था। यह घटना केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जव मौसम शान्त हो और पानी की सतह पूर्णतया समतल। झील का विस्तार कम-से-कम १ किलोमीटर होना चाहिए तथा सूर्य को आकाश में कम ऊँचाई पर ही होना चाहिए, अर्थात् क्षितिज से लगभग ७° की ऊँचाई पर, ताकि परावर्त्तन प्रवल हो सके।

२०७. पानी के रंग को निर्धारित करने वाले उपादान[5]

अनन्त रूप से परिवर्त्तनशील, सगमर्मर सरीखे रगो के क्षण-क्षण वदलने वाले धेडों से परिपूर्ण, यह आभा हर तरङ्ग के साथ वदलती है तथा इसकी सरचना की वारीकी नेत्रो को शाश्वत आनन्द प्रदान करती है।

1. Ice-blink 2. Water-sky 3. Fr. Nansen, Boken Om Norge, Kristiana, 1914 4. Heather 5. Bancroft, J. Frankl, Inst., 187 249, and 459, 1919. V. Aufsess, Ann. d. Phys., 13, 678, 1904; C. V. Raman, Proc. R. Soc. 101, 64, 1922; Shoulejkin, Phys. Rev., 22, 85, 1923; Ramanathan, Phil. Mag., 46, 543, 1925.

आइए इसका विश्लेषण करने का प्रयास करें—

(क) पानी से हम तक आने वाले प्रकाश का कुछ अंश पानी की सतह से परावर्तित होता है जो शान्त अवस्था में एक दर्पण सरीखा काम करता है। और आकाश यदि स्वच्छ हुआ तो पानी का रंग नीला दीखता है; आकाश पर घने बादल छाये हुए हों तो पानी का रग भूरा; और यदि हलकी ढाल वाला किनारा घास से ढका हो तो पानी का रंग हरा होगा। किन्तु पानी की सतह पर यदि तरङ्गें उठ रही हो तब आकाश तथा किनारे की भूमि के रग आपस में मिल-जुल जाते हैं—एक की चमक दूसरे पर कौंधती है। जब पानी अत्यधिक मात्रा मे तरङ्गित होता है तब केवल इन तमाम रंगों का मिश्रण प्रतिबिम्बित होता है।

'जिसे आम तौर पर हम एकसम रंग की सतह समझते हैं, वह वस्तुतः लगभग अनगिनत किस्म के वर्णो से प्रभावित होती है जो दूर से दीखने वाले सूर्य-प्रतिबिम्ब की भाँति लम्बाई की दिशा में खिंची होती है; और इसकी चमक, विशुद्धता तथा स्वयं इसके धरातल का भी बोध प्रचुर मात्रा में इस बात पर निर्भर करता है कि हम इन अगणित वर्णों की अनुभूति कितनी मात्रा में कर पाते हैं; धरातल की अनवरत गति इनकी असलियत के समझने-बूझने तथा इनका विश्लेषण करने में बाधा पहुँचाती है।'

—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

(ख) प्रकाश का कुछ अश पानी के भीतर प्रवेश कर जाता है और वहाँ धूल के कणों द्वारा तथा उसके सामान्य ढबैलेपन द्वारा परिक्षेपित होता है। ये जर्रे साधारणतः इतने बड़े होते हैं कि वे सभी किरणों का समान मात्रा में परिक्षेपण करते हैं, अतः बाहर निकलने वाला प्रकाश उसी रंग का होता है जिस रंग का आपतित प्रकाश; यदि ये जर्रे मिट्टी या रेत के कणों से बने हों तो बाहर निकलने वाला प्रकाश भूरे बादामी रग का हो सकता है। किन्तु अत्यन्त गहरे, स्वच्छ पानी में प्रकाश का पर्य्याप्त भाग स्वयं पानी के अणुओ द्वारा परिक्षेपित होता है और यह वैसा ही मनोरम रंग का होता है जैसा आकाश का या ग्लेशियर की मोटी बर्फ-शिला का होता।

(ग) अन्ततः, छिछले पानी के भीतर प्रकाश का कुछ अंश सदैव ही पेंदे तक पहुँचता है और वहाँ उसका विसृत परावर्त्तन हो जाता है और साथ-साथ ही यह पेंदे का रंग धारण कर लेता है।

(घ) पानी के भीतर अग्रसर होते समय प्रकाश की किरणों में निरन्तर तब्दीलियाँ आती रहती हैं। (i) परिक्षेपण के कारण उनकी तीव्रता के कुछ अंशका

ह्रास हो जाता है; शुद्धपानी में बैंगनी और नीली किरणें विशेष रूप से क्षीण हो जाती हैं। (ii) पानी द्वारा वास्तविक अवशोषण के कारण, जोकि दो-चार गज गहरे पानी में ही पर्य्याप्त रूप से बोधगम्य हो जाता है, ये अपने पीले, नारङ्गी तथा लाल रग की किरणों से ठीक उसी प्रकार वञ्चित हो जाती हैं जिस प्रकार रगीन कांच में गुजरने वाला प्रकाश।

पानी मे परिक्षेपण अनिवार्य रूप से मौजूद रहता है, यहाँ तक कि शुद्ध पानी मे भी यह क्रिया होती है, क्योंकि पानी मे उसके अणुओं का वितरण समरूप नही रहता और इस कारण इसकी सरचना में विषमता आ जाती है तथा कुछ मात्रा में यह कणिकामय[1]-सा हो जाता है; फिर प्रत्येक अणु गोले की शक्ल से कुछ भिन्न होता है। इस परिक्षेपण की तुलना हर दृष्टि से वायु में होनेवाले परिक्षेपण से की जा सकती है, अर्थात् यह भी $\frac{1}{\lambda^4}$ के अनुपात में बढ़ता है, अत. नीली और बैंगनी किरणो के लिए यह अधिकतम होता है। अपेक्षाकृत कम स्वच्छ पानी मे पदार्थ के जर्रे तैरते रहते हैं; यदि ये अत्यन्त क्षुद्र आकार के हुए तो इनका परिक्षेपण-प्रभाव भी अणुओ के प्रभाव म जुड़ जाता है, फलस्वरूप नीला-बैंगनी परिक्षेपण उत्पन्न होता है। यदि ये बड़े आकार के हुए, उदाहरण के लिए, ०.००१ मिलीमीटर से भी बडे, तब ये सभी वर्णो के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा में करते है, और अधिकांश सामने की दिशा मे (§ १८२)।

साधारण साबुन का पानी ऐसे द्रव का एक उत्तम उदाहरण है जिसमें अत्यन्त सूक्ष्म आकार के परिक्षेपण करने वाले कण मौजूद होते हैं। सामने की दिशा से आलोकित होने पर इसे मटमैली पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर यह निलछौवे रग का प्रतीत होता है, और प्रकाश जब पीछे की दिशा से इस पर पड़ता है तो यह नारङ्गी वर्ण का प्रतीत होता है (देखिए § १७१)।

झील और नदियों के पानी द्वारा होने वाला अवशोषण मुख्यत. लौह (Fe^{+++} आयन) के, तथा ह्यूमिक अम्ल के रासायनिक यौगिकों की उपस्थिति के कारण उत्पन्न होता है। २ करोड़ भाग में १ भाग लौह की अवधारणा (सान्द्रण)[2] तथा १ करोड़ भाग में १ भाग ह्यूमिक अम्ल की अवधारणा के लिए (जैसा कि आम तौर पर पाया जाता है), पानी का रग, वास्तव में जैसा वह दीखता है उससे अधिक गहरा उसे होना चाहिए। स्पष्टतः लौह (Fe^{+++}) यौगिक, प्रकाश की उपस्थिति में ह्यूमिक अम्ल का आक्सीकरण कर देते है और इस क्रिया में उनका स्वय अवकरण हो जाता है, तो वे

1. Granular 2. Concentration

Fe^{++} यौगिकों में बदल जाते हैं। और ये Fe^{++} यौगिक एक बार फिर आक्सीजन से संयोग करके Fe^{+++} यौगिक बन जाते हैं और यही क्रम आगे चलता रहता है।

अब हम यह प्रदर्शित करने के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेंगे कि ये विभिन्न उपादान आपस में मिलकर किस प्रकार पानी को रंग प्रदान करते हैं।

२०८. सड़क पर पड़े पानी का रंग

इसके लिए एक सरल दृष्टान्त है वर्षा के कारण सड़क पर इकट्ठा होने वाला पानी। यदि उसकी ओर देखने की दिशा का आपतन कोण बड़ा हो तो इस दिशा में सतह से लगभग सम्पूर्ण प्रकाश का परावर्तन होता है और प्रतिविम्बित वस्तुओं में विपर्यास प्रचुर मात्रा में मौजूद रहता है—मिसाल के लिए काली टहनियाँ दरअसल बहुत ही अधिक काली दीखती हैं। यदि हम पानी के और निकट आयें ताकि हमारी दृष्टि-रेखा उत्तरोत्तर ऊँची चढ़ती जाती है तो प्रतिबिम्बन अधिक क्षीण पड़ जाता है (§५२); और ऐसा जान पड़ता है मानो पूरी सतह एक प्रकार के एकसम धुन्ध से ढकी है—इस दशा में सभी रंग फीके पड़ जाते हैं और सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह होती है कि प्रतिविम्ब के काले भाग अब वास्तव में काले नहीं बल्कि धूसर-भूरे रंग के दीखते हैं। धुन्ध के उत्पन्न होने का कारण यह है कि गड्ढे के पानी पर चारों ओर से प्रकाश गिरता है। और पानी के अन्दर प्रवेश करने पर हर दिशा में इसका परिक्षेपण हो जाता है। यदि पानी साफ़ न होकर ढबैला दूधिया हुआ, तो परिक्षेपण, इसमें तैरनेवाले धूलकणों की वजह से होता है; उदाहरण के लिए पानी का रंग यदि 'नीला' दीखता है तो इसका अर्थ है कि परिक्षेपित प्रकाश नीला रंग धारण कर चुका है और यह वर्ण परावर्तित बिम्ब के साथ मिल जाता है; यदि पानी स्वच्छ हो और पेंदा हलके रंग का जैसा कि समुद्र-तट पर पड़े समुद्र-जल के गड्ढो के पेंदे का रंग होता है, तब सभी परावर्तित प्रतिविम्बों में एक प्रकार के बालू के रंग का पुट आ जाता है और यदि लम्बवत् देखें तो इस दशा में पेंदा तो स्पष्ट दिखलाई पड़ता है, किन्तु बिम्बों में, केवल सबसे अधिक चमकवाले ही कतिपय प्रतिबिम्ब नज़र आते हैं। किन्तु पानी साफ़ हो और पेंदा काले मटमैले रंग का, तब परावर्तित प्रतिविम्ब, लम्ब दिशा से देखे जाने पर भी विपर्यास में शुद्ध तथा परिपूर्ण बना रहता है; इतना अवश्य है कि पहले-जैसा चमकीला अब यह नहीं रहता। साये में पड़े शान्त गड्ढों के पानी में वृक्षों की पत्तियों के गुच्छों के प्रतिविम्ब कुछ अवसरों पर रंगों की ऐसी विशुद्धता तथा ऐसी स्पष्टता का प्रदर्शन करते हैं जो कि प्रतिबिम्बित होने वाली स्वयं उस वस्तु में भी परिलक्षित नहीं होती।

यह एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव है जो मुख्यत: इस कारण उत्पन्न होता है कि इस दशा में इर्द-गिर्द का दृश्य कम चकाचौंध पैदा करता है (§ ७)।

किसी व्यक्ति को गड्ढे से विभिन्न दूरियों पर खड़े होने के लिए कहिए और तब देखिए उसका प्रतिबिम्ब किस प्रकार बदलता है! यह प्रयोग समुद्रतट पर विशेष रूप से प्रभावोत्पादक सिद्ध होगा।

यहाँ पर हम एक छोटे पैमाने पर इस कारण को प्रदर्शित होते देखते हैं कि क्यों समुद्र की सतह से नीचे की चीजें (जैसे चट्टानें, पनडुब्बियाँ आदि), जहाज की अपेक्षा, वायुयान पर से अधिक आसानी के साथ देखी जा सकती हैं।

'अब तथ्य यह है कि सड़क के बगल का कोई भी गड्ढा या जलाशय ऐसा नहीं है जिसके भीतर उतनी ही मात्रा में भू-दृश्य न सिमटा पड़ा हो जितनी मात्रा में उसके ऊपर मौजूद है। यह, जैसा कि हम समझे बैठे हैं, एक भूरी, गँदली, धूमिल चीज नहीं है, इसके हमारी भी तरह हृदय है जिसके अन्तस्तल में ऊँचे वृक्षों की टहनियाँ, और घास की हिलती-डुलती पत्तियाँ हैं और आकाश के परिवर्त्ती मनोरम रंगों की हर किस्म की छटा वहाँ मौजूद है।'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

२०९. भूप्रदेश के भीतर के जलमार्ग तथा नहरों का रंग

हर नहर तथा खाई के पानी की सतह पर आलोड़ित तरङ्गें, रंग और प्रकाश की निरन्तर परिवर्त्ती छटा उत्पन्न करती हैं (§§१४–१८)। यह मालूम करने के लिए कि सतह का कोई विशेष भाग तरङ्गित हो रहा है या नहीं हमें उसे विभिन्न दिशाओं से देखना चाहिए। हल्की तरङ्गें केवल प्रतिबिम्ब के आलोकित तथा अन्धकार वाले भागों की सीमारेखा पर ही दृष्टिगोचर होती हैं, समरूप से प्रकाशित नीले आकाश के प्रतिबिम्ब में इन्हें नहीं देखा जा सकता और न ही घने वनों के अन्धकारमय प्रतिबिम्ब में (प्लेट XIV)। किन्तु बड़ी तरङ्गें प्रतिबिम्ब के पर्याप्त बड़े और समरूप भागों में भी छाया और प्रकाश के शेड उत्पन्न करती हैं और ऐसा या तो इस कारण होता है वे किरणों को अत्यधिक विचलित कर देती हैं या फिर इस कारण कि तरंगों के अग्रभाग तथा पृष्ठभाग के परावर्त्तन-गुणाकों में परस्पर पर्याप्त अन्तर पड़ जाता है (§५२ तथा चित्र १५७)।

इस प्रकार के प्रेक्षणों से पता चलता है कि पानी के तरङ्गित तथा शान्त भागों के बीच की सीमा-रेखा करीब-करीब सदैव ही आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट उभरती है। इसका कारण वायु-धाराओं का अव्यवस्थित वितरण नहीं हो सकता, और यह इस बात

द्वारा विशेष स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होती है कि वर्षा के समय भी जबकि पानी की पूरी सतह समान रूप से कम्पन करती होती है, सीमारेखाएँ पूर्णतया स्पष्ट बनी रहती हैं। वास्तविक कारण तो इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है कि सतह पर तेल की एक अत्यन्त बारीक परत मौजूद होती है जो एक मिलीमीटर के दस लाखवें भाग से भी कम मोटी होती है (तेल के केवल दो अणुओं की मोटाई!) फिर भी हवा या वर्षा के कारण बनने वाली तरङ्गों के शमन करने के लिए यह पर्य्याप्त होती है! तेल की यह परत प्राणी या वनस्पति जगत् के पदार्थों के सड़ने-गलने से तैयार होती है या उधर से गुजरने वाले जलयान से टपके तेल से, अथवा नालियों में आने वाले पानी की गन्दगी से। हवा अपने साथ चिकनाई की इस परत को बहाकर नहर के एक किनारे की ओर कर देती है। सदैव ही आप देखेंगे कि पानी उस किनारे की ओर ही तरङ्गित होता है जिधर से हवा आ रही होती है और दूसरे किनारे पर पानी शान्त रहता है। इस शान्त स्थिर भाग में बहुत-सी पत्तियाँ और टहनियाँ आदि तैरती रहती हैं, किन्तु एक दूसरे के लिहाज़ से उनमें मुश्किल से ही किसी तरह ही हरकत होती है क्योंकि तेल की अत्यन्त पतली परत द्वारा वे अपनी स्थिति पर ही बँधी-सी रहती हैं।

इस प्रकार वन के अन्दर के नाले के पानी की सजीव, चमचमाती हुई सतह और बड़े शहरों के गरीब मुहल्लों के जलमार्ग के गाढ़े, मटमैले, सुरमई रंग वाले पानी की सतह के बीच के स्पष्ट अन्तर का सन्तोषजनक रूप से समाधान हो जाता है।

सतह की इन प्रकाशीय घटनाओं का और आगे अनुगमन हम इस बात के अध्ययन द्वारा करेंगे कि किस प्रकार यह प्रतिबिम्बन नीचे, अन्दर से आने वाले प्रकाश के साथ निरन्तर स्पर्द्धा करता रहता है। पेड़ के नीचे, पानी के किनारे हम खड़े हैं। यत्र-तत्र वृक्षों की घनी चोटी के प्रतिबिम्ब हम देखते हैं और इनके दर्मियान नीचे आकाश के चमकते हुए खण्ड दिखलाई देते हैं। उन स्थलों पर जहाँ निर्मल आकाश प्रतिबिम्बित होता है, हम पानी के नीचे का पेंदा नही देख पाते, क्योंकि नीचे से आने वाला प्रकाश अपेक्षाकृत बहुत ही क्षीण होता है। उन स्थलो पर जहाँ गहरे शेड में वृक्ष प्रतिबिम्बित हो रहे होते हैं, हम एक गहरे रंग का मिश्रण देखते हैं जो उनकी पत्तियों के रंग, पानी के नीचे के पेंदे के रंग, तथा पानी के अन्दर के धूल-कणों द्वारा परिक्षेपित होने वाले विसृत प्रकाश के परस्पर मिलन से बनता है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के नीचे का पेंदा हम केवल किनारे के निकट ही देख सकते हैं। पानी को कुछ फासले पर देखें तो अब पेंदे को देख पाना सम्भव नही होता, क्योंकि परावर्तित प्रकाश अब आपतनकोण

बढ जाने के कारण बहुत अधिक तेज हो जाता है और नीचे से आने वाले प्रकाश पर यह हावी हो जाता है।

जहाज के पेंदे के मटमैले रंग के पृष्ठ-दण्ड[1] का प्रतिबिम्ब हरा-हरा, जलीय रंग का दीखता है जबकि जहाज के गिर्द उस पर बनी सफेद पट्टी के प्रतिबिम्ब का रंग केवल सफेद ही रहता है।

'सूर्य के प्रकाश में पानी का स्थानीय रंग सामान्यतः गहरा तथा स्फूर्तिमय होता है और जैसा कि हमने देखा, कम प्रकाश वाले प्रतिबिम्बों को यह बरबस प्रभावित करता है, प्रायः उनके गाढ़ेपन को यह कम कर देता है। साये में, परावर्तन शक्ति बढ़कर उच्च कोटि तक पहुँच जाती है।[2] और बहुल अकसर ऐसा होता है कि पानी की सतह पर छाया का स्वरूप वास्तविक छाया द्वारा नहीं निरूपित होता बल्कि ऊपर की वस्तुओं के अधिक यथार्थ प्रतिबिम्बन द्वारा यह निरूपित होता है।

'एक अत्यन्त गँदले पानी की नदी (जैसे, उदाहरण के लिए फ्लोरेन्स की आर्नो नदी) धूप में अपने निज के पीले रंग की दीखती है और सभी प्रतिबिम्बनों को हल्का तथा रंगविहीन बना देती है। गोधूलि की बेला में यह अपनी परावर्तन शक्ति अधिकतम सीमा तक पुनः प्राप्त कर लेती है, और कर्रारा[3] पर्वत इसमें इतने स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते हुए दिखाई पड़ते हैं मानो यह एक निर्मल जल की कोई झील हो।'[4]

—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

सतह के प्रतिबिम्बन के निराकरण के कुछ आसान तरीके इस प्रकार हैं—

(क) आप सिर के ऊपर एक काली छतरी लगा सकते हैं, या किसी पुल के नीचे जगह तलाश कर लीजिए, खुली धूप के मौसम में पानी की गहराई से ऊपर को विस्तृत होने वाले पीत-हरे रंग के प्रकाश को अच्छी तरह देख सकेंगे। सतह पर थिरकती हुई तरङ्गिकाएँ अब केवल उस प्रकाश द्वारा देखी जा सकती हैं जो किञ्चित्

1. Keel 2. भौतिक व्याख्या यह है कि परावर्तन-शक्ति साये में बिलकुल ठीक उतनी ही रहती है जितनी धूप में, किन्तु अनुपात $\frac{\text{परावर्तित प्रकाश}}{\text{गहराई से परिक्षेपित होकर आनेवाला प्रकाश}}$ धूप में कम होता है और साये में अधिक। 3. Carrara

4. हमारी व्याख्या—सन्ध्या की गोधूलि बेला में रोशनी एक खास दिशा से आती है और सामान्य प्रदीप्ति विलुप्त हो चुकी होती है, जो दिन का नीचे गहराई से आनेवाला परिक्षेपित प्रकाश उत्पन्न करती है और यही तमाम परावर्तित प्रतिबिम्बों पर अध्यारोपित हो जाता है।

दर्शन द्वारा वे उत्पन्न करती हैं। पानी के अन्दर की चीजें इधर से उधर धीमी गति से कम्पन करती हुई दिखलाई पड़ती हैं—ऐसा प्रतीत होता है मानो पानी एक प्रकार की जिलेटिन हो।

(ख) एक छोटा दर्पण लेकर उसे पानी के अन्दर भिन्न कोणों पर झुकाइए (चित्र १५५) और इस प्रकार उस प्रकाश के रंग की जांच कीजिए जो कुछ दूर तक
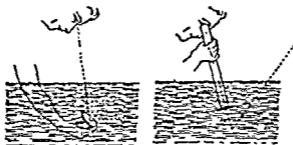
चित्र १५५—पानी के रंग का प्रेक्षण, इसकी सतह पर होनेवाले परावर्तन का परिहार करते हुए।

पानी में प्रवेश कर चुका है। यदि किसी साधारण खाई के पानी में यह प्रयोग करें तो प्रकाश में आप वास्तविक अवशोषण के कारण, पीला रग देखेंगे। पानी यदि वहुत ही उथला हो, तो खाई के पेंदे पर गिरे चीनी मिट्टी के टूटे हुए टकड़े या पानी के अन्दर रखे गये सफेद कागज से भी काम चल जायगा। समुद्र में सफ़ेद वृत्ताकार प्लेट इस्तेमाल करते हैं जिसे एक खास गहराई पर पानी के अन्दर डालते हैं; किन्तु इसे एकदम सरल प्रयोग नही माना जा सकता।

(ग) एक जल-दूरबीन का इस्तेमाल कीजिए जो केवल एक टिन की नली होती है,और यदि सम्भव हो तो इसके एक सिरे पर काँच लगा रखते हैं (चित्र १५५)। इसकी सहायता से आप पानी के पेंदे से या तैरते हुए धूल-कणों से परिक्षेपित होकर नीचे से आने वाले प्रकाश के रग की जाँच कर सकेंगे। नहाते समय अपनी जल-दूरवीन को काम में लाइए। पुरानी चाल के जहाज में धुर नीचे तक जाने वाला सूराख आप को मिल सकता है जो नीचे पानी में खुलता है; यह दरअसल एक वड़े पैमाने की जल-दूरवीन ही है!

(घ) एक 'निकल' को इस तरह पकड़ कर उसमें से देखिए कि उसमें से गुजरने पर, पानी की सतह से परावर्तित होने वाले प्रकाश का शमन हो जाय (§ २१४)।

२१०. समुद्र का रंग

समुद्र के रंग को निर्धारित करने मे आम तौर पर परावर्त्तन का ही प्रमुख हाथ होता है। किन्तु यह परावर्त्तन असख्य, विभिन्न तरीकों पर होता है, क्योंकि समुद्र का धरातल गतिशील और प्राणवान् होता है जो वायु की प्रकृति तथा तट की बनावट के अनुसार तरङ्गित तथा उद्वेलित होता रहता है। प्रमुख नियम यह है कि दूर के सभी प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं क्योंकि हमारी निगाह दूर की तरगों की ढाल वाली सतह पर पड़ती है (§ १६)। इसलिए समुद्र के दूरस्थ भागों का रंग करीब-करीब वैसा ही होता है जैसा २०° से ३०° की ऊँचाई पर आकाश का रग; अर्थात् ठीक क्षितिज के ऊपर के आकाश की अपेक्षा यह अधिक निष्प्रभ होता है (§ १७६), और इस कारण यह रग और भी अधिक निष्प्रभ होता है कि प्रकाश का एक अशमात्र ही परावर्त्तित हो पाता है।

इसके अतिरिक्त समुद्र का अपना 'निज का रग' भी होता है—नीचे से परिक्षेपित होकर आनेवाले प्रकाश का वर्ण। प्रकाशीय दृष्टि से समुद्र की एक महत्त्वपूर्ण लाक्षणिक विशिष्टता है उसकी **गहराई**, यह गहराई इतनी अधिक होती है कि पेदे से करीब-करीब कुछ भी प्रकाश ऊपर वापस आ नही पाता है। यह 'निज का रग' पानी की राशि मे होने वाले **परिक्षेपण** तथा **अवशोषण** के मिले-जुले प्रभाव के कारण उत्पन्न होता है। समुद्र में प्रकाश का केवल परिक्षेपण हो (परावर्त्तित प्रकाश का विचार न करे) तब इसका रंग दूधिया सफ़ेद होगा, क्योंकि इसमें प्रवेश करने वाली सभी किरणें अन्त में अनिवार्यतः बाहर निकल आयेंगी। समुद्र, यदि केवल अवशोषण करता हो तब वह स्याही के मानिन्द काले रग का दीखेगा, क्योंकि तब किरणें पेंदे तक पहुँचने के उपरान्त ही वापस आ पायेंगी और अवशोषण यदि अत्यल्प भी हुआ, तो पानी के अन्दर की लम्बे मार्ग की यात्रा उनके प्रकाश को विलुप्त कर देने के लिए पर्याप्त होगी। फिर भी, जैसा कि अभी बताया जा चुका है, रंग का प्रादुर्भाव परिक्षेपण तथा अवशोषण के सम्मिलित प्रभाव के कारण होता है; ऐसा प्रकाश जिसका परिक्षेपण थोड़ी ही मात्रा में होता है, पुनः पीछे की ओर परिक्षेपित होने के पूर्व पानी के अन्दर अधिकतम दूरी तक प्रविष्ट कर जाता है, और इस लम्बी यात्रा के दौरान मे अवशोषण द्वारा इसका ह्रास भी अधिकतम होता है।

मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि नीचे से वापस आने वाले प्रकाश की मात्रा, अनुपात $\frac{\text{परिक्षेपण गुणाक}}{\text{अवशोषण गुणाक}}$ के बढ़ने पर अधिक होगी। किन्तु इनकी सर्वागपूर्ण व्याख्या किसी भी प्रकार से आसान नही है।

समुद्र की विस्तृत जलराशि के रंग पर उसके पेंदे का प्रत्यक्ष'प्रभाव अपने देश (हालैण्ड) के निकट नहीं देखा जा सकता, कम-से-कम उस दशा में जबकि पानी की गहराई एक गज से अधिक हो। रस्किन का दावा है कि १०० गज की गहराई पर भी पेंदे का प्रभाव समुद्रजल के रंग पर प्रचुर मात्रा में पड़ता है और समुद्र के अनेक यात्रियों द्वारा भी इसी तरह के और भी दावे किये गये हैं। तथ्य यह है कि समुद्र के पेंदे की स्थानीय उठान, लहरों के उत्थान और ऊपर के पानी के उद्वेलन में परिवर्तन का समावेश करती है और स्वभावत. इस स्थान पर अधिक गहरे स्थान के मुकाबले में, अधिक संख्या मे ठोस कण मथ उठते हैं जिससे परिक्षेपण में वृद्धि हो जाती है। अतः समुद्र के पेंदे का प्रभाव दरअसल पड़ता तो है, किन्तु यह प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं है।

२११. उत्तर सागर का प्रकाश तथा उसका रंग

छुट्टी के एक दिन, हालैण्ड के रेतीले समुद्र तट पर जो ठीक उत्तर-दक्षिण दिशा में पड़ता है, और जहाँ से समुद्र पर शानदार सूर्यास्त देखा जा सकता है, निम्नलिखित प्रेक्षण प्राप्त किये गये। ये घटनाएँ, स्वभावतः, दिन के विभिन्न समय के लिए तथा समुद्रतट की विभिन्न स्थितियों के लिए विभिन्न होती हैं—सारभूत बात है समुद्र की सतह के लिहाज से सूर्य की स्थिति।

१. शान्त वायु, नीला आकाश—तड़के प्रभात की शान्त वेला, समुद्र की सतह दर्पण की भाँति स्निग्ध। आकाश सर्वत्र नीला, किन्तु धुन्ध लिये हुए। एक नन्हीं-सी लहर हमारे पैरों के पास तट पर आकर बल खा जाती है और फेन की बारीक-सी धारी छोड़ जाती है जो मानों फुसफुसाकर दम तोड़ देती है—एक खामोशी छा जाती है........

आइए अब एक टीले पर खड़े हो जायें। सामने समुद्र की सतह मानचित्र की तरह फैली हुई है। इसका एक भाग तो इतना स्निग्ध है कि ऊपर का नीला आकाश इसमें आदर्श रूप से बिना किसी प्रकार की विकृति के, प्रतिबिम्बित हो रहा है, मानो किसी झील से प्रतिबिम्बन हो रहा हो। अन्य भाग भी नीले-भूरे रंग के है, किन्तु थोड़े मटमैले शेड के। इनकी विभाजक रेखाएँ स्पष्ट देखी जा सकती हैं, तथा इनका विभाजन भी पृथक्-पृथक् इतना स्पष्ट है कि इच्छा यही होती है कि इनका चित्रांकन करें। कुछ ही समय उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होंने अपनी स्थितियाँ एकदम बदल डाली हैं। इस कारण खुलते हुए रंग वाले भागों का निर्माण रेत के टीलों (समुद्र के तट पर जाने वाले लोग इसी नाम से उन्हें पुकारते हैं) की वजह से नहीं हो सकता; इनकी

उत्पत्ति का कारण है चिकनाई की एक अतिसूक्ष्म, अत्यन्त पतली परत जो समुद्र की सतह पर फैली हुई होती है—ठीक नहर और खाइयों पर फैली परत की भाँति ये पानी के उद्वेलन को रोकने के लिए पर्य्याप्त होती है। सीधे नाप करके यह सिद्ध किया गया है कि इन क्षेत्रों पर अन्य स्थानों की अपेक्षा पृष्ठ-तनाव बहुत कम होता है। तेल की ये परतें कदाचित् जहाजों से फेंके गये कूडा-करकट या उनके इंजिन में इस्तेमाल किये गये तेल से बनती हैं। जिस स्थल पर परत नहीं होती, वहाँ पानी की सतह थोड़ी-बहुत विक्षुब्ध होती है जैसा कि कुछ देर बाद जब सूर्य समुद्र पर चमकता है, देखा जा सकता है—तब तरङ्गित भाग प्रकाश के सागर की भाँति जगमगाता है। इन भागों से प्रदर्शित होने वाले रंग अब और अधिक मटमैले हो जाते हैं, (१) क्योंकि प्रत्येक तरङ्ग का अग्रभाग अब अधिक ऊँचे और इसलिए आकाश के कम प्रकाशित नीले भाग को प्रतिबिम्बित करता है; (२) फिर इसलिए भी कि परावर्तन अब उतनी तिरछी दिशा में नहीं होता, अतः इसमे प्रकाश की मात्रा कम ही होती है। 'निकल' को इस तरह रखकर उसमे से देखें कि केवल ऊर्ध्व दिशा के ही कम्पन उसमें से गुजर पाये तब मटमैले भाग अधिक अंधकारमय दीखते हैं, और प्रकाशित भाग और इनके बीच का अन्तर अधिक प्रखर हो उठता है। विभिन्न क्षेत्रों की विभाजक रेखाएं करीब-करीब सर्वत्र, तट के समानान्तर ही अवस्थित जान पड़ती हैं; ऐसा इसलिए प्रतीत होता है कि अनुदर्शन के कारण सामने की दिशा की रेखाएँ छोटी पड जाती हैं, क्योंकि तथ्य यह है कि तेल की परत से
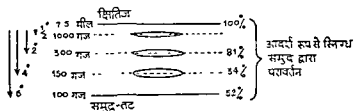
चित्र १५६—३० फुट ऊँचे टीले से समुद्र का अवलोकन। दीर्घवृत्त प्रदर्शित करते हैं कि समुद्र के धरातल की विभिन्न दूरियों पर वृत्त का अनुदर्शन-संकुचन किस प्रकार का होता है।

ढके हुए क्षेत्र तो हर तरह की शक्ल के हो सकते हैं (चित्र १५६)। मनमुच के एकाध 'रेत के टीले' पानी के रंग में पीलेपन के आधिक्य के कारण प्रमुख रूप में पहचाने जा

सकते हैं, किन्तु ऐसा केवल अत्यन्त ही उथले समुद्र में होता है जैसे ४ से ८ इंच तक की गहराई के पानी में।

तीसरे पहर समुद्र में स्नान करते समय, यदि समुद्र शान्त हुआ तो पानी की असाधारण स्वच्छता से हम अवश्य प्रभावित होते हैं। लगभग १ गज की गहराई तक, पेंदे का हम सारा ब्योरा देख सकते हैं, यहाँ तक कि तैरते हुए नन्हे-नन्हे जीवों को भी। पानी में रेत मौजूद नहीं होती या होती भी है, तो नगण्य मात्रा में; सो भी केवल वहाँ, जहाँ पर तरङ्गिका टूटने को होती है और इसके पीछे रेत के नन्हें बादल ऊपर की ओर भँवर के रूप में मथ उठते हैं। यदि हम नीचे की ओर, एक दम अपने निकट के पानी को देखें, तो आकाश का प्रतिबिम्ब बहुत कम ही बाधा डालता है, और लगभग ८ इंच की गहराई तक पेंदे की रेत का पीला रंग ही प्रमुखता प्राप्त किये रहता है। १ से लेकर १॥ गज तक की गहराई पर रंग एक मनोरम हरे वर्ण में तब्दील हो जाता है और इस दशा में हमें एक प्रकार की जल-दूरबीन बनानी पड़ती है ताकि आकाश के प्रतिबिम्बन को रोक सकें। यह हरा वर्ण उस प्रकाश का रंग है जो पानी में प्रविष्ट होकर पुनः पीछे की ओर परिक्षेपित हुआ है। किन्तु ज्यों ही समुद्र की सतह को कुछ फासले से हम देखते हैं, त्यों ही प्रतिबिम्बन प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हर तरफ़ नीले आकाश को हम प्रतिबिम्बित होते हुए देखते हैं। समुद्री हरे रंग तथा आकाशीय नीले वर्ण का एक आश्चर्यजनक विनिमय!

सन्ध्या को सूर्य, कुछ ही अंशों की कोणीय ऊंचाई पर स्थित बादलों की पेटी के पीछे छिप जाता है—तो इसके ऊपर सान्ध्य प्रकाश की सुनहले और नारङ्गी वर्ण की ज्योति जगमगाती रहती है जो और ऊँचे आकाश पर सन्ध्या के मटमैले नीले रंग में क्रमशः समा जाती है। समुद्र अब भी पहले की भाँति ही शान्त है, और समूचे दृश्य को वह अविकृत रूप में प्रतिबिम्बित करता रहता है। किन्तु पश्चिम की ओर हम नजर डालते हैं, तो हमें अत्यन्त नन्ही तरंगें दिखलाई पड़ती हैं (§१७), और समुद्र के दूरस्थ भागों में जहाँ बादलों की नीली-भूरी पेटी प्रतिबिम्बित होती है, प्रत्येक तरंग एक नन्हीं, नारङ्गी-पीत वर्ण की रेखा का निर्माण करती है (तरंग की झुकी हुई सतह आकाश के अधिक ऊँचाई वाले भाग का प्रतिबिम्बन करती है)। और निकटवर्त्ती भाग में जहाँ समुद्र नारङ्गी-पीत वर्ण का है, तरङ्गिकाएँ और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित, अधिक नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करके अधिक गहरे वर्ण का रेखाच्छादन-सा उपस्थित करती हैं। दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम की ओर देखने पर जहाँ सान्ध्य प्रकाश के रंग विलुप्त हो रहे होते हैं, हमारी दृष्टि अब तरङ्गों की ढालू सतह पर लम्बवत् नहीं

पड़ती और समुद्र में बादलों की एकसम पेटी का विशुद्ध प्रतिबिम्बन होता है जिसके न तो रंग में कोई अन्तर पड़ता है न प्रकाशदीप्ति में; अतः क्षितिज रेखा मिट-सी जाती है और समुद्र तथा आकाश एक दूसरे में मिल जाते हैं जबकि दूर के जहाज नीले-भूरे अनन्तता में उतराते हुए जान पड़ते हैं।

कुछ दिन बाद, मौसम लगभग पहले जैसा ही था, किन्तु हवा कदाचित् पहले की अपेक्षा और भी हल्की थी और तेल की पतली परत से ढका समुद्र का भाग सन्ध्या को बादलों की पेटी को प्रतिबिम्बित करता हुआ दिखाई दे रहा था जबकि सतह के विक्षुब्ध भाग, प्रतिबिम्ब के स्थानान्तरण के कारण नारङ्गी-पीत वर्ण के आकाश का प्रतिबिम्बन कर रहे थे।

२. हलके वेग की हवा, इक्के-दुक्के बादलों वाला स्वच्छ नीला आकाश—*टीले के सिरे पर मैं अभी पहुँच भी नहीं पाता हूँ कि नीले-श्याम वर्ण के समुद्र और* क्षितिज के निकट के खुलते रंग वाले आकाश, के विपर्यास को देख कर चकित रह जाता हूँ। दृश्यता असाधारण रूप से बढ़िया है—दूर की वस्तुओं की आकृतियाँ सुस्पष्ट उभरती हैं, और यह दशा सारे दिन बनी रहती है। हलकी पछुआ हवा चल रही है। लहरें समुद्रतट के सहारे दो या तीन फेनिल पंक्तियों में उठती हैं, यद्यपि खुले समुद्र में फेन नहीं दिखलाई पड़ता। टीले पर हम अब प्रेक्षण के लिए खड़े हो जाते हैं।

तट के पार्श्व में लहरों का अवलोकन कीजिए (चित्र १५७)। ये अग्रभाग में मटमैले पीत-हरे-भूरे रंग की दीखती हैं क्योंकि हमारी दृष्टिरेखा प्रत्येक लहर के सामने वाले ढाल के पार्श्व पर लगभग समकोण दिशा में पड़ती है, और इस कारण परावर्तित प्रकाश का अल्प भाग ही हमारे पास पहुँचता है और फिर यह भी आकाश के केवल क्षीण प्रकाश वाले भाग से। किन्तु हम पीला-हरा प्रकाश भी अवश्य देखते हैं जो या तो समुद्र की गहराई से वापस परिक्षेपित हुआ है या लहर के पृष्ठभाग से प्रवेश करके सामने की ओर इस पार निकल आया है; किन्तु चूँकि यह प्रकाश अत्यन्त क्षीण ही रहता है अतः लहरों का अग्रभाग मटमैला ही रहता है। इसके प्रतिकूल लहरों के पृष्ठभाग क्षितिज से लगे अधिक प्रकाश वाले नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक लहर अपने मटमैले पीत-हरे अग्रभाग और हलके नीले पृष्ठभाग के बीच एक सुन्दर विपर्यास प्रदर्शित करती है। ये हलके नीले पृष्ठतल लहरों के दर्मियान चौड़े चिपटे गर्त्त का स्वरूप धारण कर लेते हैं जिसकी सतह थोड़ी ही विक्षुब्ध होती है, अतः ये अच्छे परावर्तक होते हैं और इसीलिए रंग उनका नीला होता है। तट के समानान्तर रेत के

टीलों की कतिपय पंक्तियों को उन पर टकराकर टूटनेवाली लहरों से आसानी से पहचाना जा सकता है जबकि उनके दर्मियान की जगहें अधिक स्निग्ध तथा शान्त रहती हैं। तट से और अधिक फासले पर लहरों की शेडिंग उत्तरोत्तर अधिक बारीक होती जाती है। वहाँ टूटने वाली लहरें नहीं होती, किन्तु अग्र-ढाल और पृष्ठतल के ढाल के बीच का विपर्यास बना रहता है।
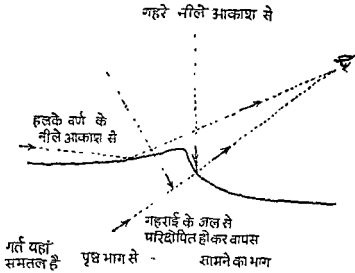
चित्र १५७—समुद्र की तरंग में विभिन्न रंगों का निर्माण कैसे होता है।

पानी पर उत्तरोत्तर अधिक तिरछी दिशा से देखते हैं तो अब लहरों के बीच के गर्त्त को हम देख नहीं पाते और अन्त में उनके पृष्ठतल दृष्टि से पूर्णतया ओझल हो जाते हैं। अब अग्रभाग की सतह बहुत कम झुकी हुई होती है, अतः यह मुख्यतः करीब २५° कोणीय ऊँचाई के आकाश का प्रतिबिम्बन करती है। 'परावर्तित प्रतिबिम्ब का यह स्थानान्तरण' (§१६), समुद्र के गहरे नीले रंग का, तथा समुद्र और क्षितिज से लगे आकाश के परस्पर के विपर्यास का, समाधान करता है। सम्प्रति यह विपर्यास इतना प्रबल इस कारण होता है कि क्षितिज पर आकाश वास्तव में इतने खुलते रंग का होता है, फिर भी इसके ऊपर, थोड़ी ही दूर पर इसका रंग इतना गहरा नीला हो जाता है। इस बात की जाँच इस प्रकार कीजिए; आकाश के ऊँचाई वाले भागों का प्रतिबिम्ब एक छोटे दर्पण द्वारा क्षितिज के आसपास के भागों पर प्रक्षेपित कीजिए; नतीजा आश्चर्य-जनक मिलेगा! साथ ही साथ इस बात पर ध्यान दीजिए कि फासले पर समुद्र आकाश

के सबसे अधिक गहरे रंग वाले भाग की तुलना में भी अधिक गहरे रंग का दीखता है—स्मरण रहे कि समुद्र की परावर्तनशक्ति १०० प्रतिशत से कही कम होती है। समुद्र और आकाश के दर्मियान का विपर्यास पश्चिम मे अधिकतम होता है और दक्षिण तथा उत्तर की ओर यह कम हो जाता है *क्योंकि अधिकांश लहरे पश्चिम की ओर से आती* हैं, और जब हम उत्तर या दक्षिण की ओर देखते हैं तो हमारी दृष्टि लहरों के शीर्ष के बहुत कुछ समानान्तर रहती है, अतः उनका प्रभाव घट जाता है (§१७)।

कदाचित् हमारे मन मे शका हो सकती है कि इस समय दीखने वाले प्रबल विपर्यास के लिए सिवाय इसके कि क्षितिज के निकट नीले आकाश की प्रदीप्ति तेजी से बढती है, क्या अन्य कोई कारण नही है। प्रकृति स्वयं हमें विश्वास दिलायेगी। एक क्षण के लिए पश्चिमी आकाश का एक भाग अलका मेघों के आवरण से ढक जाता है, अतः क्षितिज से लगभग ३०° की कोणीय ऊँचाई तक आकाश करीब-करीब समरूप से श्वेत दीखता है, तुरन्त ही इस दिशा में समुद्र और आकाश का प्रबल विपर्यास विलुप्त हो हो जाता है, और समुद्र पहले की अपेक्षा बहुत अधिक हरा और प्रकाशवान् हो जाता है। अलका बादलों के हटते ही विपर्यास पुन. प्रगट हो जाता है।

जिस हद तक प्रतिबिम्बन समुद्र के रग को प्रभावित करते है, उससे हमे यह नही समझ लेना चाहिए कि अन्य कारणों की हम एक दम उपेक्षा कर सकते हैं। यत्र-तत्र आपको इक्के-दुक्के बादलो की साया दिखाई दे सकती है—इन स्थानों पर समुद्र अधिक गहरे रंग का दीखता है; जबकि सूर्य के प्रकाश मे पडने वाले भागों का रग रेत के रग से अधिक मात्रा मे मेल खाता है। किन्तु यह अशतः विपर्यास की एक घटना है, क्योंकि जब आप अपनी अधखुली मुट्ठी में भीतर मे देखते हैं या नाइग्रोमीटर (§ १७४) मे से, तब आप पाते हैं कि दरअसल वहाँ भी रग नीला ही है, भले ही यह साये वाले भाग की तुलना में कम नीला ठहरे।[1] जो कुछ भी हो, ये छायाएँ स्पष्ट रूप से सिद्ध करती हैं कि समुद्र का रग पूर्णतया परावर्त्तन द्वारा ही निर्धारित नही होता बल्कि प्रकाश का कुछ अंश पानी के नीचे से भी परिक्षेपित होकर वापस लौटता है। छाया इसलिए दृष्टिगोचर होती है कि परिक्षेपित होकर वापस आने वाला प्रकाश उस स्थान पर अन्य जगहों के मुकाबले में अधिक क्षीण होता है जबकि परावर्त्तित प्रकाश कमजोर नहीं पड़ने पाता है (§ २०९)।

१ समुद्र उस वक्त अत्यन्त मनोरम नीले रंग का दीखता है जब यह बिलकुल स्निग्ध शान्त हो, आकाश चमकीले नीले वर्ण का हो और सूर्य बादलों की ओट में हो ताकि समुद्र साये में पड़े।

क्या पेंदे की रेत पानी में से होकर सीधे ही चमकती है और क्या पानी के अन्दर के रेत के टीले दूर से अपने रंग द्वारा पहचाने जा सकते हैं ? मेरे निज के अनुभव के अनुसार ऐसा नहीं हो सकता, और न ही ऐसे व्यक्ति के लिए जो किसी ऊँचे टीले का समुद्र तट से प्रेक्षण कर रहा हो। रेत केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब पानी बहुत ही उथला हो, शायद ४ से लेकर ८ इंच तक गहरा। रेत के टीलों की स्थिति ठीक यहीं पर निर्मित होने वाली लहरों के कारण मालूम पड़ जाती है, और इस कारण भी कि टीलों की पंक्तियों के बीच पानी की सतह अधिक स्निग्ध होती है (§ २१०)।

एक अद्भुत बात यह है कि क्षितिज के निकट समुद्र पर एक भूरे रंग का हाशिया मौजूद होता है जो करीब-करीब नीले रंग के मानिन्द हो सकता है (या नीले रंग का होना है जो अधिक गहरे नीले रंग की भाँति दीख सकता है), इसकी चौड़ाई आधी डिग्री से अधिक नहीं होती। टीले को छोड़कर उसे देखने के लिए ज्यों ही हम समुद्रतट पर जाने को उद्यत होते हैं त्यों ही यह हाशिया विलुप्त होना शुरू हो जाता है और तट पर पहुँचने पर यदि हम तनिक झुकते हैं तो यह पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह विपर्यास-जनित हाशिया नहीं है (§ ९१)। सम्भवतः यह इस कारण उत्पन्न होता है कि समुद्र अपेक्षाकृत कम दीप्तिमान् होता है, वायु द्वारा होने वाले परिक्षेपण की वजह से दूरी पर यह नीलापन लिये दीखता है[1] (§ १७३)। समुद्र-तट से इतने फासले पर समुद्र का जल कम गँदला होना चाहिए; इसलिए, यदि इतनी ऊँचाई पर खड़े हों कि उतनी दूर का पानी देख सकें तो वहाँ का अधिक स्वच्छ पानी अनायास ही तुरन्त पहचाना जा सकता है।

थोड़ा और दिन चढ़ने पर सूर्य आगे बढ़ चुका होता है, तब तीसरे पहर, उस दिशा में जिधर से सूर्य चमकता है, हम जगमग करती सहस्रों चिनगारियाँ-सी देख सकते हैं। स्वयं सूर्य का परावर्तित प्रतिबिम्ब हम नहीं देख सकते क्योंकि हम पानी पर सतह के अत्यन्त ही निकट की दिशा से देखते होते हैं; अव्यवस्थित रूप से तरङ्गित सतह से प्रतिबिम्बित विशाल प्रकाश-स्तम्भ के एक अंश को ही हम देख पाते हैं। उस दिशा में समुद्र हलके भूरे, करीब-करीब सफेद, रंग का दीखता है।

सूर्यास्त के उपरान्त, पश्चिम दिशा में समुद्र तेज चमक तथा सुनहले रंग के अलका बादलों के आवरण को प्रतिबिम्बित करता है; इसकी ऊर्मिल सतह तथा इसके चञ्चल

१ यह हाशिया उन दिनों भी स्पष्ट दिखलाई पड़ता है जब आकाश नीरस, भूरे रंग का होता है, हवा औसत वेग की और समुद्र गहरे मटमैले रंग का होता है।

प्रतिबिम्बन आकाश के पश्चिमी भाग के औसत रंग प्रदर्शित करते हैं। उत्तर और दक्षिण की ओर आकाश का रंग हल्का होता है और समुद्र की रंग-आभा कम चमकीली होती है। हमारी निगाह बार-बार पश्चिम की रंग-गरिमा द्वारा आकृष्ट होती है। सुनहले-पीत वर्ण के बादलों के दर्मियान यत्र-तत्र नीले आकाश का टुकड़ा दीख जाता है—इसका नीला रंग विपर्यास के कारण आश्चर्यजनक रूप से सपृक्त दीखता है। शनैः-शनैः आकाश के रंग रक्तिम वर्ण में परिणत होते जाते हैं और समुद्र उनका अनुगमन करता है, जबकि ऊँची लहरों का फेन विपर्यास के कारण बैंगनी दीखता है। ठीक *अग्रभूमि में गीली रेत का एक सकरा-सा भाग है जिसमें आकाश के कुछ भाग के प्रति-*बिम्ब स्निग्ध और पूर्ण (बिना स्थानान्तरित हुए) दीखते हैं—पहले एक मनोहर स्वच्छ नीले रंग के, फिर बाद में मृदु हरे वर्ण के। अन्त में, पश्चिम के अलका बादलों पर अब रोशनी नहीं पड़ने पाती, उनके रंग की आभा गहरे बैंगनी वर्ण की हो जाती है, और इसी प्रकार समुद्र के भी रंग बदलने जाते हैं, किन्तु इन शान्तिप्रद सान्ध्यकालीन रागरंगों में, समुद्र तट की गीली रेत उत्फुल्ल नारङ्गी रंग की धारी-सी अङ्कित करती है।

३. तेज हवा उठ रही है, आकाश भूरे रंग का है—समूचे समुद्र पर उभड़ती हुई लहरों के शृंग फेनिल हो रहे हैं, तट के सहारे झाग की चार-पाँच पंक्तियाँ बन गयी हैं, दक्षिण-पश्चिम से हवा सामने की लहरों का पीछा करती हुई आती है। बादलों की तरह ही समुद्र भूरे रंग का है, तनिक हरा मिश्रित भूरा। तट के निकट, लहरों को हम पृथक्-पृथक् देख पाते हैं और तब हमें पता चलता है कि उनके रंग का हरा अंश उनके अग्रभाग के ढाल से उत्पन्न होता है जो बहुत थोड़ा प्रकाश परावर्तित करता है, किन्तु भीतर के परिक्षेपण के कारण यह भूरा-हरा प्रकाश उत्सर्जित करता है। पानी अत्यन्त गँदला मालूम पड़ता है; क्योंकि मथ उठने के कारण इसमें ढेर-सी रेत तैरती रहती है। समुद्र दक्षिण-पश्चिम की ओर, जिधर से हवा आ रही है, सबसे अधिक अदीप्तिमान् दीखता है; दक्षिण की ओर, और विशेषतया उत्तर की ओर, इसका रंग हलका हो जाता है, करीब-करीब भूरे आकाश की भाँति, यद्यपि उसके मुकाबले में समुद्र का रंग थोड़ा गहरा ही पड़ता है (इस दशा में हम लहरों को समानान्तर दिशा में देखते होते हैं)। क्षितिज के निकट समुद्र अधिक नीलापन लिये हुए रहता है, जो कि नीचे स्थित गहरे वर्ण के बादलों का रंग होता है, और लम्बे फासले के परिक्षेपण के कारण ही यह रंग उत्पन्न होता है; जबकि सिर के ऊपर ये बादल सामान्यतः चमकीले श्वेत या गहरे भूरे रंग के होते हैं; और फिर क्षितिज पर नीले हाशिये की घटना

विपर्यास को और भी अधिक प्रखर बना देती है (पृष्ठ ३८८)। भूरे आकाश में यदि कोई इक्का-दुक्का गहरे रंग का बादल प्रगट होता है तो समुद्र की सतह पर गहरे नीले-भूरे रंग का एक अस्पष्ट स्थानान्तरित प्रतिबिम्ब पहचान में आ जाता है। क्षितिज की सीमारेखा कहीं पर भी स्पष्ट नहीं हो पाती; विशेषतया दक्षिण और उत्तर में लहरों के झाग द्वारा उत्पन्न पानी की नन्ही-नन्ही बूंदों की फुआर हवा में उलराती है जो हमारी दृष्टि-सीमा को घटा कर चन्द मीलों तक ही सीमित कर देती है और फासले पर समुद्र और हवा को एक दूसरे के साथ समिश्रित कर देती है।

मौसम के साफ़ होने, और उत्तरी-पश्चिमी वायु के बहने पर दशा-स्थिति बहुत कुछ वैसी ही होती है जैसी अभी बतलायी गयी है, किन्तु आकाश में अनेक नीले खित्ते तथा श्वेत बादल दीखते हैं जो सूर्य से प्रकाशित होने के कारण चकाचौंध उत्पन्न करते हैं (वायु-जनित अनुदर्शन के कारण इनका हाशिया हलका पीतरंजित दिखलाई पड़ता है, (§ १७३), और इनके अतिरिक्त निलछौंवे रंग की राशियाँ भी दीखती हैं। दिक्-सूचक की सभी दिशाओं मे, समुद्र में २०° से लेकर ३०° तक की कोणीय ऊंचाई के आकाश के औसत रग प्रतिविम्बित होते हुए दीखते हैं। इस प्रतिबिम्बन में केवल बड़े आकार की राशियाँ ही पहचानी जा सकती हैं, जबकि सूर्य से प्रकाशित बादल सर्वाधिक प्रमुख दीखते हैं, और अदीप्तिमान्, विक्षुब्ध समुद्र पर ये चमकीली रोशनी फेंकते हैं।

४. तूफान—मैं टीलों और मकानों के पीछे ही हूँ, किन्तु अभी से उफनते हुए समुद्र की गर्जना मुझे सुनाई दे रही है। ऊँचे टीले से लहरो के फेन का विहगम दृश्य मुझे दिखाई देता है—समुद्र का दो तिहाई से अधिक भाग उबलती हुई झाग से ढका है, लहरों के शृंग श्वेत दीखते है, जबकि लहरों के दर्मियान की जगह में धूसर रंग की धारियो के जाल से बिछे हैं। सदा की तरह तरङ्गों के अग्रपार्श्व पश्चिम की ओर, उत्तर तथा दक्षिण की तुलना में, अधिक अदीप्तिमान् हैं और इस कारण पश्चिम दिशा का दृश्य अधिक चटकीला और विपर्यास से अधिक परिपूर्ण दीखता है। अशान्त समुद्र में मन्द प्रकाश के पानी में से हर तरफ फेनिल लहरें पृथक्-पृथक् उठती हुई दिखलाई पड़ती हैं। बहुत दूर, दक्षिण दिशा में, सूर्य से प्रकाशित एक लकीर स्पष्ट दिखलाई देती है—झागवाली सतह पर चकाचौंध उत्पन्न करनेवाले श्वेत प्रकाश की रेखा, जो शुरू में अत्यन्त सँकरी तथा लम्बी दीखती है और ज्यों-ज्यों यह निकट आती है त्यों-त्यों यह एक विस्तृत क्षेत्र में फैलती जाती है। बालू का रग उन स्थलों पर अत्यन्त स्पष्ट उभरता है जहाँ झाग मौजूद नहीं होता, और सूर्य से प्रकाशित समुद्र गहरे शेड के बादलों का

प्रतिबिम्बन करता है। प्रकाश की इस प्रकार की व्यवस्था में, नीचे से परिक्षेपित हो कर वापस आने वाला प्रकाश यथासम्भव प्रबलतम होता है—इसलिए भी यह और अधिक प्रबल होता है कि उफनती हुई लहरें रेत की ढेर-सी राशि को मथ देती हैं जो पानी में उतराती रहती है। कुछ भागों में आकाश अत्यन्त गहरे रंग का होता है, और कुछ भागों में अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशमान् और कुछ चित्ते नीले रंग के भी होते हैं। समुद्र के स्थानान्तरित प्रतिबिम्बन अभी भी पहचाने जा सकते हैं यद्यपि केवल बहुत ही अस्पष्ट तौर पर। प्रमुख दृष्टि-अनुभूति तो पानी के झाग की होती है।

वायु और बादलों की हर सम्भव दशा में समुद्र पर प्रकाश और वर्ण का अध्ययन करिए।

पथरीले तथा रेतीले समुद्रतट की रंग-आभा की तुलना कीजिए। स्नान करते समय भी समुद्र के रंग की जाँच कीजिए। लहरों को समुद्र की ही दिशा में नहीं वल्कि तट की दिशा में देखिए। स्नान करनेवाले अन्य व्यक्तियों की छाया देखिए और स्वयं अपनी भी। जल-दूरबीन का उपयोग कीजिए।

यदि वन्दरगाह के किसी प्लैटफार्म पर टहलने का अवसर मिले, तो वहाँ जाकर दो प्लैटफार्म के बीच के समुद्र की तुलना बाहर के खुले समुद्र के साथ कीजिए। आकाश की दशा तो समान ही रहती है; अन्तर, समुद्र की सतह के उद्वेलन तथा उसके झवैलेपन के कारण उत्पन्न होता है।

समुद्र की सतह की सामान्य दीप्ति की तुलना सन्ध्या को देर से, तथा रात्रि में कीजिए, यह समय इसके लिए बढ़िया रहता है क्योंकि रंगों की विभिन्नता के कारण व्यवधान उपस्थित नहीं होने पाता तथा अपेक्षाकृत नन्हे ब्योरे हमारा ध्यान बँटा नहीं पाते।

विपर्यास घटना के प्रति सावधान रहिए। आकाश तथा समुद्र के विभिन्न भागों की तुलना करने के लिए एक नन्हें से दर्पण का इस्तेमाल करना लाभप्रद होगा (§१७६)। तुलना किये जाने वाले दोनों क्षेत्रों A तथा B के दर्मियान अपना हाथ या अन्य कोई अदीप्तिमान् वस्तु रखिए; इस प्रकार A तथा B दोनों एक क्षेत्र के हाशिये पर देखे जा सकेंगे। नाइग्रोमीटर का उपयोग करिए!

कभी भी बादलों की छाया और उनके प्रतिबिम्ब के बीच धोखा न खाइए; ये पूर्णतया भिन्न स्थानों पर पड़ते हैं। आकाश में जब अलग-अलग बादल मौजूद होते हैं, तब समुद्र पर प्रकाशदीप्ति का वितरण प्रतिबिम्बन और छाया के सम्मिश्रण पर आश्रित होता है।

२१२. जहाज पर से देखे जाने पर समुद्र का रंग

समुद्र तट से दीखने वाले दृश्य की तुलना में, इस दशा में एक बड़ा अन्तर है, ऊँची लहरों का अनुपस्थित होना। इस कारण प्रेक्षक के गिर्द समूचा दृश्य बहुत अधिक संमित[1] बन जाता है। किन्तु यह समिति हवा की वजह से विगड़ जाती है जो लहरों को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है; जहाज के धुएँ की वजह से, जो एक गहरे रंग के बादल जैसा प्रभाव डालता है; तथा जहाज के पृष्ठदण्ड[2] से उत्पन्न होने वाले झाग की वजह से, तथा सूर्य की वजह से भी।

गहराई से वापस लौटने वाले प्रकाश के रंग का प्रेक्षण सर्वोत्तम तरीके पर जहाज के पीछे तथा उसके निकट किया जा सकता है, क्योंकि वहाँ पर हवा के बादल निरन्तर नीचे की ओर भागते रहते हैं और तब ये धीरे-धीरे ऊपर उठते हैं। इन स्थानों पर एक सुन्दर हरा-नीला रंग स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, वैसा ही रंग जैसा जहाज के गिर्द मँडराने वाले सूँसो के सफेद रंगवाले उदर से परावर्तित होता दिखलाई पड़ता है, या पानी में गिरने वाले श्वेत रंग के पत्थरों से परावर्तित होने वाले रंग जैसा। रग का यह शेड प्रत्येक महासागर में दिखलाई देता है, समुद्र का रग समष्टि रूप से चाहे नीला-आसमानी हो या हरा। यह पानी के यथार्थ अवशोषण द्वारा पीले, नारङ्गी तथा लाल रंग के प्रकाश अवयवों के अपहरण के कारण उत्पन्न होता है; बैंगनी किरणें प्रेक्षक से दूर परिक्षेपित हो जाती है, अत: केवल हरा अवयव बचा रह जाता है जो यह विशिष्ट रंग प्रदान करता है। वे भाग जहाँ उफनती हुई हरी राशि में फेन की मात्रा कम होती है, अधिकाश एक प्रकार के नील-लोहित वर्ण के होते हैं जो हरे रग का अनुपूरक होता है और जिसे हम मानसिक विपर्यास का रंग मान सकते हैं (§९५)।

बन्दरगाहों के निकट या बड़ी नदियों के मुहानों के उथले समुद्र का पानी अत्यन्त गँदला होता है। इस कारण प्रकाश की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा नीचे से परिक्षेपित होकर वापस लौटती है, अतः यहाँ परिस्थितियाँ, कुछ हद तक वैसी ही होती हैं जैसी जहाज के पीछे उठने वाले हवा के बबूलों की राशि में से देखने के समय। हरे रंग की प्रधानता होती है, कदाचित् इसका कारण यह है कि नदी का पानी समुद्र में ह्यूमिक अम्ल तथा फेरिक यौगिक ले आता है (§२०७); उनका पीत वर्ण वाला अवशोपण पानी के नील-हरे रंग पर अध्यारोपित हो जाता है। इस किस्म के उथले हरे समुद्र

1. Symmetrical 2. Keel

पर शान्त दिनो मे बादलों की छाया शानदार नील-लोहित-बैंगनी रंग की उभरती है (§२१६)।

थोडी गहराई पर स्थित सफेद वस्तुओं द्वारा प्रदर्शित 'जल-वर्ण' आम तौर पर गहरे समुद्र के 'यथार्थ रग' से भिन्न होता है। इसकी छानबीन करने के लिए परावर्तित प्रकाश का परिहार करना आवश्यक है, या तो उदाहरण स्वरूप, लहर के अग्र भाग की ओर देखे या फिर § २०९ में बतलायी गयी किसी एक विधि का अनुसरण करे। गहरे समुद्र के इस 'यथार्थ रंग' या 'निज के रग' मे स्पष्ट अन्तर होते हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि किस समुद्र पर हम यात्रा कर रहे हैं; इनका प्रेक्षण, बहुत अच्छी तरह, इंग्लैण्ड से आस्ट्रेलिया की समुद्रयात्रा मे किया जा सकता है। सामान्यतः रगों का वितरण-क्रम निम्नलिखित मिलता है—

जैतूनी हरा	उत्तरी अक्षांश ४०° से उत्तर।
नील रग	उत्तरी अक्षांश ४०° और ३०° के दर्मियान।
पार समुद्रिक रंग (अल्ट्रामैरीन)	उत्तरी अक्षांश ३०° से दक्षिण।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जैतूनी हरे रग के छिट-फुट प्रदेश निम्न अक्षांशों तक पहुँच जाते हैं। इस बात का पता लगाना उचित होगा कि किसी विशेष स्थान पर यह हरा रग ऋतुओं के अनुसार बदलता है या नहीं; क्योंकि इसके पक्ष मे कतिपय सकेत मिल भी चुके है। कुछेक गहरे समुद्रों के हरे रग की सन्तोषजनक व्याख्या अभी तक नहीं की जा सकी है। प्रेक्षणों से पता चला है कि इन समुद्रो के पानी मे तैरते हुए जर्रे भारी मात्रा मे पाये जाते है; किन्तु जैसा कि गणना से पता चलता है, पानी द्वारा सामान्य अवशोषण तथा बडे आकार के जर्रों द्वारा होनेवाला परिक्षेपण, परस्पर मिलकर गहरे नीले से लेकर हलके नीले तक, हर तरह के शेड उत्पन्न कर सकते हैं, किन्तु हरे रग का समाधान कभी भी इससे नहीं हो सकता। इस कारण कुछ लोग इसे द्विकोपीय 'अल्जीआ', तथा ऐसे पक्षियों के बीट के कारण उत्पन्न हुआ मानते हैं जो 'अल्जीआ' खाते हैं; अन्य लोग इसे परिक्षेपण करने वाले कणों के पीले रग के कारण उत्पन्न हुआ मानते हैं, जो, मिसाल के तौर पर, पीली रेत के कण हो सकते हैं। सच्चाई जो कुछ भी हो, वर्ष की ऋतुओं के प्रभाव के सम्बन्ध मे किये गये प्रेक्षण निश्चित रूप से इस बात की ओर इङ्गित करते हैं कि इस रंग की उत्पत्ति कार्बनिक पदार्थों से होती है।

कुछ दुर्लभ अवस्थाएँ मिलती हैं जब समुद्र-जल दूधिया धवल दीखता है। स्पष्ट है कि सतह के निकट तैरते हुए जर्रों की बहुत बड़ी संख्या मौजूद होगी जो सबसे ऊपर

भी राहों में परिक्षेपण करते हैं और यह परिक्षेपण अवशोषण पर पूर्णतः हावी हो जाता है।

२१३. झीलों का रंग

पर्वतीय दृश्यों में झील के रंग विपुल सौन्दर्य के स्रोत होते हैं। उनकी गहराई प्रायः इतनी काफी होती है कि पेंदे की जमीन के प्रभाव का शमन हो जाता है। अतः इस दृष्टि से ये समुद्र के सदृश होती हैं। फिर भी समुद्र से ये इस माने में भिन्न होती हैं कि ये अपेक्षाकृत बहुत अधिक शान्त होती हैं और इसका कारण है उनकी सतह का बहुत छोटा होना तथा किनारे के पहाड़ों की वजह से हवा के वेग से उनका सुरक्षित रहना। अतः झील की सतह से होने वाला नियमित परावर्तन, समुद्र के मुकाबले में, अधिक महत्वपूर्ण योग देता है; सूर्यास्त के रंगों का प्रतिबिम्बन उतना बढ़िया अन्यत्र कहीं नहीं होता जितना झील में, और निश्चय ही पर्वतीय झीलों के पानी की विविध रंग-आभा अंशत. तटभूमि के प्रतिबिम्बन के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु तटभूमि यदि ऊँची तथा अन्धकारपूर्ण हुई तो सतह के प्रतिबिम्बन का लोप हो जाता है और इसके बजाय झील के विस्तृत क्षेत्र उस प्रकाश का रंग प्रदर्शित करते हैं जो लगभग लम्बवत् दिशा में पानी में प्रविष्ट होने के उपरान्त पुनः परिक्षेपित होकर वापस आता है। § २०९ में बतलायी गयी विधियों का उपयोग करके इन 'व्यक्तिगत रंगों' के बारे में कुछ जानकारी हासिल की जा सकती है। हर झील के लिए ये रंग भिन्न होते हैं। और उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—(१) विशुद्ध नीला, (२) हरा, (३) पीत-हरा, (४) पीत-बादामी।

प्रयोगशालाओं के सूक्ष्म परीक्षण से पता चलता है कि 'नीले' रंग की झील का पानी लगभग पूर्णतः शुद्ध होता है तथा इसका यह रंग पानी में स्पेक्ट्रम के नारङ्गी तथा लाल अवयवों के अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है। द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वर्ग के रंगों की उत्पत्ति का समाधान पानी में मौजूद लौह-यौगिकों तथा ह्यूमिक अम्ल की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा तथा बादामी रंग के कणों द्वारा होने वाले परिक्षेपण से हो जाता है (§ २०७)।

अक्सर छोटी झीलों का हरा रंग उनके अन्दर भारी मात्रा में उगने वाले सूक्ष्म आकार के हरे अल्जीआ के कारण उत्पन्न होता है; प्रायः जाड़े में भी, जबकि वृक्षों की पत्तियाँ झड़ चुकी होती हैं और सभी कुछ बर्फ से ढका होता है, ये झीलें स्पष्ट रूप से हरे रंग की दीखती हैं।

लाल रंग सूक्ष्म आकार के अन्य जीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं, जैसे बेगिआटोआ,

आसिलैरिया एवेस्सेन्ता, स्टेप्टर इग्नेयस, डापनिया प्यूलेक्स, यूग्लेना सैंग्यूनिआ या पेरिडिनिया।

ध्रुवण के लिए देखिए § २१४।

२१४. पानी के रंग का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण

'निकल', जैसा कि हमें पता है, केवल उन्हीं किरणों को अपने में से गुजरने देता है जिनकी कम्पन-दिशा 'निकल' के लघु कर्ण के समानान्तर होती है। चूंकि पानी से परावर्तित होने वाले प्रकाश में कम्पन मुख्यतः क्षैतिज दिशा में होते हैं, अतः निकल को इस तरह रखें कि इसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा में हो, तो हम इस परावर्तित प्रकाश की चमक कम कर सकते हैं, और यदि ऊर्ध्व दिशा के साथ ६५° का कोण बनानेवाली दिशा में प्रेक्षण करें, तो चमक और भी कम हो जाती है (पानी के लिए ध्रुवक कोण का मान ६५° है)।[1] हलकी वर्षा के बाद सड़क पर पड़े पानी के छोटे-से गड्ढे के लिए यह प्रयोग कीजिए। इससे लगभग ५ गज की दूरी पर खड़े होइए, और 'निकल' को इस तरह पकड़िए कि इसका लघु कर्ण ऊर्ध्व दिशा में हो। आप आश्चर्यजनक प्रभाव पायेंगे, क्योंकि अब आप गड्ढे की तली लगभग इतनी अच्छी तरह देख सकते हैं मानो वहां पानी कतई हो ही नहीं। निकल को बारी-बारी से क्षैतिज तथा ऊर्ध्व तल में घुमाइए, आप देखेंगे कि पानी का गड्ढा क्रमशः छोटा और बड़ा होता प्रतीत होता है। 'निकल' सामान्यतः गीले समुद्रतट, सेवार, आग्नेय चट्टानों, भीगी सड़क तथा रंगीन सतह, और साराश यह कि हर ऐसी वस्तु के रंग-सौष्ठव में, जो दृश्यक्षेत्र में चमकती हैं, अभिवृद्धि कर देता है। कारण यह है कि सतह से परावर्तित प्रकाश के उस अंश का यह अपहरण कर लेता है जिसके कारण वस्तु के निज के रंग में श्वेत का सम्मिश्रण हुआ करता है।

शान्त समुद्र के धूप वाले भाग, तथा बादलों के छाया वाले भाग, के बीच का विपर्यास, ऊर्ध्व कम्पन की स्थिति में रखे 'निकल' द्वारा तीव्रतर हो जाता है। इस दशा में सतह से परावर्तित होने वाली किरणों का शमन हो जाता है, अतः परिक्षेपित प्रकाश के अन्तर अधिक स्पष्टता के साथ प्रगट होते हैं।

'निकल' समुद्र के तेल से ढके भाग तथा शेष भाग के बीच भी विपर्यास की अभिवृद्धि करता है (§ २११); कदाचित् इसका कारण यह है कि तरंगों पर, स्निग्ध सतहों

1. E. O. Hulbert, J. O. S. A., 24, 35, 1934. इस तरह के प्रेक्षण पोलरायड की मदद से भी किये जा सकते हैं; किन्तु इस उपकरण में स्वयं अपना रंग भी मौजूद होता है जो सही रंगों के प्रेक्षण में व्यवधान डालता है।

के मुकाबले में, विभिन्न कोण पर परावर्तन होता है या फिर इस कारण कि परावर्तन द्वारा होने वाले ध्रुवण में तेल की परत द्वारा व्यवधान उपस्थित हो जाता है।

अब हवा चलती है तो 'निकल' का प्रभाव विशेष स्पष्ट होता है। निकल के लघु कर्ण को ऊर्ध्व दिशा में रखकर उसमें से, उमड़ती हुई लहरों को, देखिए, लघुकर्ण को क्षैतिज दिशा में रखने के मुकाबले में अब समुद्र अधिक अशान्त प्रतीत होता है। क्योंकि ऊर्ध्व स्थिति में 'निकल' परावर्तित प्रकाश को रोक देता है, अतः समुद्र की सतह अधिक अदीप्तिमान् हो जाती है जबकि लहरों के फेन की धवल चमक पूर्ववत् बनी रहती है, अतः अब यह अधिक स्पष्ट प्रतीत होती है।

'निकल' को सही स्थिति में व्यवस्थित करें तो अक्सर क्षितिज अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। सूर्य की दिशा के समकोण देखें तो 'निकल' को ऊर्ध्व स्थिति में रखने पर समुद्र निश्चित रूप से अधिक अदीप्तिमान् हो जाता है और आकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशवान् (§ २११)। इसी कारण इन दिनों सेक्सटैण्ट में कभी-कभी 'निकल' फिट किये जाते हैं।

निम्नलिखित प्रयोग उष्ण कटिबंध के गहरे समुद्रों से परिक्षेपित प्रकाश के ध्रुवण से सम्बन्ध रखता है—इन समुद्रों का पानी स्वच्छ होता है।[1] कल्पना कीजिए कि प्रयोग ऐसे वक्त किया जा रहा है जब सूर्य आकाश में ऊँचाई पर स्थित है और पानी की सतह शान्त है। सूर्य की ओर पीठ करके खड़े हो जाइए और पानी की ओर लगभग ध्रुवक-कोण की दिशा में निकल में से देखिए जिसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा में स्थित हो। परावर्तित प्रकाश रुक जाता है और आप प्रकाश की मनोरम नीली चमक को देख सकते हैं जो परिक्षेपण के उपरान्त नीचे से आती है। 'निकल' को इस तरह घुमाइए कि लघुकर्ण क्षैतिज हो जाय; अब समुद्र कम नीला दीखेगा, बनिस्वत उस दशा के, जबकि उसे बिना 'निकल' के देखते।

यह प्रयोग उस वक्त भी कीजिए जब सूर्य थोड़ी ही ऊँचाई पर हो, इस बार भी 'निकल' को इस तरह पकड़िए कि लघुकर्ण ऊर्ध्व स्थिति में हो; तथा क्षैतिज तल का अपना दिगंश बदलिए। सूर्य के रुख तथा उसकी विपरीत दिशा के रंग की तुलना विशेष रोचक सिद्ध होती है। सूर्य के रुख गहरा नील वर्ण आप को दिखलाई पड़ता है क्योंकि इस वक्त सूर्य किरणों की समकोण रेखा में आप देखते हैं, अतः न केवल परावर्तित प्रकाश रुक जाता है बल्कि पानी की गहराई से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश भी आँख तक नहीं पहुँच पाता। सूर्य की उलटी ओर, रंग चमकीला नीला होता है क्योंकि अब

1. C—V. Raman; Proc. R. Soc. 101A, 64,1922

बहुत कुछ सूर्य-किरणों की दिशा में आगे बढ़ते होते हैं और परिक्षेपित प्रकाश जो आँख की ओर वापस आता है ध्रुवित नहीं होता। ये दोनों प्रयोग सिद्ध करते हैं कि समुद्र से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश बहुत कुछ मात्रा में ध्रुवित होता है, जैसे कि वायु से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश (§ १८०), अतः परिक्षेपण अवश्य सूक्ष्म कणों द्वारा होता है, कदाचित् स्वयं पानी के अणुओं द्वारा।

'निकल' का उपयोग करके नीले जल की झील से तथा एक बादामी रंग की झील से वापस, परिक्षेपित होने वाले विकिरण के सापेक्षिक अन्तर का पता लगाया गया है। इस अन्तर का प्रेक्षण करने के लिए, जल-दूरबीन की सहायता से परावर्तित प्रकाश का परिहार करते हुए सूर्य की दिशा में अवलोकन करते हैं (§ २०९)। 'निकल' से यह पता चलता है कि नीले रंग वाली झील में परिक्षेपण से वापस आने वाले प्रकाश का कम्पन क्षैतिज दिशा में होता है और ऐसी ही आशा भी की जाती है, जबकि बादामी रंग वाली झील के बड़े आकार के कण करीब-करीब अध्रुवित प्रकाश ही परिक्षेपित करते हैं, जिसमें पानी से बाहर आने पर, ऊर्ध्व दिशा वाले कम्पनों का अल्पमात्रा में बाहुल्य रहता है (बशर्ते जल-दूरबीन के सिरे पर काँच न लगा हो)।

२१५. पानी के रंग की जाँच के लिए मापश्रेणी

इसके लिए सामान्यतः फोरेल की मापश्रेणी उपयोग में लायी जाती है। पहले क्यूप्रिक सल्फेट के मणिभों का एक नीला घोल, और पोटैसियम क्रोमेट का एक पीला घोल तैयार कीजिए—

० ५ ग्राम क्यूप्रिक सल्फेट, तथा ५ घ० सेण्टीमीटर अमोनिया पानी में मिलाकर पानी डालकर १०० घ० सेण्टीमीटर घोल तैयार कर लीजिए।

० ५ ग्राम पोटैसियम क्रोमेट को १०० घ० सेण्टीमीटर पानी में घोल लीजिए। अब निम्नलिखित सम्मिश्रण तैयार कीजिए—

(i) १०० नीला + ० पीला
(ii) ९८ „ + २ „
(iii) ९५ „ + ५ „
(iv) ९१ „ + ९ „
(v) ८६ „ +१४ „
(vi) ८० „ +२० „
(vii) ७३ „ +२७ „
(viii) ६५ नीला + ३५ पीला
(ix) ५६ नीला + ४४ पीला
(x) ४६ नीला + ५४ „
(xi) ३५ „ + ६५ „
(xii) २३ „ + ७७ „
(xiii) १० „ + ९० „

प्रायः इनसे भी अधिक गहरे बादामी रंगों की आवश्यकता पड़ती है, विशेषतया झीलों के रंग की जांच के लिए। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए, निम्नलिखित विधि से बादामी रग का घोल बनाया जा सकता है।

०.५ ग्राम कोबाल्ट सल्फेट+५ घन सेण्टीमीटर अमोनिया+पानी, ताकि घोल का आयतन १००. घ० सेण्टीमीटर हो जाय।

इस घोल को फोरेल के हरे घोल (अवधारण क्रम XI) के साथ निम्नलिखित अनुपातों में मिलाइए—

(११)	१०० हरा	+	० बादामी	(११–७)	७३ हरा	+	२७ बादामी
(११–२)	९८ हरा	+	२ बादामी	(११–८)	६५ ,,	+	३५ ,,
(११–३)	९५ ,,	+	५ ,,	(११–९)	५६ ,,	+	४४ ,,
(११–४)	९१ ,,	+	९ ,,	(११–१०)	४६ ,,	+	५६ ,,
(११–५)	८६ ,,	+	१४ ,,	(११–११)	३५ ,,	+	६५ ,,
(११–६)	८० ,,	+	२० ,,				

लगभग ½ इंच व्यास की परखनली में ये मिश्रण रखे जा सकते हैं। इस माप-श्रेणी के इस्तेमाल में प्रमुख कठिनाई यह मालूम करने की है कि पानी की सतह का कौन-सा स्थल तुलना का आदर्श प्रमाप माना जाय। आम तौर पर पानी के स्वयं 'यथार्थ रंग' को ही आदर्श प्रमाप मान लेते हैं (§§ २०९, २१२)।

दोनों में से कोई भी मापश्रेणी पूर्णतः सन्तोषप्रद नहीं है। एक अन्य तरीका यह है कि ऐसे रंजक तैयार करें जो इन रंगों से मेल खाएँ और फिर भविष्य में तुलना करने के लिए इन्हें रख छोड़ें।

२१६. पानी पर छाया

'...कि जब कभी स्वच्छ जल पर या कुछ हद तक गँदले पानी पर भी, हम छाया का प्रेक्षण करते हैं तो यह भूमि पर पड़ने वाली छाया की भाँति धूप में सामान्य रूप से चमकने वाली सतह की प्रदीप्ति आभा को थोड़ा घटा भर नहीं देती, बल्कि यह पूर्णतः भिन्न रंग का स्थल उपस्थित करती है जो अपनी परावर्त्तन क्षमता के कारण अगणित रंग-शेड धारण कर सकता है और कुछ परिस्थितियों में यह एकदम विलुप्त भी हो सकता है।'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

पानी के धरातल से आने वाला प्रकाश अंशतः उस धरातल से प्राप्त होता है

और अतः उनके नीचे से, अतः आपतित किरणों को रोक देने पर ये दोनों ही अवयव बदल जाते हैं।

१. परावर्त्तित प्रकाश पर छाया का प्रभाव—'धरातल जब तरंगायित होता है, तो दर्शक के दोनों ओर एक परिवर्त्ती दूरी तक, और सूर्य और उसके दर्मियान के एक खास कोणीय मान के लिए जो तरङ्गों के आकार और शक्ल पर निर्भर करता है, प्रत्येक तरङ्ग सूर्य का एक छोटा बिम्ब उसके लिए प्रतिबिम्बित करती है (देखिए § १८)। इसी कारण अक्सर चकाचौंध उत्पन्न करने वाले प्रकाश के विस्तृत क्षेत्र समुद्र पर देखे जाते हैं। यदि कोई वस्तु सूर्य और इन तरङ्गों के बीच में आती है तो यह सूर्य को प्रतिबिम्बित करने की उनकी शक्ति का अपहरण कर लेती है, अतः उनकी समस्त दीप्ति का अपहरण हो जाता है। इसीलिए बीच में आनेवाली वस्तु, ऐसी जगह पर अत्यन्त गाढ़ी छाया डालती है जो ठीक वस्तु की शक्ल की होती है और ठीक वास्तविक छाया वाले स्थल पर ही पड़ती है'।—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

रस्किन के शब्दों की सत्यता की परख सबसे अच्छी तरह उस वक्त की जा सकती है जबकि तेज हवा वाली रात्रि में, नहर का पानी (मिसाल के तौर पर) बहुत अधिक उद्वेलित हो रहा हो। नहर के किनारे चलते हुए हम सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखते हैं जो अनियमित तरीके से लुपझुप करते हुए प्रकाशस्तम्भ सरीखा दीखता है और इसके ऊपर लगातार छायाएँ फिसलती-सी रहती हैं—उदाहरण के लिए, लैम्प और नहर के दर्मियान के वृक्षों की छाया। सर्वाधिक अनुकूल दृष्टिबिन्दु की स्थिति पर ही पहुँचने पर हम पानी पर पड़ने वाली छाया की उपस्थिति का अनुभव कर पाते हैं, जो [illegible] [illegible] 'सान्द्र-कोण' के अन्दर से ही दृष्टिगोचर हो पाती है। [illegible]
व्यक्तियों से जो इस विषय में रुचि रखते थे, रस्किन ने इस प्रश्न पर [illegible]
विचार-विमर्श किया था कि इस [illegible]
है या नहीं। [illegible]

किन्तु यह अपनी छाया भी हमारी दिशा में तरङ्गित पानी पर डालती है तथा यहाँ भी उपर्युक्त विवेचन लागू होता है।

२. परिक्षेपित होकर वापस आनेवाले प्रकाश पर छाया का प्रभाव—गँदले पानी पर छाया स्पष्ट अङ्कित होती है; छाया की स्पष्टता की मात्रा पानी के गँदलेपन या उसकी स्वच्छता की प्रत्यक्ष सूचक होती है। हमारे जलमार्गों पर पड़ने वाली पुलों तथा वृक्षों की छाया पर ध्यान दीजिए। समुद्र-यात्रा में पानी पर अपनी छाया देखने का प्रयत्न कीजिए। आप इसे केवल उस तरफ़ देख पायेंगे जिधर जहाज़ ने पानी को उद्वेलित करके उसमें हवा के बबूले मिला दिये हैं, किन्तु उस ओर नहीं जिधर समुद्र स्वच्छ और गहरे नीले रंग का है। समुद्र की सतह पर बादलों की छाया का प्रेक्षण कीजिए।

छाया इस कारण दृष्टिगोचर होती है कि पानी में प्रविष्ट करने पर परिक्षेपित होकर जो प्रकाश वापस आता है, उसकी मात्रा सतह के छाया वाले भागों में अन्य भागों की अपेक्षा कम होती है। इसके प्रतिकूल, सतह से परावर्तित होने वाला प्रकाश क्षीण नहीं होने पाता, अतः यह अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इससे यह बात समझ में आती है कि जब आकाश नीले रंग का होता है तो क्यों समुद्र पर बादल की छाया अक्सर निलछौंवें रंग की बनती है, यद्यपि आसपास के हरे रंग के विपर्यास के कारण यह रंग थोड़ा नील-लोहित वर्ण के शेड का प्रतीत होने लगता है (§२०९, २११, २१२)। पानी की निर्मलता के अतिरिक्त प्रेक्षण की दिशा भी महत्त्व रखती है। अत्यन्त स्वच्छ पानी में स्नान करते समय आप को छाया नहीं दिखाई देगी; तनिक गँदले पानी में स्नान करते समय आपको केवल अपनी छाया दिखाई पड़ेगी, अन्य लोगों की नहीं; किन्तु अत्यन्त गँदले पानी में आप को सभी स्नान करने वालों की छाया दिखाई पड़ेगी। ध्यान दीजिए कि नहर के थोड़े-बहुत गँदले पानी पर पड़ने वाली खम्भे की छाया ठीक तरीके पर केवल तभी दिखलाई देती है जब जाकर आप उस धरातल में खड़े हों जो सूर्य और खम्भे से गुजरता है, अर्थात् जब आप आकाश के उस भाग की ओर देखते हैं जिधर सूर्य है। तब आपको प्रतीत होगा कि मानो एकाएक पानी पर छाया प्रगट हो गयी है। यह उसी तरह की घटना है जसी धुन्ध के सम्बन्ध में बतलायी गयी थी।

किञ्चित् गँदले पानी पर पड़ने वाली छायाएँ एक और विशिष्टता प्रदर्शित करती हैं; इनके हाशिये रंगीन होते हैं। हमारी ओर पड़ने वाला हाशिया निलछौंवें रंग का होता है और दूर वाला नारङ्गी वर्ण का होता है। इस घटना का प्रेक्षण प्रत्येक खम्भे, पुल या जहाज की छाया में किया जा सकता है। पानी में तैरते हुए धूल के अगणित कणों से

होने वाले परिक्षेपण के कारण ये रंग उत्पन्न होते हैं—इनमें से अनेक कण इतने छोटे होते हैं कि ये नीली किरणों का परिक्षेपण अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में करते हैं। अब हम चित्र १५८ में देखते हैं कि हमारी ओर के जर्रे एक अँधेरी पृष्ठभूमि के सम्मुख प्रभासित होते दीख पड़ते हैं, अतः ये हमारी आँख में निलछौंवे रंग का प्रकाश भेजते हैं; जबकि छाया की दूसरी ओर (वह हाशिया जो हमसे दूर पड़ता है) हम पेंदे से आनेवाला (या इर्द-गिर्द के पानी से परिक्षेपित हुआ) प्रकाश देख पाते हैं—यह प्रकाश नीली किरणों से वञ्चित हुआ रहता है तथा छाया-प्रदेश के अप्रकाशित जर्रों के कारण यह नारङ्गी वर्ण-रञ्जित हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह घटना उसी किस्म की है जैसी नीले आकाश तथा अस्त होते हुए पीत वर्ण के सूर्य की घटना (§१७२)। हाशिये के विपर्यास वाले दोनों रंगों के कारण हमारे नेत्र इसके लिए विशेष सुग्राही हो जाते हैं।
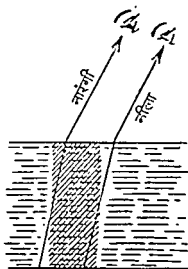
चित्र १५८—गँदले जल पर पड़नेवाली छाया के हाशियों पर रंग कैसे प्रगट होते हैं।

छाया के हाशिये के रंगों का प्रेक्षण, हर दृष्टि-बिन्दु से, तथा आपतित प्रकाश और छाया की विभिन्न दिशाओं के लिए कीजिए। इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि वनों के झुरमुट में प्रवेश करने वाली प्रकाश-किरण-शलाका जब स्वच्छ धारा के पानी पर गिरती है तो यह स्पष्ट रूप से निलछौंवें रंग की होती है; और पेंदे पर यह नारङ्गी वर्ण के प्रकाश का धब्बा बनाती है।

२१७. पानी पर बनने वाली हमारी छाया के गिर्द आभामण्डल (आरिएल) (प्लेट XV)

अपने सिर के आकार के चतुर्दिक् रवि-दीप्त जल में विकेन्द्रित होती हुई रेखाओं की ओर मैंने निहारा.......

मेरे अथवा अन्य किसी के सिर के आकार से रविदीप्त जल पर विकेन्द्रित होती हुई सुस्पष्ट प्रकाश-रेखाएँ।

वाल्ट ह्विटमैन, 'क्रासिंग ब्रुकलिन फेरी' (लीव्ज ऑव ग्रास)

इस मनमोहक घटना का सर्वोत्तम रूप में अवलोकन उस वक्त किया जा सकता है जब एक पुल से या जहाज के डेक से पानी की अशान्त उत्ताल लहरों पर पड़ने वाली अपनी छाया को हम देखें। हमारे सिर की छाया से सहस्रों चमकीली तथा काली रेखाएँ चारों ओर अपसृत होती हैं। यह आभामण्डल (आरिएल) केवल अपने सिर के गिर्द देखा जा सकता है (देखिए § १६८)। किरणें सब की सब बिलकुल ठीक एक ही बिन्दु पर केन्द्रित नहीं होती है, बल्कि लगभग उसके गिर्द में एकत्र होती हैं। एक और विलक्षण बात यह है कि छाया के गिर्द प्रकाशित भाग की सामान्य दीप्ति बढ़ जाती है।

इस तरह की कोई भी घटना शान्त पानी पर या सम तरङ्गों वाली सतह पर नहीं दिखलाई देती है; यह भली-भाँति केवल तभी देखी जा सकती है जब सतह पर पानी की छोटी-छोटी अव्यवस्थित ढेरियाँ-सी उठ रही हों। पानी को थोड़ा-बहुत गँदला अवश्य होना चाहिए; तट से जितनी ही अधिक दूरी पर होंगे या खुले समुद्र में, आभामण्डल उतना ही अधिक निस्तेज दीखेगा।[1]

व्याख्या इस प्रकार है—पानी की सतह की प्रत्येक उठान अपने पीछे प्रकाश या अन्धकार की एक लकीर फेंकती है; ये सभी लकीरें सूर्य और आँख को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर जाती हैं, अतः अनुदर्शन के कारण हम उन्हें प्रति-सूर्य बिन्दु पर मिलते हुए देखते हैं—अर्थात् अपने सिर के छाया-बिम्ब पर (§ १९१)।

कुछ अवसरों पर ये लकीरें इतनी स्पष्ट होती हैं कि प्रतिसूर्य बिन्दु से काफ़ी बड़ी कोणीय दूरी तक इन्हें देखा जा सकता है। किन्तु आम तौर पर प्रति-सूर्यबिन्दु पर ये सबसे अधिक स्पष्ट होती हैं, क्योंकि इस दिशा में हमारी दृष्टि या तो भलीभाँति पानी में से या छाया में पड़ने वाले पानी में से, होकर एक लम्बी दूरी तय करती है। प्रकाशित प्रति-सूर्यबिन्दु के इर्द-गिर्द की सामान्य प्रकाश-तीव्रता की वृद्धि का कारण कदाचित् यह है कि कणों द्वारा होने वाला परिक्षेपण, किरणों के पीछे की दिशा में, आड़ी दिशा की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है (§ १९१)।

इस किस्म का एक और आभामण्डल उस वक्त देखा जा सकता है जब हम किसी ऐसे एकाकी वृक्ष के साये में खड़े होते हैं जिसकी फैली हुई शाखाएँ नीचे पानी पर रोशनी और साया के धब्बे डालती हैं। इस दशा में पानी में प्रविष्ट होने वाली किरणें उसी प्रकार का प्रकाशीय प्रभाव उत्पन्न करती हैं जैसा सतह की विषमता से उत्पन्न होता है।

इस बात का अनुभव करना रोचक होगा कि वास्तव में प्रकाश-किरणें सूर्य और

1. C. V. Raman, loc. cit.

नेत्र को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर बिलकुल ही नही जाती क्योंकि वर्त्तन के फल-स्वरूप ये अल्प कोण मान पर विचलित हो जाती हैं। किन्तु इसके प्रतिकूल हमारी आँख पानी के अन्दर इनके गमन-पथ का अवलोकन करती है जो वर्त्तन के कारण विचलित हो चुका होता है, अत. इन सबके बावजूद, पानी मे गमन करने वाली किरण-शलाका का भाग हवा मे गमन करने वाली शलाका की सीध की दिशा मे ही दिखलाई पड़ता है।

२१८. जहाज के पार्श्व पर जल-रेखा की स्थिति

'...काष्ठ पर जलरेखा के रूप को बदलने मे तीन परिस्थितियाँ योग देती हैं—जब लहर पतली होती है, तब पानी मे से होकर लकड़ी का रंग थोड़ा दिखाई देता है; जब लहर स्निग्ध होती है तो लकड़ी का रग इसमे से कुछ-कुछ प्रतिबिम्बित होता है, और जब लहर विच्छिन्न होती है तो इसका झाग, लकड़ी पर जल की स्पर्श रेखा को बहुत कुछ अस्पष्ट तथा विकृत बना देता है'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

तथापि यह कहना भी उतना ही तर्कसंगत हो सकता है कि ठीक उन्हीं कारणो से जल-रेखा दृष्टिगोचर हो पाती है! स्थिर दशा में, या समुद्र पर जाते हुए जहाज के लिए देखिए कि वे कौन-सी प्रकाशीय घटनाएँ हैं जिनकी सहायता से हम पता लगाते हैं कि पार्श्व पर पानी कहाँ से शुरू होता है—अर्थात् जलरेखा की स्थिति कहाँ पर है।

२१९. जल-प्रपात का रंग

प्रकाश यदि अनुकूल हुआ तो चट्टान पर गिरते हुए पानी का हरा रग भली-भाँति देखा जा सकता है। यह एक अद्भुत बात है कि यत्र-तत्र पानी से बाहर निकली हुई चट्टानें, जो दरअसल काली या भूरी होती हैं, अब लाल रंग का पुट लिये हुए दिखलाई पड़ती हैं; प्रगटतः इसे विपर्यास-रंग मान कर ही इस घटना का समाधान किया जाना चाहिए (§ ९५)।

इस घटना का अत्यन्त स्पष्ट रूप में प्रेक्षण उन स्थानों पर किया जा सकता है जहाँ पानी में झाग बनता है और छींटे उठते हैं। अब यह विदित है कि प्रयोगशाला में विपर्यास-रंग अधिक चटकीले उस दशा में उभरते हैं जब क्षेत्रों के बीच की सीमारेखा को अस्पष्ट बना दिया जाय। विचाराधीन घटना को प्रदर्शित करने के लिए हम हरी पृष्ठभूमि पर भूरे रंग के कागज की एक पट्टी रखते हैं जिसके ऊपर टिशू (लगभग पारदर्शी) कागज का आवरण लगा हो; तब आप पायेंगे कि इस आवरण मे से भूरे वर्ण का ललछौंवा विपर्यास-रग कितना बढ़िया दिखलाई पड़ता है (फ्लोरकन्ट्रास्ट)।

यह रञ्चमात्र भी असम्भाव्य नहीं जान पड़ता कि प्रकृति में पानी का पारभासक धुन्ध भी इसी प्रकार का कार्य करता है।

२१९ (क). ठोस वस्तुओं के रंग

झील, नदियों तथा समुद्र के रंगों का अध्ययन करने में हमने देखा कि किस प्रकार प्रकाश अंशतः सतह से परावर्त्तित होता है जबकि इसका एक भाग गहराई में प्रविष्ट करके पानी में तैरते हुए जर्रों से परिक्षेपित हो जाता है। यही बात ठोस वस्तुओं के लिए भी लागू होती है जिससे ये प्रकाशित होकर दृष्टिगोचर होती हैं। चट्टानों, पत्थरों, वृक्ष के तनों तथा मिट्टी आदि वस्तुओं में, जो 'अपारदर्शी' कहे जाते हैं, हम उनकी सतह की एक मिलीमीटर से भी कम मोटाई की तह में प्रकाश की उन तमाम घटनाओं को मौजूद पाते हैं जो पानी की कई मीटर मोटी तह में पायी जाती हैं; इस दशा में परिक्षेपण तथा अवशोषण अपेक्षाकृत बहुत अधिक प्रबल होते हैं किन्तु सिद्धान्तः क्रियाविधि वैसी ही होती है जैसी पानी में। ठोस वस्तु की विशिष्ट प्रकृति उसकी सतह द्वारा निर्धारित होती है जो खुरदरेपन या चिकनेपन की हर किस्म की ग्रेड धारण कर सकती है; अतः हमें दशा के अनुसार नियमित परावर्त्तन, अनियमित परावर्त्तन या परिक्षेपण पर विचार करना होता है।

भू-दृश्य में नियमित रूप से परावर्त्तन करने वाली वस्तुएँ कम ही मिलती हैं। चिकनी सतहें बर्फ पर, काँच के घेरे वाले वाटिकागृह में, धातु की चीजों पर तथा प्रकाश से जगमगाती वृक्ष-टहनियों पर मिलती हैं। ऐसे देशों में जहाँ स्लेट या चमकीले खपरैल काम में लाये जाते हैं, हम दूरस्थ नगर की छतों से सूर्य के प्रकाश का चकाचौंध उत्पन्न करने वाला प्रतिबिम्बिन देख सकते हैं—दूर के घरों की खिड़कियों के काँच अस्त होते हुए सूर्य की चमकीली ज्योति परावर्त्तित करते हैं। ताजे गिरे हुए तुषार के नन्हें क्रिस्टल उस वक्त तेज प्रकाश से अप्रत्याशित तरीके से जगमगाते हैं जबकि हम अपना सिर हिलाते-डुलाते हैं—यह इस बात पर निर्भर करता है कि सूर्य की आपाती किरणों के लिहाज से उनकी आकस्मिक स्थिति कैसी बैठती है।

अनियमित परावर्त्तन का एक बढ़िया उदाहरण उस वक्त हमें मिलता है जब वर्षा से भीगी हुई सड़क की पटरी पर हम दृष्टि डालते हैं। सड़क के लैम्पों का प्रतिबिम्ब हमें लम्बे खिचे हुए प्रकाशस्तम्भ के रूप में मिलता है जैसा कि तरङ्गित पानी की सतह से बन सकता है—यह प्रभाव उस वक्त विशेष रूप से स्पष्ट होता है जब सड़क पर हम तिरछी दिशा से निगाह डालते हैं। सतह से परावर्त्तन तथा भीतर से परिक्षेपण,

दोनों गुण प्रदर्शित करने वाली वस्तुओं का एक विनिय गुण यह है कि इर्द-गिर्द की चीजों का परावर्त्तित प्रतिविम्ब, तथा उनकी छाया, दोनों को पृथक्-पृथक् किन्तु एक साथ ही वे प्रदर्शित करती हैं। समुद्र पर वादलों का अवलोकन करते समय यह वात हम देख भी चुके है—यही चीज एक छोटे पैमाने पर उस वक्त देखी जा सकती है जब समुद्रतट की नम भूमि पर धूप में पक्षिगण किलोल करने होते हैं।

किन्तु अधिकांश प्राकृतिक वस्तुओं की सतह खुरदरी होती है, इनकी सतहें नन्हीं-नन्हीं खुरदराहट से भरी होती है, अत: ये अब परावर्त्तन नहीं कर पाती वल्कि ये प्रकाश का परिक्षेपण करती हैं। खेत, रेत के मैदान या तुषार के ढेर पर पडने वाली सूर्य-किरणों की शलाका इनकी सतहों को इस प्रकार आलोकित करती है कि ये वस्तुएँ हर दिशा से दृष्टिगोचर होती हैं। किन्तु और अधिक ध्यानपूर्वक देखने पर हम पाते हैं कि ठोस वस्तु से होने वाला परिक्षेपण दिशा के अनुसार पर्याप्त मात्रा मे वदलता है। उदाहरण के लिए, सन्ध्या के उपरान्त देखिए कि सडक के प्रत्येक लैम्प के सामने की भूमि कितनी अच्छी तरह प्रकाशित दिखलाई पड़ती है, किन्तु लैम्प के पीछे सव कुछ अँधेरा ही दीखता है; दूर से जहाँ तक सम्भव हो, सही अनुमान लगाइए कि जमीन पर गिरने वाला लैम्प का प्रकाश किस विन्दु पर सबसे अधिक तेज है; नजदीक आने पर आप पायेंगे कि अधिकतम प्रकाश का विन्दु जो आपने चुना था वह लैम्प के ठीक नीचे न स्थित होकर काफी मात्रा मे आप की ओर हटा हुआ है। इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि सडक की सतह से सामने की ओर प्रकाश का परिक्षेपण पीछे की ओर की अपेक्षा अधिक होता है; यह अनियमित परावर्त्तन तथा समदिशा के परिक्षेपण के वीच के सक्रमण का एक उदाहरण है।

परिक्षेपण की असममिति के अध्ययन करने का एक और तरीका यह है कि सूर्य के सामने की ओर के भू-दृश्य तथा उसके पीछे की ओर के भू-दृश्य की तुलना करें (§ २२३)।

चूँकि भूदृश्य में ऐसी सतहों की वहुतायत होती है जो विसृत परिक्षेपण करती है, अत: हमारी प्रमुख धारणा दीप्त तथा अदीप्त भागो के बीच के सक्रमण के मृदु होने की वनती है, एक रग से दूसरे रंग के दर्मियान का सक्रमण भी मृदु ही दिखलाई पड़ता है। पानी अथवा अन्य चमकीली सतहों से होने वाले स्थानीय परावर्त्तन के कारण यत्र-तत्र तेज प्रकाश की झलक मिलती है जो दृश्य के चटकीलेपन में अभिवृद्धि कर देती है।

२१९(ख). ऐसी सतह से प्रकाश का परावर्तन जो नन्हें क्रिस्टलों से ढकी हो

जब एक लम्बे काल तक वर्फ पड़ने के वाद अचानक उसका पिघलना शुरू होता है तो वृक्षों तथा मकानों पर नन्हें-नन्हें अनगिनत वर्फ-मणिभों की तह वन जाती है।

मणिभों की यह तह प्रकाश का अत्यन्त असाधारण तथा अद्भुत तरीके से परिक्षेपण करती है; सीधे ऊर्ध्वदिशा से देखने पर ये मणिभ (क्रिस्टल) मुश्किल से नजर आते हैं, किन्तु जितनी ही अधिक तिरछी दिशा से आप देखें, उतनी ही अधिक दीप्तिमान् वह सतह दिखलाई पड़ती है, यहाँ तक कि स्पर्शी रेखा की दिशा से अवलोकन करने पर सतह चाँदी की तरह चमकने लगती है।

प्रकाशयतः प्रत्येक मणिभ प्रकाश का परिक्षेपण करके उसे करीब-करीब हर दिशा में फेंकता है जिस तरह एक नन्हाँ-सा लैम्प हर दिशा में प्रकाश बिखेरता है। हमारी दृष्टि-रेखा जितनी ही अधिक तिरछी दिशा में अवस्थित होती है, उतनी ही अधिक सख्या, इन प्रकाश-स्रोतों की एक दिये हुए सान्द्रकोण के भीतर पड़ती है। अतः अभिलम्ब[1] से कोण I बनाने वाली दिशा से अवलोकन करने पर प्रकाशदीप्ति Sec I के अनुपात में उस वक्त तक बढ़ती जायगी जबतक कि ये मणिभ एक दूसरे को ढकने न लग जायें। इस दशा में परिक्षेपण की विशिष्टता ठीक इस कारण उत्पन्न होती है कि ये मणिभ एक दूसरे से दूर-दूर स्थित होते हैं, अतः सीमान्तिक दीप्ति केवल अत्यन्त तिर्यक् दिशा में प्राप्त होती है। इसी प्रकार का प्रेक्षण कभी-कभी उस वक्त प्राप्त होता है जब कोई चमकीली सतह पानी की नन्ही-नन्ही बूंदों से ढकी हो।

२२०. हरी पत्तियों का रंग

वृक्ष, घास के मैदान, खेत और अलग-अलग पत्तियाँ भी असंख्य किस्मों के हरे रंग की विपुलता प्रदर्शित करती हैं। घटना की प्रचुरता में किसी तरह के व्यवस्थाक्रम का पता लगाने के लिए हम किसी साधारण वृक्ष (बलूत, देवदार, बीच आदि) की एक पत्ती से जाँच का आरम्भ करते हैं ताकि भूदृश्य के रंग-समूह के निर्माण का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर सकें।

वृक्ष पर लगी पत्ती सामान्यतः एक पार्श्व पर दूसरे की अपेक्षा बहुत अधिक मात्रा में प्रकाशित होती है, और उसका रग मुख्यत. इस बात से निर्धारित होता है कि हम पत्ती की उस सतह को देख रहे हैं जिस पर प्रकाश सीधे ही पड़ता है या कि दूसरी सतह को। प्रथम दशा में हम तक पहुँचने वाला प्रकाश अशतः पत्ती की सतह से परावर्तित होता है, अतः रग हलका हो जाता है, किन्तु इसमें भूरेपन का पुट आ जाता है। और फिर पत्ती पर जब सामने की ओर से (दर्शक के लिहाज़ से) प्रकाश पड़ता है, तब हरे रंग के साथ निलछौवे वर्ण का पुट मिल जाता है और रोशनी जब पीछे की ओर से

1. Normal

पडती है तब उसमे पीत वर्ण का पुट मिल जाता है। यह हमे परिक्षेपित प्रकाश सम्बन्धी प्रेक्षण का स्मरण दिलाता है (§ १७३ क)। और वस्तुत. पत्ती मे, यद्यपि यह मोटाई मे १ मिलीमीटर से भी बहुत कम होती है, परावर्त्तन, अवशोषण तथा परिक्षेपण की क्रियाएँ उसी प्रकार होती है जिस प्रकार सैकड़ों फुट गहरे महासागर मे। अवशोषण यहां क्लोरोफिल की कणिकाओं द्वारा होता है; परिक्षेपण कदाचित् उन अनगिनत कणिकाओं द्वारा होता है जो कोषों मे प्रचुरता से पायी जाती हैं, या सभवत: पत्ती के धरातल की विषमता के कारण यह परिक्षेपण सम्पन्न होता है।

साया वाले स्थल से मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख देखने पर सूर्य की तेज रोशनी में घास का मरकत मणि सरीखा हरा रग विशेष मनमोहक लगता है (चित्र १५९, a)
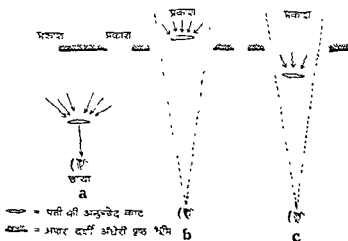
चित्र १५९—विभिन्न प्रकाश व्यवस्थाओं में हरी पत्तियां।

ऐमा प्रतीत होता है मानो घास की एक-एक पत्ती अक्षरश: हरे वर्ण की अन्तर्ज्योति मे प्रज्वलित हो रही है। बगल से इस पर गिरनेवाले आपतित प्रकाश की राशि लाखों सूक्ष्म कणिकाओं द्वारा परिक्षेपित होती है, अत: हर पत्ती तिरछी दिशा मे हमारी आँखों की ओर प्रकाश की बौछार फेंकती है।

घास के सामने से, तथा पीछे से प्रकाशित होने पर, रग का अन्तर तुरन्त देखा जा सकता है यदि हम घास के मैदान में खड़े होकर बारी-बारी से सूर्य की दिशा में तथा उलटी दिशा में देखें। यह अन्तर उस फ़र्क के अनुरूप होता है (चित्रकारों को इसका

पता है) जो विलेम मैरिस[1] द्वारा प्रकाश-पृष्ठभूमि को सम्मुख रख कर चित्रित किये गये भू-दृश्य के हरे रंग, तथा मावे[2] की कृतियों के हरे रंग में (जो प्रकाश की ओर पीठ करके चित्रण करना पसन्द करता था) मौजूद पाया जाता है।

सूर्य द्वारा प्रकाशित होने में तथा नीले आकाश द्वारा प्रकाशित होने में अन्तर यह है कि सूर्य का प्रकाश अधिक तेज होता है, किन्तु इसका स्थानीय परावर्त्तन अधिक मात्रा में होता है, इस कारण पत्ती पर रोशनी के धब्बे-से प्रतीत होते हैं। यदि पत्ती पर सूर्य की किरणों का परावर्त्तन बहुत कुछ नियमानुकूल परावर्त्तन-कोण पर होता है, तो पत्ती का रंग हलका भूरा या श्वेत के निकट पहुँचता है। सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है ताकि भू-दृश्य पर गहरे लाल रंग का रोशनी छा जाय, तब वृक्षों के झुरमुट अपने हरे रंग की ताजगी खो देते हैं, और ये मुरझाये-से दीखते हैं; क्योंकि अब उनपर पड़ने वाले प्रकाश में मुश्किल से ही हरी रोशनी का अंश मौजूद रह पाता है जिसे पत्तियाँ परिक्षेपित करके वापस फेंकतीं।

दोनों ओर एक ही किस्म की रोशनी पड़ने पर भी पत्तियों की ऊपरी तथा नीचे की सतह के रंग में फर्क मौजूद होता है। ऊपरी सतह चिकनी होती है अतः इससे परावर्त्तन अच्छा होता है और इसलिए यह अधिक धब्बेदार दीखती है। नीचे वाली सतह फीके रंग की और कम चमकदार होती है और इसमें रोमछिद्र अधिक होते हैं; कोष दूर-दूर स्थित होते हैं तथा बीच की जगहों में हवा बन्द होती है जो प्रकाश को पत्ती के अन्दर प्रविष्ट होने के पहले ही परावर्तित कर देती है (§ २२४)। आम तौर पर ऊपर की सतह के रुख ही प्रकाश पत्ती पर गिरता है। इस बात का प्रेक्षण कीजिए कि पत्ती को १८०° पर उलट देने पर इसका रंग किस प्रकार बदल जाता है यद्यपि प्रकाश की व्यवस्था-आदि वैसी ही बनी रहती है! जब कभी हवा का वेग कुछ तेज होता है तो प्रकाश के रुख सभी वृक्ष धब्बेदार-से दीखते हैं और समष्टि रूप से उनका रंग हलका पड़ जाता है; पत्तियों का रुख हर दिशा में बदलता रहता है, अतः जितनी बार उनकी ऊपरी सतह दिखलाई देती है करीब-करीब उतनी ही बार नीचे वाली सतह भी।

नयी पत्तियाँ पुरानी पत्तियों की तुलना में अधिक ताजी तथा अपेक्षाकृत अधिक खुलते रंग की दीखती हैं; गर्मी के दिनों में यह अन्तर हलका पड़ जाता है।

वृक्ष की चोटी पर बाहर की ओर की पत्तियाँ अन्दर की पत्तियों से भिन्न होती हैं, ये न केवल आकार, मोटाई तथा रोमाच्छादितता में भिन्न होती हैं, बल्कि रंग में भी।

1. Willem Maris 2. Mauve

वृक्ष की जड़ के निकट की कोपलों तथा तने पर फूटने वाली कोंपलो मे सामान्यतः बहुत ही हलका अन्तर होता है।

अनेक पौदों की पत्तियाँ धूप या हवा के प्रभाव से चमकती हैं मानो उनपर वार्निश की गयी हो (जैसे पाश्चात्यविषा[1] का पौदा)। इसका कारण है बाह्य त्वचा के कोषों का फूल जाना, अतः पत्ती की सतह में इतना तनाव आ जाता है कि यह पूर्णतः स्निग्ध हो जाती है।

अन्त में, **पृष्ठभूमि** महत्त्वपूर्ण योग देती है! वृक्ष के नीचे खडे होकर इसकी चोटी का निरीक्षण कीजिए। ये ही पत्तियाँ जो अन्य वृक्षों से निर्मित पृष्ठ भूमि पर चटकीले हरे रंग की दीखती थी, आकाश की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखे जाने पर तुरन्त काली 'सिल्युएत' में बदल जाती हैं। यह प्रभाव पत्ती की दीप्ति, तथा पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति के पारस्परिक अनुपात पर निर्भर करता है। अतः पत्ती पर यदि सब ओर से रोशनी पड़ रही हो तो यह प्रभाव हल्का होता है, विशेषतया उस वक्त जब कि पत्ती पर धूप पड़ रही हो (चित्र १५९, b) और प्रभाव अधिकतम उस वक्त होता है जब पत्ती पर आकाश के एक परिमित भाग से रोशनी पहुँचती है, जैसा कि अक्सर अन्य वृक्षों से घिरे होने पर होता है (चित्र १५९, c) या सान्ध्य वेला मे, जबकि केवल एक पार्श्व से ही पत्ती पर प्रकाश गिरता है। इस दशा मे सामान्य हरे तथा सिल्युएत (छाया आकृति) के काले रग में अन्तर इतना अधिक होता है कि जल्दी विश्वास नही होता कि यह केवल प्रकाशीय भ्रम का कौतुक है! तथापि यह विपर्याेग घटना के अतिरिक्त और कुछ नहीं है; चमकीले आकाश की द्युति पृथ्वी की चीजो के मुकाबले में अत्यन्त अधिक होती है।

२२० (क). हरी पत्तियों के रंग पर प्रकाश का प्रत्यक्ष प्रभाव

अब तक जिन प्रभावों का वर्णन किया गया है वे पूर्णतया प्रकाशीय हैं। किन्तु प्रकाश हरे पौदों पर अपना सीधा प्रभाव भी डालता है जिसके कारण इनके रग चन्द मिनटों में बदल जाते हैं।

साये मे पत्तियों के क्लोरोफिल[2] की कणिकाएँ अपनी स्थिति बदल लेती हैं और कोषों के ऊपर के और नीचे के पार्श्व पर वे पहुँच जाती हैं, अतः पत्तियों का हरा रग एक नवीन आभा धारण कर लेता है। किन्तु धूप में साइटोप्लाज्म[3] द्वारा ये कणिकाएँ कोष की बगल वाली दीवारों पर पहुँच जाती हैं, अब पत्तियों का रग कुछ-कुछ पीला-

1. Monkshood 2. Chlorophyll 3. Cytoplasm

पन धारण कर लेता है। उदाहरण के लिए, रंग का यह परिवर्तन कारण्ड घास के लिए बहुत ही स्पष्ट होता है।

यह भी देखा जा सकता है कि धूप और हवा के प्रभाव से अनेक पौदे स्निग्ध बन जाते हैं तथा वे इस प्रकार चमकने लग जाते हैं मानों उन पर वार्निश की गयी हो (जैसे एकोनाइट[1])। ऐसा बाह्य त्वचा के कोषों के कारण होता है जो फूल जाती है; और तब पत्ती की सतह में तनाव आ जाता है, अतः वह चिकनी दीखती है, तथा यह अब परिक्षेपण कम करती है और परावर्त्तन अधिक अच्छी तरह।

२२१. भू-दृश्य के पेड़-पौदे[2]

१. पृथक्-पृथक् वृक्ष—भू-दृश्य के अवयवों में व्यवहारतः केवल वृक्ष ही ऐसे होते हैं जिनपर बगल से प्रकाश पड़ता है, और इस कारण वे सूर्य से आलोकित पार्श्व तथा अप्रकाशित पार्श्व के विपर्यास का अलौकिक सौन्दर्य प्रदर्शित करते हैं। इसी कारण ये अपने ठोसपन की अनुभूति कराते हैं और 'बारम्बार यह प्रदर्शित करते हैं कि त्रिविमितीय देश[3] एक दृष्टिगोचर हो सकने वाली वास्तविकता है'। वृक्ष की चोटी के वर्तुलाकार[4] होने से यह विपर्यास कुछ हलका पड़ जाता है। किन्तु रंग-विभिन्नता के कारण यह पुन. तीव्र हो जाता है।

प्रकाश के रुख देखने पर दूरस्थ पृष्ठभूमि पर वृक्ष काले रंग के उभरते हैं, और पृष्ठभूमि के फासले, उसकी सुदूरता की तीव्र अनुभूति कराते हैं; इस अनुभूति के उत्पन्न करने में जितना योग पिण्डदर्शन-प्रभाव[5] का है उतना ही रग के दोड-अन्तर का भी है। यही कारण है कि पिण्डदर्शन की तस्वीरों, तथा भू-दृश्य अंकित किये गये चित्रों की अग्रभूमि में, बहुधा वृक्ष प्रदर्शित किया जाता है। इस प्रभाव की कुछ अशो मे उस भू-दृश्य से तुलना कर सकते हैं जिसे एक खुली खिड़की में से या मेहराब की छत के नीचे से हम देखते हैं। वृक्षों के दर्मियान से गुजरने वाली सड़क से देखने पर नगर की इमारतें *अधिक बड़ी और वैभवपूर्ण प्रतीत होती हैं।*

पृष्ठभूमि के साथ सर्वाधिक प्रभावकारी विपर्यास उस वक्त प्रदर्शित होता है जब वृक्ष सन्ध्याकालीन आकाश के नारङ्गी वर्ण की द्युति वाली पृष्ठभूमि पर रेखाङ्कित होता है। अकेले स्थित रेतीले टीले पर खड़े हपुषा[6] के अजीब तरह से विकृत वृक्ष की

1. Aconite 2. See Vaughan Cornish, *Geogr. Journ. 67. 506,* 1926 for the first part of this section 3. Space 4. Round
5. Stereoscopic effect 6. Jumper

सिल्युएत (छाया-आकृति) या घनी नुकीली पत्तियों से भरपूर शानदार सरो की छाया-आकृति काली होती है तथा इसकी रूपरेखा अत्यन्त स्पष्ट उभरती है। अन्य वृक्ष अधिक खुले होते ह; भोजपत्र का वृक्ष सबसे अधिक खुला होता है। अपनी सुन्दर त्वचा की बदौलत यह, विशेषतया प्रकाश के रुख देखे जाने पर, तरह-तरह के रग प्रदर्शित करता है जो आकाश के रग के साथ मनमोहक विपर्यास उत्पन्न करते ह।

'फरवरी के अन्त में किसी धूप वाली सुबह को मैं तुम्हे हलके नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर भोजपत्र की टहनियों का रग दिखलाऊँगा। इनकी तमाम बारीक प्रशाखाएँ नील-लोहित ज्योति से दमकती जान पड़ती हैं, जबकि इस हलकी चमक के उस पार से आकाश अलौकिक मृदुतापूर्वक आप की ओर झाँकता है। तनिक रुकिए, ध्यानपूर्वक प्रेक्षण कीजिए और इस घटना को समझने के पूर्व यहाँ से जाइए नही। इस दृश्य से इतना अधिक आनन्द प्राप्त होता है कि इस अलौकिक प्रकाश के पुन. उत्पन्न होने की घटना के अवलोकन के लिए सब्र के साथ आप अगले जाड़े तक प्रतीक्षा कर सकते हैं'— डुहामेल, ला पोज़ेशियों-डू-मान्दे[1] (पृष्ठ १२६)।

२. वन—निकट के जंगल की सिल्युएत (छाया आकृति), प्रकाश के रुख देखने पर अवश्य अत्यन्त अव्यवस्थित जान पड़ती है, किन्तु वन स्वय इतना अधिक पारदर्शी होता है और इसके प्रकाशीय प्रभाव इतने विभिन्न होते हैं कि यह घनता और ठोसपने की अनुभूति नही दे पाता। इसके एकाकार होने का प्रभाव ज्यादा फासले पर अधिक स्पष्ट होता है, जबकि वृक्षों की चोटियाँ, पीछे के गहरे नीले रग की पर्वतीय पृष्ठभूमि पर सुनहले और हरे रंग की चमकती हैं या जब सूर्य के प्रकाश से आलोकित पत्तेदार वृक्षों के समूह के झुरमुट, ऊँचे, अदीप्तिमान् सरो के वृक्षों के सम्मुख स्पष्ट उभरते हैं। मैदानी क्षेत्र मे स्थित दूरस्थ वन की तुलना वास्तव मे पहाड़ियों की श्रेणी से की जा सकती है—इसका शेड कम-से-कम उतना ही गहरा होता है, इसका रग वायुमण्डल मे होने वाले परिक्षेपण के कारण, लगभग ठीक उतना ही मनोहर धुन्धमय नीला होता है; तथा यह क्रमागत पंक्तियों मे अवस्थित दिखलाई पड़ता है और आकाशीय अनुदर्शन[2] के कारण इनमे से प्रत्येक पंक्ति अलग-अलग स्पष्ट देखी जा सकती है (§९१)।

वन के भीतर का दृश्य अपने ढंग का अद्वितीय होता है—न तो कोई क्षितिज दीखता है, और न सीमारेखाएँ। वसन्त ऋतु में, सिर के ऊपर, हर तरफ हरी-हरी नयी पत्तियाँ दिखलाई पड़ती हैं जो उनमें से गुजरने वाले पीत-हरे प्रकाश से चमकती

1. Duhamel, La Possession du Monde 2. Aerial perspective

रहती है। ग्रीष्म ऋतु में, श्वेत आकाश की थका देने वाली चकाचौंध से (जिसकी ओर देखना इतना कष्टदायक होता है) बचने के लिए हमारी आँखों को यहाँ आराम मिल सकता है—यहाँ एक बार फिर आजादी से हर दिशा मे हम दृष्टि फिरा सकते हैं।

वन में सबसे अधिक प्रकाश दोपहर के समय पहुँचता है जब सूर्य ऐसी ऊँचाई पर चमकता है कि इसकी किरणें वृक्षों की चोटियों से होकर भीतर आ सकें। प्रकाश और छाया की मात्राएँ हर धरातल में भिन्न होती हैं; किसी निश्चित दूरी पर आँख को केन्द्रित करते ही इस रमणीयता का लोप हो जाता है, किन्तु जब इसकी तलाश की बरबस हम कोशिश नही करते तो पुनः यह प्रगट हो जाती है, किन्तु स्वभावतः अपने आप यह हमारे परिपार्श्व के प्रभाव के वशीभूत हो जाती हैं। शरद ऋतु की सुबह को सूर्य रश्मियाँ यत्र-तत्र वृक्ष के तनों पर गिरती हैं और हलकी धुन्ध वाली हवा में इन किरणों के पथ का अनुगमन, विशेषतया सूर्य के निकट की दिशा में देखने पर, किया जा सकता है (§१८३); इस प्रकार आकाशीय अनुदर्शन की माया का हम अत्यन्त निकट का परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

३. फूल—हीदर[1] ही लगभग एकमात्र फूल का पौदा है जो भूमि की विस्तृत सतह ढके रहता है। अगस्त में जब इसके फूलों पर बहार रहती है, तो भूक्षेत्र के नील-लोहित रंग तथा आकाश के गहरे नीले रंग का एक अद्भुत् सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है, जिसकी कुछ लोग तो प्रशसा नही करते हैं, किन्तु अन्य लोगो के लिए प्रकृति के स्वतंत्र प्राङ्गण तथा उसके प्रचुर प्रकाश में यह असामान्य रूप से अधिक प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है। आकाश मे छाये भूरे रंग के बादल रंगों के सामञ्जस्य को मृदु बनाते हैं, *किन्तु साथ ही साथ प्रकाश और छाया के बीच के विपर्यास को भी कम कर देते हैं।*

फूल आने पर फल वाले वृक्षों की जो इतनी चमक-दमक होती है वह बहुत हद तक इस कारण होती है कि वर्ष के उन दिनों में पत्तियों के गुच्छो की बाढ़ स्वल्प ही रहती है। श्वेत और हलके शेड के गुलाबी रंग, नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर सर्वाधिक चित्ताकर्षक केवल उस वक्त लगते हैं जब सूर्य उनपर चमकता है या जब किसी टीले या पहाड़ी पर से उन्हें देखा जाता है ताकि उनके पीछे की पृष्ठभूमि में घास के मैदान पड़ें।

४. घास के मैदान—मात्र एक ही रंग का चौरस विस्तृत क्षेत्र, स्निग्धता का तथा खुली, फैली हुई जगह का आभास देता है, तथापि अपने अनेक ब्योरों की कृपा से इसमें

1. Heather

विविधता का पर्याप्त रूप से समावेश हो जाता है जिससे उत्फुल्लता तथा मृदुता का बोध होता है। वरना अन्य कौन-से कारण हो सकते थे जिनकी वजह से रेत के मैदान से ये इतने भिन्न दीखते ? दूर से देखने पर इनका हरा रंग नीला-हरा पुट धारण कर लेता है, तथा और भी दूर जाने पर उत्तरोत्तर यह वायुमण्डल के पार दीखने वाले आकाशीय नीले रंग के सन्निकट पहुँचता जाता है।

२२२. छायाएँ तथा अन्धकारमय धब्बे

अपने इर्द-गिर्द नजर फिराइए और दृश्य क्षेत्र में, जहाँ-जहाँ अदीप्तिमान् धब्बे मौजूद हैं, वहाँ देखिए।

(क) वनों तथा झाड़ियों में, वृक्षों के तनों के दर्मियान।

(ख) नगरों में, दूर से दिखाई पड़ने वाली खुली हुई खिडकी।

ये दोनों ही स्थितियाँ 'कृष्ण वस्तु'[1] के उत्तम उदाहरण हैं। भौतिक विज्ञान में 'कृष्ण वस्तु' से अभिप्राय ऐसी 'जगह' से होता है जिसके अन्दर हम केवल एक पतले प्रवेशद्वार में से देख सकते हैं; प्रकाश-किरणें जो इसके अन्दर प्रविष्ट होती हैं, केवल अनेक बार परावर्तन प्राप्त करने के बाद ही बाहर निकल पाती हैं, अतः हर बार के परावर्तन के फलस्वरूप ये क्षीण होती जाती हैं। इस प्रकार की कृष्ण वस्तु लगभग हर प्रकार के विकिरण का अवशोषण करती है—घने जंगल आपतित प्रकाश का केवल ४ प्रतिशत पुनः उत्सर्जित करते हैं। इसके प्रतिकूल यह स्मरण रखना चाहिए कि जंगल का अन्धकार केवल आपेक्षिक होता है; यदि हम उसके निकट जायें तो हमारी आँख वहाँ की दीप्ति के अनुसार समानुयोजित हो जाती है और तब हम देखते हैं कि इसके अन्दर की हर चीज दीप्ति और अन्धकार का प्रदर्शन करती है। इसी प्रकार कमरे के अन्दर का हर ब्योरा भीतर से देखने पर पृथक्-पृथक् पहचाना जा सकता है, जबकि बाहर से खिड़की के रास्ते देखने पर वही कमरा घुप अन्धकारमय दीखता है।

चमकीले आसमान की पृष्ठभूमि के सम्मुख पड़नेवाली क्षीणकाय वस्तुएँ आम तौर पर काली दीखती हैं, किन्तु यह केवल विपर्यास का परिणाम है (§ २२०)।

छाया के रंगों की विधिपूर्वक जाँच कीजिए !

'सभी साधारण छायाएँ अवश्य किसी-न-किसी रूप में रंगीन होती हैं, वे काले रंग की या सन्निकटतः काले रंग की कभी नहीं होतीं। स्पष्टतः ये दीप्तिमान् किस्म की

1. Black body

रहती है। ग्रीष्म ऋतु में, श्वेत आकाश की थका देने वाली चकाचौंध से (जिसकी ओर देखना इतना कष्टदायक होता है) बचने के लिए हमारी आँखों को यहाँ आराम मिल सकता है—यहाँ एक बार फिर आजादी से हर दिशा मे हम दृष्टि फिरा सकते हैं।

वन मे सबसे अधिक प्रकाश दोपहर के समय पहुँचता है जब सूर्य ऐसी ऊँचाई पर चमकता है कि इसकी किरणें वृक्षों की चोटियों से होकर भीतर आ सकें। प्रकाश और छाया की मात्राएँ हर धरातल में भिन्न होती हैं; किसी निश्चित दूरी पर आँख को केन्द्रित करते ही इस रमणीयता का लोप हो जाता है, किन्तु जब इसकी तलाश की बरबस हम कोशिश नही करते तो पुन. यह प्रगट हो जाती है, किन्तु स्वभावतः अपने आप यह हमारे परिपार्श्व के प्रभाव के वशीभूत हो जाती है। शरद ऋतु की सुबह को सूर्य रश्मियाँ यत्र-तत्र वृक्ष के तनों पर गिरती हैं और हलकी धुन्ध वाली हवा मे इन किरणों के पथ का अनुगमन, विशेषतया सूर्य के निकट की दिशा में देखने पर, किया जा सकता है (§१८३); इस प्रकार आकाशीय अनुदर्शन की माया का हम अत्यन्त निकट का परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

३. फूल—हीदर[1] ही लगभग एकमात्र फूल का पौदा है जो भूमि की विस्तृत सतह ढके रहता है। अगस्त मे जब इसके फूलों पर बहार रहती है, तो भूक्षेत्र के नील-लोहित रंग तथा आकाश के गहरे नीले रंग का एक अद्‌भुत् सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है, जिसकी कुछ लोग तो प्रशंसा नहीं करते हैं, किन्तु अन्य लोगों के लिए प्रकृति के स्वतंत्र प्राङ्गण तथा उसके प्रचुर प्रकाश में यह असामान्य रूप से अधिक प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है। आकाश में छाये भूरे रंग के बादल रंगों के सामञ्जस्य को मृदु बनाते हैं, किन्तु साथ ही साथ प्रकाश और छाया के बीच के विपर्यास को भी कम कर देते हैं।

फूल आने पर फल वाले वृक्षों की जो इतनी चमक-दमक होती है वह बहुत हद तक इस कारण होती है कि वर्ष के उन दिनों में पत्तियों के गुच्छों की बाढ़ स्वल्प ही रहती है। श्वेत और हलके रोट के गुलाबी रंग, नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर सर्वाधिक चित्ताकर्षक केवल उस वक्त लगते हैं जब सूर्य उनपर चमकता है या जब किसी टीले या पहाड़ी पर से उन्हें देखा जाता है ताकि उनके पीछे की पृष्ठभूमि में घास के मैदान पड़ें।

४. घास के मैदान—मात्र एक ही रंग का चौरंग विस्तृत क्षेत्र, स्निग्धता का तथा खुली, फैली हुई जगह का आभास देता है, तथापि अपने अनेक ब्योरों की कृपा से इसमें

1. Heather

होती है......यह एक तथ्य है कि छाया के भागो में भी रंग उसी प्रकार मौजूद होते हैं जिस प्रकार प्रकाशवाले भागों में....... —रस्किन।

जहाँ सूर्य का प्रकाश पड़ता है,वहाँ इसकी पीले वर्ण की पुट वाली तेज किरणें आकाश से विकिरित होनेवाले प्रकाश पर हावी हो जाती हैं, किन्तु साये के अन्दर प्रकाश केवल नीले या भूरे आकाश से ही पहुँच पाता है। अत. छाया, आम तौर पर, अपने इर्द-गिर्द के वातावरण की अपेक्षा अधिक नीलापन लिये रहती है, और यह अन्तर विपर्यास के कारण और भी तीव्र हो उठता है।

'अपनी खिड़की से मैं लोगों को समुद्र तट पर टहलते हुए देखता हूँ; रेत स्वयं तो बैंगनी रंग की है किन्तु धूप के कारण यह सुनहले रंग की दीखती है; उन व्यक्तियों की छायाएँ इतनी अधिक बैंगनी हैं कि जमीन पीली मालूम पड़ती है—देलाक्रवाँ।

२२३. भू-दृश्य की प्रकाशदीप्ति, सूर्य के रुख तथा उसकी उलटी ओर

लगभग सभी भूदृश्यों के रंग और सरचना में महत्त्वपूर्ण अन्तर देखे जा सकते हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि हम इन्हे सूर्य के रुख देख रहे हैं या सूर्य की उलटी दिशा में। दृश्य का समूचा अनुदर्शन ही बदल जाता है! दृश्य को दोनों दिशाओं में एक साथ ही देखने के लिए दर्पण को काम में लाइए (प्लेट XVI)

१. जौ, गेहूँ के नये पौदो के खेत, घास के मैदान, तथा शमीधान्य[1] के खेत, सूर्य की दिशा में पीत-हरे वर्ण के दीखते है, किन्तु उलटी दिशा मे ये निलछौवें रंग के प्रतीत होते हैं; कारण क्या है? किसी एक पत्ती को 'सूक्ष्मदर्शी' दृष्टि से विशेष तौर पर देखिए। इसे तोड लीजिए, फिर इसे सूर्य के रुख पकडिए, फिर इसे सूर्य की दूसरी ओर रखिए। पहली दशा में इस पर गिरने वाले प्रकाश का मुख्यत. वह अंश आप देखेंगे जो पत्ती में से गुजर कर इस पार आता है, दूसरी दशा मे इसकी सतह से परावर्तित होने वाला प्रकाश आप देखेंगे (§ २२०)। कभी-कभी रग तथा दीप्ति वायु की दिशा द्वारा भी प्रभावित होती है।

२. राई के पके खेत में तरंगें मुख्यत. राई की वालों के वदलते हुए रूपदर्शन[2] के कारण उत्पन्न होती हैं। मान लीजिए हवा सूर्य की ओर वह रही है, सूर्य की ओर मुँह करने पर हमें एक तरह से केवल देदीप्यमान् तरगें दिखलाई पड़ती हैं; ये उस वक्त उत्पन्न होती है जब वालें सूर्य की ओर इतनी झुक जाती हैं कि सूर्य के प्रकाश को ये हमारी आँख की दिशा में परावर्तित कर सकें; सूर्य से दूर हटती हुई दिशा में हम कुछ थोड़ी ही

1. Lupine 2. Aspect

देदीप्यमान् तरंगें, किन्तु बहुत-सी अदीप्तिमान् तरंगें देख पाते हैं। ये अदीप्तिमान् तरगे उस वक्त उत्पन्न होती हैं जब बालें इस प्रकार झुकती हैं कि वे निकट की बालों पर अपनी छाया डाल सकें।

ये घटनाएँ हवा और दृष्टिरेखा की हर दिशा के साथ तथा सूर्य की ऊँचाई के साथ बदलती रहती हैं।

३. मशीन से घास कट जाने के उपरान्त लॉन को जब ऐसी स्थिति मे देखते हैं कि मशीन चलाने की दिशा हमारे सामने की ओर जाती है, तब लान उस दशा के मुकाबले में अधिक हलके रग का प्रतीत होता है, जबकि मशीन चलाने की दिशा हमारी ओर को होती है; पहली दिशा में परावर्तित प्रकाश की अधिक मात्रा हम देख पाते हैं (प्लेट XVI देखिए)। कटी हुई ठूँठियो के खेत मे यह विपर्यास अत्यन्त प्रबल होता है, इस दशा में क्रमागत पक्तियाँ एक के बाद दूसरी बारी-बारी देदीप्यमान तथा अदीप्तिमान् होती हैं क्योकि फसल काटने वाली मशीन एक पक्ति पर एक दिशा मे चलायी गयी होती है तो दूसरी पक्ति पर उलटी दिशा मे। यदि आप घूम कर उलटी दिशा में मुँह कर ले तो पक्तियो का शेड का क्रम भी उलट जायगा। हाल का जुता हुआ खेत चमकता हुआ दिखलाई पड़ता है बशर्ते अभी तक गीली बनी हुई उन हलकी लीको की समकोण दिशा से हम देखें।

४. गड्ढे के पानी पर मौजूद कारण्ड घास[1] के पौदे घास के ठीक विपरीत आचरण करते हैं। सूर्य से दूर जाने वाली दिशा में ये पीत-हरे रग के दीखते हैं, और सूर्य के रुख फीके भूरे-हरे रग के। 'सूक्ष्मदर्शी' प्रेक्षण से पता चलता है कि द्वितीय दशा मे सतह से होने वाला अनियमित परावर्त्तन विशेष प्रबल होता है। इस पौदे की पत्तियो के आर पार हम नहीं देख सकते।

५. हीदर वाले क्षेत्र, जब हीदर का मौसम समाप्त हो चुका होता है तो, सूर्य की दिशा में अदीप्तिमान् दीखते हैं। और सूर्य से दूर जाने वाली दिशा में अधिक देदीप्यमान्, रेशमी झलक युक्त तथा हलके बादामी-भूरे रग के ये दीखते हैं; प्रगटत. परावर्त्तन के कारण ही ऐसा होता है (प्लेट XVI)।

६. फल वाले वृक्ष जब फूलों से पूरी तरह लदे होते हैं तो वे केवल सूर्य की उलटी दिशा मे ही देखे जाने पर श्वेत दिखलाई पडते हैं। सूर्य की रुख देखने पर ये फूल आकाश की पृष्ठभूमि पर काले रंग के उभरते हैं (§ २२०, २२१)।

1. Duckweed

७. इसी प्रकार वृक्षों की शाखाएँ तथा टहनियाँ सूर्य से दूर की दिशा में देखे जाने पर भूरी तथा बादामी रंग की दीखती हैं और सूर्य के रुख में काले रंग की दीखती हैं जिनमें ब्यौरा स्पष्ट नहीं हो पाता।

८. ईंट जड़ी हुई सड़क सूर्य के रुख बादामी-भूरे रंग की दीखती है और सूर्य से दूर की दिशा में श्वेत-भूरे रंग की।

९. कंकड़ वाली सड़क सूर्य के रुख श्वेत-भूरी होती है, सूर्य से दूर की दिशा में बादामी-भूरे रंग की।

१०. समुद्र में उठने वाला फेन सूर्य से दूर जाने वाली दिशा में विशुद्ध श्वेत दीखता है; किन्तु सूर्य के रुख, किल्लोल करते हुए जल के लाखों प्रतिबिम्बों तथा झिलमिलाहटों के बीच यह अपने आप पास के मुकाबले में कुछ गहरे ही शेड का दीखता है।

११. ऊँची-नीची सतह वाली सड़क, वर्फ से ढकी हालत में, सूर्य के रुख, समष्टि रूप में, बगल में पड़ी स्निग्ध वर्फ के मुकाबले में गहरे शेड की दीखती है; सूर्य से दूर की दिशा में इसके विपरीत देखने में आता है।

१२. झील पर उठने वाली तरंगें, जब हवा सूर्य की ओर बह रही हो; यदि सूर्य से दूर की दिशा में देखें तो पानी धूसर नीले रंग का प्रतीत होता है जिसमें यत्र-तत्र नीले-काले वर्ण की धारियाँ प्रेक्षण-बिन्दु से विकिरित होती हुई दिखाई पड़ती हैं—ये आकाश के नीले भाग की अनुरूपी होती हैं; इन अनेक तरंगों में से हर एक तरंग पृथक्-पृथक् उभरती है। सूर्य के रुख देखने पर सभी कुछ उल्लासप्रद, चटकीले नीले रंग का दीखता है, तरंगें केवल फासले पर ही देखी जा सकती हैं और ये अनगिनत संख्या में होती हैं (§ २११)।

१३. इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब आप सूर्य की दिशा में देखते हैं तो तमाम वस्तुएँ जिनके साये वाले पार्श्व आप की ओर पड़ते हैं, गहरे शेड की प्रतीत होती हैं, किन्तु उनके हाशिये मनोरम प्रकाश से चमकते दीखते हैं। रोशनी के रुख पर फोटो लेने का लाभ यह है कि यह खूबसूरती पकड़ में आ जाती है।

ये तथा अन्य बहुत-से दृष्टान्त प्रेक्षण के लिए विपुल अवसर प्रदान करते हैं। सदैव ही व्याख्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करने में पहले चीजों का समष्टि रूप में प्रेक्षण कीजिए, फिर उनके पृथक्-पृथक् रूप में।

२२४. रंग, आर्द्रता से किस प्रकार प्रभावित होते हैं ?

'यह सच है कि सान्ध्यकालीन वायुमण्डल "सभी चीजों पर अन्धकार का आवरण सा डाल देता" है, किन्तु यह भी सच है कि प्रकृति ने, जिसका कभी भी यह इरादा नहीं

था कि मानवनेत्र आह्लाद-अनुभूति से वञ्चित रहे, अन्धकार द्वारा होनेवाले कान्ति के ह्रास के लिए प्रचुर मात्रा में क्षतिपूर्ति का आयोजन आर्द्रता द्वारा उनकी चमक में वृद्धि करके, किया है। प्रत्येक रंग भीगी दशा में सूखी हालत के मुकाबले में दो गुनी चमक प्रदर्शित करता है और जब दूर की चीजें धुन्ध के कारण अस्पष्ट दीखती हैं, तथा आकाश से चटकीले रंग विलुप्त हो जाते हैं और पृथ्वी पर से धूप की चमक गायब हो जाती है तब अग्रभूमि तरह-तरह के चित्ताकर्षक रंग धारण कर लेती है, घास और पत्तियों के झुरमुट पुन. अपने पूर्ण हरे रंग को प्रदर्शित करने हैं तथा धूप में झुलसी हुई प्रत्येक चट्टान अकीक पत्थर की तरह चमकने लगती है।'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

रंगों की इस सजीवता का समाधान अकेले आर्द्रता से नहीं किया जा सकता। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा कि वस्तुओं पर ज्यों ही पानी की पतली परत बनती है, त्यों ही उनकी सतह अधिक स्निग्ध हो जाती है; अब श्वेत प्रकाश का हर दिशा में परिक्षेपण वे नहीं करती, और इसलिए उनके निज के ही रंग प्रमुखता प्राप्त कर लेते हैं तथा वे अधिक सपृक्त (सतृप्त) हो जाते हैं।

वर्षा भूमि के रंग को पूर्णतया बदल देती है। सड़क की पत्थर की रोड़ियाँ हमसे जितनी ही अधिक दूरी पर होती हैं तथा हमारी निगाह जितनी ही अधिक तिरछी पड़ती है, उतना ही अधिक प्रबल परावर्त्तन उनसे होता है। यह आश्चर्य की बात है कि बड़े मान के आपतन कोण के लिए न केवल ऐसफाल्ट की सड़को पर, बल्कि नाहमवार पत्थर-जड़ी सड़को पर भी इतना बढ़िया परावर्त्तन होता है! भीगने पर रेत, मिट्टी तथा रोड़ियों की सड़कों का रंग मटमैला तथा गहरा हो जाता है; वर्षा की प्रथम बूंदें कृष्ण वर्ण के धब्बों की शक्ल में उभरती हैं। ऐसा क्यों है? बालू के कणों के बीच की हर सन्धि में पानी प्रविष्ट हो जाता है। प्रकाश की किरण, जो अन्यथा सबसे ऊपर वाली परतों से परिक्षेपित हो जाती, अब अधिक दूरी तक भीतर प्रवेश करने के उपरान्त ही पुन. आँख तक वापस पहुँच पाती है; और इस अपेक्षाकृत अधिक लम्बे मार्ग में करीब-करीब यह पूर्णतः अवशोषित हो जाती है। सूखी मिट्टी आपाती प्रकाश का १४% परावर्त्तित करती है, गीली मिट्टी केवल ८ या ९%; सूखी रेत ३७% परावर्त्तित करती है तथा गीली रेत केवल २४% परावर्त्तित करती है।

एसफाल्ट की सड़क पर एकत्र हुआ पानी रंग के मनोहर शेड प्रदर्शित करता है;

(क) इस पानी की सतह नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करती है।

(ख) हाशिया जहाँ पर जमीन अभी गीली ही होती है, काले वर्ण का होता है।

(ग) इर्द-गिर्द का भूरे रंग का वातावरण।

गड्ढों के पानी में 'अल्जीआ' गहरे हरे रंग के रेशेदार पुञ्ज की शक्ल का होता है। पानी से बाहर निकला हुआ भाग रेशों के दर्मियान फँसी हवा के कारण अपेक्षाकृत काफ़ी पीलापन लिये हरे रंग का दीखता है। किन्तु इन्हीं पाण्डुर वर्ण वाले भागों को पानी के अन्दर डुबा कर हिलाइए और उन्हें दबोच दीजिए तो हवा के बबूले उनके अन्दर से निकल पड़ेंगे और साथ ही साथ उनका रंग गहरा हो जायगा।

२२४ (क). वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य में चटकीलापन

वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य पूर्णतया बदल जाता है, हर जगह पानी की बौछार के प्रभाव परिलक्षित होते हैं। दृश्य की अद्‌भुत् विलक्षणता न केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि छँटते हुए घने बादलों और स्वच्छ चमकीले आकाश के बीच गहरा विपर्यास होता है बल्कि इसलिए भी कि समस्त भू-दृश्य में चटकीले प्रतिबिम्बन दिखलाई देते हैं।

खास तौर पर भीगी पत्तियाँ प्रकाश की चमक में विशेष अभिवृद्धि करती हैं; जैसे शलजम की पत्तियाँ, बलूत वृक्ष की चोटी तथा खाई के सहारे लगी झण्डियाँ। किन्तु यह चमक केवल सूर्य की दिशा में ही देखी जा सकती है सो भी जब प्रेक्षण दिशा आपाती किरणों के साथ अल्पमान का कोण बनाये। सूर्य की दिशा से हटने पर तो केवल यत्र-तत्र ओस की एकाध चमकती हुई बूँद दीख जाती है।

घास पर गिरी पेड़ की पत्तियों द्वारा (जो वर्षा के जल से भीग चुकी होती हैं) प्रकाश-व्यवस्था की इन परिस्थितियों में होने वाले चकाचौंध के प्रतिबिम्बन से हम चकित रह जाते हैं। इस प्रभाव से हम सहज ही समझ सकते हैं कि रेतीले प्रदेशों में हमारे पुरातत्त्ववेत्ता प्रागैतिहासिक युग के साइलेक्स प्रस्तर अस्त्रों की खोज कैसे करते हैं। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य की ओर वे चलते हैं और भूमि पर पड़े उन टुकड़ों की तलाश करते हैं जो दूर से अपने चमकीले प्रतिबिम्बन के कारण दीख जाते हैं। इस प्रकार दानेदार रेत से उत्पन्न परिक्षेपण, तथा साइलेक्स प्रस्तर की चिकनी सतह से होने वाले परावर्त्तन, के पारस्परिक अन्तर से वे लाभ उठाते हैं।

२२५. भू-दृश्य में मानव-आकृति

'अपनी खिड़की से मैं एक आदमी को, जिसका शरीर कमर-से ऊपर नंगा है, गैलरी के फर्श पर काम करते हुए देखता हूँ। जब मैं उसकी त्वचा के रंग की तुलना बाहर की दीवार के रंग से करता हूँ तब मैं यह अनुभव करता हूँ कि इस बेजान चीज़ के मुकाबले में मांसल शरीर के झलकते हुए वर्ण विविध रंगों से कितने परिपूर्ण हैं!

यही बात कल प्लास-सेंट-सुल्पीस[1] में भी मैंने देखी, जहाँ एक छोटा लड़का फौआरे की प्रस्तर मूर्ति पर चढ गया था जिस पर धूप पड़ रही थी। उसका मांसल शरीर निष्प्रभ नारङ्गी वर्ण का था, छाया के हाशिये चमकीले बैंगनी रंग के थे तथा भूमि के रुख के साये के भागों में सुनहले वर्ण के प्रतिबिम्बन दीख रहे थे। बारी-बारी से नारङ्गी तथा बैंगनी रंग प्रबल होते थे या फिर ये एक दूसरे में मिल जाते। सुनहले रंग में किञ्चित् हरे वर्ण का पुट मौजूद था। शरीर का यथार्थ वर्ण केवल धूप और खुली हवा में ही देखा जा सकता है। जब कोई व्यक्ति खिड़की से बाहर अपना सिर निकालता है तो हम देखते हैं कि उसके चेहरे का वर्ण-विन्यास, कमरे के अन्दर की तुलना में नितान्त भिन्न होता है। इससे स्पष्ट है कि स्टूडियो के अन्दर कला-साधना कितनी निरर्थक सिद्ध हो सकती है—जहाँ हर कलाकार मिथ्या रंगों के चित्रण का यथाशक्ति प्रयत्न करता है।'

—डेलाक्राअ, जर्नल।

सन्ध्या के झुटपुटे में बदली वाले दिन सड़कों पर पुरुषों और स्त्रियों के चेहरों पर छाये सौन्दर्य और मृदुता के भावों का प्रेक्षण कीजिए। —लिनार्डो–दा–विन्ची।

इस उक्ति की बदौलत ही मैंने अनेक बार निष्प्रभ, म्लान तथा भूरे-धूसर दिन के प्रति अपने आक्रोश का शमन किया है।

२२५ (क). सिल्युएत[2] (छाया-आकृति)

इस शब्द का उपयोग उस समय करते हैं जब चमकीली पृष्ठभूमि के सम्मुख अधिक गहरे शेड की अदीप्त वस्तुएँ देखी जाती हैं जो चिपटी आकृति की दिखलाई पड़ती हैं। इस तरह का प्रभाव विभिन्न तरीकों से उत्पन्न हो सकता है—

१. जब वृक्षों और मकानों का अवलोकन सान्ध्य-आलोक के सुनहले प्रकाश की उलटी दिशा की ओर से करते हैं; इस दशा में इन वस्तुओं का जो पार्श्व हमारी ओर रुख करता है वह आकाश में अन्धकार छा जाने के कारण केवल अत्यन्त हल्के रूप से ही प्रकाशित हो पाता है। दिन की इस वेला में यह एकांगी प्रकाश-व्यवस्था ही सिल्युएत के निर्माण के लिए निर्णायक तत्त्व है। दिन के अन्य समय भी यह प्रभाव देखा जा सकता है जबकि आकाश में घने बादल छाये हुए हों और क्षितिज के निकट केवल एक सँकरा-सा प्रदेश खुला हो जो खुशनुमा नारङ्गी वर्ण के प्रकाश से चमक रहा हो (§१७८)।

1. Place St. Sulpice 2. Silhouettes

२. रात के समय जब सड़क पर लगे लैम्पों का प्रकाश सड़क पर पड़ता है तो रोशनी के इस चमकीले टुकड़े और हमारी आँख के दर्मियान यदि कोई व्यक्ति सड़क पर चल रहा हो तब उसका सिल्युएत दिखलाई पड़ता है। या जब सूर्य या चन्द्रमा समुद्र की सतह पर तेज चकाचौंध उत्पन्न करने वाली रोशनी फेंकता है और इसके सामने से कोई किश्ती गुजरती है तो यह एक प्रबल विपर्यास उत्पन्न करती है।

३. कुहरा या वर्षा जब एक झीना आवरण-सा उपस्थित करती है जिसके कारण प्रकाश-दीप्तियों के तमाम क्षुद्र अन्तर मिट से जाते हैं; इस दशा में गहरे शेड की बड़े आकार की वस्तुएँ अभी भी पहचानी जा सकती हैं और उनकी आकृति-रेखाएँ पर्य्याप्त रूप से सुस्पष्ट उभरती हैं। मीनार, मकान तथा वृक्षों के समूह, प्रदीप्त भूरी पृष्ठभूमि के सामने अधिक गहरे भूरे रंग के दीखते हैं।

४. रात में जबकि बड़े आकार की गहरे शेड की वस्तुएँ हलके प्रकाश से आलोकित रात्रि-आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास की बदौलत देखी जाती हैं।

२२५ (ख). एकांगी तथा सर्वाङ्गी प्रकाश-व्यवस्था

भू-दृश्य की दृष्टि-अनुभूति बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है किस प्रकार की प्रकाश-व्यवस्था में उसका अवलोकन किया जा रहा है। समस्या पर विचार-विमर्श का प्रारम्भ हम पहले उस परमावस्था को लेकर करेंगे जब भू-दृश्य पर प्रकाश एक बगल से पड़ रहा हो और तब क्रम से अधिक सामान्य प्रकाश-व्यवस्थाओं पर हम विचार करेंगे, और अन्त में उस दशा को लेंगे जब कि भू-दृश्य पर पड़ने वाला प्रकाश पूर्णतः विस्तृत हो। हर दशा के लिए हम देखेंगे कि भू-दृश्य पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है।

रात्रि में आर्क लैम्प (प्रकाश के करीब-करीब एक आदर्श बिन्दु-स्रोत) की चका-चौंध उत्पन्न करने वाली रोशनी में जो आसपास के अन्य सभी प्रकाश-स्रोतों पर हावी हो जाती है, छायाएँ अत्यन्त काली तथा तीक्ष्ण बनती हैं; अतः चेहरे की झुर्रियों को अति संवर्द्धित करके लोगों को ये वृद्ध-सा बना देती हैं।

खुले आकाश के समय धूप में अब भी छाया तीक्ष्ण तथा काली बनती है, यद्यपि इस दशा में भी नीले आकाश के विसृत प्रकाश के कारण छाया में प्रकाश की कुछ मात्रा पहुँच जाती है। हम देखते हैं कि सूर्य का कुछ भाग जब बादल के पीछे छिप जाता है तो छाया किस प्रकार धुँधली पड़ जाती है, और सूर्य जब पूर्णतया छिप जाता है तब उससे प्रक्षेपित होने वाली कोई छाया तो नहीं बनती, केवल ऐसे क्षेत्र मिलते हैं जिनमें

कुछ अधिक दीप्तिमान् होते हैं, कुछ कम। यह अवस्थान्तर एक अन्य तरीके पर भी उत्पन्न हो सकता है; वन के अन्दर की खुली जगह आकाश के केवल एक परिमित भाग द्वारा प्रकाशित होती है—अतः इससे उत्पन्न होनेवाला प्रभाव इस भाग के बड़े या छोटे होने के अनुसार ही बदलता रहता है।

सूर्य जब ऊँचाई पर स्थित होता है तब भू-दृश्य के निर्माण में छायाएँ कोई विशेष महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लेतीं, सारा दृश्य सर्वत्र चमकीला होता है जो आँखों को थका देने वाला होता है। केवल सूर्य जब आकाश में नीचे उतरता है तभी प्रकाश और छाया की सम्पन्न विविधता प्रगट होती है।

देहात के सपाट या स्वल्प मात्रा के चढ़ाव-उतार वाले क्षेत्र में, आकाश में कम ऊँचाई पर स्थित सूर्य द्वारा प्रक्षेपित छायाएँ जमीन के उभार को तीव्र रूप में सर्वाद्धित करके प्रदर्शित करती हैं। तब इसकी किरणें भूमि की सतह को करीब-करीब स्पर्श करती हुई जाती हैं, और आलोक तथा छाया के अत्यन्त विलक्षण प्रभेद उपस्थित करती हैं। इसे एक छोटे पैमाने पर, यद्यपि अतिशयोक्ति के साथ, रेतीले मैदान पर सूर्यास्त के करीब देखा जा सकता है—उस वक्त मैदान का प्रत्येक कंकड़ या हरएक उभार एक लम्बी छाया डालता है, भूमि चन्द्रमा के भू-दृश्य के फोटो सदृश दीख पड़ती है और ऐसा मालूम पड़ता है कि यह कोई मायावी प्रदेश है। दिन के अन्य समयों पर भी इसी तरह का प्रभाव देखा जा सकता है—जैसे उस वक्त जब कि किसी फार्म की सफ़ेदी की गयी दीवार पर उसकी सतह के लगभग समानान्तर किरणें गिरती हैं; हम अतिरंजित रूप में देख सकते हैं कि दीवार की सतह कितनी अधिक खुरदरी है।

अन्त में हम इस बात का आभास देने का प्रयत्न करेंगे कि कई दिनों की लगातार धूप और नीले आकाश के उपरान्त जब आकाश पर बादलों का एक समरूप आवरण प्रगट होता है तो भूदृश्य पर कितनी सामञ्जस्य और राहत छा जाती है। अब सर्वत्र चमक मन्द पड़ जाती है, दीप्ति के अन्तर अब अपेक्षाकृत कम होते हैं; छायाएँ गायब हो जाती हैं और स्थानीय प्रतिबिम्बन अब नहीं दिखाई पड़ते। आँखें आजादी के साथ हर दिशा में देख सकती हैं—चकाचौंध से आँखों के चौंधिया जाने का खतरा नहीं रहता।

सभी दिशाओं से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था की एक चरम अवस्था निम्नलिखित विवरण में व्यक्त की गयी है—

"हिमाच्छादित भूमिखण्ड सान्ध्य प्रकाश में पूर्णरूप से इतना अधिक समरूप दीखता है कि यह देख पाना नितान्त असम्भव होता है कि सामने की हलके ढाल वाली

पहाड़ी का आरम्भ कहाँ से होता है या कहाँ पर वह खत्म होती है। केवल हमारी संतुलन-अनुभूति ही हमें इस बात का आभास कराती है, सो भी इतने अचानक तरीके से, *कि आश्चर्यचकित होकर हम उस वक्त एक दूसरे का मुँह ताकने लग जाते हैं जब कि हमें एक अजीब-सी अनुभूति यह होती है कि पूर्णतः चिपटी भूमि पर हम नीचे ढाल की ओर चल रहे हैं।"*

इस तरह के उभार-रहित एकसम हिमाच्छादित भू-दृश्य की तुलना, धूप में दीखने वाले स्काइ की लीकों[1] की निलछौंवे रंग की तीक्ष्ण छाया से कीजिए ! यूनानी इमारतों के स्तम्भों की तुलना, एकांगी प्रकाश-व्यवस्था में, तथा सभी दिशाओं से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था में कीजिए; ध्यान दीजिए किस प्रकार तरङ्गित जल की सतह की जगमगाहट उस वक्त गायब हो जाती है जब आकाश पर बादल छा जाते हैं ! हर बार पुनः आप भली प्रकार महसूस करेंगे कि भू-दृश्य के प्रदीप्ति-वितरण को निर्धारित करने में धूप और छाया का महत्त्व कितना अधिक है।

1. Ski traces

अध्याय १३

स्वतः प्रकाशित पौदे, जीव तथा पत्थर

२२६. जुगनू

'वी. से कहना कि मैने आल्प्स तथा अपिनाइन्स पर्वत-श्रेणी को पार कर लिया है, और बफ़ॉन द्वारा आयोजित सग्रहालय "ज़ार्दे -दे-प्लान्ते" का मैंने अवलोकन किया, चित्रकला और मूर्त्तिकला की सर्वश्रेष्ठ कृतियों के नगर लूव्र को मैंने देखा, लक्सेमबर्ग मे रुबेन्स की कृतियाँ देखी तथा मैंने जुगनू देखा !!!' फैरेडे द्वारा अपनी माता को लिखा गया पत्र—लाइफ़ एण्ड लेटर्स।

वास्तव मे जुगनू 'कीट' जाति का कत्तई नही होता बल्कि यह 'गुबरौड़ा' की जाति का जीव होता है। मादा जुगनू के पख नही होते, ये रेंगती फिरती है, नर जुगनू उडते हैं। साधारण जुगनू (लाम्पिरिस नाक्टिलूसा[1]) इङ्गलैण्ड के कतिपय दक्षिणी प्रान्तो मे प्रचुरता से पाया जाता है तथा स्काटलैण्ड मे टे नदी के दक्षिण मे, किन्तु आयर्लैण्ड मे नही। पीछे वाले उदर के अन्तिम दो खण्डों मे प्रकाशोत्पादक अग स्थित होता है और इसमें एक विशेष पदार्थ होता है जिसका आक्सीकरण होने पर रासायनिक-दीप्ति से वह स्वतः प्रकाशित हो जाता है। उत्सर्जित होने वाली किरणों का रग ठीक वही होता है जिसके लिए हमारे नेत्र सर्वाधिक मात्रा में सुग्राही होते है और इस प्रकार में अवरक्त किरणें नही होतीं; अतः हम कह सकते है कि यह जीव, वास्तव मे प्रकाश का एक आदर्श स्रोत है—काश इसकी चमक थोड़ी और तेज होती !

नन्हें आकार के इस सुनहले प्रकाश के धब्बे की रमणीयता विलक्षण होती है, और यह करीब-करीब एक तारे की याद दिलाता है। क्यों नही, उदाहरण स्वरूप, इसकी तुलना अभिजित्[2] नक्षत्र से करें जो कि आकाश में अभी चमक रहा है? तुलना करना आसान नहीं होगा, किन्तु कुछ निकट आकर फिर पीछे हट कर खड़े होने पर मैं पाता हूँ कि करीब १३ मीटर की दूरी पर जुगनू उतना ही चमकीला प्रतीत होता है जितना

1. Lampyris noctiluca 2. Vega

अभिजित् तारा। यदि हम जानते हैं कि इस तारे से हमें करीब-करीब उतना ही प्रकाश मिलता है जितना १.४ कैन्डल शक्ति के प्रकाशस्रोत से जो १००० मीटर के फासले पर रखा गया हो। अतः जुगनू की प्रदीप्ति तीव्रता i ज्ञात कर सकते हैं।

$$\frac{i}{१३^{2}} = \frac{१.४}{१०००.\ १०००}$$, अतः $i = ०.०००२$ कैन्डल शक्ति।

२२७. समुद्र की स्फुरदीप्ति[1]

समुद्र की स्फुरदीप्ति, हमारे देश (हालैण्ड), के निकट के भागों में मुख्यतः लाखों सूक्ष्म आकार के समुद्री जीवों (नॉक्टिलूका मिलियरिस[2] की जाति के) द्वारा उत्पन्न होती है। ये फ्लैजेलाटे[3] वर्ग के प्रोटोज़ोआ होते हैं जिनका आकार ०.२ मिलीमीटर के लगभग होता है, अर्थात् वह इतने बड़े होते हैं कि नंगी आँखों से ये पृथक्-पृथक् बिन्दुओं की शक्ल में देखे जा सकते हैं। ये केवल तभी प्रकाश उत्पन्न करते हैं जब पानी में आक्सीजन घुली हो जैसे पानी के मथे जाने पर या लहरों के उद्वेलन के कारण। इसकी वजह से इनके शरीर में मौजूद एक विशेष पदार्थ का आक्सीकरण हो जाता है किन्तु इसका ताप कुछ खास बढ़ने नहीं पाता; न ही इस प्रकाश की संरचना उस प्रकाश के मानिन्द होती है जो ताप के कारण चमकने वाली वस्तु से प्राप्त होता है। यह तापजनित विकिरण की क्रिया नहीं है, बल्कि यह रासायनिक दीप्ति की क्रिया है।[4] इस प्रकाश में न तो अति-बैंगनी किरणें होती हैं और न अवरक्त किरणें, केवल वे ही वर्ण इसमें मौजूद होते हैं जो हमारी आँख में प्रकाश की प्रबल अनुभूति उत्पन्न करते हैं, जैसे खास तौर पर पीले तथा हरे वर्ण।

यदि समुद्र के पानी में, जहाँ स्फुरदीप्ति उत्पन्न करने वाले जीव अधिक संख्या में मौजूद हों, आप अपनी उँगली डुबाएँ तो आप को एक हलकी चुनचुनाहट-सी लगेगी। इस प्रकार दिन में ही आप पूर्वानुमान लगा सकते हैं कि रात में वहाँ के समुद्र में सुंदर स्फुरदीप्ति दिखाई पड़ेगी या नहीं।

समुद्र की स्फुरदीप्ति, गर्मी के मौसम में, अक्सर तपिश वाले दिन की गरज-तड़प-वाली सन्ध्या को, विशेष स्पष्ट देखी जा सकती है। बगल की सड़क पर लगे लैम्प या होटलों की बत्तियों के कारण सदैव ही इस बात का संदेह उत्पन्न होने लगता है कि समुद्र

1. Phosphorescence 2. Noctiluca miliaris 3. Flagellates
४. सच पूछा जाय तो 'स्फुरदीप्ति' का अर्थ नितान्त भिन्न होता है और समुद्र की दीप्ति के सम्बन्ध में इसका कभी भी उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

में दीखने वाला प्रकाश वास्तव में स्फुरदीप्ति ही है या कि लहरों के शृंग पर बननेवाले झाग से प्रतिबिम्बित होने वाला प्रकाश। इस कारण इस घटना का सौन्दर्य पूर्णतया निर्दोष उस वक्त होता है जब रात्रि नितान्त अन्धकारपूर्ण हो। तथापि प्रेक्षण की परिस्थितियाँ यदि इस आदर्श को नहीं पहुँच पाती हों, तो ऐसी हालत में बेहतर यह होगा कि आप अपने जूते-मोजे उतार डालें और पानी में प्रवेश करके सतह से नीचे अपने हाथ से जल-राशि को हिला-डुला दें।

यदि स्फुरदीप्ति स्पष्ट दिखलाई नहीं पड़ती तो भी पानी को हिलाते समय आपको इक्की-दुक्की चिनगारी यत्र-तत्र दीख जायगी जो बस एक लमहे के लिए रोशनी देती है और फिर गुल हो जाती है। एक बाल्टी को समुद्र के पानी से भर दीजिए और उसे पूर्ण अन्धकारवाली जगह में रखिए। कम अनुकूल परिस्थितियों वाले दिन भी, आप-को स्फुरदीप्ति का आभास मिल सकेगा, यदि इस पानी को आप किसी छिछले बरतन में उँडेलें या जब अल्कोहल, फार्मोल, या कोई अम्ल पानी में उँडेलकर आप इन सूक्ष्मकाय जीवों को उत्तेजित कर दें। इस स्फुरदीप्ति वाले पानी को गिलास में उँडेलिए, ये नन्हें जीव सतह पर इकट्ठे हो जाते हैं। गिलास को हलके ठकठकाएँ, यान्त्रिक कम्पन के कारण ये जीव प्रकाश उत्सर्जित करने लगेंगे और यदि इस क्रिया को आप बार-बार दुहराएँ तो प्रकाश का उत्सर्जन शनैः-शनैः क्षीण पड़ता जायगा।

कुछ अवसरों पर, समुद्र-जल में जब स्फुरदीप्ति उत्पन्न होती है तो उसमें पृथक्-पृथक् चिनगारियाँ नहीं देखी जा सकती हैं। इस घटना का कारण बैक्टीरिया (Micrococcus Phosphoreus) की उपस्थिति है।

समुद्र की स्फुरदीप्ति के लिए एक मापक्रम तैयार कीजिए !

सर्दी के दिनों की शाम को प्रयोग कीजिए जबकि एक तरह से निश्चित होता है कि स्फुरदीप्ति मौजूद न होगी; और झाग फेंकती हुई तरङ्गों का निरीक्षण कीजिए; अनुकूल परिस्थितियों की शाम को आप अन्तर देख पायेंगे।

यदि आप समुद्र-यात्रा में हों (विशेषतया उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में) तो अँधेरी रात को आप बाहर निकल कर जहाज के अग्रभाग में या पृष्ठभाग में खड़े हो जायँ ताकि जहाज की रोशनी आड़ में पड़े। आप प्रकाश-चिनगारियों का अनवरत क्रम देखेंगे जो तेजी से पीछे को भागती नजर आयेंगी; ये स्वतः प्रकाश उत्पन्न करनेवाले तरह-तरह के समुद्री जीवों की वजह से पैदा होती हैं।

हिन्द महासागर में तथा अन्य दक्षिणी समुद्रों में कभी-कभी समूचा समुद्र प्रकाश से जगमगाता हुआ दीखता है, और इसकी सतह पर वृहत्काय आलोक-धारियों का एक

ढाँचा, पहिये की तीलियों की तरह घूमता हुआ जान पड़ता है—ये वायुजनित तरङ्गें तथा जहाज के अग्रभाग से उत्पन्न हुई तरङ्गें हैं जो पानी पर गुजरने पर उसे विक्षुब्ध बना देती हैं और इस कारण इसमें स्फुरदीप्ति पैदा हो जाती है।

२२८. दीप्तिमान् लकड़ी; दीप्ति-युक्त पत्तियाँ

कभी-कभी ग्रीष्म की उमस वाली रात्रि में, नम जङ्गल के अन्दर हम देख सकते हैं कि सड़न खाती हुई लकड़ी किस प्रकार हलकी रोशनी पैदा करती है। यह रोशनी लकड़ी में हर तरफ़ प्रविष्ट हुए मधु-फफूंद[1] के रेशे से उत्पन्न होती है।

वसन्त या जाड़े में पेड़ का ऐसा तना ढूँढ़िए जिसकी छाल पर बिखरे हुए मटमैले रेशे दीख रहे हों और जो तने पर से आसानी से अलग किये जा सकें। ऐसे ही तने के कुछ टुकड़े गीली सेवार में लपेटकर घर ले आइए और अँधेरे कमरे में उन्हें रख कर काँच के जार से ढक दीजिए। कुछ ही दिनों में लकड़ी पर लगी फफूंद के रेशे रोशनी देने लग जायेंगे। किञ्चित् अवसरों पर सड़न खानेवाली शाखें भी प्रकाश उत्सर्जित करती हैं; ऐसा बैक्टीरिया के कारण होता है।

'बीच' तथा बलूत की सूखी पत्तियों के बड़े ढेर जिनमें पत्तियाँ करीब-करीब आधी सड़ी हालत में होती हैं, सड़न की एक खास अवस्था में स्पष्ट रूप से प्रकाश उत्पन्न करते हैं। करीब ४ इंच से लेकर १२ इंच तक मोटाई का ढेर ढूँढ़िए; बिलकुल ऊपर पड़ी हुई इक्की-दुक्की पत्तियाँ मत लीजिए, बल्कि अन्दर एक दूसरी से सटी हालत में पड़ी हुई पत्तियों को उठाइए जिन पर पीत-श्वेत वर्ण के धब्बे पड़े होते हैं, और ऐसी ही करीब एक मुट्ठी पत्तियों को अन्धेरे कमरे में ले जाइए। इनकी दीप्ति की उत्पत्ति ऐसी जाति की फफूंद से होती है जिसका अभी तक ठीक-ठीक पता नहीं लगाया जा सका है।

२२९ (क). रात्रि में बिल्ली की आँखें[2]

हम सभी जानते हैं कि कितनी खौफनाक रोशनी बिल्ली की आँखों से निकलती जान पड़ती है। फिर भी यह वास्तव में केवल परावर्त्तित प्रकाश होता है, किन्तु साय-किल के परावर्त्तक से या ओस से ढकी घास के हेलिगेन्शीन से आनेवाले प्रकाश (§१६८) के मानिन्द यह प्रकाश भी केन्द्रित परावर्त्तन से प्राप्त होता है। बिल्ली की आँख के कोनिया में प्रवेश करनेवाली किरणें आँख के पृष्ठतल पर अत्यन्त स्पष्ट बिम्ब का निर्माण करती हैं और यह बिम्ब अपनी किरणों को उसी कोनिया के रास्ते परावर्त्तित

1. Honey fungus 2. Nat. 88,377,1912

करता है जो लगभग उसी मार्ग पर वापस आती है जिस मार्ग पर वे प्रविष्ट होते समय गयी थी। इस घटना का सर्वाधिक स्पष्ट रूप में अवलोकन करने के लिए बिल्ली की आँख, लैम्प तथा प्रेक्षक की आँख एक ही सीधी रेखा में स्थित होनी चाहिए। ऐसा करने के लिए टार्च को अपनी आँख की ऊँचाई पर रखना चाहिए, बिल्ली की आँखों की द्युति इस दशा में ९० गज के फासले तक भी दिखाई देगी।

कुत्तों की आँखों से परावर्तित होनेवाला प्रकाश रक्तिम वर्ण का होता है। भेड़, खरगोश तथा घोड़ों की आँखें भी दीप्तिमान् होती हैं, किन्तु मानवनेत्र नहीं।

२२९ (ख). सेवार पर प्रकाश का परावर्तन

खुला आकाश प्रभात की सुहावनी वेला है, जबकि घास सर्वत्र ओस से ढकी हुई है। गहरे साये की ओर की खाई में नियम[1] जाति की सेवार के पौदे खूब उगे हुए हैं, इनके छोटे नाजुक तने पर नन्ही पत्तियों की दो कतारें लगी हैं जो इस बात का आभास देती हैं मानों उन पर जगमगाते हुए नन्हे तारे बिखरे पड़े हैं। प्रत्येक तारा सुनहली हरी रोशनी विकिरित करता है जो जगमगाती हुई ओस की बूंदों की रोशनी की तुलना में कहीं अधिक स्थिर है। अधिक बारीकी से प्रेक्षण करने पर हम देखते हैं कि इन नन्हीं पत्तियों के नीचे सर्वत्र छोटी-छोटी बूंदें लटकी हुई होती हैं। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सूर्य का प्रकाश पत्तियों के हाशिये से प्रवेश करता है और यहाँ बूंदों में इसका पूर्ण परावर्त्तन हो जाता है तो एक बार फिर पत्तियों में से गुजरकर यह बाहर आ जाता है—सुनहले हरे रंग की उत्पत्ति इसी क्रिया के दौरान में होती है।

बवेरिया में फिस्तेलगर्व की खोह कन्दराओं और दरारों में पायी जानेवाली सुविख्यात दीप्तिमान् शैवाल सिटोस्टेगा ओस्मनडासिया[2] और भी अधिक मनोरम प्रकाश-प्रतिबिम्बन का प्रदर्शन करती है। इस शैवाल में इसके गोलाकार कोष स्वयं ही परावर्त्तक बूंदों का कार्य करते हैं।

२३०. पौदों के रस की प्रतिदीप्ति

वसन्त में अखरोट के वृक्ष की छाल को काट कर उसके टुकड़े कर लीजिए और उन्हें गिलास के पानी में डाल दीजिए। पौदे का रस पानी के साथ मिल जाता है और तब यह एक अदभुत नीला प्रकाश देने लगता है जिसका अवलोकन अच्छी तरह उस

1. Mnium 2. Schistostega osmundacea

व्यक्त किया जा सकता है जब एक उत्तल लेन्स की मदद से सूर्य-किरणों का एक शंकु द्रव के भीतर डाल दें। (इसके लिए घड़ीसाज का आतशी शीशा या परिवर्द्धक काँच ले सकते हैं)। इस घटना का कारण यह है कि सूर्य-प्रकाश के पार-बैंगनी किरणों का (हमारे लिए जो अदृश्य होती हैं) तथा बैंगनी रंग की किरणों का यह द्रव अवशोषण कर लेता है और उनके बजाय नीली किरणों को यह उत्सर्जित करता है। इस तरह के रूपान्तरण को 'प्रतिदीप्ति' कहते हैं।

कहा जाता है कि बड़े पैमाने पर उगाये जाने वाले क्षीरी[1] वृक्ष की छाल भी इस घटना को प्रदर्शित करती है।

२३१. स्फुरदीप्ति प्रदर्शित करने वाली बर्फ और तुषार

एक प्राचीन आख्यान के अनुसार बर्फ से ढके मैदान सूर्य द्वारा काफी अरसे तक प्रकाशित होने के बाद, रात को हलका प्रकाश देते हैं। शून्य से कई डिग्री नीचे के ताप-क्रम के तुषार के लिए भी कहा जाता है कि यदि सूर्य की किरणें इस पर देर तक गिरती रही है तो इसे अँधेरे कमरे मे ले जाने पर इसमें से प्रकाश निकलता है। कहा जाता है कि ओले, विशेषतया जो तूफान के आरम्भ में गिरते हैं, एक तरह की विद्युद् दीप्ति का प्रदर्शन करते है। इस घटना की जाँच कौन करेगा?

२३२. पत्थरों से चिनगारियों का फूटना

कभी-कभी हम देखते हैं कि किस प्रकार सड़क के ककड़ों पर घोड़े अपने खुर इस जोर से मारते है कि चिनगारियाँ फूट निकलती है।

सड़क के किनारे पड़े चकमक पत्थर या साधारण पत्थर के रोड़े उठा लीजिए। ये रोड़े बादामी रंग का पुट लिए होते हैं और कोरों पर थोड़े पारदर्शी होते है, तथा आम तौर पर कोने उनके हलके घिस गये रहते हैं—इनकी संरचना मणिभ-जैसी नहीं होती। ऐसे दो टुकड़ों को लेकर यथासम्भव अँधेरी जगह में उन्हें आपस में एक दूसरे से टक्कर लगाइए—चिनगारियाँ फूटेंगी और एक अजीब-सी महक भी पैदा होती है। अन्य पत्थरों के साथ भी यही देखा जा सकता है। टक्कर के फलस्वरूप टूटकर अलग होने वाले जर्रों से ये चिनगारियाँ उत्पन्न होती हैं क्योंकि चोट लगने से ये तप्त हो उठते है। इस क्रिया में कुछ गैसें भी मुक्त होती हैं जिनसे यह अद्भुत गन्ध निकलती है।

1. Fraxinus Ornus

२३३. दल-दल का मिथ्या प्रकाश (विल-ओ-द-विस्प[1])

जनश्रुति के अनुसार गिर्जाघर के अहाते मे विल-ओ-द-विस्प की ज्योतियाँ नन्ही लौ की भाँति नाचती है या ये यात्रियो को भ्रम मे डाल कर उन्हे दलदल मे ले जाकर फँसा देती है। किन्तु इनका अस्तित्व, किसी भी अर्थ मे केवल परीलोक का किस्सा नही समझा जा सकता। ये सुविख्यात ज्योतिपज्ञ बेसेल तथा अन्य कुशल प्रेक्षको द्वारा देखी गयी है तथा उन्होने उनका वर्णन किया है; कठिनाई यह है कि यह घटना बहुत ही विभिन्न शक्लें धारण कर सकती है।

विल-ओ-द-विस्प प्रकाश दलदलो मे पाये जाते है, या उन स्थानो पर जहाँ से पीट[2] खोद कर जमीन से बाहर निकाली जाती है तथा टीलो के किनारे, यदा-कदा बगीचे की नर्सरी की नम भूमि पर जिसमे हाल मे खाद डाली गयी हो, ये देखे जा सकते है बशर्ते मिट्टी पर हम अपने पैर पटके; या कीचड़ वाले गड्ढो और नालियों मे ये दिखलाई पड़ते है, जबकि उनके अन्दर के पानी को हम हिलाते है। ग्रीष्म ऋतु की रातो को, या शरद की उमसवाली वर्षा की रातों मे, ये जाडे की अपेक्षा अधिक प्रचुरता से दिखलाई पड़ते है। ये नन्ही लौ सरीखे होते है जो लगभग $\frac{1}{2}$ इच से लेकर ५ इच तक ऊँची होती है और इनकी चौड़ाई २ इच से अधिक नही होती। कभी-कभी ये एकदम जमीन पर स्थित होते है और अन्य अवसरो पर भूमि से करीब ४ इच की ऊंचाई पर ये उतराते रहते है। यह कहना कि 'वे नाचते रहते है' प्रकाश्यत. सच नही है। वस्तुत. होता यह है कि ये अचानक विलुप्त हो जाते है तो उसी के निकट एक दूसरी ज्योति प्रगट होती है और कदाचित् इसीसे ऐसा आभास होता है मानो ज्योति मे तीव्र हरकत हो रही है। कभी-कभी बुझने के पहले वे ज्योतियाँ हवा के साथ कई फुट तक बहा ले जायी जाती है। कई अन्य ऐसे दृष्टान्त देखे गये है जबकि विल-ओ-द-विस्प लगातार घण्टों तक प्रज्वलित रहा है, कभी-कभी सारी रात और दिन तक लौ जलती रही है। जब नयी ज्योति प्रज्वलित होती है तो कभी-कभी एक नन्हे विस्फोट की 'पॉप' सी आवाज सुनाई पड़ती है। कहा जाता है कि ज्योति का रग कभी पीला होता है, कभी लाल या नीला। कई दशाओ में, जब हम अपना सिर इसकी ज्योति मे रखते है तो गर्मी की अनुभूति नहीं होती; हाथ की एक छड़ी जिसमे ताँबे की टंक लगी थी, लौ मे १५ मिनट तक रखी गयी तो इसका तापक्रम करीब-करीब पहले-जैसा ही बना रहा; सूखे तिनके तक इस लौ में आग पकड़ नहीं सके थे। अन्य दशाओं मे इस लौ से कागज तथा रुई की लच्छी

1. Will-O-the-Wisp कच्छ-प्रकाश 2. Peat

को प्रज्वलित किया जा सका था। सामान्यतः इसमें कोई गन्ध नहीं होती, पर यदा-कदा गन्धक की हलकी महक मिलती है।

ये रहस्यमयी ज्वालाएँ किस चीज की बनी होती हैं? कोई भी अभी तक उस गैस को एकत्र नहीं कर पाया है जिसके प्रज्वलित होने से यह लौ बनती है। अनुमान लगाया गया है कि यह गैस हाइड्रोजन-फास्फाइड हो सकती है जो हवा में स्वत. दहन की क्षमता रखती है; प्रगटतः फास्फीन (PH_3) तथा हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) का मिश्रण धुएँ और गंध के बिना ही प्रज्वलित होता है और इस तरह यथार्थ घटना को सन्निकटतः उत्पन्न कर सकता है। ये गैसें सड़ने-गलने वाले पदार्थों के विच्छेदन से उत्पन्न हो सकती हैं। इनकी लौ रासायनिक दीप्ति का नमूना है, और इसका निम्न ताप एक विशिष्ट गुण है जो इस किस्म की प्रक्रिया में अक्सर मौजूद पाया जाता है।

परिशिष्ट

२३४. प्राकृतिक घटनाओं का फोटो उतारने के लिए कुछ सुझाव

इस पुस्तक में वर्णित प्रत्येक प्रकाशीय घटना के बारे मे यह प्रश्न उठता है कि क्या उसका फोटो उतारना सम्भव नहीं हो सकता । आश्चर्य की बात है, कि यद्यपि इस दिशा में बहुत कुछ किया जा सकता है, किन्तु अभी तक इतना थोड़ा ही काम किया गया है ! सामान्यतः मामूली फिल्म के कैमरे से काम चल सकता है। कैमरे के साथ यदि स्टैण्ड काम में लाना हो तो इस स्टैण्ड मे गोली पर घूमनेवाला कब्जा[1] फिट करा लेना चाहिए (एकाध रुपये में यह कब्जा मिल सकता है); इस कब्जे की वजह से कैमरे को किसी भी दिशा मे इच्छानुसार झुका सकते है। इन्द्रधनुष तथा प्रभामण्डल आदि घटनाओं का फोटो उतारने के लिए चौड़े मुँह के लेन्स वाले कैमरे की आवश्यकता होगी। अस्त होते हुए सूर्य के कोरोना तथा उसकी विकृतियों का फोटो लेने के लिए कैमरे के लेन्स की फोकस-दूरी कम-से-कम १२ इंच अवश्य होनी चाहिए।

इनके लिए सदैव ऐसी प्लेट या फिल्म काम में लाइए जिसकी पीठ पर धुन्ध के निराकरण के निमित्त मसाला[2] पुता हो, और अच्छा होगा कि ये आर्थो या पैन्क्रोमैटिक किस्म की हों। भू-दृश्य के लिए जिसमें तुषार, ओले, फूलों से ढके वृक्ष, बादल या दूरस्थ क्षितिज मौजूद हों, आप आर्थो या पैन्क्रोमैटिक प्लेट और फिल्मों के साथ पीला फिल्टर[3] इस्तेमाल कीजिए। कैमरे के अभिदृश्य लेन्स पर सूर्य की रोशनी न पड़े, इसके लिए लेन्स के सामने एक खोखला बेलनाकार ओट काम में लाइए। अच्छा होगा कि भूदृश्य का फोटो उस वक्त लें जब सूर्य आकाश में अधिक ऊँचाई पर न हो। दृश्य पर सामने, पीछे या ऊपर से प्रकाश गिरने की अवस्थाओं के अन्तर का अध्ययन करने के लिए भी फोटो लीजिए (§२२३)।

कैमरे के लिए प्रकाश-दर्शन की समय-अवधि, वायुयान से फोटो उतारने के लिए $\frac{1}{300}$ सेकण्ड से लेकर चांदनी रात मे उतारे जाने वाले फोटो के लिए १ घण्टे तक रखी जा सकती है।

फिल्म को मेटोल–हाइड्रोक्वीनोन[4] डेवेलपर मे धोइए।

1. Ball-joint 2. Anti-halation backing 3. Filter
4. Metol-hydroquinone

२३५. मैदान में कोणों की नाप कैसे की जाती है

(क) अन्य किसी भी साधन की सहायता के बिना ही तारों की कोणीय ऊँचाई का अन्दाज लगाने का प्रयत्न कीजिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, पहले ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति निश्चित करने की कोशिश कीजिए और तब घूम जाइए और फिर देखिए कि आप ऊर्ध्वबिन्दु को उसी स्थल पर निश्चित कर पाते हैं या नहीं। इसके उपरान्त ४५° की कोणीय ऊँचाई ज्ञात करने की कोशिश कीजिए, फिर २२.५° की और तब ६७.५° की। आप पायेंगे कि सहज प्रवृत्ति यह होती है कि आप अपना सिर पर्याप्त मात्रा में पीछे की ओर नहीं झुका पाते (§१०९)। एक कुशल प्रेक्षक की त्रुटि कभी भी ३° से अधिक नहीं होती।

(ख) लकड़ी की तख्ती पर या कागज की दफ्ती पर पिन A, B तथा C इस ढग से लगाइए कि जिस कोण की नाप की जा रही है, वह BA तथा BC दृष्टि रेखाओं के दर्मियान विलकुल ठीक-ठीक पड़े। लकड़ी को सही तरीके पर व्यवस्थित करना होगा; या तो मेज पर इसे चौरस स्थिति में रखें या वृक्ष पर कील से इसे जड़ दें। तब B A और B C रेखाएँ खींच कर अंशाङ्कित चाप पर उस कोण का मान पढ़ लीजिए (चित्र १६०)।

(ग) पतली लकड़ी की डण्डी लीजिए जिसपर बराबर दूरियों पर पिनें या कीलें लगी हों और इसके मध्यबिन्दु पर एक दूसरी डण्डी (लम्बाई ३ फुट) का सिरा जोड़ दीजिए (चित्र १६०, a)। इस तरह प्राप्त ढाँचे को अब ऐसे पकड़िए
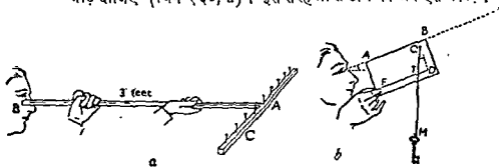
चित्र १६०—कोण आँकने का सरल उपकरण।

कि सिरा B आप के गाल के स्पर्श में हो तथा कीलें A और C विचाराधीन बिन्दुओं की सीध में पड़कर उन्हें ढक लें। तब निष्पत्ति $\frac{AC}{BA}$ उन दोनों बिन्दुओं

के दर्मियान के कोण का मान रेडियन में प्रगट करेगी (१ रेडियन=५७°)। यदि, उदाहरण के लिए, AC = ३ इंच हो तब $\frac{AC}{BA}$ = ०.०८ रेडियन = ४.७° होगा। कोण का मान यदि २०° से अधिक हो तब गणना की पद्धति थोड़ी विलष्ट हो जाती है।

(घ) सामने अपनी भुजा तान दीजिए और अपनी उँगलियाँ, अधिक-से-अधिक जितना हो सके, फैलाइए। तो अँगूठे और कनिष्ठा उँगली के पोरों के दर्मियान का कोण लगभग २०° होगा। या सामने भुजा को तानकर, हाथ में भुजा के समकोण पतली लकड़ी की डण्डी पकड़िए। विचाराधीन दोनों बिन्दुओं की इस लकड़ी पर आभासी दूरी यदि a से० मी० प्राप्त हो, तब प्रेक्षणाधीन उन बिन्दुओं के दर्मियान का कोण सन्निकटत a डिग्री होगा। इस विधि को और अधिक यथार्थ बनाने के लिए आँख से डण्डी तक की बिलकुल सही दूरी नापनी चाहिए।

(ङ) क्षितिज के ऊपर कोण मापने का एक सरल उपकरण भी लभ्य है जिससे प्राप्त कोण के मान ०.५° तक यथार्थ बैठते हैं। एक आयताकार दफ्ती का टुकड़ा लीजिए जिस पर बिन्दु C पर एक सूराख बना हो। इस बिन्दु से धागा CM लटकाइए जिसके निचले सिरे पर धातु का एक टुकड़ा बँधा हो। यह धागा साहुल रेखा का काम देगा (चित्र १६०, b)। प्रेक्षक, मान लीजिए, किसी वृक्ष की ऊँचाई नापना चाहता है, तो वह दफ्ती को इस तरह पकड़ेगा कि उसकी आँख से वृक्ष की चोटी तक जाने वाली दृष्टिरेखा ठीक दफ्ती के हाशिये AB की सीध में पड़े, प्रेक्षक दफ्ती को ऊर्ध्व धरातल से तनिक एक ओर झुकायेगा ताकि धागा दफ्ती की सतह से अलग होकर स्वतन्त्रतापूर्वक लटके, फिर उसे यह वापस ऊर्ध्व धरातल में ले जायगा ताकि धागा उसकी सतह को हलके स्पर्श कर ले। दफ्ती पर A B के समकोण पर रेखा C D खीचते हैं और A B के समानान्तर D T खीच लेते हैं। C D की लम्बाई, अच्छा होगा, यदि लगभग ४ इंच रखें। अब कोण D C M बराबर होगा A B तथा क्षैतिज तल के दर्मियान के कोण के, और इसका मान अंशाङ्कित चाप की मदद से नापा जा सकता है, या इसकी गणना tan $\frac{TD}{CD}$ से कर सकते हैं। छोटे मान के कोण के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{कोण का मान} = \frac{\text{T D (इंचों में)}}{४} \text{ रेडियन।}$$ (देखिए §§ १, १२०)
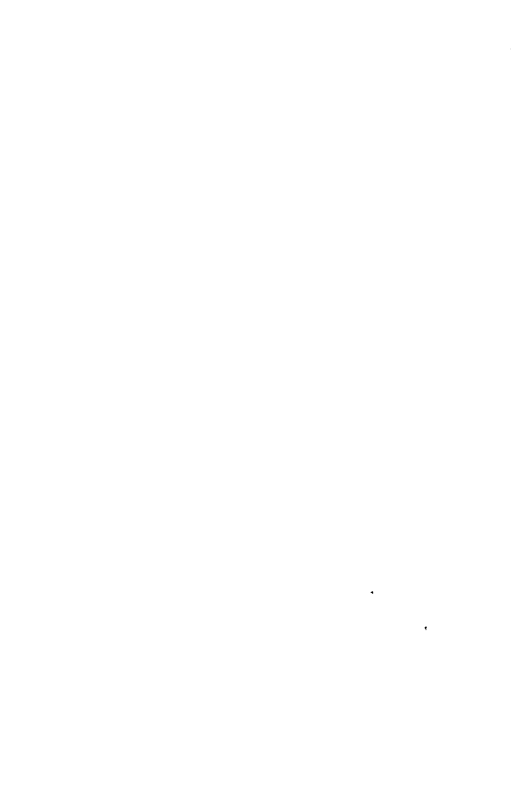
पारिभाषिक शब्दसूची

हिन्दी-अंग्रेजी

अ

अकीक–Agate, गोमेद
अखरोट (वृक्ष)–Horse chestnut
अग्रभूमि–Fore-ground
अणु–Molecule
अतिक्रम–Deviation, विचलन
अति-परवलय–Hyperbola
अतिबैंगनी–Ultra violet, पराबैंगनी
अतिरिक्त धनुष–Supernumerary bows
अति सवर्धन–Exaggeration
अत्यधिक शीतलीकृत–Supercooled
अदीप्तियाँ–Dark minima
अधोऽनुमान, न्यूनानुमान–Under estimation
अधोवर्ती सूर्य–Sub-sun
अध्यारोपित–Superimposed
अध्रुवित–Unpolarised
अनन्तदूरी–Infinity
अनियमित–Random
अनीमोमीटर–Anemometer
अनुकल–Integral
अनुकूलतम–Optimum
अनुकूल स्रोत–Coherent sources
अनुपूरक–Complementary
अनुप्रयुक्त–Applied
अनुप्रस्थ काट–Transverse section
अनुरूपी–Corresponding
अनुसूर्य–Sub-sun
अनुस्थापित–Oriented
अन्तरिक्ष-यान–Space-ships
अन्तर्ग्रही–Interplanetary
अन्धकार-रेखा–Line of darkness
अन्धविश्वास–Superstitions
अन्वालोपित–Enveloped
अन्वेषण–Investigation
अपसृत–Diverged
अप्रत्यक्ष–Indirect
अभिजित्–Vega
अभिदृश्य लेन्स–Objective
अभिलम्ब–Normal
अभिलोपित–Obliterated
अमोनिया–Ammonia
अम्ल–Acid
अरुन्धती–Alcor
अरोरा–Aurora

अर्ध गोला–Hemisphere
अलका–Cirrus
अलका-पुञ्ज–Cirro-cumulus
अलका-स्तार–Cirro-stratus
अल्जीआ–Algae
अवकरण–Reduction
अवचेतन–Subconscious
अवतल–Concave
अवधारणा–Concentration
अवमन्दित–Damped
अवयव–Component
अवरक्त–Infra-red
अवशोषण–Absorption
अविच्छिन्न–Cantinuos
अविरत–Continuous
असममित–Assymmetrical
असामान्य रूप से–Abnormally

आ

आंकिक पद्धति से–Statistically
आंशिक ग्रहण–Partial eclipse
आइसोफोटो–Iso-photo
आकाशगंगा–Milky way
आक्सीकरण–Oxidation
आक्सीकृत–Oxidised
आख्यान–Legend
आग्नेय चट्टानें–Granite
आणविक–Molecular
आत्मनिष्ठ–Subjective
आदर्श प्रमाप-Norm for comparison
आपतन तल–Plane of incidence
आपतित–Incident
आभामण्डल–Aureole
आभासी–Apparent
आयनीकरण–Ionization
आयनो-स्फियर–Ionosphere
आयाम–Amplitude
आर्कलैम्प–Arc-lamp
आर्थो–Ortho
आर्थोक्रोमैटिक–Orthochromatic
आर्द्रा नक्षत्र–Betelgeuse
आवर्धित–Magnified
आवृत्ति–Frequency
आश्वेत– Whitish
आस्मिक अम्ल–Osmic Acid

इ

इन्द्रधनुष–Rainbow
इलेक्ट्रान–Electron

उ

उच्च पुंज–Alto-cumulus
उच्च स्तर–Alto-status
उत्क्रमण–Inversion
उत्क्रमण बिन्दु–Point of inversion
उत्तर बिम्ब–After-image
उत्तर प्रकाश-ज्योति–After gloki
उत्तरीय प्रकाश–Northern lights
उत्तल–Convex
उत्तेजित–Stimulated
उत्सर्जन–Emission
उद्दीपन–Iridescence
उद्दीप्त–Iridescent

उपकरण–Apparatus
उपसूर्य–Parhelia
उपादान–Factor
उल्काएँ–Meteors
उष्ण कटिबन्ध–Tropics
ऊर्ध्वपातन–Sublimation
ऊर्ध्व बिन्दु–Zenith
ऊर्ध्वाधर–Vertical
ऊर्म्मिल–Undulating

ऋ

ऋतु-अनुसन्धान विज्ञान–Meteorology
ऋतुविज्ञान–Meteorology

ओ

ओजोन–Ozone
ओस-धनुष–dew-bow

क

कक्षा–Orbit
कणिकाएँ–Grains
कणिकामय–Granular
कनिष्ठा उँगली–Little finger
कन्या–Virgin
कम्पन–Vibration
कम्पार्टमेण्ट–Compartment
कर्क–Crab
कला-अन्तर–Phase-difference
कलिलीय–Colloidal
कास्यपीत–Bronze yellow
कान्तिचक्र–Corona, किरीट
कार्बनिक– Organic
कारण्ड घास–Duck weed
काले-भूरे–Ashgrey
किरीट–Corona
कीट–Insect
कुम्भ–Waterman
कुहरा धनुष–Fog-bow
कुहासा–Mist
कृत्रिम सूर्य–Mock sun
कृष्ण वस्तु–Black body
केन्द्रित परावर्तित प्रकाश–Directed, reflected light
कैण्डल शक्ति–Candle power
कोपलें–Shoots
कोटर–Socket (of the eye)
कोटि–Order
कोबाल्ट सल्फेट–Cobalt Sulphate
कोर्निया–Cornea
कोशा–Cell
क्यूप्रिक सल्फेट–Cupric Sulphate
क्रमागत–Successive
क्रमिक–Gradual
क्रॉस–Cross
क्रान्तिवलय–Ecliptic
क्रिस्टल–Crystal
क्लोरोफिल–Chlorophyll, पर्णहरित
क्वार्ट्ज–Quartz
क्षतिपूरक–Compensating
क्षीरी–Fraxinus Ornus
क्षैतिज–Horizontal
क्षैतिज दण्ड–Horizontal bar

ग

गर्त–Trough
गाउन–Gown
गुणात्मक–Qualitative
गुबरैला–Beetle
गुरुत्वाकर्षण–Gravitational attraction
गोलीय खण्ड–Spherical segment
गौण इन्द्रधनुष–Secondary rainbow
ग्लेशियर–Glacier, हिमनद
ग्लोब–Globe

च

चकमक पत्थर–Flint
चरण–Stage, क्रम
चाप– Arc
चिकनाई–Grease

छ

छल्ला–Ring, वलय

ज

जल-आकाश–Water-sky
जल-दूरबीन–Water-telescope
जल-प्रपात–Water-falls
जलरेखा–Water-line
जलवर्ण–Water-colour
जार–Jar
जिंक ह्वाइट–Zink white
जिलैटिन–Gelatine
जेरेनियम–Geranium
जीवाणु–Bacteria
जुगनू–Glow-worm
जैतूनी हरा–Olive green
ज्येष्ठा–Antares

झ

झिरी–Slit
झिलमिलाहट–Flickering

ट

टायर–Tyre
टिमटिमाहट–Scintillations

ठ

ठोसपन–Solidity

ड

डायफ्राम–Diaphregm
डेक–Deck
डैन्डीलियन–Dandellions

ढ

ढबैलापन–Turbidity

त

तंतु–Filament
तटस्थ–Neutral
तटस्थता–Objectivity
तड़ित्–Lightning
तड़ित्-अलका–Thunder-cirrus
तरंग-शृंग–Crests of waves
तरंगदैर्घ्य–Wavelength
तरंगाग्र–Wavefront
तरंगिकाएँ–Wavelets
तलीय खिंचाव–Surface tension
तापोज्ज्वल–Whitehot
ताराराशि–Constellation

ताल्बो–Talbo
तिनपतिया–Clover
तिर्यक्–Oblique
तीव्रता–Intensity
तुलनापत्र–Frame of reference
तुला–Scales
तुषार–Snow
तेज-शृंग–Prominences (of sun)
तैलीय–Oily

थ

थियरी–Theory

द

दक्षिणावर्त–Clockwise
दानेदार–Granular
दायरा–Oval
दिक्सूचक–Compass
दिगंश–Azimuth
दीप्तिमान्–Luminous
दीप्तिमान श्रेणी–Order of magnitude of illumination
दीप्तिमापी–Photometer
दीर्घवृत्त–Ellipse
दुहरा सूर्य–Double sun
दूरबीन–Telescope
देश–Space
देहली–Threshold
दृश्यता–Visibility
दृश्यपट–Scenery
दृष्टि-दिशा–Visual direction
दृष्टि-निरंतरता–Persistence of vision
दृष्टि-बिन्दु–Point of view
दृष्टिभ्रम–Illusion
द्विकोषीय अल्जीआ–Diatoms
द्विनेत्री दूरबीन–Opera Glass
द्विवर्णिक–Dichroism

ध

धनु–Archer
धरती-आलोक–Earth-light
धुन्ध–Mist, haze
धूमकेतु–Comet
ध्रुवक कोण–Polarising angle
ध्रुवण–Polarisation
ध्रुवणदर्शी–Polariscope
ध्रुवित–Polarised
ध्रुवीय–Polar

न

नभोमण्डल–Celestial vault
नर्सरी–Nursery
नाइग्रोमीटर–Nigrometer
नाभिक–Nuclei
निअन–Neon
निकट-दृष्टि–Short sight
निकल–Nicol
निम्नदाब–depression
नियामक अक्ष–Axis of co-ordinates
नियामक समतलपृष्ठ–Surface of reference
निरपेक्ष–Unprejudiced
निर्देशन-बिन्दु–Reference point

निलछवें–Bluish, नीलाभ
निशिताग्र–Cusp
नील–Indigo
नीललोहित–Purple
नेत्रगोलक–Eyeball
न्यूनानुमान–Underestimate

प

पट्टियाँ–Bands
पथरेखा–Locus, बिन्दुपथ
पथान्तर–Path-difference
परखनली–Test-tube
परमाणु–Atom
परमावस्था–Extreme case
परा-अलका–Ultra cirri
परागाशय–Anthers
परामिति–Parameter
परावर्तन–Reflection
परावर्तन-गुणाक–Coefficient of reflection
परिकल्पना–Assumption
परिक्षेपण–Scattering
परिक्षेपण-क्षमता–Scattering power
परिक्षेपित–Scattered
परिपार्श्व–Surroundings
परिभ्रमणगति–Rotatory motion
परिमितीय–Peripheral
परिवर्ती–Changing
परिवर्धक काँच–Magnifying glass
परिवर्धक लेन्स–Magnifying lens
परिवृत–Circumscribed
परिवृत ऊर्ध्व-बिन्दु चाप–Circum-zenithal arc
परिहार–Avoid
पर्किन्ज प्रभाव–Purkinje Effect
पाजिटिव–Positive
पाण्डुर–Pale
पारदर्शी–Transparent
पार-सामुद्रिक–Ultra-marine
पार्थिव–Terrestrial
पावर-हाउस–Power-house
पाश्चात्य विपा–Monkestood
पिण्ड-दर्शन–Steoroscopic vision
पिण्डदर्शन की घटना–Steoroscopic phenomenon
पीट–Peat
पुञ्ज-जलद–Cumulo-nimbus
पुञ्जमेघ–Cumulus
पुञ्ज-स्तारीय–Cumulo-stratus
पूरक–Complementary
पृष्ठदण्ड–Keel
पृष्ठभूमि–Back-ground
पेशियाँ–Muscles
पैन्क्रोमैटिक–Panchromatic
पोटैसियम क्रोमेट–Potassium chromate
पोर–Tip
पोलकी रत्न–Opal
पोलरायड–Polariod
प्रकाश-गृह–Light-house
प्रकाश-छल्ले–Light-rings

प्रकाश-तीव्रता–Intensity of light
प्रकाशदर्शन–Exposure
प्रकाश-मण्डल–Glory
प्रकाश-स्रोत–Source of light
प्रकाशीय–Optical
प्रक्षेपण–Projection
प्रज्वलन–Combustion
प्रति-चमक–Counter glow
प्रति-ज्योति–Counter glow
प्रति-प्रकाश स्रोतबिन्दु–Anti-light source point
प्रतिदीप्ति–Fluorescence
प्रतिफलित–Resultant
प्रतिरूप–Counter part
प्रति-सान्ध्य प्रकाश-Counter twilight
प्रति-सूर्य बिन्दु–Anti-solar point
प्रति-सूर्य–Antehelion
प्रत्यक्ष–Direct
प्रत्यावर्तन–Cycle
प्रत्यावर्ती–Alternating
प्रदीप्त चमक–Bright glow
प्रदीप्ति-तीव्रता–Intensity of light
प्रभा-मण्डल–Halo
प्रभाश–Procyon
प्रमुख इन्द्रधनुष–Primary rain-bow
प्रशान नील–Prussian blue
प्राधान्य–Predominance
प्रावण्य, प्रवणता–Gradient
प्रारूप–Pattern
प्रेक्षक–Observer
प्रेक्षणगम्य–Observable
प्रेतछाया–Spectre
प्रिज्म, समपार्श्व–Prism

फ

फलन–Function
फाता मोर्गाना–Fata morgana
फार्बेन लेहर–Farben lehre
फार्मोल–Formol
फास्फीन–Phosphene
फिलामेण्ट, (शिरा), तन्तु–Filament
फिल्टर–Filter
फुहार-उत्पादक–Vaporiser
फोकस दूरी–Focal length
फोटो इलेक्ट्रिक सेल–Photo-electric cell
फ्रेम–Frame
फ्लोर कन्ट्रास्ट–Flor-contrast

ब

बर्फ-निमीलन–Ice-blink
बर्फ-सूची–Ice-needle
बलूत—Oak
बहिर्द्वार–Exhaust port
बाडिस–Bodice
बादल-दर्पण–Cloud-mirror
बादामी–Brown
बाह्य त्वचा का–Epidermal
बिन्दुचित्रण–Pointillism
बिन्दुपथ–Locus
बीच–Beech

बृहत् वृत्त–Great circle
बृहत् श्वान–Great Dog
बृहस्पति–Jupiter
बैक्टीरिया, जीवाणु–Bacteria
बैंगनी–Violet
बोधगम्य–Perceptible
ब्रह्महृदय–Capella
ब्रह्माण्डीय–Cosmic
ब्रेक–Brake

भ

भस्म-सरीखे धूसर–Ash grey
भास स्थायी–Meta-stable
भू-दृश्य–Landscape
भोजपत्र–Birch

म

मडलक–Disc
मकर–Capricorn
मघा–Regulus
मधु फफूंद–Honey fungus
मनोवैज्ञानिक–Psychological
मरकत मणि–Emerald
मरीचिका–Mirage
मात्रात्मक–Quantitative
मानचित्र–Map
मापश्रेणी–Scales
मायावी–Capricious
मिथुन–Twins
मिथ्याप्रकाश–Will'o-the-wisp
मीन–Fishes
मृगव्याध–Orion
मेष–Ram
मैंगैनीज–Manganese
मोती के सीप–Mother of pearl
मोबिल आयल–Mobil oil

य

यथार्थता–Accuracy
α ययाति–Persei α
δ ययाति–Persei δ
युग्म तारे–Double stars

र

रंजक–Paint
रजत-श्वेत–Silver-white
रश्मिस्पर्शी वक्र–Caustic
β रथी–Aurigo β
राई–Rye
राशिचक्र–Zodiac
राशिचक्रीय प्रकाश–Zodiacal light
रासायनिक प्रदीप्ति–Chemi luminiscence
रिम–Rim
रीफ्लेक्स–Reflex
रूपदर्शन–Aspect
रूपान्तरण–Transformation
रेखाछादन–Hatching
रेटिना–Retina
रेडियन–Redian
रेलिंग–Railing
रैखिक गति–Translatory motion
रोमछिद्र–Pores
रोहिणी–Aldebaran

ल

लघु दीर्घ–Lesser minima
लघु श्वान–Little Dog
लचीला–Elastic
ललछवें–Redish
लाइकोपोडियम–Lycopodium
लाक्षणिक–Characteristic
लान–Lawn
लिनार्दो-दा-विन्ची–Leonardo-da-Vinci
लुब्धक–Sirius
लेन्स–Lens
लोकोक्ति–Proverb

व

वक्रसमूह–Family of curves
वरीयता की स्थितियाँ–Poistions of preference
वर्ण–Colour
वर्तन–Refraction
वर्तन कोर–Refracting edge
वर्तुलाकार–Round
वसिष्ठ–Mizare
वस्तुनिष्ठ–Objective
वाटिका ग्लोब–Garden globe
वामावर्त–Anti-clockwise
वायव्य–Ethereal
वायुजनित अनुदर्शन–Aerial Perspective
वायुज्योति–Air-glow
वायुवाष्प-मानलेखी–Psychrometer
विकल्पत:–Alternately
विकिरण–Radiation
विक्षेप–Deflection
विचलन–deviation
विच्छेदन–Decomposition
विनिमय–Exchange
विपर्यास–Contrast
विरल–Rare
विराम–Rest
विलयन–Solution
विलोम–Reverse
विवर्तन–Diffraction
विवर्तन ग्रेटिंग–Diffraction grating
विवर्तन धारियाँ–Diffraction fringes
विषम–Anomalous
विषम-तलीय–Skew
विषमता–Irregularity
विसरणयुक्त–Diffused
विसर्ग नली–Discharge tube
विसृत–Diffuse
विस्थापनाभास–Parallax
विस्फोट–Explosion
वीणा–Lyre
वेल्ड–Weld
वृश्चिक–Scorpion
वृष–Bull
व्यतिकरण–Interference
व्यवधान–Disturbance

श

शंकु–Cone

शंकु और दण्ड–Cone and rod
शनि–Saturn
शमन–Dampout
शमीधान्य–Lupine
शलाका–Beam
शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी–Physiological
शिराएँ–Filaments
शीर्ष–Maxima
शुक्र–Venus
शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर–Wet and dry bulb thermometer
शृंग–Crest
शेड–Shade
शैवाल–Mosses
श्रवण–Altair
श्रान्ति–Fatigue
श्रेणी–Series
श्वेत–White

स

संक्रमण–Transition
संगत–Consistent
संघनन–Condensation
संतत–Continuous
संदर्भवस्तु–Object of reference
संधान–Weld
संपुष्टि–Confirmation
संतृप्त, संपृक्त–Saturated
संभ्रम–Confusion.
संरचना–Structure
संविलीन–Merge
संवेदनशील, संवेदी–Sensitive
संश्लिष्ट–Compound
संसृत–Converging
सदिश त्रिज्या–Radius vector
सप्तर्षिमण्डल–Great Bear
सप्लाई–Supply
समकालिक–Simultaneous
समकेन्द्रीय–Concentric
समक्षित–Subtended
समतुल्य–Equivalent
सम दिशा का–Isotropic
सममित–Symmetrical
सममिति–Symmetry
सममिति-अक्ष–Axis of symmetry
समष्टि रूप से–*As a whole*
समभिकथन–*Assertion*
समानुयोजित–Adapted
समुद्री हरा–Seagreen
सर्चलाइट–Search light
सर्वग्रास–Totality (of eclipse)
सर्वांगी–All-sided
सर्वेक्षण–Survey
सल्फर-ट्राइ-आक्साइड–Sulphur tri *oxide*
सल्फाइड–Sulphide
सान्निध्य–Juxtaposition
साइटोप्लाज्म–Cytoplasm
साइलेक्स–Silex
सान्द्र कोण–Solid angle

सान्ध्य किरणें–Crepuscular rays
सान्ध्य प्रकाश–Twilight
साम्य–Harmony
सायनोमीटर–Cyanometer
साहुल–Plumb line
सिंह–Lion
सिल्युएत–Sillhouette
सीमान्तक–Limiting
सुग्राहिता–Sensitivity
सुरमई–Leaden
सूँस–Propoise
सूचीस्तम्भ–Pyramid
सूत्र–Formula
सेक्सटैण्ट–Sextant
सेफ्टी वाल्व–Safety valve
सेवार–Mosses
सैद्धान्तिक–Theoretical
सोडियम–Sodium
सौर परिवृत्त–Parhelic circle
स्काइ–Ski
स्केल–Scale
स्क्रू प्रोपेलर–Screwpropeller
स्ट्रैटोस्फियर–Stratosphere
स्तर-पुञ्ज–Strato-cumulus
स्थानान्तर–Displacement
स्थिराङ्क–Constant
स्पन्दन–Vibration
स्पर्शकीय चाप–Tangential arc
स्फान–Wedge, पच्चड़
स्फुरदीप्ति–Phosphorescence
स्वाति–Arcturus
स्वाति तारासमूह–Bootes

ह

हपुषा–Juniper
हाइड्रोजन सल्फाइड–Hydrogen sulphide
हीदर–Heather
हीलियम–Helium
हेड लाइट–Head light
हेडिंजर ब्रुश–Haidinger Brush
हेलिगेन्शीन–Heilingenshein
हेलमेट–Helmet

अंग्रेजी-हिन्दी

A

Abnormal–असामान्य
Abnormally–असामान्य रूप से
Absorption–अवशोषण
Accuracy–यथार्थता
Acid–अम्ल
Adapted–समानुयोजित
Aerial perspective–वायुजनित अनुदर्शन
After-glow–उत्तर प्रकाश-ज्योति
Agate–अक़ीक, गोमेद
Air-glow–वायु-ज्योति
Alcohol–अल्कोहल
Alcor–अरुन्धती (तारा)
Aldebaran–रोहिणी (नक्षत्र)
Algae–अल्जीआ
Algol –β तिमि
All-sided–सर्वांगी
Altair–श्रवण (नक्षत्र)
Alternately–विकल्पतः
Alternating–प्रत्यावर्ती
Alto-cumulus–उच्च पुञ्ज (मेघ)
Ammonia–अमोनिया
Ammonium sulphate–अमोनियम सल्फेट
Amplitude–आयाम
Anemometer–अनीमोमीटर
Anomalous–विषम
Antares–ज्येष्ठा (नक्षत्र)
Antehelion–प्रति-सूर्य्य
Anthers–परागाशय
Anti-solar point–प्रति-सूर्य्य बिन्दु
Apparatus–उपकरण
Apparent–आभासी
Applied–अनुप्रयुक्त
Arc–चाप
Archer–धनु (राशि)
Arcturus–स्वाती (नक्षत्र)
As a whole–समष्टि रूप से
Ash grey–भस्म सरीखा घूसर
Aspect–रूपदर्शन
Assertions–समभिकथन
Assumption–परिकल्पना
Astronomer–खगोल-शास्त्री
Asymmetrical–असममित
Atom–परमाणु
Aureole–आभामण्डल, आरिएल
Aurigo–β रथी
Aurora–अरोरा
Avoid–परिहार

Axes of co-ordinates–नियामक अक्ष

Axis of symmetry–सममिति अक्ष

Azimuth–दिगंश

B

Bacteria–बैक्टीरिया, जीवाणु

Background–पृष्ठ-भूमि

Bands–पट्टियाँ

Beam–शलाका

Beat–क्रमिक प्रकाश-दर्शन

Beech–बीच वृक्ष

Beetle–गुबरीड़ा

Betelegeuse–आर्द्रा (नक्षत्र)

Birch–भोजपत्र

Black body–कृष्ण वस्तु

Blade–ब्लेड, फलक

Bluish–निलछौवाँ

Bodice–बाडिस

Bootes–स्वाती तारासमूह

Brake–ब्रेक

Bright glow–प्रदीप्त चमक

Brown–बादामी

Bronze yellow–कांस्य पीत

Bull–वृष (राशि)

C

Candle-power–कैन्डल शक्ति

Capella α–α रथी (ब्रह्म हृदय)

Capricorn–मकर

Carro-stratus–अलका-स्तार (मेघ)

Caustic–रश्मिस्पर्शी वक्र

Celestial vault–नभोमण्डल

Cells–कोष

Changing–परिवर्त्ती

Characteristic–लाक्षणिक

Chemiluminiscence–रासायनिक दीप्ति

Chlorophyll–क्लोरोफिल, पर्णहरित

Circumscribed–परिवृत

Circumzenithal arc–परिवृत ऊर्ध्व बिन्दु चाप

Cirro-cumulus–अलका पुञ्ज (मेघ)

Cirrus–अलका (मेघ)

Clockwise–दक्षिणावर्त्त

Cloud-mirror–बादल-दर्पण

Clover–तिनपतिया (पौदा)

Cobalt blue–कोबाल्ट नीली

Cobalt sulphate–कोबाल्ट सल्फेट

Coefficient of reflection–परावर्त्तन गुणाक

Coherent sources–अनुकूल स्रोत

Colloidal–कलिलीय

Colour–वर्ण

Combustion–प्रज्वलन

Comet–धूमकेतु

Compartment–कम्पार्टमेण्ट

Compass–दिक्सूचक

Compensating–क्षतिपूरक

Complementary–पूरक, अनुपूरक

Compound–संश्लिष्ट

Concave–अवतल

Concentration–अववारणा, संकेद्रण
Concentric–सकेन्द्रीय
Condensation–सघनन
Condensed–घनीभूत, संघनित
Cone–शकु
Cones and rods–शंकु और दण्ड
Confirmation–सम्पुष्टि
Confusion–सभ्रम
Consistent–सगत
Constant–स्थिरांक
Constellation–तारा-राशि
Continued–सतत
Continuous–अविरत, अविच्छिन्न
Contrast–विपर्यास
Converging–संसृत
Convex–उत्तल
Cornea–कोनिया
Corona–कोरोना, कान्तिचक्र, किरीट
Corresponding–अनुरूपी
Cosmic–ब्रह्माण्डीय
Counter clockwise–वामावर्त्त
Counter-glow–प्रति-चमक, प्रति-ज्योति
Counterpart–प्रतिरूप
Counter twilight–प्रतिसान्ध्य-प्रकाश
Crab–कर्क (राशि)
Crepuscular rays–सान्ध्य किरणें
Crest–शृंग
Crest of waves–तरंग-शृंग
Cross–क्रास
Crystal–क्रिस्टल, मणिभ
Cumulo-nimbus–पुञ्ज-जलद (मेघ)
Cumulo-stratus–पुञ्ज-स्तार (मेघ)
Cumulus–पुञ्ज (मेघ)
Cupric sulphate–क्यूप्रिक सल्फेट
Cusp–निशिताग्र
Cyanometer–सायनोमीटर
Cycle–प्रत्यावर्तन
Cytoplasm–साइटोप्लाज्म

D

Damp out–शमन
Damped–अवमन्दित
Dandelions–डैन्डीलियन
Dark-grey–काला भूरा
Deck–डेक
Decomposition–विच्छेदन
Deflection–विक्षेप
Depression–निम्न दाब
Deviation–विचलन, अतिक्रम
Dew-bow–ओस-धनुष
Diagonal–कर्ण
Diaphregm–डायफ्राम
Diatoms–द्विकोषीय (अल्जीआ)
Dichroism–द्विवर्णिक
Diffraction–विवर्त्तन
Diffraction fringes–विवर्त्तन-धारियाँ
Diffraction gratings–विवर्त्तन ग्रेटिंग

Diffuse–विसृत
Diffused–विसरणयुक्त
Direct–प्रत्यक्ष
Directed reflected light–केन्द्रित परावर्त्तित प्रकाश
Disc–मंडलक
Discharge tube–विसर्ग लैम्प
Displacement–विस्थापन, स्थानान्तरण
Disturbance–व्यवधान
Divergent–अपसृत
Double sun–दुहरा सूर्य
Double stars–युग्म तारे
Duck weed–कारण्ड घास
Dull–धूमिल

E

Eagle–गरुड़ (तारा-राशि)
Earth light–धरती आलोक
Ecliptic–क्रान्ति-वलय (क्रान्तिवृत्त)
Eclipse–ग्रहण
Elastic–लचीला
Electron–एलेक्ट्रान, इलेक्ट्रान
Ellipse–दीर्घवृत्त
Elizabeth linnaeus–एलीजाबेथ लिनो
Emerald–मरकत (मणि)
Emission–उत्सर्जन
Energy–ऊर्जा
Enveloped–अन्वालोपित
Epidermal–बाह्य त्वचा का
Equivalent–समतुल्य
Erruption–उद्गार
Ethereal–वायव्य
Exaggeration–अति सवर्द्धन
Exhaust post–बहिर्द्वार
Explosion–विस्फोट
Exposure–प्रकाश-दर्शन
Extreme case–परमावस्था
Eyeball–नेत्रगोलक

F

Factor–उपादान
Family of curves–वक्र-समूह
Farbin lehre–फार्बेन लेहर
Fata morgana–फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश)
Fatigue–श्रांति
Filament–तंतु
Filter–फिल्टर
Fishes–मीन (राशि)
Flickering–झिलमिलाहट
Flint–चकमक पत्थर
Flor-Contrast–फ्लोर कन्ट्रास्ट
Fluorescence–प्रतिदीप्ति
Focal length–फोकस दूरी
Fog-bow–कुहरा-धनुष
Fore-ground–अग्रभूमि
Formol–फार्मोल
Formula–सूत्र
Fraxinus Ornus–शीरी (वृक्ष)
Frame–फ्रेम

Frame of reference–तुलना-तंत्र
Function–फलन

G

Garden globe–वाटिका-ग्लोब
Gelatine–जिलेटिन
Geranium–जीरेनियन
Glacier–ग्लेशियर, हिमनद, हिमानी
Globe–ग्लोब
Glory–प्रकाशमण्डल
Glow-worm–जुगनू
Gown–गाउन
Gradient–प्रावण्य, प्रवणता
Gradual–क्रमिक
Grains–कणिकाएँ
Granite rocks–आग्नेय चट्टानें
Granular–दानेदार, कणीय, कणिकामय
Gravitational attraction–गुरुत्वाकर्षण बल
Grease–चिकनाई
Great Bear–सप्तर्षि-मण्डल
Great circle–बृहत् वृत्त
Great Dog–बृहत् श्वान
Ground glass–घर्षित कांच

H

Haidinger's brush–हेडिन्जर ब्रुश
Halo–प्रभामण्डल
Harmony–साम्य
Hatching–रेखा-छादन
Haze–धुन्ध
Head light–हेड लाइट
Heather–हीदर (घास)
Heiligenshein–हेलिगेन्शीन
Helium–हीलियम
Helmet–हेल्मेट
Hemisphere–अर्द्ध गोला
Hexagonal–षट्पहल
Honey fungus–मधु फूंफद
Horizontal–क्षैतिज
Horizontal bar–क्षैतिज दण्ड
Horse-chestnut–अखरोट (वृक्ष)
Hydrogen phosphide–हाइड्रोजन फास्फाइड
Hydrogen sulphide–हाइड्रोजन सल्फाइड
Hyperbola–अतिपरवलय

I

Ice-blink–बर्फ-निमीलन
Ice-needle–बर्फ-सूची
Incident–आपतित, आपाती
Incident rays–आपतित किरणें
Indigo–नील
Indirect–अप्रत्यक्ष
Infinity–अनन्त दूरी
Insect–कीट
Intensity of light–प्रकाश-तीव्रता
Intensity–तीव्रता
Interference–व्यतिकरण
Inversion–उत्क्रमण
Ionization–आयनीकरण

Ionosphere–आयनस्फियर
Iridescence–उद्दीपन
Iridescent–उद्दीप्त
Irregularity–विषमता
Iso-photo–आइसोफोटो
Isotropic–समदिशा का

J

Jar–जार
Juniper–हपुषा (पौदा)
Jupiter–वृहस्पति (ग्रह)
Juxtaposition–सान्निध्य

K

Keel–पृष्ठ-दण्ड (जहाज का)

L

Landmark–भूमिचिह्न
Landscape–भू-दृश्य
Lawn–लॉन
Leaden–सुरमई
Legend–आख्यान
Lens–लेंस
Leonardo-da-Vinci–लिनार्दोदा-विन्ची
Lesser maxima–लघु शीर्ष
Light-house–प्रकाश-गृह
Lightning–तड़ित्
Light rings–प्रकाश छल्ले
Limiting–सीमान्तक
Little Dog–लघुश्वान (तारा-समूह)
Little finger–कनिष्ठा उँगली
Line of darkness–अन्धकार-रेखा
Lion–सिंह (राशि)
Locus–बिन्दुपथ, पथरेखा
Luminous–दीप्तिमान्
Lupine–शमीधान्य (पौदा)
Lycopodium–लाइकोपोडियम
Lyre–वीणा (राशि)

M

Magnified–आवर्द्धित
Magnifying glass–परिवर्द्धक काँच
Magnifying lens–परिवर्द्धक लेन्स
Manganese–मैंगनीज़
Map–मानचित्र
Mars–मङ्गल (ग्रह)
Maxima–शीर्ष
Merge–सविलीन
Metastable–भास-स्थायी
Meteors–उल्काएँ
Meteorology–ऋतु - अनुसन्धान, ऋतुविज्ञान
Metol-hydroquinine–मेटाल हाइड्रोक्वीनीन
MilkyWay–आकाश-गंगा
Minimum deviation–अल्पतम विचलन
Mirage–मरीचिका
Mist–धुन्ध, कुहासा
Mizare–वशिष्ठ (तारा)
Mobil oil–मोबिल तेल
Mock sun–कृत्रिम सूर्य
Molecular–आणविक

Molecule–अणु
Monkestood–पाश्चात्य विषा (पौदा)
Monotonous–एकरस
Mosses–सेवार, शैवाल
Mother-of-pearl–सीप का मोती
Muscles–पेशियाँ

N

Negative–निगेटिव
Neon–निअन
Neutral–तटस्थ
Nicol–'निकल'
Nigrometer–नाइग्रोमीटर
Norm for comparison–आदर्श प्रमाप
Normal–अभिलम्ब
Northern lights–उत्तरीय प्रकाश
Nuclei–नाभिक
Nursery–नर्सरी

O

Oak–वलूत
Object of reference–संदर्भ वस्तु
Objective–वस्तुनिष्ठ
Objective–अभिदृश्य लेन्स, वस्तुनिष्ठ
Objectivity–तटस्थता
Obliterated–अभिरोपित
Oblique–तिर्यक्
Observable–प्रेक्षणीय
Observer–प्रेक्षक
Olive green–जैतूनी हरा
Oily–तैलीय
Opal–पीलकी रत्न
Opera glass–द्विनेत्री दूरबीन
Optical–प्रकाशीय
Optimum–अनुकूलतम
Orbit–कक्षा
Order–कोटि
Order of magnitude–दीप्तिमाप श्रेणी
Organic–कार्बनिक
Orientation–अनुस्थापन
Oriented–अनुस्थापित
Orion–मृगव्याध (तारा समूह)
Ortho–आर्थो
Orthochromatic–आर्थोक्रोमैटिक
Oscillations–दोलन
Osmic acid–आस्मिक अम्ल
Oxidation–आक्सीकरण
Oxidised–आक्सीकृत
Ozone–ओज़ोन

P

Paint–रजक
Pale–पाण्डुर
Panchromatic–पैन्क्रोमैटिक
Parallax–विस्थापनाभास
Parameter–परामिति
Parhelic circle–सौर परिवृत्त
Parhelia–उपसूर्य
Partial eclipse–आंशिक ग्रहण
Path difference–पथान्तर

Pattern–प्रारूप
Peat–पीट
Perceptible–बोधगम्य
Peripheral–परिमितीय
Persei δ–δ ययाति
Persei α–α ययाति
Persistence of vision–दृष्टि-निर्बन्धता
Perspective–अनुदर्शन
Phase-difference–कला-अन्तर
Phosphene–फास्फीन
Phosphorescence–स्फुरदीप्ति
Photo-electric cell–फोटो इलेक्ट्रिक सेल
Photometer–दीप्तिमापी
Physiological–शारीरिक प्रक्रिया संबंधी
Pitch dark–घुप अन्धकार
Plumbline–साहुल
Pointillism–बिन्दु-चित्रण
Point of reversal–उत्क्रमण-बिन्दु
Point of view–दृष्टि-बिन्दु
Polar–ध्रुवीय
Polariod–पोलरायड
Polorising angle–ध्रुवक कोण
Polarisation–ध्रुवण
Polariscope–ध्रुवणदर्शी
Polarised–ध्रुवित
Pores–रोमछिद्र
Porpoise–सूंस
Positions of preference–वरीयता की स्थितियाँ
Positive–पाज़िटिव
Potassium chromate–पोटैसियम क्रोमेट
Power house–पावर हाउस
Predominence–प्राधान्य
Primary rain-bow–प्रमुख इन्द्रधनुष
Prism–प्रिज्म, समपार्श्व
Procyon–प्रभास (तारा)
Projection–प्रक्षेपण
Prominences– तेज शृंग (सूर्य के), परिज्वाल
Proverb–लोकोक्ति
Prussian blue–प्रशन नीला
Psychological–मनोवैज्ञानिक, मानसिक
Psychological contrast–मानसिक विपर्यास
Psychrometer–वायुवाष्प मान लेखी
Purkinje Effect–पर्किन्ज प्रभाव
Purple–नील-लोहित
Pyramid–सूची-स्तम्भ

Q

Qualitative–गुणात्मक
Quantitative–मात्रात्मक
Quartz–क्वार्ट्ज, स्फटिक

R

Radial–त्रिज्यीय
Radian–रेडिएन
Radiation–विकिरण
Radius vector–सदिश त्रिज्या
Railing–रेलिंग
Rainbow–इन्द्र-धनुष
Ram–मेष (राशि)
Random–अनियमित
Reddish–ललछौंवें
Reduction–अवकरण
Reference point–निर्देशन-बिन्दु
Reflection–परावर्त्तन
Refracting edge–वर्त्तन कोर
Refraction–वर्त्तन
Refrangible–वर्त्तनीय
Regulus–मघा
Resultant–प्रतिफलित
Reverse–विलोम
Rest–विराम
Retina–रेटिना
Rim–रिम, प्रधि, नेमि
Ring–छल्ला
Round–वर्तुलाकार
Rotating motion–परिभ्रमणगति
Rye–राई

S

Safety valve–सेफ्टी वाल्व
Saturated–संतृप्त, सन्तृप्त
Saturn–शनि (ग्रह)
Scales–तुला (राशि)
Scales–माप-श्रेणी, स्केल
Scattered–परिक्षेपित
Scattering–परिक्षेपण
Scattering power–परिक्षेपण-क्षमता
Scenery–दृश्य-स्थल
Scintillations–टिमटिमाहट
Scorpion–वृश्चिक (राशि)
Screw propeller–स्क्रू-प्रोपेलर
Sea-green–समुद्री हरा
Searchlight–सर्चलाइट
Secondary rainbow–गौण इन्द्र-धनुष
Sensitive–संवेदी, सुग्राही
Sensitivity–सुग्राहिता
Series–श्रेणी
Sextant–सेक्सटेन्ट
Shade–शेड
Shoots–कोंपलें
Short-sight–निकट दृष्टि
Silex–साइलेक्स
Silhouette–सिल्हुएत (छायाचित्र)
Silver white–रजत-श्वेत
Simultaneous–समकालिक
Sirius–लुब्धक (तारा)
Skew–विषम तलीय
Ski–स्काइ
Snap shot–स्नैप शाट
Snow–तुषार, हिम
Socket–सॉकेट (ओग गी)

Sodium–सोडियम
Solid angle–सान्द्र कोण
Solidity–ठोसपन
Solution–विलयन
Sombre blue–धूसर नीला
Source of light–प्रकाश-स्रोत
Space–देश
Space-ships–अन्तरिक्ष यान
Spectre–प्रेत-छाया
Spectrum–स्पेक्ट्रम
Spherical segments–गोलीय खण्ड
Stage–चरण, क्रम
Statistically–आंकिक पद्धति से
Steoroscopic vision–पिण्ड-दर्शन
Steoroscopic phenomenon—पिण्ड-दर्शन घटना
Stimulated–उत्तेजित
Strato-cumulus–स्तार-पुञ्ज (मेघ)
Stratosphere–स्ट्रैटोस्फियर
Structure–संरचना
Subconscious–अवचेतन मन
Subjective–आत्मनिष्ठ
Sublimation–ऊर्ध्वपातन
Sub-sun–अधोवर्त्ती सूर्य्य
Subtended–समक्षित
Successive–क्रमागत
Sulphide–सल्फाइड
Sulphur tri oxide–सल्फर ट्राइ आक्साइड
Super-cooled–अति-शीतलीकृत
Supercooling–अति-शीतलन
Supernumerary bows–अतिरिक्त धनुष
Superposed–अध्यारोपित
Superstition–अन्ध विश्वास
Supply–सप्लाई
Surface of reference–नियामक धरातल पृष्ठ
Surface tension–तलीय खिंचाव
Surroundings–परिपार्श्व
Survey–सर्वेक्षण
Symmetrical–सममित
Symmetry–सममिति

T

Talbot–ताल्बो
Tangential arc–स्पर्शकीय चाप
Tauri β–β वृष
Tauri ξ–ξ वृष
Tauri γ–γ वृष
Telegraph–टेलीग्राफ
Tenvous–विरल
Terrestrial–पार्थिव
Test-tube–परखनली
Theoretical–सैद्धान्तिक
Theory–थियरी, सिद्धान्त
Three dimensional–त्रिविमितीय
Threshold–देहली
Thunder-cirrus–तड़ित् अलका (मेघ)
Tip–पोर
Totality–सर्वग्रास (ग्रहण के लिए)

Total reflection–पूर्ण परावर्त्तन
Transition–संक्रमण
Transformation–रूपान्तरण
Translatory motion–रैखिक गति
Transparent–पारदर्शक
Transverse section–अनुप्रस्थ काट
Tropics–उष्ण कटिबन्ध
Trough–गर्त्त
Turbidity–डबैलापन
Twilight–सान्ध्य प्रकाश
Twins–मियुन (राशि)
Tyre–टायर

U

Ultra-cirrus–परा-अल्का
Ultra marine–पारसामुद्रिक
Ultra violet–अति वैगनी
Under-estimation–न्यूनानुमान
Undulating–ऊर्मिल
Uniform–एकसम, एकसमान
Unpolarised–अध्रुवित
Unprejudicial–निरपेक्ष

V

Vaporiser–फुआर उत्पादक
Vega–अभिजित् (तारा)
Venus–शुक्र (ग्रह)
Vertical–ऊर्ध्वाधर
Vibration–कम्पन, स्पन्दन
Violet–बैगनी
Virgin–कन्या (राशि)
Visibility–दृश्यता
Visual direction–दृष्टि-रेखा

W

Water-falls–जल-प्रपात
Water-line–जल-रेखा
Waterman–कुम्भ (राशि)
Water-sky–जल-आकाश
Water-telescope–जल-दूरबीन
Wave-front–तरंगाग्र
Wavelets–तरंगिकाएँ
Wave-length–तरंग-दैर्घ्य
Wedge–स्फान, पच्चड़
Weld–संधान, वेल्ड
Wet & Dry bulb thermometer
–शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर
White–श्वेत
White-hot–तापोज्ज्वल
Whitisth–आश्वेत
Will-O-the-Wisp–मिथ्या प्रकाश

Z

Zenith–ऊर्ध्व विन्दु
Zinc-white–जिंक ह्वाइट
Zodiac–राशिचक्र
Zodiacal light–राशिचक्रीय प्रकाश
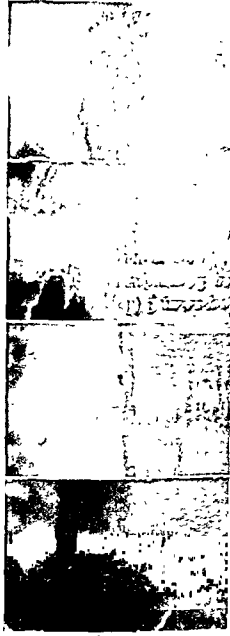
प्लेट III, a—रात के समय वृक्ष के ऊपरी भाग में से जब सड़क के लैम्प को देखते हैं तो चमकती हुई शाखाएँ प्रकाश-स्रोत के गिर्द चमकीले वृत्तों का निर्माण करती हैं (पृ० ३८)।

प्लेट III, b—वही वृक्ष दिन के समय। प्रत्येक चमकदार वृत्त किसी विशेष शाखा या टहनी द्वारा निर्मित होता है। (From photographs by Dr. In. A. J. Staring) (पृ० ३८)।

प्लेट IV, a—नहर के पानी की विक्षुब्ध सतह सूर्य की रोशनी का प्रतिबिम्ब पुल की भीतरी छत पर विचित्र नमूने की शक्ल में फेंकती है (पृ० ४१)।

प्लेट IV, b—हल्के तरङ्गित होनेवाले उथले जल में वर्तित होनेवाली सूर्य की रोशनी पेंदे पर प्रकाश की लकीरों के रूप में केन्द्रित हो जाती है (पृ० ४१)।

प्लेट V, a—गौण मरीचिका, डेथवैली, कैलीफोर्निया (By Courtesy of the U. S. Weather Bureau) (पृ० ५५)।

प्लेट V, b—धूप से प्रकाशित एक लम्बी दीवार पर मरीचिका। प्रेक्षक से १८० गज की दूरी पर स्थित बालक की मरीचिका दिखाई दे रही है तथा द्वितीय असामान्य परावर्तन के निर्माण का आरम्भ हो रहा है। दीवार का तापक्रम ४.५° सेंटीग्रेड था, जो वायु के तापक्रम से ऊँचा था। (From W. Hillers, Physikalische Zeitschrift, 14, 718, 1913) (पृ० ५६)।
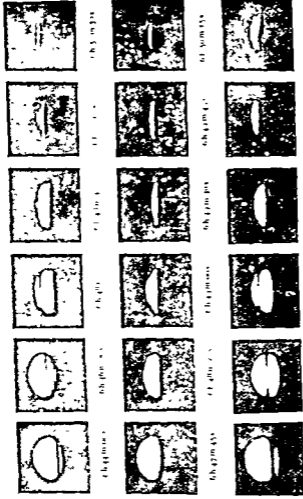
प्लेट VI—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण-वक्रता के कारण अस्त होते हुए सूर्य की शक्ल की विकृति। (फोटो पैन्क्रोमैटिक फिल्म पर ली गयी थी, कैमरे के लेन्स की फोकस-दूरी ४ फुट ७ इंच थी तथा इसका मुँह २ इंच चौड़ा था तथा प्रकाश-दर्शन का समय [illegible] सेकण्ड से लेकर [illegible] सेकण्ड तक रखा गया था।) (From J. F. Chapell, P. A. S. P. 45, 281, 1933) (पृ० [illegible])।

प्लेट VII, a—एक शेड के आमने-सामने के कठघरों के बीच क्रमदर्शन (Beats) (पृ० १०३)।

प्लेट VII, b—किश्ती की लग्गी 'मुड़ी' हुई दीखती है तथा नदी का पेंदा 'उठा' हुआ जान पड़ता है। (From 'The Universe of Light' (G. Bell and Sons Ltd. by permission of Sir William Bragg, O. M.) (पृ० ४१,१०३)।
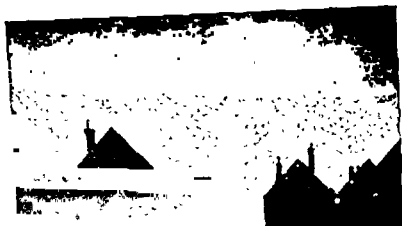
प्लेट VIII, a—ग्राम के चवन मकानों की छत के सहारे विपर्यास-दर्शिता (पृ० १५८)।
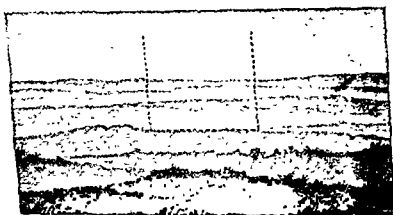
प्लेट VIII, b—ऊर्मिल भूमि पर विपर्यास-घटना। बिन्दु-रेखाओं द्वारा प्रदर्शित स्थल पर ओट रखकर दृश्य-स्थल के एक अंश का परिहार करने पर यह दृष्टि-भ्रम दूर किया जा सकता है (पृ० १५८)।
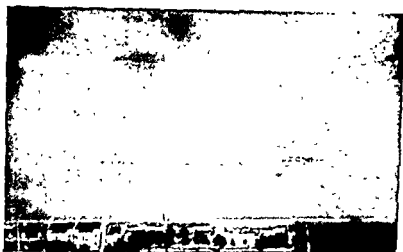
प्लेट IX, a—चटकीले रंग का मुख्य इन्द्रधनुष, फीके रंग का गौण इन्द्रधनुष। इन्द्रधनुष के निचले छोर पर उसके भीतर तथा बाहर के हाशियों पर प्रकाश का विपर्यास स्पष्ट देखा जा सकता है तथा मुख्य इन्द्रधनुष के नीचे अतिरिक्त धनुष भी स्पष्ट दिखलाई दे रहे हैं। (Copyright, A Clask, King's College, Aberdeen) (पृ० २०४)।

प्लेट IX, b—चन्द्रमा के गिर्द प्रकाशवृत्त या प्रभामण्डल, कृत्रिम चन्द्र, ऊपरी स्पर्शकीय चाप तथा प्रकाश का क्रॉस। (After a watercolour by L. W R. Wenckebach, by kind permission of the Royal Dutch Met.Inst.) (पृ० २३, २४४)।
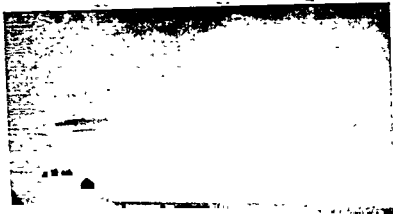
प्लेट X—उद्दीप्त बादल। Altocumulus lenticularis, photographed by Cave (International Cloud Atlas, Paris 1932 plate 33) (पृ० २७५)।

प्लेट XI—ओस मे ढकी घास वाले मैदान पर हेलिगेन्शीन (पृ० २८०)।

प्लेट XII—रात्रि के ज्योतिर्मय बादल (After C. Stormer, *Vidensk, Akad.* Oslo Avh. I, 1933 No. 2, Plate IX) (पृ० ३४५)
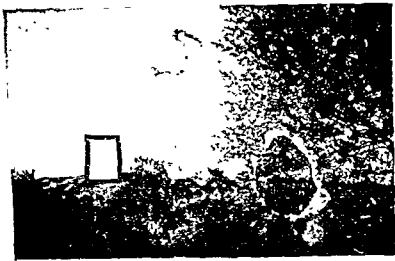
प्लेट XIII, a—एक बडे आकार के झुके दर्पण मे आकाश का ऊर्ध्वविन्दु प्रतिबिम्बित हो रहा है। आकाश जब नीले वर्ण का होता है तो ऊर्ध्वविन्दु पर आकाश क्षितिज के निकट के भागों की अपेक्षा कम प्रकाशमान् होता है (पृ० ३६९)।
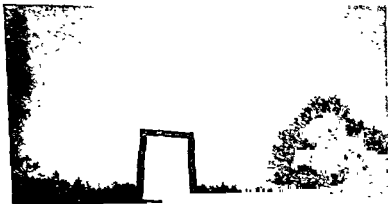
प्लेट XIII, b—वही प्रयोग, जब आकाश पर समरूप से बादल छाये थे। इस दशा मे आकाश का ऊर्ध्वविन्दु क्षितिज के मुकाबले में अधिक चमकीला है (पृ० ३६८)।

प्लेट XIV, a—पानी की सतह की हलकी तरंगे केवल अँधेरे तथा
उजाले प्रतिबिम्बन के सीमा-हाशिये पर ही दृष्टिगोचर हो
पाती हैं (पृ० ३७७)।

प्लेट XIV, b—पानी की सतह अंशत तरंगित और अंशत शान्त (द्वि-आयामिक तलस्तर)। तीक्ष्ण सीमारेखा देखिए (पृ० ३३३)।

प्लेट XV, a—सूर्य घने पुञ्ज-बादल की छाया नीचे की धुन्ध वाली हवा पर डालता है। सभी प्रकाशकिरण-शलाकाएँ एक ही स्थल मे आती हुई जान पड़ती हैं, यद्यपि वास्तविकता यह है कि वे सभी परस्पर समानान्तर हैं (पृ० ४०१)।

प्लेट XV b—गड्ढे के पानी के विक्षुब्ध धरातल पर छाया पड़नी है प्रकाश तथा अन्धकार की असंख्य किरणें सिर से उत्पन्न होती दिखाई पड़ती हैं। कैमरा आँख के ठीक सामने रखा गया था (पृ० ४०२)।

प्लेट XVI, a—हीदर पौदों वाले मैदान का दृश्य, जब कि सूर्य दर्शक के पीछे है; दर्पण में मैदान का प्रतिबिम्ब जिसमें सूर्य सामने पड़ता है (पृ० ४१५)।

प्लेट XVI, b—लॉन पर घास काटनेवाली मशीन के चलाये जाने पर बने निशान। निशान की ये प्रकाशित तथा अँधेरी धारियाँ उस वक्त विलुप्त हो जाती हैं जब इनकी समकोण दिशा से इनका अवलोकन करते हैं (पृ० ४१५)।

हिन्दी समिति
के
वैज्ञानिक प्रकाशन

१. आपेक्षिकता का अभिप्राय	४–००
२. इस्पात का उत्पादन	५–००
३. उद्योग और रसायन	७–००
४. इलेक्ट्रान विवर्तन	२–५०
५. काँच-विज्ञान	६–००
६. काष्ठ-परिरक्षण	१०–००
७. क्रोमैटोग्राफी	५–००
८. खाद और उर्वरक	१०–००
९. जाति-विज्ञान का आधार	७–००
१० तारा भौतिकी	८–००
११ तारे और मनुष्य	५–००
१२. परमाणु-विखंडन	९–००
१३. पृथ्वी की आयु	८–००
१४. भूमिरसायन	१०–००
१५ भौतिक विज्ञान मे क्रान्ति	४–५०
१६ मृत्तिका-उद्योग	८–००
१७ यान्त्रिकी	११–००
१८. विमान और वैमानिकी	४–५०
१९. शक्ति, वर्तमान और भविष्य	४–००
२०. प्रकाश और वर्ण	११–५०
२१ रसायन मे नोबेल पुरस्कार-विजेता	६–००

(विस्तृत विवरण के लिए सूचीपत्र देखें)